सम्पादक

महोपाध्याय विनयसागर

साहित्य महोपाध्याय, साहित्याचार्य, दर्शनशास्त्री,

साहित्यरत्न, काव्यभूषण, शास्त्रविशारद

प्रकाशनकर्ता

राजस्थान राज्याज्ञानुसार

सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

विक्रमाब्द २०२२
प्रथमावृत्ति १०००

भारतराष्ट्रीय शकाब्द १८८७

खिस्ताब्द १९६५
मूल्य–१८.२५

मुद्रक– हरिप्रसाद पारीक, साधना प्रेस, जोधपुर

Vrittamauktik

of

Chandrashekhar Bhatta

with commentaries by Bhatt Lakshminath and Meghavijaya Gani



Edited with

Appendices and elaborate preface

by

M. Vinayasagar,

Sahitya-mahopadhyaya, Sahityacharya,

Darshan-shastri, Sahitya-ratna, Shastra-visharad etc.

Published under the orders of the Government of Rajasthan

By

THE RAJASTHAN ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE

JODHPUR (Rajasthan)

V.S. 2022] [1965 A.D.

सञ्चालकीय वक्तव्य

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला के ७९वें ग्रन्थांक के स्वरूप वृत्त-मौक्तिक नाम का यह एक मुक्तांकित ग्रन्थरत्न गुम्फित होकर ग्रन्थ-माला के प्रिय पाठकवर्ग के करकमलों में उपस्थित हो रहा है।

जैसा कि इसके नाम से ही सूचित हो रहा है कि यह ग्रन्थ वृत्त अर्थात् पद्यविषयक शास्त्रीय वर्णन का निरूपण करने वाला एक छन्दःशास्त्र है। भारतीय वाङ्मय में इस शास्त्र के अनेक ग्रन्थ उपलब्ध होते है। प्राचीनकाल से लेकर आधुनिक काल तक, इस विषय का विवेचन करने वाले सैंकडों ही छोटे-बड़े ग्रन्थ भारत की भिन्न-भिन्न भाषाओं मे ग्रथित हुए हैं। प्राचीनकाल मे प्रायः सब ग्रन्थ सस्कृत और प्राकृत भाषा मे रचे गये हैं। बाद में, जब देश्य-भाषाओं का विकास हुआ तो उनमें भी तत्तद् भाषाओ के ज्ञाताओं ने इस शास्त्र के निरूपण के वैसे अनेक ग्रन्थ बनाये।

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला का प्रधान उद्देश्य वैसे प्राचीन शास्त्रीय एवं साहित्यिक ग्रन्थों को प्रकाश में लाने का रहा है जो अप्रसिद्ध तथा अज्ञात स्वरूप रहे हैं। इस उद्देश्य की पूर्तिरूप में, हमने इससे पूर्व छन्द.शास्त्र से सम्बन्ध रखने वाले पांच ग्रन्थ इस ग्रन्थमाला में प्रकाशित किये हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ का छठा स्थान है।

इनमें पहला ग्रन्थ महाकवि स्वयंभू रचित है जो 'स्वयंभू छंद' के नाम से अंकित है। स्वयभू कवि ९-१०वी शताब्दी में हुआ है। वह अपभ्रंश भाषा का महाकवि था। उसका बनाया हुआ अपभ्रंश भाषा का एक महाकाव्य 'पउमचरिउ' है, जिसको हमने अपनी 'सिंघी जैन ग्रन्थमाला' में प्रकाशित किया है। स्वयंभू कवि ने अपने छन्द.शास्त्र मे, संस्कृत और प्राकृतभाषा के उन बहुप्रचलित और सुप्रतिष्ठित छन्दों का तो यथायोग्य वर्णन किया ही है परन्तु तदुपरान्त विशेष रूप से अपभ्रंश-

भाषा-साहित्य के नवीन विकसित छन्दों का भी बहुत विस्तार से वर्णन किया है। अपभ्रंश-भाषा-साहित्य की दृष्टि से यह ग्रन्थ विशिष्ट रत्न-रूप है।

दूसरा ग्रन्थ है 'वृत्तजातिसमुच्चय'। इसका कर्त्ता विरहांक नाम से अंकित कोई 'कइसिट्ठ' है। यह शब्द प्राकृत है, जिसका सही संस्कृत पर्याय क्या होगा, पता नहीं लगता। 'कइसिट्ठ' का संस्कृत रूप कवि-श्रेष्ठ, कविशिष्ट और कृतशिष्ट अथवा कृतिश्रेष्ठ भी हो सकता है। वृत्तजातिसमुच्चय भी प्राचीन रचना सिद्ध होती है। इसकी रचना ९वीं-१०वीं शताब्दी की या उससे भी कुछ प्राचीन अनुमानित की जा सकती है। यह रचना शिष्ट प्राकृत-भाषा में ग्रथित है। इसमें संस्कृत की अपेक्षा प्राकृत के छन्दों का विस्तृत निरूपण है और साथ में अपभ्रंश भाषा के भी अनेक छन्दों का वर्णन है। ग्रन्थकार ने अपभ्रंश शैली के छन्दों का विवेचन करते हुए उसकी उपशाखाएँ-स्वरूप 'आभीरी' और 'मारवी' अथवा 'मारुवाणी' का भी नाम-निर्देश किया है जो प्राचीन राजस्थानी-भाषा-साहित्य के विकास के इतिहास की दृष्टि से प्राचीनतम उल्लेख है। राजस्थानी के पिछले कवियों ने जिसे 'मरुभाषा' अथवा 'मुरधरभाखा' कहा है, उसे ही कवि विरहांक ने 'मारुवाणी' नाम से उल्लेख किया है। इस मारुवाणी का एक प्रिय और प्रसिद्ध छन्द है जिसका नाम 'धोसा' अथवा 'घोषा' बताया है। इस उल्लेख से यह ज्ञात होता है कि ९वीं-१०वीं शताब्दी में राजस्थान की प्रसिद्ध बोली 'मारुई' या 'मारवी' का अस्तित्व और उसके कवि-सम्प्रदाय तथा उनकी काव्यकृतियों का व्यवस्थित विकास हो रहा था। प्राकृत और अपभ्रंश भाषा में पद्य-रचना के विविध प्रयोगों का इस ग्रन्थ में बहुत महत्त्वपूर्ण निरूपण है।

तीसरा ग्रन्थ है 'कविदर्पण'। यह भी प्राकृत के पद्य-स्वरूपों का निरूपण करने वाला एक विशिष्ट ग्रन्थ है। इसकी रचना विक्रम की १४वीं शताब्दी के प्रारम्भ में हुई प्रतीत होती है। विक्रम की १२वीं शताब्दी के प्रारम्भ में राजस्थान और गुजरात में प्राकृत और अप-

भ्रंश भाषा के साहित्य में जिस प्रकार के अनेकानेक मात्रागणीय छन्दों का विकास और प्रसार हुआ है उनका सोदाहरण लक्षण-वर्णन इस रचना में दिया गया है। 'संदेशरासक' जैसी रासावर्ग की सर्वोत्तम रचना मे जिन विविध प्रकार के छन्दो का कवि ने प्रयोग किया है उन सब का निरूपण इस ग्रन्थ में मिलता है। प्राकृतपिंगल नाम के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ में जिस प्रकार के छन्दो का वर्णन दिया गया है उनमें के प्राय सभी छन्द इस ग्रन्थ में, उसी शैली का पूर्वकालीन पथप्रदर्शन करने वाले, मिलते है। जिस प्रकार प्राकृतपिंगल में दिये गये उदाहरणभूत पद्यो में, कर्ण, जयचद, हमीर आदि राजाओ के स्तुति-परक पद्य मिलते है उसी तरह इस ग्रन्थ में भीमदेव, सिद्धराज जयसिंह, कुमारपाल आदि अणहिलपुर के राजाओ के स्तुतिपरक पद्य दिये गये हैं।

उक्त तीनो ग्रन्थो का सम्पादन हमारे प्रियवर विद्वान् मित्र प्रो० एच० डी० वेलणकरजी ने किया है जो भारतीय छन्दशास्त्र के अद्वितीय मर्मज्ञ विद्वान् है। इन ग्रन्थो की विस्तृत प्रस्तावनाओ में (जो अंग्रजी में लिखी गई है) सम्पादकजी ने प्राकृत एव अपभ्रंश के पद्य-विन्यास का बहुत पाण्डित्यपूर्ण विवेचन किया है। इन ग्रन्थों के अध्ययन से अपभ्रंश और प्राचीन राजस्थानी-गुजराती हिन्दीभाषा के विविध छदो का किस क्रम से विकास हुआ है वह अच्छी तरह ज्ञात हो जाता है।

विगत वर्ष मे हमने इसी ग्रन्थमाला के ६६ वें मणि के रूप में 'वृत्तमुक्तावली' नामक ग्रन्थ प्रकाशित किया–जिसके रचयिता जयपुर के राजपण्डित श्रीकृष्ण भट्ट थे, महाराजा सवाई जयसिंह ने उनको बडा सम्मान दिया था। वृत्तमुक्तावली मे वैदिक छन्दो का भी निरूपण किया गया है, जो उपर्युक्त ग्रन्थो मे आलेखित नहीं हैं। वृत्तमुक्तावली मे वैदिक छन्द तथा प्राचीन संस्कृत एव प्राकृत-साहित्य म सुप्रचलित वृत्तो के अतिरिक्त उन अनेक देश्यभाषा-निबद्ध वृत्तो का भी निरूपण किया गया है जो उक्त प्राचीन ग्रन्थकारो के बाद होने वाले अन्यान्य कवियो द्वारा प्रयुक्त हुए हैं। श्रीकृष्ण भट्ट संस्कृत-भाषा के प्रौढ

पण्डित थे। सस्कृत काव्य-रचना मे उनकी गति प्रखर और अबाध थी इसलिये उन्होंने उक्त प्रकार के सब छन्दो के उदाहरण स्वरचित पद्यो द्वारा ही प्रदर्शित किये है। प्राकृत, अपभ्रंश और प्राचीन देशी भाषा के प्रधानवृत्तो के उदाहरण-स्वरूप पद्य भी उन्होने सस्कृत मे ही लिखे। हिन्दी-राजस्थानी-गुजराती भाषा मे बहुप्रचलित और सर्वविश्रुत दोहा, चौपाई, सवैया, कवित्त और छप्पय जैसे छन्द भी उन्होंने सस्कृत मे ही अवतारित किये।

इन ग्रथो से विलक्षण एक ऐसा छन्द-विषयक अन्य बडा ग्रन्थ भी हमने ग्रन्थमाला मे गुम्फित किया है जो 'रघुवरजसप्रकास' है। इसका कर्त्ता चारण कवि किसनाजी आढा है, वह उदयपुर के महाराणा भीमसिंह जी का दरबारी कवि था। वि० स० १८८०-८१ मे उसने इस ग्रन्थ की राजस्थानी भाषा मे रचना की। जिसको कवि 'मुरधर भाखा' के नाम से उल्लिखित करता है। यह छन्दोवर्णन-विषयक एक बहुत ही विस्तृत और वैविध्य-पूर्ण ग्रन्थ है। कर्त्ता ने इस ग्रन्थ में छन्द शास्त्र-विषयक प्राय सभी बातें अकित कर दी हैं। वर्णवृत्त और मात्रावृत्तो के लक्षण दोहा छन्द में बताये है। उदाहरणभूत सब पद्य अर्थात् वृत्त कवि ने अपनी 'मुरधरभाखा' अर्थात् मरुभाषा में स्वय ग्रथित किये हैं। इस प्रकार सस्कृत, प्राकृत और अपभ्र श भाषा के सुप्रसिद्ध सभी छदो के उदाहरण उसने 'मरुभाखा' में ही लिखकर अपनी देशभाषा के भाव-सामर्थ्य और शब्दभडार के महत्त्व को बहुत उत्तम रीति से प्रकट किया है। इसके अतिरिक्त उसने इस ग्रथ में राजस्थानी भाषाशैली में प्रचलित उन सैंकडो गीतो के लक्षण और उदाहरण गुम्फित किये हैं जो अन्य भाषा-ग्रन्थित छदग्रन्थो मे प्राप्त नही होते।

प्रस्तुत 'वृत्तमौक्तिक' ग्रन्थ इस ग्रन्थमाला का छद शास्त्र विषयक छठा ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ भी वृत्तमुक्तावली के समान सस्कृत में गुम्फित है। वृत्तमुक्तावली के रचना काल से कोई एक शताब्दी पूर्व इसकी रचना हुई होगी। इसमें भी वृत्तमुक्तावली की तरह सभी वृत्तो या पद्यो के उदाहरण ग्रन्थकार के स्वरचित हैं। वृत्तमुक्तावली की तरह इसमें

वैदिक छंदों का निरूपण नहीं है पर संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश साहित्य में प्रयुक्त प्रायः सभी छदों का विस्तृत वर्णन है। जितने छंदों अर्थात् वृत्तों का निरूपण इस ग्रन्थ में किया गया है उतनों का वर्णन इसके पूर्व निर्मित किसी भी संस्कृत छंदोग्रन्थ में नहीं मिलता है। इस दृष्टि से यह ग्रन्थ छंदःशास्त्र की एक परिपूर्ण रचना है।

संस्कृत-साहित्य में पद्य-रचना के अतिरिक्त अनेक विशिष्ट गद्य-रचनायें भी हैं जो काव्य-शास्त्र में वर्णित रस और अलंकारों से परिपूर्ण हैं, परन्तु गद्यात्मक होने से पद्यों की तरह उनका गेय स्वरूप नहीं बनता। तथापि इन गद्य-रचनाओं में कहीं कही ऐसे वाक्यविन्यास और वर्णन-कण्डिकाएँ, कविजन ग्रथित करते रहते हैं जिनमें पद्यों का अनुकरण-सा भासित होता है और उन्हें पढ़ने वाले सुपाठी मर्मज्ञ जन ऐसे ढंग से पढते हैं जिसके श्रवण से गेय-काव्य का सा आनन्द आता है। ऐसे गद्यपाठ के वाक्यविन्यासों को छन्दःशास्त्र के ज्ञाताओं ने पद्यानुगन्धी अथवा पद्याभासी गद्य के नाम से उल्लेखित किया है और उसके भी कुछ लक्षण निर्धारित किये हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ में वृत्तमौक्तिक-कार ने ऐसे विशिष्ट गद्यांशों का विस्तृत निरूपण किया है और इस प्रकार के शब्दालंकृत गद्य की कुछ विद्वानों की विशिष्ट स्वतंत्र रचनायें भी मिलती हैं जो विरुदावली और खण्डावली आदि के नाम से प्रसिद्ध हैं। ऐसी अनेक विरुदावलियों तथा कुछ खण्डावलियों का निरूपण इस वृत्तमौक्तिक मे मिलता है जो इसके पूर्व रचे गये किसी प्रसिद्ध छन्दोग्रन्थ में नही मिलता। इस प्रकार की छन्दःशास्त्र-विषयक अनेक विशेषताओं के कारण यह वृत्तमौक्तिक यथानाम ही मौक्तिक स्वरूप एक रत्न-ग्रन्थ है।

इस ग्रन्थ की विशिष्ट मूल-प्रति राजस्थान के बीकानेर में स्थित सुप्रसिद्ध अनूप सस्कृत पुस्तकालय में सुरक्षित है। मूल-प्रति ग्रन्थकार के समय मे ही लिखी गई है—अर्थात् ग्रन्थ की समाप्ति के बाद १४ वर्ष के भीतर। यह प्रति आगरा में रहने वाले लालमणि मिश्र ने वि.सं. १६९० में लिख कर पूर्ण की।

ग्रन्थ की रचना कहाँ हुई इसका उल्लेख कही नही किया गया। परन्तु ग्रन्थकार तलगदेशीय भट्ट वश के ब्राह्मण थे और उनकी वश-परम्परा सुप्रसिद्ध वैष्णव सम्प्रदाय के धर्माचार्य श्री वल्लभाचार्य के वश से अभेद स्वरूप रही है। प्रस्तुत रचना में कर्त्ता ने सर्वत्र श्रीकृष्ण-भक्ति का और मथुरा वृन्दावन के गोप-गोपीजनो के रस-विहार का जो वर्णन किया है उससे यह कल्पना होती है कि ग्रन्थकार मथुरा-वृन्दावन के रहने वाले हों!

इस ग्रन्थ का सम्पादन श्री विनयसागरजी महोपाध्याय ने बहुत परिश्रम-पूर्वक बडी उत्तमता के साथ किया है। ग्रन्थ से सम्बद्ध सभी विचारणीय विषयो का इन्होंने अपनी विद्वत्तापूर्ण विस्तृत प्रस्तावना और परिशिष्टो मे बहुत विशद रूप से विवेचन किया है जिसके पढने से विद्वानो को यथेष्ट जानकारी प्राप्त होगी।

ग्रन्थमाला के स्वर्णसूत्र मे इस मौक्तिक-स्वरूप रत्न की पूर्ति करने निमित्त हम श्री विनयसागरजी के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते है और आशा रखते हैं कि ये अपनी विद्वत्ता के परिचायक इस प्रकार के और भी ग्रन्थ-सम्पादन के कार्य द्वारा ग्रन्थमाला की सेवा और शोभावृद्धि करते रहेंगे।

जन्माष्टमी सं. २०२२;
राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान,
जोधपुर
दि० २०-८-६५

मुनि जिनविजय
सम्मान्य सञ्चालक

समर्पण

यः सूरीश्वर - वंश-सागर - मणिर्वादीभपञ्चाननः,
तं श्रीजैनविधौ गणे दिनमणि ध्यायामि हृद्ध्वान्तहम् ।
हिन्द्यामागमसंप्रसारमणिना प्रोद्धारि येन श्रुतं,
भव्यानामुपदेशदानमणये तस्मै नमः सर्वदा ॥

यस्मात्प्रादुरभून्मणेः शुभविधा श्रीगौतमाद्वागिव,
वागीशानिव वादिनो जितवती वादेषु संवादिनः ।
सौमत्यम्बुनिधेर्मणेः समुदयात् सज्ज्ञानमालोकते,
ग्रन्थं मौक्तिकनामकं गुरुमणौ भक्त्या मया ह्यर्प्यते ॥

चारुचरणचञ्चरीक
विनय

क्रमपञ्जिका

भूमिका

१. प्रथमखंड

द्वितीय खंड

टीकाद्वय - क्रम - पञ्जिका

परिशिष्ट - क्रमपञ्जिका

भूमिका

छन्दःशास्त्र का उद्भव और विकास

किसी पदार्थ के आयतन को उसका छन्द कहा जाता है । छन्द के बिना किसी भी वस्तु की अवस्थिति इस ससार में संभव नहीं है। मानव-जीवन को भी छन्द कहा जाता है। सात छन्दों या मर्यादाओं से जीवन मर्यादित है। छन्द या मर्यादा के कारण ही मनुष्य स्व और पर की सीमाओं में बधा हुआ है। स्वच्छन्दत्व उसे प्रिय होता है परच्छन्दत्व नहीं। मनुष्य स्वकीय छन्दों या सीमाओं को विस्तृत करता हुआ, स्वतन्त्रता के मार्ग का अनुशीलन करता हुआ अपने जीवन का उद्देश्य प्राप्त कर लेता है।

छन्द पद का निर्वचन—

छन्द और छन्दस् पदों की निरुक्ति क्षीरस्वामी ने 'छद' धातु से बतलाई है। अन्य व्युत्पत्तियों के अनुसार छन्द शब्द 'छदिर् ऊर्जने, छदि सवरणे, चदि आह्लादने दीप्तौ च, छद सवरणे, छद अपवारणे' धातुओं से निष्पन्न है।[१] वस्तुत इन धातुओं से निष्पन्न शब्द विभिन्न अर्थों में पृथक्-पृथक् रूप से प्रयुक्त होते रहे होंगे। कालांतर में ये शब्द छन्द और छन्दस् शब्द-रूपों में खो गये। यास्क ने 'छन्दासि छादनात्'[२] कह कर आच्छादन के अर्थ में प्रयुक्त छन्द शब्द का अस्तित्व माना है। सायण ने ऋग्वेद-भाष्यभूमिका में 'आच्छादकत्वाच्छन्दः' कथन द्वारा यास्क का समर्थन किया है। छान्दोग्योपनिषद् की एक गाथा के अनुसार देव मृत्यु से डर कर त्रयी-विद्या में प्रविष्ट हुए। वे छदों से आच्छादित हो गये। आच्छादन करने से ही छदों का छदत्व है।[३] ऐतरेय आरण्यक के अनुसार स्तोता को आच्छादित करके छद पापकर्मों से रक्षित करते हैं।[४] इन स्थानों पर आच्छादन अर्थ वाला छद शब्द प्रयुक्त हुआ है। असीम चैतन्य-सत्ता को सीमाओं या मर्यादाओं में बाध कर ससीम बना देने वाली प्रकृति भी आच्छादन करने के कारण ही छन्द कही जाती है। वैदिक-दर्शन के अनुसार छन्द 'वाक्-विराज्' का भी नाम है जो साख्य की प्रकृति या वेदांत की माया के

१–वैदिक छन्दोमीमासा, —प० युधिष्ठिर मीमासक, पृ० ११-१३

२–निरुक्त ७।१२

३–छान्दोग्योपनिषद् १।४।२; तुलनीय गार्ग्य का उपनिदान सूत्र ८।२

४–ऐतरेय आरण्यक २।२

समकक्ष है। सारा विश्व इसी से विकसित होता है। आच्छादनभाव को स्पष्ट करने के लिए 'छदिच्छन्द' नाम का विशेष रूप से इसमें उल्लेख किया गया है।[1] यह एक छन्द ही विविध रूपों में एक से अनेक हो जाता है। इन विभिन्न छन्दों में आत्मा आच्छादित हो कर व्याप्त हो जाती है। आत्मा 'छन्दोमा' के रूप में विविध छन्दों को प्रकाशित करती है।[2] छन्द से छन्दित छन्दोमा स्वयं छन्द है और ज्योतिस्वरूप होने से उसका सम्बन्ध दीप्ति से तथा आनन्दस्वरूप होने से आह्लाद से भी जुड़ जाता है। चदि धातु से निष्पन्न छन्द (मूल रूप चन्द) का प्रयोग ऐसे प्रसंगों में होता रहा ज्ञात होता है। प्राण (प्राणा वै छन्दांसि)[3], सूर्य (छन्दांसि वै व्रजो गोस्थानः)[4] और सूर्य रश्मियों (ऋग्वेद १।६२।६) को छन्द कहने का कारण भी दीप्तियुक्त होना ही ज्ञात होता है। लोक में भी गायत्री आदि पद्य, वेद, मार्षग्रन्थ, संहिता, इच्छा, अनियन्त्रित आचार आदि[5] अर्थों में प्रयुक्त छन्द शब्द देखा जाता है। ये सब एक छन्द शब्द के विविध अर्थ नहीं हैं, वरन् इन-इन अर्थों में प्रयुक्त अलग-अलग शब्द हैं। किसी समय इनका सूक्ष्म भेद सुविज्ञात था। स्वर आदि द्वारा यह भेद स्पष्ट कर दिया जाता था। कालान्तर में अन्य शब्दों की तरह[6] ये सारे शब्द एक छन्द शब्द में श्लिष्ट हो गये और उनके स्वर-चिह्नों ने भी उदात्तादि प्रबल स्वरों में अपना अस्तित्व खो दिया।

साहित्य में छन्द—

ऊपर छन्द के विविध अर्थों में एक गायत्री आदि छन्द का भी उल्लेख किया गया है। वाङ्मय में छन्द का विशिष्ट महत्त्व है। कात्यायन के अनुसार सारा वाङ्मय छन्दोरूप है - छन्दोमूलमिदं सर्वं वाङ्मयम्।[7] छन्द के बिना वाक् उच्चरित नहीं होती।[8] कोई शब्द छन्द रहित नहीं होता।[9] इसीलिए गद्य और पद्य दोनों को छन्दोयुक्त माना जाता है।[10]

१–वैदिक दर्शन —डा० फतहसिंह, पृष्ठ १८२-१८३
२–वैदिक दर्शन पृ० १८४ तथा उसमें उद्धृत ताण्ड्य महाब्राह्मण १४।११।१४
३–कौषीतकि ब्राह्मण ७।६, ११।८ १७।२
४–तैत्तिरीय ब्राह्मण ३।२।६ ३
५–वैदिक छन्दोमीमांसा पृ० ७-८
६–शब्दों के विकास की ऐसी प्रवृत्ति के लिए देखें— 'ऋग्वेद में गोतत्त्व'— बद्रीप्रसाद पंचोली
७–ऋग्यजुष परिशिष्ट ५, तुलनीय छन्दोऽनुशासन जयकीर्ति, १।२
८–नाच्छन्दसि वागुच्चरति इति —निरुक्त ७।२, दुर्गवृत्ति
९–छन्दोहीनो न शब्दोऽस्ति —नाट्यशास्त्र १४।११
१०–वैदिक छन्दोमीमांसा पृ० ८

छन्द की परिभाषा करते हुए कात्यायन ने ऋक्सर्वानुक्रमणी मे अक्षर के परिमाण को छन्द कहा है—यदक्षरपरिमाण तच्छन्द.। अन्यत्र अक्षर सख्या का नियामक छद कहा गया है।[1] छन्द का महत्व केवल अक्षर-ज्ञान कराना मात्र नही है। ऊपर के निर्वचनो पर विचार करने पर भावो को आच्छादित करके अपने मे सीमित करने वाली शब्द-सघटना को साहित्य मे छन्द कह सकते हैं। अर्थ को प्रकाशित करके अर्थचेता को आह्लादयुक्त कर देने मे छन्द का छदत्व प्रकट होता है।

वैदिक छद मत्रो के अर्थ प्रकट करने की विशेष शैली प्रक्रिया के द्योतक हैं। वेदो के व्याख्याकारो ने इस बात पर जोर दिया है कि ऋषि, देवता और छद के ज्ञान के बिना मत्रो के अर्थ उद्भासित नही होते। देवता मत्रो के विषय है, ऋषि वे सूत्र हैं जिनसे अर्थ सरलतया प्रकट हो जाते हैं और छद अर्थप्राप्ति की प्रक्रिया का नाम है।[2] छदों की अर्थ प्रकट करने की विशिष्ट प्रक्रिया के कारण ही वैदिक-शैली को 'छादस्' कहा गया है। पारसी धर्म-ग्रथ 'जेन्द अवस्ता' का जेन्द नाम भी छद का अपभ्रष्ट रूप ज्ञात होता है।

ब्राह्मण ग्रन्थो मे छादस्-प्रक्रिया का बडा ही सूक्ष्म व रहस्यात्मक वर्णन देखने को मिलता है। वहाँ छदो के नामो द्वारा सम्पूर्ण सृष्टि-प्रक्रिया को समझाने का प्रयत्न किया गया है। सब से अधिक रहस्यात्मक वर्णन गायत्री छद का है जो सूर्यलोक से प्राप्त होने वाले सावित्री प्राण का प्रतीक बन गया है। छदो का रहस्यात्मक वर्णन स्वतत्र रूप से अनुसधान का विषय है। यहाँ छद के व्यावहारिक रूप पर ही विचार किया जा रहा है।

व्यावहारिक दृष्टिकोण से छद अक्षरो के मर्यादित प्रक्रम का नाम है। जहाँ छद होता है वही मर्यादा आ जाती है।[3] मर्यादित जीवन मे ही साहित्यिक छद जैसी स्वस्थ-प्रवाहशीलता और लयात्मकता के दर्शन होते हैं। मर्यादित इच्छा की अभिव्यक्ति प्राचीन गणराज्यो की जीवन्त छद परम्परा Voting System[4] कही जाती है।

भावो का एकत्र सवहन, प्रकाशन तथा आह्लादन छद के मुख्य लक्षण हैं। इस दृष्टि से रुचिकर और श्रुतिप्रिय लययुक्त वाणी ही छद कही जाती है—

१–छ दोऽक्षरसख्यावच्छेदकमुच्यते —अथर्ववेदीय बृहत्सर्वानुक्रमणी

२–ऋग्वेद के मत्रद्रष्टा ऋषि —बद्रीप्रसाद पचोली, वेदवाणी, बनारस। १५।१

३–वेदविद्या —डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल, पृ० १०२

४–प्राचीन भारत मे गणतात्रिक व्यवस्था —बद्रीप्रसाद पचोली, शोधपत्रिका उदयपुर, १५।१

'छदयति पृणाति रोचते इति छद ।'[1] जिस वाणी को सुनते ही मन आह्लादित हो जाता है वह वाणी ही छद है—'छदयति आह्लादयति छद्यते अनेन इति छद ।'[1]

स्पष्ट है कि छद के रूप मे अक्षर-मर्यादा का निर्वाह करने का सम्बन्ध शब्द-सघटना से है और प्रकाशन एव आह्लादन का सम्बन्ध अर्थ के साथ है। इसी तरह छद के प्रथम दो लक्षणो का सबध वक्ता से होता है और तृतीय का श्रोता से। इस दृष्टि से छद, श्रोता और वक्ता के बीच में प्रभावशाली सेतु का काम करता है। शतपथब्राह्मण मे 'रसो वै छदांसि'[2] कह कर छद की रागात्मिका अनुभूति और अभिव्यक्ति की ओर स्पष्ट सकेत किया गया है।

छन्द शास्त्र—

छद शास्त्र मे छदो का विवेचन किया जाता है। भारतवर्ष मे वैदिक तथा लौकिक सस्कृत भाषा के छदो पर विचार अत्यन्त प्राचीन काल से ही प्रारम्भ हो गया था। वैदिक छन्दोमीमासा मे छद शास्त्र का आदि मूल वेद माना गया है।[3] छद शास्त्र के प्राचीन सस्कृत-वाङ्मय मे प्रयुक्त अनेक नामो का उल्लेख भी इसमे है। यथा—

(१) छदोविचिति, (२) छदोमान, (३) छदोभाषा, (४) छदोविजिनि, (५) छदोनाम, (६) छदोविजिति, छदोविजित, (७) छदोव्याख्यान, (८) छदसा विचय, (९) छदसा लक्षणम्, (१०) छद शास्त्र, (११) छदोऽनुशासन, (१२) छदोविवृत्ति, (१३) वृत्त, (१४) पिंगल।[4]

छदोविचिति पद का अर्थ है—वह ग्रन्थ जिसमे छदो का चयन किया गया हो। यह पद पाणिनि के गणपाठ, कौटिल्य के अर्थशास्त्र, सरस्वतीकण्ठाभरण, गणरत्नमहोदधि आदि मे प्रयुक्त हुआ है। पिंगलप्रोक्त छदोविचिति, पतजलि-प्रोक्त छदोविचिति, जनाश्रयप्रोक्त छदोविचिति, दण्डिप्रोक्त छदोविचिति तथा एक अन्य पालिभाषा के छदोविचिति का नामोल्लेख श्रीमीमासकजी ने किया है।[5]

छदोमान नाम भी ग्रथवाची है। पाणिनि के गणपाठ, सरस्वतीकण्ठाभरण आदि मे यह नाम प्रयुक्त हुआ है, परन्तु अभी तक इस नाम का कोई ग्रथ नही

१–सस्कृत साहित्य का इतिहास —वाचस्पति गेरोला, पृ० ११०
२–शतपथ ब्राह्मण ७।३।१।३७
३–वैदिक छदोमीमासा, प० युधिष्ठिर मीमासक, पृ० ४३
४– " " ३५
५– " " ३६

मिला है। जिस ग्रंथ मे छदो का भाषण या व्याख्यान मिलता हो उसे छदोभाषा कहा गया है। गणपाठो मे यह नाम आया है।[1] ऐसी भी मान्यता है कि छदोभाषा नाम प्रातिशाख्यो के लिए प्रयुक्त हुआ है।[2] विष्णुमित्र ने ऋक्प्रातिशाख्य की वृत्ति मे छदोभाषा शब्द का अर्थ वैदिक भाषा किया है। कुछ अन्य लोगो ने छद का अर्थ छद शास्त्र तथा भाषा का अर्थ व्याकरण या निरुक्त किया है।[3] परन्तु प० युधिष्ठिर मीमासक ने इन मतो को निराकृत करके छदोभाषानामक छद शास्त्र के ग्रथो का अस्तित्व माना है उन्होने भी इस नाम को चरणव्यूह आदि मे प्रातिशाख्य के लिए प्रयुक्त माना है।[4]

जिस ग्रथ द्वारा छदो पर विजय प्राप्त हो सके उसे छदोविजिति कहा जाता है। चाद्र गणपाठ, जैनेन्द्र गणपाठ, सरस्वतीकण्ठाभरण आदि मे यह नाम प्रयुक्त हुआ है। छदोनाम के लिए मीमासकजी ने सभावना प्रकट की है कि यह छदोमान का अपभ्रश हो सकता है। छदोव्याख्यान, छदसा विचय, छंदसा लक्षण, छदोऽनुशासन, छद शास्त्र आदि भी छदोविषयक ग्रथो के नाम हैं। वृत्त पद के आधार पर वृत्तरत्नाकर आदि ग्रथो के नामकरण किए गये हैं। हमारे विवेच्य ग्रथ वृत्तमौक्तिक का नाम भी इसी परम्परा मे उल्लेखनीय है।

छन्द शास्त्र के लिए पिंगल-नाम छद शास्त्र के प्रमुख आचार्य पिंगल के कारण ही प्रयुक्त हुआ ज्ञात होता है।[5] पिंगल नाम से अनेक प्राकृतभाषा के ग्रथ प्रसिद्ध हैं।

छन्द शास्त्र की प्राचीनता—

वैदिक छदो के नाम सर्वप्रथम वैदिक सहिताओ म ही प्रयुक्त हुए हैं। वैदिक षडगो मे छद शास्त्र का नाम भी आता है। वेदमत्रों के साथ उनके छदो का नामोल्लेख भी हुआ है। उनका विशुद्ध और लयबद्ध उच्चारण छद शास्त्र के ज्ञान से ही सम्भव है। इसलिए वेदार्थ के विषय में विवेचन करने वाले सभी ग्रथो में छदो का भी प्रसगवश उल्लेख मिल जाता है।

पाणिनि ने गणपाठ म छद शास्त्र-सम्बधी ग्रथों का उल्लेख किया है। उनके समय में तो लौकिक सस्कृत भाषा म महाकाव्यो की रचनाए लिखी जाने लगी

१-वैदिक छदोमीमांसा पृ० ३७
२-सस्कृत साहित्य का इतिहास — गैरोला पृ० १८१
३-अन्य मतों के लिए देखो —वैदिक छदोमीमांसा, पृ० ३७-३९
४-वैदिक छदोमीमांसा, पृ० ३९ ४०
५- " ४२

थी । इसलिए वैदिक छदो के अतिरिक्त लौकिक छदो पर भी विवेचना होने लगी होगी और इस विषय के अनेक ग्रथ विद्यमान होगे । विद्वानो की मान्यता है कि छद शास्त्र के प्रमुख आचार्य पिंगल पाणिनि के समकालीन थे । छद शास्त्र के विकास मे पिंगल का वही स्थान है जो व्याकरण-परम्परा मे पाणिनि का है । तण्डी यास्क, क्रौष्टुकि, सैतव, काश्यप, रात, माण्डव्य आदि आचार्य पिंगल से भी प्राचीन हैं ।[१] इससे छद शास्त्र की अतिप्राचीनता के विषय मे किसी प्रकार कोई सदेह नही रह जाता है।

छन्द शास्त्र के प्राचीन आचार्य—

वेदागो के प्रवक्ता शिव और बृहस्पति माने जाते हैं। महाभारत के एक उल्लेख के अनुसार वेदागो का प्रवचन बृहस्पति ने[२] तथा एक दूसरे उल्लेख के अनुसार शिव ने[३] किया । परवर्ती ग्रथकारो ने छद शास्त्र के प्रवक्ता आचार्यों की परम्परा का उल्लेख किया है । छद सूत्र भाष्य के अन्त में यादवप्रकाश ने छद शास्त्र के प्रवर्तक आचार्यों की परम्परा का उल्लेख किया है —

छदोज्ञानमिद भवाद् भगवतो लेभे सुराणा गुरु
तस्माद दुश्च्यवनस्ततो सुरगुरुर्माण्डव्यनामा तत ।
माण्डव्यादपि सैतवस्तत ऋषिर्यास्कस्तत पिंगल,
तस्येद यशसा गुरोर्भुवि धृत प्राप्यास्मदाद्यै क्रमात् ॥

इसी ग्रथ के अ त मे किसी का एक अन्य श्लोक भी दिया हुआ है —

छन्द शास्त्रमिद पुरा त्रिनयनाल्लेभे गुहोऽनादित
तस्मात् प्राप सनत्कुमारमुनितस्तस्मात् सुराणा गुरु ।
तस्माद्देवपतिस्तत फणिपतिस्तस्माच्च सत्पिंगल
तच्छिष्यैर्बहुभिर्महात्मभिरथो मह्या प्रतिष्ठापितम् ॥[४]

प० युधिष्ठिर मीमासक ने इनमें से प्रथम परम्परा को अधिक विश्वसनीय माना है । उ होने राजवार्तिक मे उल्लिखित —

शिवगिरिजानन्दिफणीन्द्रबृहस्पतिच्यवनशुक्रमाण्डव्या ।
सैतवपिंगलगरुडप्रमुखा आद्या जयन्ति गुरुचरणा ॥

१–वैदिक छदोमीमांसा पृ० ४६
२–वेदागानि ▪ बृहस्पति —महाभारत, शान्तिपर्व २१२।३२
३–वेदात् षडगान्युद्धृत्य —महाभारत, शान्तिपर्व २८४।६२
४–उपर्युक्त मतों के लिए द्रष्टव्य, वैदिक छदोमीमांसा, पृ० ५७

तथा यति के प्रसग मे छद शास्त्र-प्रवक्ता जयकीर्ति द्वारा उल्लिखित—

वाञ्छन्ति यतिं पिंगलवसिष्ठकौंडिन्यकपिलकम्बलमुनय ।
नेच्छन्ति भरतकोहलमाण्डव्याश्वतरसैतवाद्या केचित् ॥

परम्पराओ का उल्लेख भी किया है।[1]

पिंगल छद सूत्र मे उल्लिखित आचार्यों का नाम ऊपर आ चुका है। इससे प्रकट है कि आचार्य पिंगल से पहले छद शास्त्र के प्रवक्ताओ की एक व्यवस्थित एव अविच्छिन्न परम्परा विद्यमान थी।

वैदिक और लौकिक छन्द शास्त्र

छद दो प्रकार के कहे गये हैं —वैदिक और लौकिक।[2] वेद सहिताओ मे प्रयुक्त गायत्री, अनुष्टुप्, त्रिष्टुप्, जगती, पक्ति, उष्णिक्, बृहती, विराट् आदि छद वैदिक कहे जाते हैं। छद शास्त्र के प्रारभिक ग्रथो मे केवल वैदिक छदो और उनके भेद प्रभेदो पर ही विचार किया जाता था। बाद मे वाल्मीकि ने लौकिक साहित्य मे भी छद का प्रयोग किया। उन्हे आदि-कवि होने का श्रेय मिला। इतिहास पुराण, काव्य आदि मे छदो का प्रभूत रूप से प्रयोग होने लगा। बाद मे इन छदो के लक्षणादि के विषय मे छद शास्त्र मे विचार प्रारम्भ हुआ। सस्कृत-छद शास्त्रो के आधार पर परवर्ती काल मे प्राकृत और अपभ्रश भाषाओ मे छदो के लक्षण ग्रथ भी लिखे गये।

छन्द के विषय मे उपलब्ध प्राचीनतम सामग्री

वैदिक सहिताओ में गायत्री आदि छदो के नाम अनेकधा उल्लिखित हैं परन्तु उनका विवेचन वहाँ प्राप्त नही होता। वस्तुत. उन स्थलो पर छन्दो के नामो द्वारा आधिदैविक और आध्यात्मिक रहस्यो की ओर ही सकेत किया गया ज्ञात होता है। मत्रो के ऐसे सकेतो का ब्राह्मण-ग्रथो मे विस्तार से स्पष्टीकरण किया गया है। विराट् छद का सबध विराज-गो (प्रकृति) से बतलाते हुए ताण्ड्य-महाब्राह्मण मे उसे छदो मे ज्योतिस्वरूप कहा गया है–विराड वै छन्दसा ज्योति।[3] विराट को दशाक्षरा भी कहा गया है।[4] अन्य छदो के विषय मे भी ऐसे ही रहस्यमिश्रित विचार ब्राह्मण-ग्रथो में मिलते हैं।

१–जयकीर्तिकृत छन्दोनुशासन, १।१३ एवं वैदिक छदोमीमासा पृ० ५८

२–नारदपुराण —पूर्व भाग २।५७।१

३–ताण्डयमहाब्राह्मण, ६।३।६, १०।२।२

४–दशाक्षरा वै विराट् — शतपथब्राह्मण, १।१।१।२२, ऐतरेयब्राह्मण ६ २०; गोपथब्राह्मण पूर्वार्ध ४ २४, उत्तरार्ध, १।१८, ६।२, ६।१५; ताण्ड्यमहाब्राह्मण, ३।१३।३

ऋग्वेद-प्रातिशाख्य को छंद शास्त्र की प्राचीनतम रचना माना जाता है। यह महर्षि शौनक की रचना है। इसका विवेच्यविषय व्याकरण है परन्तु प्रसंगवश छंदों की भी चर्चा की गई है। यह चर्चा नितांत अधूरी है। छंदों का ज्ञान प्राप्त किये बिना मंत्रों का उच्चारण ठीक तरह से नहीं हो सकता। इसीलिए इस ग्रंथ में छंदों का विवरण दिया गया है।[1]

ऋग्वेद तथा यजुर्वेद की सर्वानुक्रमणियों में भी छंदों का विवरण मिलता है। छंदोऽनुक्रमणी में दस मंडल हैं और उसमें ऋग्वेद के समस्त छंदों का क्रमश: विवरण दिया गया है। यह भी शौनक की रचना है। शांखायन श्रौतसूत्र में भी प्रसंगवश छंदों पर विचार किया गया है।

पतंजलि ने निदानसूत्र में छंदों का उल्लेख करते हुए कुछ प्राचीन छंद-शास्त्र के प्रवक्ताओं के नामों का उल्लेख भी किया है। ये पतंजलि महाभाष्यकार पतंजलि से भिन्न कोई प्राचीन आचार्य थे। एक अन्य गार्ग्य नामक आचार्य ने उपनिदानसूत्र में इन पतंजलि के अतिरिक्त तण्डिब्राह्मण, पिंगल आदि आचार्यों तथा उक्थशास्त्र का उल्लेख किया है। उक्थशास्त्र, संभव है छन्द शास्त्र के लिए प्रयुक्त कोई प्राचीन नाम रहा हो। कीथ ने हलायुधकोश की साक्षी से इन वैदिक-परम्परा के प्राचीन ग्रंथों को वेदांग छन्दस् कहा है।[2]

यास्क ने अपने निरुक्त में वैदिक छंदों के नामों का निर्वचन किया है। यथा —

> गायत्री गायतेः स्तुतिकर्मणः। त्रिगमना वा विपरीता। गायतो मुखात् उदपतत् इति च ब्राह्मणम्। उष्णिगुत्स्नाता भवति। स्निह्यतेर्वा स्यात्कान्तिकर्मणः। उष्णीषिणी वेत्यौपमिकम्। उष्णीषं स्नायतेः। ककुप्ककुभिनी भवति। ककुच्च कुब्जश्च कुजतेर्वा। उब्जतेर्वा। अनुष्टुबनुष्टोभनात्। गायत्रीमेव त्रिपदां सतीं चतुर्थेन पादेनानुष्टोभतीति इति च ब्राह्मणम्। बृहती परिबर्हणात्। पंक्तिः पञ्चपदा। त्रिष्टुप्स्तोभत्युत्तरपदा। का तु त्रिता स्यात्। तीर्णतमं छन्दः। त्रिवृद्वज्रस्तस्य स्तोभतीति वा। यत् त्रिरस्तोभत्तत्त्रिष्टुभस्त्रिष्टुप्त्वम्—इति विज्ञायते। जगती गततमं छन्दः। जलचरगतिर्वा। जल्गल्यमानोऽसृजत् इति च ब्राह्मणम्। विराड् विराजनाद्वा। विराधनाद्वा। विप्रापणाद्वा। विराजनात्सम्पूर्णाक्षरा। विराधनादूनाक्षरा। विप्रापणादधिकाक्षरा। पिपीलिकामध्येत्यौपमिकम्। पिपीलिका पेलतेर्गतिकर्मणः।[3]

१–वैदिक-साहित्य —रामगोविंद त्रिवेदी, पृ० २४०

२–संस्कृत-साहित्य का इतिहास —कीथ (हिंदी अनुवाद, चौखम्बा) पृ० ४६२

३–निरुक्त, ७।१२

यास्क ने गायत्री को अग्नि के साथ, त्रिष्टुप् को इन्द्र के साथ तथा जगती को आदित्य के साथ भाग लेने वाला कहा है।[1]

छंदों का देवों के साथ संबंध तो वाजसनेयी-संहिता आदि में भी मिलता है।[2] वैदिक छंदों के इस प्रकार के विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि रहस्यमिश्रित वर्णन से भी छंदो के स्वरूप पर प्रकाश पड़ता है और वेदार्थ-ज्ञान में उनकी उपयोगिता भी कम नहीं है। पाणिनि ने तो छंद को वेद का पाद कहा है —'छन्दः पादौ तु वेदस्य'।[3]

पिंगल के पूर्ववर्त्ती छन्दःशास्त्र के आचार्य—

पिंगल से पूर्व का कोई ग्रंथ छंदों के विषय में प्राप्त नहीं है, परन्तु उनके पूर्ववर्त्ती अनेक ग्रंथकारों के नाम मिलते हैं। इससे पता चलता है कि उनके पूर्व छंदःशास्त्र की एक अविच्छिन्न परम्परा विद्यमान थी। उनके पहले के कुछ आचार्यों का परिचय यहां दिया जा रहा है—

१ शिव व उनका परिवार—

शिव को छंदःशास्त्र के प्रवर्त्तक आदि आचार्य के रूप में यादवप्रकाश और राजवार्त्तिककार ने स्मरण किया है। व्याकरण के आदि आचार्य भी शिव माने जाते हैं। संभव है ये केवल शैव-सम्प्रदाय में ही प्रवर्त्तक माने जाते हों। वेदांगों के शैव या माहेश्वर-सम्प्रदाय का प्राचीन काल में महत्वपूर्ण स्थान रहा ज्ञात होता है। शिव के साथ उनके पुत्र गुह व पत्नी पार्वती का नाम भी छंदःशास्त्र के प्रवक्ता के रूप में लिया जाता है। नन्दी शिव का वाहन माना जाता है। संभव है यह किसी शिव-भक्त आचार्य का नाम रहा हो। राजवार्त्तिककार के अनुसार ये पतंजलि के गुरु तथा पार्वती के शिष्य थे। वात्स्यायन ने कामशास्त्र के आचार्य के रूप में भी नन्दी के नाम का उल्लेख किया है जो शिव के अनुचर थे।[4]

२. सनत्कुमार—

यादवप्रकाश के भाष्य के अन्त में दी हुई अज्ञात लेखक की परम्परा में

१–निरुक्त ७।८-११

२–वाजसनेयी-संहिता १४।१८-१९; मैत्रायणी-संहिता २।१।११; काठक-संहिता १७ ३-४; जैमिनीय-ब्राह्मण ९९

३–पाणिनीय-शिक्षा ४१

४–कामसूत्रम्, १।१।८

इनका नाम भी उल्लिखित है। कालक्रम से ये बृहस्पति के पूर्ववर्ती रहे होंगे। उपर्युक्त साक्षी से तो ये बृहस्पति के गुरु ठहरते हैं। परन्तु, इस बात की पुष्टि किसी अन्य सूत्र से होती नहीं जान पड़ती।

३ बृहस्पति—

इनका नाम उपर्युक्त तीनों परम्पराओं में आया है। व्याकरण के बार्हस्पत्य-सम्प्रदाय का अस्तित्व पं० युधिष्ठिर मीमांसक ने माना है।[1] महाभारत की ऊपर दी हुई साक्षी से वेदांगों के प्रवर्तक बृहस्पति हैं। ये माहेश्वर सम्प्रदाय से भिन्न परम्परा के प्रवर्तक ज्ञात होते हैं। बृहस्पति को भारतीय परम्परा में देव-गुरु माना गया है और इन्द्र इनके शिष्य कहे गये हैं।

४ इन्द्र—

ऐन्द्र-व्याकरण के प्रवक्ता इन्द्र का छन्दशास्त्र के प्रवक्ता के रूप में भी उल्लेख किया जाता है। यादवप्रकाश के भाष्य की दोनों परम्पराओं में इन्द्र का नाम आया है। राजवार्तिक के अनुसार फणीन्द्र ही इन्द्र ज्ञात होता है। पं० युधिष्ठिरजी ने फणीन्द्र को पतंजलि का नाम माना है और च्यवन को दुश्च्यवन मान कर इन्द्र से अभिन्न मानने की सम्भावना प्रकट की है।[2] इस विषय में अभी निश्चय-पूर्वक कुछ भी कहना संभव नहीं है।

६ शुक्र—

यादवप्रकाश व राजवार्तिक दोनों में शुक्र का नाम आया है। सम्भव है शुक्रनीति के प्रवक्ता आचार्य शुक्र और छंद शास्त्र के प्रवक्ता शुक्र अभिन्न हों।

७ कपिल—

इनको मीमांसकजी ने कृतयुग का अन्तिम आचार्य माना है। जयकीर्ति के छंद शास्त्र में यति चाहने वाले आचार्य के रूप में इनका नामोल्लेख किया गया है। सांख्यदर्शन के आचार्य कपिल और ये अभिन्न ज्ञात होते हैं।

८ माण्डव्य—

माण्डव्य के नाम का उल्लेख पिंगल, जयकीर्ति, यादवप्रकाश, चन्द्रशेखर भट्ट आदि द्वारा किया गया है। इनको मीमांसक जी ने त्रेतायुगीन माना है।

१–वैदिक-छन्दोमीमांसा, पृ० ५१-५४
२– " " ५८-५९

९. वसिष्ठ—

जयकीर्ति ने इनका नाम छंद शास्त्र के आचार्य के रूप में लिया है।

१० सैतव—

इनका नाम सभी परम्पराओं मे आया है। ऐसा ज्ञात होता है कि ये बहुत प्रसिद्ध आचार्य रहे होंगे।

११. भरत—

ये नाट्यशास्त्र-कर्त्ता भरत से अभिन्न ज्ञात होते हैं। जयकीर्ति ने छन्द शास्त्र के प्रवक्ता के रूप मे इनके नाम का स्मरण किया है। नाट्यशास्त्र के १४वें तथा १५वें परिच्छेद में भरत ने छन्दो पर विचार किया है। सम्भव है इनका कोई पृथक् ग्रंथ भी इस विषय पर रहा हो।

१२ कोहल—

कोहल का नामोल्लेख भी जयकीर्ति ने ही किया है।

द्वापरयुगीय अन्य छन्द.प्रवक्ता—

मीमांसकजी ने यास्क, रात, क्रौष्टुकि, कौण्डिन्य, ताण्डी, अश्वतर, कम्बल, काश्यप, पाचाल (बाभ्रव्य) तथा पतजलि को द्वापरकालीन छंद.शास्त्र के आचार्य के रूप मे विभिन्न साक्षियों के आधार पर स्वीकार किया है।[1] यास्क के किसी पृथक्-छंद सबंधी ग्रंथ का पता नही चलता। अन्य आचार्यों के मतों का ही यत्र-तत्र उल्लेख मिलता है।

कलियुग के प्रारम्भ में होने वाले छंद.प्रवक्ता—

मीमांसकजी ने उक्थशास्त्रकार, कात्यायन, गरुड, गार्ग्य, शौनक आदि का कलियुग के प्रारम्भ में होने वाले छंद शास्त्र-प्रवक्ताओं के रूप में नामोल्लेख किया है। पिंगल का काल भी उन्होंने यही माना है।

उपर्युक्त छंद.शास्त्र-प्रवक्ताओं के कोई ग्रंथ इस समय प्राप्त नहीं हैं, परतु उनके मतो के उद्धरण अन्य ग्रंथो में मिल जाते हैं। परवर्ती विद्वानो को सबसे अधिक प्रभावित करने वाले आचार्य पिंगल रहे हैं।

आचार्य पिंगल और पिंगल-छन्द:सूत्र—

पिंगल को कोष ने प्राकृत-छंदो-विषयक-ग्रंथ "प्राकृत-पैंगलम्" के रचयिता

१—वैदिक-छन्दोमीमांसा ९९

से भिन्न अत्यन्त प्राचीन आचार्य माना है ।[1] पिंगलसूत्र ही छंदो के विषय मे हमारे सामने सब से प्राचीन ग्रंथ है। कुछ लोगों ने पिंगल को पाणिनि से पूर्ववर्ती ग्रंथकार माना है। ऐसे लोगो में से कुछ पिंगल को पाणिनि का मामा मानते हैं, परन्तु युधिष्ठिर मीमांसक तथा गैरोला ने पिंगल को पाणिनि का अनुज, अतः समकालीन ग्रन्थकार माना है ।[2]

पिंगल का महत्त्व इस बात से समझा जा सकता है कि बाद मे छन्दःशास्त्र का नाम ही पिंगल-शास्त्र हो गया। इनका ग्रन्थ सर्वाधिक प्राचीन होने के साथ ही प्रौढ तथा सर्वाङ्गपूर्ण है ।[3] इसमें वैदिक-छन्दों के साथ ही लौकिक छंदो पर भी विस्तार से प्रकाश डाला गया है। "प्राकृत-पिंगल" का आधार भी इनका पिंगल-सूत्र ही है। परवर्ती सभी छन्दःशास्त्रकार पिंगल के ऋणी हैं।

पुराणों में छन्दों का विवेचन—

नारदपुराण तथा अग्निपुराण भी छन्दों के विवेचन करने वाले ग्रंथ हैं। अग्निपुराण को भारतीय-साहित्य का विश्वकोश कहा जाता है। उसमे ३२८ से ३३५ तक ८ अध्यायों में छंदों का विवेचन किया गया है। अग्निपुराण में छदों के विवेचन का आधार पिंगलरचित छदःसूत्र-ग्रंथ ही रहा है—

छन्दो वक्ष्ये मूलजैस्तैः पिंगलोक्तं यथाक्रमम् ।[4]

इसमें वैदिक व लौकिक दोनों प्रकार के छन्दो का विवेचन है।

नारदपुराण में पूर्व भाग के द्वितीय पाद के ५७वें अध्याय में वेदांगो का विवेचन करते हुए प्रसगवश छंदों के लक्षण भी बताये गये हैं। वहां एकाक्षर-पाद छदों से लेकर दण्डक-छंदो तक का वर्णन मिलता है। प्रस्तार-प्रक्रिया से छंदों के विविध भेदों की ओर भी सकेत किया गया है।

परवर्ती छन्द-सम्बन्धी ग्रन्थ तथा ग्रन्थकार—

परवर्ती छद.शास्त्र-प्रवक्ताओ में कतिपय आचार्य ऐसे हैं जिनका नामोल्लेख-मात्र प्राप्त है और जिनके ग्रन्थों के नाम और ग्रन्थ अद्यावधि अनुपलब्ध हैं। यथा :—

१–संस्कृत साहित्य का इतिहास —कीथ (हिन्दी) पृ० ४६३
२– " " —गैरोला, पृ० १६१-६२ तथा संस्कृत-व्याकरणशास्त्र का इतिहास पृ० १५२
३– " " —गैरोला, पृ० १६२
४–अग्निपुराण, ३२८।१

नाम	काल	नाम	काल
१. पूज्यपाद[1] (देवनन्दी)	४७०-५१२ वि.	२. भामह[2]	६ शती
३ दण्डी[3]	७०० वि	४. पाल्यकीर्त्ति[4]	८७१-९२४ वि
५. दमसागर मुनि[5]	१०५० वि.	६. वृद्धकवि[6]	
७. सालाहण[7]		८. हाल[8]	
९. मनोरथ[9]		१०. अर्जुन[10]	
११. गोसल[11]		१२. गोविन्द[12]	
१३ चतुर्मुख[13]			

छद शास्त्र के परवर्ती ग्रथों मे से प्रसिद्ध कतिपय ग्रन्थ निम्नलिखित है :—

१. बृहत्सहिता :—यह वराहमिहिर की ज्योतिष विषयक रचना है। प्रसंगवश इसके चौदहवें अध्याय मे ग्रह-नक्षत्रों की गति-विधि के साथ छदो का विवेचन भी मिलता है। कीथ के अनुसार वराहमिहिर का स्वतन्त्र छदःशास्त्र का ग्रथ भी होना चाहिए किन्तु ऐसा कोई ग्रथ अभी तक देखने में नही आया।

२ जानाश्रयी-छन्दोविचिति :—जनाश्रय (?) नामक कवि ने इसकी रचना विष्णुकुण्डीन (कृष्णा और गोदावरी का जिला) के अधिपति माधववर्मन् प्रथम के राज्य मे—जिसका समय ६ शताब्दी A D पूर्व माना जाता है—की है। यह ग्रथ ६ अध्यायो में विभक्त है। इसका प्राकृत-छन्दो का अन्तिम अध्याय महत्वपूर्ण है। गणशैली स्वतन्त्र है। युधिष्ठिर मीमासकजी[14] ने गणस्वामी को ही इसका कर्त्ता माना है।

३. जयदेवच्छन्दस्—जयदेव की रचना होने से यह 'जयदेवच्छन्दस्' के नाम से

१—जयकीर्ति -छदोनुशासन, ८,१६
२—कीथ : ए हिस्ट्री आव सस्कृत लिटरेचर
३,४,५—वैदिक-छदोमीमांसा, पृ० ६०-६१
६—विरहांक -वृत्तजातिसमुच्चय २।८-९ तथा ३।१२
७— ,, ,, २।८-९
८— ,, ,, ३।१२
९—कविदर्पण-राजस्थान प्राच्य विद्या, प्रतिष्ठान जोधपुर, सन् १९६२
१०-११—रत्नशेखर : छन्द-कोश (कविदर्पण गत) ,, ,, ,,
१२-१३—स्वयम्भूछन्द— ,, ,, ,,
१४—वैदिक-छदोमीमांसा पृ० ६१

प्रसिद्ध है। प्रो० एच० डी० वेल्हणकर[1] ने इनका समय ६००-६०० वि० स० का मध्य माना है। जयदेव जैन कवि थे। इन्होने अपना यह ग्रंथ पिंगल के अनुकरण पर लिखा है। लौकिक-छदो की निरूपण शैली पिंगल से भिन्न है। छन्दो का विवेचन सस्कृत-परम्परा के अनुकूल और अत्यन्त व्यवस्थित है।

इसमे आठ अध्याय हैं। द्वितीय और तृतीय अध्याय मे वैदिक-छन्दो का निरूपण है। सभवत जैन लेखक होने के कारण ही इस ग्रन्थ का विशेष प्रसार न हो सका।

४ गाथालक्षण—जैन कवि नन्दिताढ्य की यह रचना हैं। श्री वेल्हणकर[2] के मतानुसार इनका समय ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियो मे माना जा सकता है। प्राकृत-अपभ्रंश परम्परा के छन्दःशास्त्रीय ग्रन्थो में यह प्राचीनतम ग्रथ है। नन्दिताढ्य द्वारा इस ग्रथ मे जिन छदो का चयन किया गया है वे केवल जैनागमो मे ही उपलब्ध हैं। ग्रथकार ने गाथावर्ग के विविध छन्दो का विस्तार से वर्णन किया है। लेखक के दृष्टिकोण से अपभ्रंश-भाषा हेय है।[3] ग्रथ की भाषा प्राकृत है।

५ वृत्तजातिसमुच्चय—विरहाक की यह रचना है। डॉ० वेल्हणकर[4] के के मतानुसार इनका समय ६वी, १०वी शताब्दी या इससे भी पूर्व माना जा सकता है। पिंगल के पश्चात् मात्रिक-छदो का सर्वाधिक विवेचन इसी ग्रथ मे प्राप्त है। इसमे ६ परिच्छेद हैं। भाषा प्राकृत है किन्तु पाचवें परिच्छेद में वर्णिकवृत्तो के लक्षण सस्कृत मे हैं। ग्रथ मे यति का उल्लेख नही है अत. सम्भव है ये यति-विरोधी सम्प्रदाय के हो। इस ग्रथ मे मगणादि गणो के स्थान पर पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग है जो कि पूर्ववर्ती ग्रथो मे प्राप्त नही है।

६ छन्दोनुशासन—इसके प्रणेता कवि जयदेव कन्नड प्रान्तीय दिगम्बर जैन थे। डॉ० वेल्हणकर[5] ने इनका समय १००० ई० के लगभग माना है। पिंगल एव जयदेव की परम्परा के अनुसार यह ग्रथ भी आठ अध्यायो मे विभक्त है। इसमे अपभ्रंश के मात्रिक-छन्दो का विवेचन भी प्राप्त है। छदो के लक्षण कारिका-शैली मे हैं, उदाहरण स्वतन्त्ररूप से प्राप्त नही हैं।

१—देखें, जयदामन् की भूमिका—हरितोषमाला, बम्बई
२—देखें, कविदर्पण —गाथालक्षण की भूमिका—रा प्रा वि प्र जोधपुर, सन् १६६२
३—गाथालक्षण पद्य ३१
४—देखें, वृत्तजातिसमुच्चय की भूमिका—राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, सन् १६६२
५—देखें, जयदामन् की भूमिका—हरितोषमाला, बम्बई

७ स्वयम्भूछन्द—इसके प्रणेता कविराज स्वयम्भू जैन हैं। कर्त्ता के संबध मे विद्वानो के अनेक मत[1] हैं किन्तु डॉ० वेल्हणकर[2] ने इनका समय १०वीं शती का उतरार्द्ध माना है। स्वयंभू अपभ्रंश-भाषा के श्रेष्ठ कवि हैं। अपभ्रंश छन्द-परम्परा की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण कृति है। कवि ने मगणादि गणो का प्रयोग न करके 'छ प च त द'[3] पारिभाषिक शब्दो के आधार से छन्दो के लक्षण कहे हैं। इस ग्रंथ मे छदों के उदाहरण-रूप मे विभिन्न प्राकृत-कवियो के २०६ पद्य उद्धृत हैं। लेखक ने कवियो के नाम भी दिये हैं।

८ रत्नमञ्जूषा—अज्ञातकर्त्तृक जैन-कृति है। वेल्हणकर[4] ने इसका समय हेमचन्द्र से पूर्व स्वीकार किया है, अतः ११-१२वी शती माना जा सकता है। इसमे आठ अध्याय हैं लेखक ने वर्णिकवृत्तो का समान प्रमान और वितान शीर्षक से विभाजन किया है। मगणादि-गणो की परिभाषा भी लेखक की स्वतन्त्र है। यह पारिभाषिक शब्दावली सम्भवत पूर्ववर्त्ती एव परवर्त्ती कवियो ने स्वीकार नही की है।

९ वृत्तरत्नाकर—इसके प्रणेता कश्यपवशीय पथ्वेकभट्ट के पुत्र केदार-भट्ट हैं। कीथ[5] ने इनका समय १५वी शती माना है किन्तु ११९२ की हस्त-लिखित प्रति प्राप्त होने से एव ११वी शती की इसी ग्रंथ की त्रिविक्रम की प्राचीन टीका प्राप्त होने से वेल्हणकर[6] ने इनका सत्ताकाल ११वी शताब्दी ही स्वीकार किया हैं। पिंगल के अनुकरण पर इसकी रचना हुई हैं। जयदेवच्छन्दस् की तरह इसमें भी छन्दो के लक्षण लक्ष्य-छदो मे ही देकर लक्षण और उदाहरण का एकीकरण किया गया है। इस ग्रंथ का प्रसार सर्वाधिक रहा है।

१०. सुवृत्ततिलक—इसके प्रणेता क्षेमेन्द्र का समय कीथ[7] ने हेमचन्द्र के पूर्व अथवा ११वी शती माना है। मेकडानल[8] के अनुसार क्षेमेन्द्र की बृहत्कथामजरी

१–डॉ० भोलाशंकर व्यास प्राकृतपैंगलम् भा० २ पृ० ३६५, डॉ० शिवनन्दनप्रसाद मात्रिक छन्दो का विकास पृ० ४५-४६

२–देखें, स्वयम्भूछन्द की भूमिका–राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, सन् १९६२

३–तुलना के लिये देखें, इसी ग्रंथ का प्रथम परिशिष्ट

४ देखें, रत्नमञ्जूषा की भूमिका–भारतीय ज्ञानपीठ काशी, १९४९ ई०

५–कीथ ए हिस्ट्री आव् संस्कृत लिटरेचर पृ० ४१७

६–देखें, जयदामन् की भूमिका–हरितोषमाला बम्बई

७–कीथ : ए हिस्ट्री आव् संस्कृत लिटरेचर, पृ० १३५

८–आयर ए मेकडॉनल . हिस्ट्री आव् संस्कृत लिटरेचर पृ० ३७६

की रचना १०३४ ई० में हुई थी। अतः क्षेमेन्द्र का समय ११वीं शती निश्चित है। क्षेमेन्द्र ने इस ग्रंथ में पहले छन्द का लक्षण दिया है और तदुपरांत अपने ग्रंथों से उदाहरण दिये हैं। छंदों के नाम दो बार आये हैं, एक बार लक्षण में और दूसरी बार उदाहरण में। यह ग्रन्थ तीन विन्यासों में विभक्त है। क्षेमेन्द्र के विचार में विशेष रसों या प्रसंगों के लिए विशेष छंद ही उपयुक्त और पर्याप्त प्रभावशाली होते हैं। ग्रंथकार के अनुसार उपजाति पाणिनि का, मन्दाक्रांता कालिदास का, वंशस्थ भारवि का और शिखरिणी भवभूति का प्रिय छंद रहा है।

११. श्रुतबोध—इसके लेखक कालिदास कहे जाते हैं। कीथ ने इस बात का कोई आधार नहीं माना। कुछ लोग वररुचि को भी इसका लेखक मानते हैं[1]। कृष्णमाचारी[2] तो कालिदासों में से तीसरा कालिदास मानते हैं। गैरोला के अनुसार ये ■ या ८वीं शताब्दी के कोई अन्य कालिदास होंगे। युधिष्ठिर मीमांसक[3] के अनुसार इस कालिदास का समय १२वीं शती था। संभव है यह मान्यता उचित हो और यह कालिदास राजा भोज के सखा के रूप में लोक-कथाओं में ख्याति प्राप्त कालिदास हो। लक्षण में ही उदाहरण का गतार्थ हो जाना इस ग्रंथ की सब से बड़ी विशेषता है। इसका भी प्रसार सर्वाधिक रहा है।

१२. छन्दोऽनुशासन—इसके प्रणेता कलिकाल-सर्वज्ञ हेमचन्द्र पूर्णतलगच्छीय श्रीदेवचन्द्रसूरि के शिष्य हैं। अणहिलपुर पत्तन के नृपति सिद्धराज जयसिंह की सभा के ये प्रमुखतम विद्वान् थे और महाराजा कुमारपाल के ये धर्मगुरु थे। इनका समय वि० सं० ११४५-१२२९ माना जाता है। ये बहुमुखी प्रतिभा वाले लेखक और वैज्ञानिक-दृष्टि-सम्पन्न आचार्य एवं शास्त्र-प्रणेता थे। हेमचन्द्र ने अपने इस ग्रंथ को पिंगल, जयदेव और जयकीर्ति के अनुकरण पर ही आठ अध्यायों में ग्रथित किया है। वैतालीय और मात्रासमक के कुछ नये भेद जिनका उल्लेख पिंगल, जयदेव, विरहांक, जयकीर्ति आदि पूर्ववर्ती आचार्यों ने नहीं किया, हेमचन्द्र ने प्रस्तुत किये हैं। इसमें लगभग सातसौ आठसौ छंदों का निरूपण प्राप्त है। नवीन मात्रिक-छंदों की दृष्टि से इस ग्रंथ का सर्वाधिक महत्त्व है।

हेमचन्द्र ने इस ग्रंथ पर स्वोपज्ञ टीका[4] भी बनाई है। इस टीका में हेमचन्द्र ने

१-कीथ : ए हिस्ट्री ग्राव् संस्कृत लिटरेचर, पृ० ४१६

२-एम० कृष्णमाचारी : ए हिस्ट्री ग्राव् क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर, पृ० ९०८

३-देखें, वैदिक-छन्दोमीमांसा पृ० ६२

४-डॉ० एच० डी० वेलणकर-सम्पादित टीकासहित यह ग्रंथ सिंघी जैनग्रंथमाला में प्रकाशित है।

छदो के नामान्तर देते हुये 'इति भरत.' कह कर जो नामभेद दिये हैं उनमे से निम्नलिखित छद वर्तमान मे प्राप्त भरत के नाट्यशास्त्र में उपलब्ध नही हैं, और यति-विरोधी आचार्यों मे गणना होने से सभव है कि नाट्यशास्त्र मे निरूपित छदो के अतिरिक्त भरत ने छद शास्त्र पर कोई स्वतन्त्र ग्रथ भी लिखा हो। भरत के नाम से उल्लिखित अनुपलब्ध छदो की तालिका निम्न है :—

३ अक्षर[1]	घू:	६ अक्षर		गिरा
,, ,,	तडित्	७	,,	शिखा
४ ,,	ललिता	,,	,,	भोगवती
,, ,,	जया	,,	,,	द्रुतगति.
५ ,,	भ्रमरी	१०	,,	पुष्पसमृद्धि:
,, ,,	वागुरा	,,	,,	रुचिरा
,, ,,	कुन्तलतन्वी	११	,,	अपरवक्त्रम्
,, ,,	शिखा	,,	,,	द्रुतपदगति
,, ,,	कमलमुखी	,,	,,	रुचिरमुखी
६ ,,	नलिनी	१३	,,	मनोवती
,, ,,	वीथी			

१३ कविदर्पण—यह अज्ञात जैन-कर्तृक कृति है। छदो के उदाहरणो मे जिनसिंहसूरि-रचित चूडाल-दोहक[1] का उदाहरण है। जिनसिंहसूरि खरतर-गच्छीय द्वितीय जिनेश्वरसूरि के शिष्य हैं, इनका शासनकाल १३००-१३४१ तक का है। कविदर्पण का सर्वप्रथम उल्लेख स० १३६५ मे रचित अजितशाति-स्तव की टीका में जिनप्रभसूरि ने किया है जो कि जिनसिंहसूरि के शिष्य हैं। अत यह अनुमान किया जा सकता है कि इसक प्रणेता जिनसिंहसूरि के शिष्य और जिनप्रभसूरि के गुरुभ्राता ही होगे।

यह ग्रथ प्राकृतभाषा में ६ उद्देशो मे विभक्त है। छन्दो के वर्गीकरण तथा लक्षण निर्देश से इसकी मौलिकता प्रकट होती है। प्राकृत-अपभ्रश की परम्परा मे इसका यथेष्ट महत्त्व है।

१४. छन्द.कोष—इसके प्रणेता रत्नशेखरसूरि हेमतिलकसूरि के शिष्य हैं। इनका समय १५वी शती है। यह ग्रथ प्राकृतभाषा मे है। इसमे कुल ७४ पद्य हैं। इस ग्रथ के छदो का विवेचन छदो व्यवहार के अधिक निकट है और तद्युगीन छदो के स्वरूप-विकास के अध्ययन की दृष्टि से यह महत्त्वपूर्ण है।

१—कविदर्पण, पृ० २४

१५ प्राकृत-पिंगल—इसके प्रणेता के सम्बन्ध मे विद्वानो मे मतभेद है किन्तु डॉ० भोलाशकर व्यास[1] के अनुसार हरिब्रह्म या हरिहर इसका कर्त्ता माना जा सकता है और प्राकृतपिंगल का सकलन-काल १४वी शती का प्रथम चरण मान सकते हैं। इसमे मात्रिक और वर्णिकवृत्त नाम से दो परिच्छेद हैं। लक्षणो मे ग्रन्थकार ने टादिगण, प्रस्तारभेद, नाम, पर्याय एव भगणादिगणो की पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग किया है।

अपभ्रंश और हिन्दी मे प्रयुक्त मात्रिक-छदो के अध्ययन के लिए यह ग्रंथ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। वर्णिकवृत्तो के लिए सस्कृत-साहित्य में जो स्थान पिंगलकृत छद सूत्र का है, मात्रिक-छदो के लिए वही स्थान प्राकृतपिंगल का है।

१६ वाणीभूषण—इसके प्रणेता दामोदर मिश्र दीर्घघोषकुलोत्पन्न मैथिली ब्राह्मण है। डॉ० भोलाशकर व्यास[2] ने प्राकृतपिंगल के सग्राहक हरिहर को पितामह और रविकर को दामोदर का पिता या पितृव्य स्वीकार किया है। विद्वानो के मतानुसार दामोदर मिथिलापति कीर्त्तिसिंह के दरबार मे थे। अत दामोदर मिश्र और कविवर विद्यापति सम-सामयिक होने चाहिये। दामोदर मिश्र का समय १४३१ से १४६६ तक माना जाता है।

यह ग्रथ सस्कृत-भाषा मे है। इसमे दो परिच्छेद हैं। लक्षणो का गठन पारिभाषिक शब्दावली मे है और उदाहरण स्वरचित हैं। वस्तुत. यह ग्रंथ प्राकृत-पिंगल का सस्कृत मे रूपान्तर मात्र है।

१७ छन्दोमञ्जरी—गैरोला[3] ने लेखक का नाम दुर्गादास माना है किन्तु यह भ्रामक है। ग्रन्थ के प्रथम पद्य मे ही लेखक ने स्वय का नाम गगादास और पिता का नाम गोपालदास वैद्य एव माता का नाम सतोषदेवी लिखा है।[4] इनका समय १५वी या १६वी शताब्दी है। ग्रथकार ने स्वरचित 'अच्युतचरित महाकाव्य' और 'कसारिशतक' एव 'दिनेशशतक' का भी उल्लेख किया है।[5] छदो-

१–देखें, प्राकृतपैंगलम् भा० २, पृ० ६-२६

२– „ „ „ „ १६-१८

३–गैरोला। सस्कृत-साहित्य का इतिहास पृ० १६३

४–देव प्रणम्य गोपाल वैद्यगोपालदासज ।
सन्तोषातनयश्छन्दो गङ्गादासस्तनोत्यद ॥१॥

५–सर्ग. षोडशभि समुज्ज्वलपदैर्नव्यार्थमव्याहर्यं—
र्येनाकारि तदच्युतस्य चरितं काव्य कविप्रीतिदम् ।
कसारे शतक दिनेशशतकद्वन्द्व च तस्यात्मजो,
गगादासकवे कृतौ कुतुकिनां सच्छन्दसां मञ्जरी ॥६॥

मञ्जरी की शैली वृत्तरत्नाकर से मिलती-जुलती है। इसमें ६ स्तबक हैं। छठे स्तवक मे गद्य-काव्य और उनके भेदो पर विचार है जो कि इसकी विशेषता है।

१८ वृत्तमुक्तावली[1]—इसके प्रणेता तैलगवशीय कवि कलानिधि देवर्षि कृष्णभट्ट हैं। इस ग्रन्थ का रचनाकाल १७८८ से १७९९ के मध्य का है। इसमें तीन गुम्फ हैं :—१ वैदिक छन्द, २. मात्रिक छद, और ३. वर्णिक वृत्त। पिंगल और जयदेव के पश्चात् प्राप्त एव प्रसिद्ध ग्रन्थो मे वैदिक-छंदो का निरूपण न होने से इस ग्रथ का महत्त्व बढ जाता है। मात्रिक-गुम्फ प्राकृतपिंगल और वाणीभूषण से अनुप्राणित है। इसमे ४२ दण्डक-छदो के लक्षण एव उदाहरण प्राप्त हैं।

१९ वाग्वल्लभ—इसके प्रणेता कवि दु खभजन शर्मा हैं जो कि काशी-निवासी कान्यकुब्जवशीय प्रताप शर्मा के पौत्र और चूडामणि शर्मा के पुत्र हैं। इसकी 'वरवर्णिनी' नामक टीका की रचना दुःखभजन कवि के ही पुत्र महोपाध्याय देवीप्रसाद शर्मा ने वि० स० १९८५ मे की है, अत इसका रचना समय १९५० से १९७० वि० स० का मध्य माना जा सकता है। गैरोला ने इनका समय १६वी शती माना है जो कि भ्रामक है।[2] कवि दु खभजन ज्योतिर्विद् तो थे ही, इसीलिए जहाँ आज तक के प्राप्त छद शास्त्रो में प्रयुक्त छद प्रायश ग्रहण किये हैं तो वहाँ प्रस्तार का आधार लेकर सैकडो नवीन छद भी निर्मित किये हैं। इस ग्रथ मे कुल १५३९ छन्दो का निरूपण है। शैली वृत्त-रत्नाकर की है। प्रत्येक वर्णिकवृत्त प्रस्तार-सख्या के क्रम से दिया है।

इनके अतिरिक्त छद शास्त्र के सैकडो ग्रथ और उनकी टीकायें प्राप्त होती हैं जिनकी सूची मैंने इसी ग्रथ के ८वें परिशिष्ट में दी है।

वृत्तमौक्तिक भी छद-शास्त्र का बडा ही प्रौढ और महत्त्वपूर्ण ग्रथ है। चन्द्रशेखर भट्ट ने अपने इस ग्रथ मे जिस पाडित्य का परिचय दिया है, वह केवल उन ही तक सीमित नही था। उनकी वश-परम्परा में जैसा कि हम देखेंगे बडे बडे माने हुए प्रतिभा-सम्पन्न विद्वान् हुए, और इसमें सदेह नही कि ऐसी ज्ञान-समृद्ध परम्परा मे जिसका व्यक्तित्व विकसित हुआ हो वह अपने कृतित्व और व्यक्तित्व के लिये उन पूर्वजो का सब से अधिक ऋणी होगा। इसीलिये कवि के परिचय से पूर्व ग्रन्थ के माहात्म्य की पृष्ठभूमि को समझने के लिए सर्वप्रथम कवि के पूर्वजो का परिचय प्राप्त कर लेना भी वाछनीय है।

१—राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर से प्रकाशित

२—गैरोला : सस्कृत साहित्य का इतिहास पृ. १९३

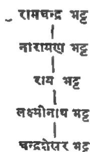
कवि-वंश-परिचय

चन्द्रशेखर भट्ट वासिष्ठ-वंशीय[1] लक्ष्मीनाथ भट्ट के पुत्र हैं। ग्रंथकार ने अपने पूर्वजों में वृद्धप्रपितामह रामचन्द्र भट्ट[2], पितामह रायभट्ट[3] और पितृचरण लक्ष्मीनाथ भट्ट का उल्लेख किया है।

भट्ट लक्ष्मीनाथ ने प्राकृतपिंगलसूत्र की टीका 'पिंगलप्रदीप' में अपना वंश-परिचय इस प्रकार दिया है —

> भट्ट. श्रीरामचन्द्रः कविविबुधकुले लब्धदेह श्रुतो यः
> श्रीमान्नारायणाख्यः कविमुकुटमणिस्तत्तनूजोऽजनिष्ट ।
> तत्पुत्रो रायभट्टः[4] सकलकविकुलख्यातकीर्तिस्तदीयो
> लक्ष्मीनाथस्तनूजो रचयति रुचिरं पिंगलार्थप्रदीपम् ॥
>
> [मंगलाचरण पद्य ५]

इस आधार से ग्रंथकार का वंशवृक्ष इस प्रकार बनता है :—



१–लक्ष्मीनाथ सुभट्टवर्य्य इति यो वासिष्ठवंशोद्भव—
स्तत्सूनुः कविचन्द्रशेखर इति प्रख्यातकीर्तिर्भुवि

[वृत्तमौक्तिक प्रशस्तिः ५]

२–अस्मद्वृद्धप्रपितामहमहाकविपण्डितश्रीरामचन्द्रभट्टविरचिते ... ।

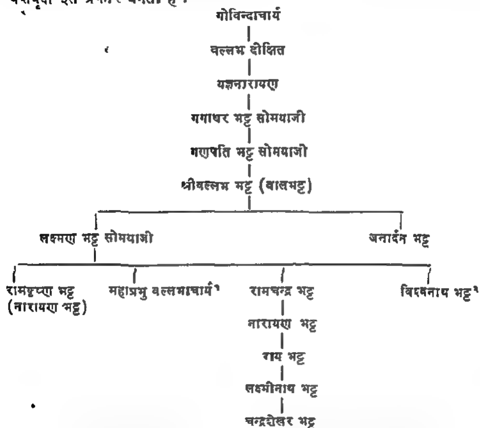
[वृत्तमौक्तिक पृ० १०७]

३–अस्मत्पितामहमहाकविपण्डितश्रीरायभट्टकृते ... ।

[वृत्तमौक्तिक पृ० १२१]

४–निर्णयसागर संस्करण और प्राकृतपैंगलम् भा० १ में 'रामभट्टः' मुद्रित है, जो कि अशुद्ध है।

ग्रंथकार के वृद्धप्रपितामह श्रीरामचन्द्र भट्ट वस्तुत. तैलगदेशीय वेलनाट यजुर्वेदान्तर्गत तैत्तिरीयशाखाध्यायी आपस्तम्ब त्रिप्रवरान्वित आगिरस बार्हस्पत्य भारद्वाजगोत्रीय श्री लक्ष्मण भट्ट सोमयाजी के पुत्र हैं; जोकि वसिष्ठवशीय ननिहाल मे मातुल के यहाँ दत्तकरूप मे चले गये थे। अत भारद्वाजीय गोत्रापेक्षया वशवृक्ष इस प्रकार बनता है :—



वासिष्ठ एव भारद्वाज दोनो गोत्रो का उल्लेख होने से यहाँ यह विचारणीय है कि रामचन्द्र भट्ट भारद्वाज-गोत्रीय थे या वसिष्ठ-गोत्रीय ? या नाम-साम्य से रामचन्द्र भट्ट एक ही व्यक्ति हैं अथवा भिन्न-भिन्न ? और, यदि एक ही व्यक्ति है तो गोत्रभेद का क्या कारण है ? तथा रामचन्द्र भट्ट यदि वल्लभाचार्य के अनुज हैं तो वल्लभ-साहित्य एव परम्परा में रामचन्द्र एव इनकी परम्परा का उल्लेख क्यो नही है ? आदि प्रश्न उपस्थित होते हैं। अत इन पर यहाँ विचार करना असगत न होगा।

१–द्रष्टव्य, काकरोली का इतिहास, द्वितीय भाग, एव वल्लभवशवृक्ष।
२–द्रष्टव्य, वल्लभवशवृक्ष।

रामचन्द्र भट्ट ने स्वप्रणीत 'गोपाललीला-महाकाव्य', 'रोमावलीशतक' एवं 'रसिकरञ्जन' की पुष्पिकाओं में स्वयं को लक्ष्मणभट्ट का पुत्र स्वीकार किया है —

'इति श्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रविरचिते गोपाललीलाख्ये महाकाव्ये कंसवधो नाम एकोनविंशः सर्गः ।'

[गोपाललीला महाकाव्य की पुष्पिका][1]

'इतिश्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रकविकृत रोमावलीशृङ्गारशतकं सम्पूर्णम् ।'

[रोमावलीशतक की पुष्पिका][2]

'इति श्रीलक्ष्मणभट्टसूनुश्रीरामचन्द्रकविकृतं सटीकं रसिकरञ्जनं नाम शृङ्गारवैराग्यार्थसमानं काव्यं सम्पूर्णम् ।'

[रसिकरञ्जन की पुष्पिका][3]

कवि ने 'कृष्णकुतूहल' महाकाव्य में स्वयं को लक्ष्मणभट्ट का पुत्र और वल्लभाचार्य का अनुज स्वीकार किया है —

'श्रीमल्लक्ष्मणभट्टवंशतिलकः श्रीवल्लभेन्द्रानुजः ।'

[कृष्णकुतूहलमहाकाव्य प्रशस्तिपद्य][4]

रोमावलीशतक में कवि ने स्वयं को लक्ष्मणभट्ट का पुत्र, वल्लभ का अनुज और विश्वनाथ का ज्येष्ठभ्राता लिखा है —

'श्रीमल्लक्ष्मणभट्टसूनुरनुजः श्रीवल्लभ श्रीगुरोः,
प्रध्येतुः सममग्रजो गुणिमणेः श्रीविश्वनाथस्य च ।'

[रोमावलीशतक पद्य १२५]

इन उल्लेखों में भारद्वाजगोत्र का कहीं भी उल्लेख न होने पर भी लक्ष्मण भट्ट एवं वल्लभाचार्य का उल्लेख होने से यह स्पष्ट है कि ये भारद्वाजगोत्रीय थे।

रामचन्द्र भट्ट ने 'कृष्णकुतूहल-महाकाव्य' के अष्टम सर्ग के प्रांत में स्वयं का वसिष्ठगोत्र स्वीकार किया है —

१–भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा सन् १८२९ में प्रकाशित
२–राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, ग्र. मं. ११२९२
३–काव्यमाला चतुर्थ गुच्छक में प्रकाशित
४–गोपाललीला भूमिका

'विद्यानिष्ठवसिष्ठगोत्रजनुषा तेन प्रणीते महा—
काव्ये कृष्णकुतूहलेंबरहृतिः सर्गोऽजनिष्टाष्टमः ।'

अतः यह स्पष्ट है कि रामचद्र भट्ट स्वयं को लक्ष्मण भट्ट का पुत्र और वल्लभ का अनुज मानते हुए भी अपना वासिष्ठ-गोत्र स्वीकार करते हैं।

चन्द्रशेखर भट्ट वृत्तमौक्तिक[1] में कृष्णकुतूहल-महाकाव्य के प्रणेता रामचद्र भट्ट को 'प्रवृद्धपितामह' शब्द से सम्बोधित करते हैं। अतः यह निर्विवाद है कि नाम-साम्य से रामचन्द्र भट्ट पृथक्-पृथक् व्यक्ति नहीं हैं अपितु वही वल्लभानुज ही हैं। ऐसी अवस्था में गोत्रभेद क्यों ? इस सम्बन्ध में कोई प्राचीन प्रमाण तो उपलब्ध नहीं है, किन्तु गोपाललीला-महाकाव्य के सम्पादक श्री बेचनराम शर्मा सम्पादकीय-उपसंहार[2] में लिखते हैं :—

'इयं वसिष्ठगोत्रोद्भवत्वोक्तिर्मातामहगोत्राभिप्रायेण ऊहनीया।'

इसी बात को स्पष्ट करते हुये भारतेन्दु हरिश्चन्द्र 'वल्लभीय सर्वस्व'[3] में लिखते हैं :—

'लक्ष्मण भट्टजी के मातुल वसिष्ठ-गोत्र के ब्राह्मण अपुत्र होने के कारण इनको (रामचन्द्र को) अपने घर ले गये थे।'

इससे स्पष्ट है कि लक्ष्मण भट्ट के मामा जो अपुत्र थे ; उन्होंने लक्ष्मणभट्ट से अपने नाती रामचद्र को दत्तक रूप में ले लिया। दत्तक रूप में जाने के पश्चात् उत्तर भारत की परम्परा के अनुसार गोत्र-परिवर्तन हो ही जाता है। लक्ष्मण भट्ट के मातुल वसिष्ठगोत्रीय थे अतः रामचंद्र का गोत्र भी भारद्वाज न हो कर वसिष्ठ हो गया। यही कारण है कि रामचंद्र भट्ट ने स्वयं का गोत्र वसिष्ठ ही स्वीकार किया है।

वसिष्ठ-गोत्र का उल्लेख करते हुए भी धर्म (दत्तक) पिता का नाम न देकर सर्वत्र लक्ष्मणभट्ट-तनुज और वल्लभानुज का उल्लेख करना अप्रासंगिक सा प्रतीत होता है किन्तु तत्त्वतः विरोध न होकर विरोधाभास ही है। इसका मुख्य कारण यह है कि रामचद्र भट्ट ने पुरुषोत्तम-क्षेत्र में वल्लभाचार्य के सहवास में रह कर

१–देखें, पृष्ठ १०६, १०७

२–देखें, गोपाललीला पृ० २५५

३–भारतेन्दु ग्रंथावली भाग ३, पृ० ५६८

सर्वशास्त्र और सर्व दर्शनो का अध्ययन आचार्यश्री से ही किया था।[1] अतः पितृ-भक्ति, भ्रातृ-प्रेम एवं भक्तिवश ही इनका सर्वत्र स्मरण किया जाना स्वाभाविक ही है।

अतएव यह तो स्पष्ट ही है कि रामचन्द्र भट्ट गोत्रापेक्षया पृथक्-पृथक् व्यक्ति न हो कर लक्ष्मण भट्ट के पुत्र एव वल्लभ के लघुभ्राता थे और दत्तकरूप में वसिष्ठ-वंश में जाने के कारण भारद्वाजगोत्रीय न रह कर वसिष्ठगोत्रीय हो गये थे। सभव है इसी कारण से पुष्टिमार्गप्रवर्तक वल्लभाचार्य के जीवनवृत्त-सम्बन्धी समग्र-साहित्य में रामचद्र भट्ट एव इनकी परम्परा का कोई उल्लेख नही हुआ हो! अस्तु।

वश-परिचय गोविन्दाचार्य से न देकर ग्रथकार-सम्मत वसिष्ठगोत्रापेक्षया रामचन्द्र भट्ट से दिया जा रहा है।

रामचन्द्र भट्ट

इनके पिताश्री का नाम लक्ष्मण भट्ट[2] और मातुश्री का नाम इल्लम्मागारू था। इनका जन्म अनुमानतः वि० स० १५४०[3] मे काशी मे हुआ था। लक्ष्मण भट्ट का स्वर्गवास वि० स० १५४६ चैत्र कृष्णा नवमी को दक्षिण मे वेंकटेश्वर बालाजी नामक स्थान पर हुआ था। स्वर्गवास के पूर्व ही लक्ष्मण भट्ट ने अपने मातामह की सपूर्ण चल और अचल संपत्ति इनको प्रदान कर अयोध्या भेज दिया था। इस सम्बन्ध मे भारतेन्दु हरिश्चन्द्र 'वल्लभीयसर्वस्व'[4] में लिखते हैं :—

'लक्ष्मण भट्टजी साक्षात् पूर्णपुरुषोत्तम के धाम अक्षरब्रह्म शेषजी के स्वरूप हैं, इससे आपको त्रिकाल का ज्ञान है। सो जब आपने अपना प्रयाण समय निकट जाना तब काकरवार से बडे पुत्र रामकृष्ण भट्टजी को बालाजी मे बुलाया और वही आपने डेरा किया। पुत्रो को अनेक शिक्षा देकर श्री रामकृष्ण भट्टजी को श्री

१–'श्रीमल्लक्ष्मणभट्टवंशतिलकः श्रीवल्लभस्य प्रियः,
शिष्यस्तच्चरणप्रमादशरणो यो रामचन्द्र कविः।'

[भारतेन्दु हरिश्चन्द्रः गोपाललीला-भूमिका]

'पुरुषोत्तमक्षेत्रे समागत्य ज्येष्ठभ्रातुः श्रीवल्लभाचार्यात् ....सकाशात् सर्वाणि शास्त्राणि मतानि च समधीत्य।'

[वेणनराम शर्मा· गोपाललीला-उपक्रमवर्णन]

२–लक्ष्मण भट्ट जी के परिचय के लिए देखें, कांकरोली का इतिहास भाग २

३–कृष्णमाचारी : हिस्टोरी ऑफ दी क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर, पृ० २६१

४–भारतेन्दु ग्रन्थावली भाग ३, पृ० ५७५

यज्ञनारायण के समय के श्रीरामचन्द्रजी पधराय दिए और कहा कि देश में जा कर सब गाव और घर आदि पर अधिकार और बेल्लिनाटि तैलग जाति की प्रथा और अपने कुल अनुसार सब धर्म पालन करो। ऐसे ही श्रीयज्ञनारायण भट्ट के समय के एक शालिग्रामजी और मदनमोहनजी श्रीमहाप्रभुजी को देकर कहा कि आप आचार्य होकर पृथ्वी मे दिग्विजय करके वैष्णवमत प्रचार करो और छोटे पुत्र रामचन्द्रजी को, जिनका काशी मे जन्म हुआ था, अपने मातामह की सब स्थावर-जगम-सपत्ति दिया।'

यहाँ लक्ष्मण भट्ट के वसिष्ठगोत्रीय मातामह और मातुल का नाम प्राप्त नही है। सम्भवत मे अयोध्या में ही रहते हो और इनकी स्थावर एव जङ्गम सम्पत्ति भी अयोध्या म ही हो। पो० कण्ठमणि शास्त्री[1] ने लक्ष्मण भट्ट का ननिहाल धर्मपुरनिवासी बह्‌वृच् मौद्‌गल्यगोत्रीय काशीनाथ भट्ट के यहाँ स्वीकार किया है जब कि प्रस्तुत ग्रथकार चन्द्रशेखर भट्ट एव भारतेन्दु हरिश्चन्द्र[2] वसिष्ठगोत्र में स्वीकार करते हैं। मेरे मतानुसार सभव है कि लक्ष्मण भट्ट के पिता बालभट्ट ने दो शादियाँ की हो। एक बह्‌वृच् मौद्‌गल्यगोत्रीया 'पूर्णा' के साथ और दूसरी वसिष्ठगोत्रीया के साथ। फिर भी यह प्रश्न तो रह ही जाता है कि लक्ष्मण भट्ट बह्‌वृच् मौद्‌गल्यगोत्रीया पूर्णा के पुत्र थे या वसिष्ठगोत्रीया के? इसका समाधान तो इस वश-परम्परा के विद्वान् ही कर सकते हैं।

कवि रामचन्द्र आदि चार भाई थे। नारायणभट्ट उपनाम रामकृष्ण भट्ट और वल्लभाचार्य बडे भाई थे और विश्वनाथ छोटे भाई थे। रामकृष्ण भट्ट काकरवाड में ही रहते थे और पिताश्री लक्ष्मण भट्ट के स्वर्गारोहण के कुछ समय पश्चात् ही सन्यासी हो गये थे।[3] केशवपुरी के नाम से ये प्रसिद्ध थे और दक्षिण-भारत के किसी प्रसिद्ध मठ के अधिपति थे। डॉ० हरिहरनाथ टडनलिखित 'वार्ता साहित्य एक बृहत् अध्ययन'[4] के अनुसार गोविन्दरायजी (सत्ताकाल

१–काकरोली का इतिहास, भाग २, पृ० ५

२–भारतेन्दु-ग्रथावली, भाग ३, पृ० ५६८

३–'ये कांकरवाड मे ही रहते थे। ये कुछ दिन पीछे सन्यासी हो गये तब केशवपुरी नाम पड़ा। ये ऐसे सिद्ध थे कि खड़ाऊ पहिने गगा पर स्थल की भाँति चलते थे।'

भारतेन्दु ग्रथावली भा० ३, पृ० ५६८

४–'हरिरायजी के प्राकट्य के सम्बन्ध मे सम्प्रदाय के ग्रथों मे यह प्रसिद्ध है कि जब श्री कल्याणरायजी दस वर्ष के थे, तब एक दिन श्रीआचार्यजी के छोटे भाई केशवपुरी जो सन्यासी हो गए थे और दक्षिणभारत के किसी बडे मठ के अधिपति थे वहाँ आए और उन्होंने श्रीगुसाईंजी से अपनी गद्दी के लिये एक बालक मांगा, जिस पर आपने कहा कि जिस बालक के पास ठाकुरजी नहीं होंगे उन्हें दे दिया जायगा। श्रीकल्याणरायजी के पास ठाकुरजी नहीं थे। इसलिये उन्हे देना निश्चित हुआ।'

वार्ता साहित्य एक बृहत् अध्ययन पृ० ३१७

१५६६-१६५०) के प्रथम पुत्र कल्याणरायजी (जन्म सं० १६२५) दस वर्ष की अवस्था मे केशवपुरी गुसाईंजी से मिले थे। अतः 'शतायु' से अधिक ये विद्यमान रहे यह निश्चित ही है। वि० स० १५६८ में रचित 'बद्रिकाश्रमवृत्तिपत्रक'[1] नामक एक पत्र आपका प्राप्त होता है ; जिसका आद्यन्त इस प्रकार है :—

गोभिर्वृतं प्रकृतिसुन्दरमन्दहास-
भापासमुल्लसितमञ्जुलवक्त्रबिम्बम् ।
श्रीनन्दनन्दनमखण्डितमण्डलाभं,
बालार्यमिश्रय(क)मद्य हृदि भावयामि ॥१॥

× × ×

विद्वद्भिः किल कृष्णदासकमुखैः शिष्यैरनेकैर्वृतः,
सोऽहं श्रीबद्री(दरी)वनान्तमगमं शुक्रे(ज्येष्ठ)शकाब्दे तथा ।
देवाम्भःपतिभूमिते (१४३३) सह नरं नारायणं वीक्षितुं,
तत्र व्यासमुनीशसङ्गतिरभूदाकस्मिकी मे शुभा ॥६॥

× × ×

श्रीवल्लभाचार्यमहाप्रभूणां नियोगतो बुद्धिमतां विभाव्य ।
श्रीरामकृष्णाभिधभट्ट एतल्लेखं व्यतानीत् पुरतश्च तेषाम् ॥११॥

द्वितीय बृहद्भ्राता महाप्रभु वल्लभाचार्य भारत के प्रसिद्धतम आचार्यों मे से है। इनका प्रतिपादित पुष्टिमार्ग आज भी भारत के कोने-कोने मे फैला हुआ है। इनही के साहचर्य में रह कर रामचन्द्र भट्ट ने समग्र शास्त्रों का अध्ययन किया था और वे इन्हें केवल बड़ा भाई ही नही अपितु अपना गुरु भी मानते थे।

रामचन्द्र भट्ट वेदान्त, मीमांसा, व्याकरण, काव्य और साहित्य-शास्त्र के विशिष्ट विद्वान् थे। न केवल विद्वान् ही अपितु वादजेता भी थे। अहर्निश शास्त्रार्थ मे रत रहने के कारण कई पराजित वादी आपके विरोधी भी हो गये थे और इसी विरोध-स्वरूप आपको विष भी दे दिया गया था।[2] इससे ऐसा प्रतीत होता है कि ये अल्पायु में ही स्वर्गलोक को प्राप्त हो गए थे।

महाकवि रामचन्द्र भट्ट ने अनेक ग्रंथों का निर्माण किया होगा ! वर्तमान में इनके रचित निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त होते हैं। जिनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है:—

१–यह पत्र वार्ता साहित्य एक बृहत् अध्ययन पृ० १४५ पर प्रकाशित है।
२–भारतेन्दु ग्रंथावली, भाग ३, पृष्ठ ५६८

१. गोपाललीला महाकाव्य :—कवि ने इस काव्य में भगवान् श्रीकृष्ण का जन्म से लेकर कंस-वध पर्यन्त भगवल्लीला का वर्णन १६ सर्गों में किया है। प्रत्येक सर्ग की पद्यसंख्या इस प्रकार है :—७०, ५८, ७८, ७१, ५१, ७६, ७६, ५२, ६२, ७५, ६१, ६०, ५१, ६१, ५६, ६१, ६६, ५७, ७६। इसमें रचना-संवत् का उल्लेख नहीं है। प्रसाद एवं माधुर्यगुण युक्त रचना है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने इसका प्रकाशन वि० सं० १६२६ में किया है; जो अब अप्राप्त है। इस काव्य का संपादन काशिक राजकीय पाठशाला के सांख्यशास्त्र के प्रधानाध्यापक पं० बेचनराम शर्मा ने किया है। इस काव्य का आद्यन्त इस प्रकार है:—

आदि— शुभममितमचिन्त्यचिद्विचित्रं श्रुतिशतमूर्धनि केशपाशकल्पम्।
दिशतु किमपि धाम कामकोटि-प्रतिमटदीधिति वासुदेवसंज्ञम् ॥१॥
वहति शिरसि नागसम्भव यः स्फुटमनुरागमिवारमभक्तियुक्ते।
कटतटविगलन्मदाम्बुदम्भ-श्रितकरुणारसमाश्रये गणेशम् ॥२॥
कविजनरसनाग्रतुङ्ग रङ्ग-स्थलकृतलास्यकलाविलासकाम्या।
कृतिषु सपदि वाञ्छितं यथेच्छं मयि दधती करुणां करोतु वाणी ॥३॥
इह विदधति भव्यकाव्यबन्धान् भुवि यशसे कवयस्तदाप्नुवन्ति।
इति भवति ममापि काव्यबन्धे अजन इवाधिगिरि स्पृहाति पङ्गोः ॥४॥
मयि विदधति काव्यबन्धमन्धाः स्तवमथवा पिशुनाः सृजन्तु निन्दाम्।
अहमिह न बिभेमि कीर्तनीयं कथमपि कृष्णकुतूहलं मया यत् ॥५॥

अन्त— विप्रैराचोप्यजादेर्विधिवदुपनयादेत्य जन्म द्वितीयं,
इद्गायत्र्याः स्वयं ता निजहृदि निदधद् ब्रह्मविच्चित्रकृत्यः।
साङ्गे वेदेऽप्यधीती सपदि किल ऋचो यस्य विश्वासरूपा-
स्तत्राभिव्यक्तमूर्तिर्विभुरपि स मम श्रीधरः श्रेयसेऽस्तु ॥७६॥

इति श्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रविरचिते गोपाललीलाख्ये महाकाव्ये कंस-वधो नाम एकोनविंशः सर्गः।

२. कृष्णकुतूहल महाकाव्य :—कवि ने इस काव्य की रचना वि.सं. १५७७ में अयोध्या में रहते हुए की है।[1] इसका भी प्रतिपाद्य विषय श्रीकृष्णलीला का

१—अब्दे नेत्रमुनीषुचन्द्रगणिते (१५७७) माघस्य पक्षे सिते—
अयोध्यायां निवसन् सतां परगुणप्रीत्यात्मना सेवकः।
श्रीमल्लक्ष्मणभट्टवंशतिलकः श्रीवत्समेन्द्रानुजः,
काव्यं कृष्णकुतूहलाख्यमकृत श्रीरामचन्द्रः कविः।
[गोपाललीला पृ० २५५]

वर्णन ही है। श्रीगोपाललीला काव्य की अपेक्षा इसकी रचना अधिक प्रौढ और प्राञ्जल है।[1] यह काव्य अद्यावधि अप्राप्त है। वेचनराम शर्मा ने गोपाललीला के सम्पादकीय उपसंहार में अवश्य उल्लेख किया है कि आरम्भ के दो पत्रेरहित इसकी प्रति मुझे प्राप्त हुई है।[2] विशेष शोध करने पर संभव है इस महाकाव्य की अन्य प्रतियाँ भी प्राप्त हो जायें।

प्रस्तुत ग्रन्थ में चन्द्रशेखर भट्ट ने भी मत्तमयूर, प्रहर्षिणी, वसन्ततिलका, प्रहरणकलिका, मालिनी, पृथ्वी, शिखरिणी, हरिणी, मन्दाक्रान्ता, शार्दूलविक्रीडित और स्रग्धरा छन्द के प्रत्युदाहरण कृष्णकुतूहल काव्य के दिये हैं। इन कतिचित् पद्यों का रसास्वादन करने से यह स्पष्ट है कि वस्तुतः यह काव्य महाकाव्य की श्रेणि का ही है।

३. रोमावलीशतकम् :—१२५ पद्यों का यह खण्ड-काव्य है। वि० सं० १५७४ में इसकी रचना हुई है। यह लघुकाव्य आलंकारिक-भाषा में शृंगार-रस से ओत-प्रोत है। इसमें कवि ने अनेक छन्दों का प्रयोग किया है। इसका आद्यंत इस प्रकार है :—

आदि— श्रीलावण्याब्धिवेलाकलितनववयोवासशालाविशाला,
लीला नानाकलानां त्वरितमपसरद्बाल्यचेलाञ्चलश्रीः।
ह्रीलामस्याग्रदूतीविहितपतिवशीभावशीलादिशिक्षा—
भीलास्यं रोमराजी हरतु हरिरुचिर्वाच्यवाचां श्रिया नः ॥१॥

व्यासस्यादिकवेः सुबन्धुविदुषो बाणस्य चान्यस्य वा,
भाषामाश्रितपूर्वपूर्ववचसामासाद्य काव्यक्रमम्।
अर्वाग्भ्यो भवभूति-भारविमुखाः श्रीकालिदासादयः,
सञ्जाताः कवयो वयं तु कविता के नाम कुर्वीमहि ॥२॥

इत्थं जातविकल्पनेऽपि कवितामार्गे कथं सञ्चर—
न्नन्वेयं कविकीर्तिमित्यतितरां जागर्ति चिन्ता चिरात्।
तत्किं काव्यमुपक्रमेयकविभिः प्राङ्मर्दिते वाङ्मये,
भारत्या विभवेऽप्यथाऽतिसुलभं किं कस्य नाभ्यस्यतः ॥३॥

१–'गोपाललीला की अपेक्षा कृष्णकुतूहल विशेष चमत्कृति बना है।'
भारतेन्दु हरिश्चन्द्र : गोपाललीला भूमिका।

२–'इदं च कृष्णकुतूहलाख्यं काव्यमारम्भे द्वितीयपत्ररहितं मयासादि।' पृ० २५५

अतिशस्तवस्तुवृत्तिर्बहुशस्तन्यस्तनवरसोपाधिः ।
अर्वाचीनकवीनामुपमाता कालिदासोऽभूत् ॥४॥

प्रभवति परनेकः पञ्चपाणां समाजे,
निजमतगुणजातिदुर्ज्जनस्त्याज्यमूर्तिः ।
श्रवणरसनचक्षुर्घ्राणहृत्त्वक्कदम्बे,
प्रथममिह मनीषी वेत्तु दृष्टान्तमन्तः ॥५॥

श्रितमूपचेतसि सतां जातु न वक्रादिभावविदम् ।
भुवि कविभिरसुलभादो विदितः सदृशः सतां सदालोडयः ॥६॥

कृतेराद्यश्लोके मतिमुपयता कर्त्तुमधुना,
न शक्यं केनापि क्वचन शतशो वर्णनमिति ।
मुहुः श्रुत्वा लोकाज्जनितकृतिकौतूहलहृदा,
मयोपक्रम्यान्यस्सपदि विहितं साहसमिदम् ॥७॥

अस्पृष्टपूर्वकविताच्छविता दधान,
उर्वीधरेश्वरमनोतिविनोदनाय ।
श्लोकैः शतेन कुतुकात् कविरामचन्द्रो,
रोमावलेः किमपि वर्णनमातनोति ॥८॥

× × ×

अन्त— श्रीमल्लक्ष्मणभट्टसूनुरनुजः श्रीवल्लभश्रीगुरो-
रध्येतुः सममग्रजो गुणिमणेः श्रीविश्वनाथस्य च ।
अब्दे वेदमुनीषुचन्द्रगणिते (१५७४) श्रीरामचन्द्रः कृती,
रोमालीशतकं व्यधात् सकुतुकादुर्वीधरप्रीतये ॥१२५॥
इति श्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रकविकृतं रोमावलीशृङ्गारशतकं सम्पूर्णम् ।

× × ×

यह काव्य अद्यावधि अप्रकाशित है। इसकी एक पूर्ण प्रति विद्याविभाग सरस्वती भंडार, कांकरोली में है,[1] और दो अपूर्ण प्रतियें राजस्थान प्राच्य-विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर[2] एवं शाखा-कार्यालय जयपुर[3] में है।

१. बंध ९६।१२, पत्र संख्या १२, प्रथमपत्र लिखित परिचय—"पुस्तकमिदं पञ्चनदि-मधुसूदनभट्टस्य । शृङ्गारशतके रामचन्द्रकविकृते ।"—किनारे पर—"लक्ष्मीनाथभट्टीयम् ।"

२. ग्रन्थ नं० ११२३५ पत्र संख्या १७

३. विश्वनाथ शारदानन्दन संग्रह, ग्रंथांक ३३५ ।

४. रसिकरञ्जन स्वोपज्ञटीका-सहित :— इस लघुकाव्य का दूसरा नाम 'शृङ्गारवैराग्यशतम्' भी है। इस काव्य की यह विशेषता है कि प्रत्येक पद्य शृङ्गार और वैराग्य दोनों अर्थों का समानरूप से प्रतिपादन करता है अर्थात् इसे द्वयाश्रय काव्य या द्विसन्धान काव्य भी कह सकते हैं। इसमें कुल १३० पद्य हैं। टीका की रचना स्वयं कवि ने वि० सं० १५८०, अयोध्या में की है। ग्रंथ का आद्यंत इस प्रकार है :—

आदि— शुभारम्भे दम्भे महितमतिडिम्भेङ्गितशतं,
मणिस्तम्भे रम्भेक्षणसकुचकुम्भे परिणतम्।
अनालम्बे लम्बे पथि पदविलम्बेऽमितसुखं,
तमालम्बे स्तम्बेरमवदनमम्बेक्षितमुखम् ॥१॥

× × ×

एकश्लोककृती पुरः स्फुरितया सत्तस्वगोष्ठ्या समं,
साधूनां सदसि स्फुटां विटकथां को वाच्यवृत्त्या नयेत्।
इत्याकर्ण्य जनश्रुतिं वितनुते श्रीरामचन्द्रः कविः,
श्लोकानां सह पञ्चविंशतिशतं शृङ्गारवैराग्ययोः ॥३॥

अन्त— प्रख्यातो यः पदार्थैरमृतहरिगजश्रीसखैः श्लोकशाली,
स्फीतातिस्फूर्तिरुद्यद्बुधमुदनुगिरं क्षीरधी रामचन्द्रः।
भ्रान्तोऽस्मिन् मन्दरागः फणिपतिगुणभृञ्जातुमञ्जेरकथं, न,
स्यादाधारोऽमुना चेदिह न विरचितः श्रीमता वाङ्मुखेन ॥१३०॥

× × ×

टीका का उपसंहार—
शृङ्गारवैराग्यशतं सपञ्चविंशत्ययोध्यानगरे व्यधत्त।
अब्दे वियद्वारणबाणचन्द्रे (१५८०), श्रीरामचन्द्रोऽनु च तस्य टीकाम् ॥
श्रीरामचन्द्रकविना काव्यमिदं व्यरचि विरतिबीजतया।
रसिकानामपि रतये शृङ्गारार्थोऽपि संगृहीतोऽत्र ॥

पुष्पिका—इति श्रीलक्ष्मणभट्टसूनु-श्रीरामचन्द्रकविकृतं सटीकं रसिकरञ्जनं नाम शृङ्गारवैराग्यार्थसमानं काव्यं सम्पूर्णम्।

यह काव्य वि० सं० १७०३ की लिखित प्रति के आधार से संपादित होकर सन् १८८७ में काव्यमाला के चतुर्थगुच्छक में प्रकाशित हो चुका है, जो कि अब प्रायः अप्राप्य है।

५ शृङ्गारवेदान्त—इसका उल्लेख केवल भारतेन्दु हरिश्चन्द्र[1] ने ही किया है, अन्य किसी भी सूचीपत्र मे इसका उल्लेख नही है। अप्राप्त ग्रंथ है। मेरे विचारानुसार सम्भव है रसिकरजन के अपरनाम 'शृङ्गारवैराग्यशत' को 'शृङ्गारवेदान्त' मान कर भारतेन्दुजी ने लिख दिया हो।

६ दशावतार-स्तोत्रम्—यह स्तोत्र अद्यावधि अप्राप्त है। इसका केवल एक पद्य वृत्तमौक्तिक[2] मे पञ्चचामर छन्द के प्रत्युदाहरण-रूप मे उद्धृत हुआ है जो निम्नलिखित है —

> अकुण्ठधार भूमिदार कण्ठपीठलोचन—
>
> क्षणध्वनद्ध्वनत्क्वतिक्वणत्कुठारभीषण।
>
> प्रकामवाम जामदग्न्यनाम रामहैहय—
>
> क्षयप्रयत्ननिर्दय व्यय भयस्य जृम्भय॥

७ नारायणाष्टकम्—यह स्तोत्र भी अद्यावधि अप्राप्त है। मदालस छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुये चन्द्रशेखरभट्ट[3] ने यह पद्य इस रूप मे दिया है—

> वृन्दातिभासि शारदिन्दावखण्डरुचि वृन्दावनव्रजवधू—
>
> वृन्दागमच्छलनमन्दावहासकृतनिन्दार्थवादकथनम्।
>
> वन्दारुविष्यदरविन्दासनक्षुभितवृन्दारकेश्वरकृत—
>
> च्छन्दानुवृत्तिमिह नन्दात्मज भुवनकन्दाकृति हृदि भजे॥

कवि की प्राप्त रचनाओ में स १५८० तक का उल्लेख है। अत अनुमान किया जा सकता है कि इसके कुछ समय पश्चात् ही विषप्रयोग से कवि स्वर्गलोक को प्रयाण कर गया हो।

नारायण भट्ट—

कवि रामचन्द्र भट्ट के पुत्र नारायण भट्ट के सम्बन्ध में कोई विशिष्ट उल्लेख प्राप्त नही है और न इनके द्वारा रचित किसी कृति का उल्लेख ही प्राप्त होता है।

रायभट्ट—

कवि रामचन्द्र भट्ट के पौत्र रायभट्ट के सम्बन्ध में भी कोई ऐतिह्य उल्लेख प्राप्त नही है। इनका बनाया हुआ शृङ्गारकल्लोल नामक १०४ पद्यो का खण्ड-

---

१-भारतेन्दु ग्रन्थावली, भाग ३, पृ० ९६८
२-वृत्तमौक्तिक पृष्ठ १२६
३- ,, १६७

काव्य अवश्य प्राप्त होता है। इस लघुकाव्य मे पार्वती और शंकर का शृङ्गार-वर्णन किया गया है। इस का उपसंहार और पुष्पिका इस प्रकार है:—

उपसंहार—गुम्फो वाचां मसृणमधुरो मालतीनामिव स्यात्,
अर्थो वाच्यः प्रसरणपरः सम्मितः सौरभस्य।
भावयंग्यो रस इव रसस्तद्विदाह्लादहेतुः-
र्मल्लिवाऽसौ सुकविरचना कस्य भूषां न धत्ते ॥१०४॥

पुष्पिका—इति श्रीविद्यागरिष्ठ-वसिष्ठ-नारायणभट्टात्मजेन महाकविपण्डित-रायभट्टेन विरचितं शृङ्गारकल्लोलनाम खण्डकाव्यम्।

चन्द्रशेखरभट्ट[1] ने मालिनी छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुए लिखा है:—
"अस्मत्पितामहमहाकविपण्डितश्रीरायभट्टकृते शृङ्गारकल्लोले खण्डकाव्ये—

मन इव रमणीनां रागिणी वारुणीयं,
हृदयमिव युवानस्तस्कराः स्वं हरन्ति।
भवनमिव मदीयं नाथ शून्यो हि देश-
स्तव न गमनमीहे पान्थ कामाभिरामा ॥"

इस पद्य को देखते हुये यह कहा जा सकता है कि काव्य-साहित्य पर आपका अच्छा अधिकार था और यह लघु रचना आपकी सफल रचना है। यह खण्ड-काव्य अद्यावधि अप्रकाशित है। इसकी १६६५ की लिखित[2] एकमात्र १२ पत्रों की प्रति विद्याविभाग सरस्वती भंडार कांकरोली में सं. कां. बंध ६६।१० पर सुरक्षित है। इस प्रति का द्वितीय पत्र अप्राप्त है।

केटलॉग केटलोगरम् भा. १ पृ. ४७१ के अनुसार रायम्भटरचित 'यति-संस्कार-प्रयोग' नामक ग्रन्थ भी प्राप्त है। रायंभट्ट यही है या अन्य कोई विद्वान्? इसका निर्णय प्रति के सम्मुख न होने से नही किया जा सकता।

लक्ष्मीनाथ भट्ट—

चन्द्रशेखर भट्ट के पिता एवं कवि रामचन्द्र भट्ट के प्रपौत्र लक्ष्मीनाथ भट्ट के सम्बन्ध मे भी कोई ऐतिह्य उल्लेख प्राप्त नही है। प्राप्त रचनाओं में पिङ्गल-प्रदीप का रचनाकाल १६५७ है, अतः इनका आविर्भाव-काल १६२० से १६३० के मध्य का माना जा सकता है। इनकी प्राप्त रचनाओं को देखते हुए यह

१. देखें, वृत्तमौक्तिक पृ. १२१.
२. भूतांगषट्विधुमिते (१६६५) वर्षे वारे निशेशस्य।
चैत्रकृष्णप्रतिपदि लिखितं हरिदासेनेदम्॥

निःसंदेह कहा जा सकता है कि इनका अलङ्कार-शास्त्र, छन्दःशास्त्र और काव्य-साहित्य पर एकाधिपत्य था। 'सकलोपनिषद्रहस्यार्णवकर्णधार'[१] विशेषण से संभव है कि इन्होंने किसी उपनिषद् पर या उपनिषद्-साहित्य पर लेखिनी अवश्य ही चलाई हो! वृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धार की रचना १६८७ में हुई है, अतः अनुमान है कि यह रचना इनकी अन्तिम रचना हो! इनके द्वारा सर्जित प्राप्त साहित्य का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है:—

१. सरस्वतीकण्ठाभरण-टीका—धाराधिपति भोजनरेन्द्र-प्रणीत इस ग्रन्थ की टीका का नाम 'दुष्करचित्रप्रकाशिका' है। टीकाकार ने इसमें रचना संवत् नहीं दिया है। टीका के नाम से ऐसा प्रतीत होता है कि यह विस्तृत परिमाणवाली टीका न होकर दुर्गम स्थलों का विवेचन मात्र है। इसकी एकमात्र ४६ पत्रों की कीटभक्षित प्रति एशियाटिक सोसायटी, कलकत्ता के संग्रह में सुरक्षित है। इसका आद्यन्त इस प्रकार है:—

आदि— स्मारं स्मारमुदारदारविरहव्याधिव्यथाव्याकुलं,
रामं वारिधिबन्धबन्धुरयशःसम्पृष्टदिङ्मण्डलम्।
श्रीमद्भोजकृतप्रबन्धजलधौ सेतुः कवीनां मुदो
हेतुं संरचयामि बन्धविविधव्याख्यातकौतूहलैः ॥१॥

अन्त— श्रीरायभट्टतनयेन नयान्वितेन,
धाराधिनाथनृपतेः सुमतेः प्रबन्धे।
प्रोचे यदेव वचनं रचनं गुणानां,
वाग्देवताऽपि परितुष्यति तेन माता ॥१॥

कुर्वन्तु कवयः कण्ठे दुष्करार्थसुमालिकाम्।
लक्ष्मीनाथेन रचितां वाग्देवीकण्ठभूषणे ॥२॥

पुष्पिका— इति श्रीमद्रायभट्टात्मज-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टविरचिता सरस्वती-कण्ठाभरणालङ्कारे दुष्करचित्रप्रकाशिका समाप्ता।

२. प्राकृतपिङ्गल-टीका—इस टीका का नाम पिङ्गलप्रदीप या छन्दःप्रदीप है। इसकी रचना सं. १६५७ में हुई है। प्रौढ एवं प्राञ्जल भाषा में विशद शैली में विवेचन होने से यह टीका छन्दःशास्त्रियों के लिये सचमुच प्रदीप के समान ही है। इसका आद्यन्त इस प्रकार है—

---

१. देखें, वृत्तमौक्तिक पृ. २६१, २६४, २६६, २६६, ३०१ आदि

आदि— गोपीपीनपयोधरद्वयमिलच्चेलाञ्चलाकर्षण-
क्ष्वेलिव्यापृतचारुचञ्चलकराम्भोज व्रजत्कानने ।
द्राक्षामञ्जुलमाधुरीपरिणमद्वाग्विभ्रम तन्मना-
गद्वैत समुपास्महे यदुकुलालम्ब विचित्र मह. ॥१॥

लम्बोदरमवलम्बे स्तम्बेरमवदनमेकदन्तवरम् ।
अम्बेक्षितमुखकमल य वेदो नापि तत्त्वतो वेद ॥२॥

गङ्गाशीतपयोभयादिव मिलद् भालाक्षिकीलादिव,
व्यालक्ष्वेलजफूत्कृतादिव सदा लक्ष्म्यापवादादिव ।
स्त्रीशापादिव कण्ठकालिमकुहूसान्निध्ययोगादिव,
श्रीकण्ठस्य कृश करोतु कुशल शीतद्युति. श्रीमताम् ॥३॥

विहितदया मन्देष्वपि दत्वानन्देन वाड्मयं देहम् ।
शब्देऽर्थे सन्देहव्ययाय वन्दे चिर गिर देवीम् ॥४॥

भट्टश्रीरामचन्द्रः कविविबुधकुले लब्धदेह श्रुतो य,
श्रीमान्नारायणाख्य कविमुकुटमणिस्तत्तनूजोऽजनिष्ट ।
तत्पुत्रो रायभट्ट सकलकविकुलख्यातकीर्त्तिस्तदीयो,
लक्ष्मीनाथस्तनूजो रचयति रुचिर पिङ्गलार्थप्रदीपम् ॥५॥

श्रीरायभट्टतनयो लक्ष्मीनाथ समुल्लसत्प्रतिभः ।
प्राय पिङ्गलसूत्रे तनुते भाष्य विशालमति ॥६॥

जलौकसा तुल्यतमं खले कि रम्येवि दोषग्रहणस्वभावे ।
मतां परानन्दनमन्दिराणा चमत्कृति मत्कृतिरातनोतु ॥७॥

यन्न सूर्येण सभिन्न नापि रत्नेन भास्वता ।
तत्पिङ्गलप्रदीपेन नाशयतामान्तर तम. ॥८॥

यद्यस्ति कौतुक वश्छन्द सन्दर्भविज्ञाने ।
सन्त पिङ्गलदीप लक्ष्मीनाथेन दीपित पठत ॥९॥

विन्ध्य मत्कृतिरियं चमत्कृति चेन्न चेतसि सता विधास्यति ।
भारती व्रजतु भारतीयया लज्जया परमसौ रसातलम् ॥१०॥

अन्त— इत्यादि गद्यकाव्येषु मया किञ्चित्प्रदर्शितम् ।
विशेषस्तत्र तत्रापि नोक्तो विस्तरशङ्कया ॥१॥

मन्द पथ नास्यमि सत्पदार्थमित्याकलय्यानु मया प्रदीप्तम् ।
छन्द प्रदीप कवयो विलोक्य छन्द समस्त स्वयमेव वित्त ॥२॥

अब्दे भास्करवाजिपाण्डवरसक्ष्मा (१६५७) मण्डलोद्भासिते,
भाद्रे मासि सिते दले हरिदिने वारे तमिस्रापतेः ।
श्रीमत्पिङ्गलनागनिर्मितवरग्रन्थप्रदीपं मुदे,
लोकानां निखिलार्थसाधकमिमं लक्ष्मीपतिर्निर्ममे ॥३॥
विशिष्टस्नेहभरितं सत्पात्रपरिकल्पितम् ।
स्फुरद्वृत्तदशं छन्दःप्रदीपं पश्यत स्फुटम् ॥४॥
छन्दःप्रदीपकः सोऽयमखिलार्थप्रकाशकः ।
लक्ष्मीनाथेन रचितस्तिष्ठत्वाचन्द्रतारकम् ॥५॥

पुष्पिका—इत्यालङ्कारिकचक्रचूडामणिश्रीमद्रायभट्टात्मजश्रीलक्ष्मीनाथभट्टविरचिते पिङ्गलप्रदीपे वर्णवृत्ताख्यो द्वितीयः परिच्छेदः समाप्तः ।

डा. भोलाशंकर व्यास द्वारा सम्पादित प्राकृतपैङ्गलम्, भा. १ में यह टीका प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी वाराणसी द्वारा सन् १९५९ में प्रकाशित हो चुकी है ।

३. उदाहरणमञ्जरी—यह ग्रन्थ अद्यावधि अप्राप्त है। लक्ष्मीनाथ भट्ट की यह स्वतन्त्र कृति प्रतीत होती है । इस ग्रन्थ में केवल छन्दों के ही नहीं, अपितु विपुल संख्या में प्राप्त छन्द-भेदों के उदाहरण भी दिये गये हैं। यही कारण है कि स्वयं लक्ष्मीनाथ ने पिंगलप्रदीप[1] में और भट्ट चन्द्रशेखर ने वृत्तमौक्तिक[2] में गाथा, स्कन्धक, दोहा आदि छन्द-भेदों के उदाहरणों के लिये 'उदाहरणमञ्जरी' देखने का आग्रह किया है । सं० १६५७ में रचित पिंगलप्रदीप में उल्लेख होने से यह निश्चित है कि इसकी रचना १६५७ के पूर्व ही हो चुकी थी ।

केटलागस् केटलॉगरम्, भाग २ पृष्ठ १३ पर इसका नाम उदाहरणचन्द्रिका दिया है, जो कि भ्रमवाचक है ।

४. वृत्तमौक्तिक-द्वितीयखण्ड का अंश—प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रथम-खण्ड की रचना चन्द्रशेखर भट्ट ने १६७५ में पूर्ण की है और द्वितीय-खण्ड की समाप्ति होने के पूर्व ही चन्द्रशेखर इस लोक से प्रयाण कर गये । प्रयाण करने के पूर्व इन्होंने अपनी आन्तरिक अभिलाषा अपने पिता लक्ष्मीनाथ भट्ट को बतलाई कि मेरे इस ग्रंथ को आप पूर्ण कर दें । सुयोग्य, प्रतिभाशाली, पाण्डवचरित आदि महाकाव्यों के प्रणेता, विनयशील पुत्र की अन्तिम अभिलाषा के अनुसार ही शोकसन्तप्त लक्ष्मीनाथ भट्ट ने अपने पुत्र की कीर्ति को अक्षुण्ण रखने के लिये तत्काल ही सं० १६७६ कार्तिकी पूर्णिमा के दिन इस ग्रंथ को पूर्ण कर दिया ।

१–देखें, पृष्ठ १६२, १६४, १६७, ४०६, ४०६,
२–देखें, पृष्ठ १०, १३, १४, १६, १७, २१, २४,

याते दिवं सुतनये विनयोपपन्ने,
श्रीचन्द्रशेखरकवौ किल तत्प्रबन्धः ।
विच्छेदमाप भुवि तद्वचसैव सार्द्धं,
पूर्णीकृतश्च स हि जीवनहेतवेऽस्य ॥८॥

श्रीवृत्तमौक्तिकमिदं लक्ष्मीनाथेन पूरितं यत्नात् ।
जीयादाचन्द्रार्कं जीवातुर्जीवलोकस्य ॥९॥

× × ×

रसमुनिरसचन्द्रैर्भाविते (१६७६) वैक्रमेऽब्दे,
सितदलकलितेऽस्मिन्कार्त्तिके पौर्णमास्याम् ।
अतिविमलमतिः श्रीचन्द्रमौलिर्वितेने,
रुचिरतरमपूर्वं मौक्तिकं वृत्तपूर्वम् ॥६॥

यहाँ यह विचारणीय है कि द्वितीय खंड का कितना अंश चन्द्रशेखरभट्ट ने लिखा है और कितने अंश की पूर्ति लक्ष्मीनाथ भट्ट ने की है ? इसका निर्णय करने के लिये वृत्तमौक्तिक का अंतरंग आलोडन आवश्यक है।

ग्रंथकार की शैली सूत्रकार की तरह संक्षिप्त शैली नहीं है, प्रत्येक छन्द का लक्षण कारिकारूप में न देकर उसी लक्षणयुक्त पूर्ण पद्य में दिया है जिससे छन्द का लक्षण और विराम स्पष्ट हो जाते हैं और वह लक्षण उदाहरण का भी कार्य दे सकता है। पश्चात् स्वयं रचित उदाहरण और प्राचीन महाकवियों के प्रत्युदाहरण दिये हैं। और दूसरी बात, तत्समय में या प्राचीन छन्द शास्त्रों में प्रयोग-प्राप्त प्रत्येक छन्द का लक्षण देने का प्रयत्न किया है। इस प्रकार की शैली हमें द्वितीय-खण्ड के प्रथमवृत्तनिरूपण प्रकरण तक ही प्राप्त होती है। द्वितीय प्रकरण से छन्दों का संक्षिप्तीकरण दृष्टिगोचर होता है। कतिपय स्थलों पर छन्दों के लक्षण उदाहरण-स्वरूप न होकर कारिका-सूत्ररूप में प्राप्त होते हैं। और, उस कारिका को स्पष्ट करने के लिये स्वोपज्ञ टीका प्राप्त होती है, जो कि प्रथम प्रकरण तक प्राप्त नहीं है। साथ ही, पीछे के प्रकरणों में छन्द शास्त्रों के प्रचलित छन्दों के भी लक्षण न देकर अन्य ग्रंथ देखने का संकेत किया है एवं कई उदाहरणों के लिये 'ऊह्यम्' कह कर या प्रथमचरण मात्र ही दिया है। अतः यह अनुमान कर सकते हैं कि प्रथम प्रकरण तक की रचना चन्द्रशेखर भट्ट की है और द्वितीय प्रकरण से ६वें प्रकरण तक की रचना लक्ष्मीनाथ भट्ट की है। किन्तु, तृतीय प्रकरण में 'प्रचितक' दण्डक का लक्षण छन्द सूत्रकार आचार्य

पिङ्गल-सम्मत दो नगण, आठ रगण[1] का प्राप्त है, जब कि लक्ष्मीनाथ भट्ट ने 'पिंगलप्रदीप'[2] मे प्रचितक का लक्षण दो नगण, सात यगण स्वीकार किया है। दो नगण, सात यगण के लक्षण को 'वृत्तमौक्तिक मे 'सर्वतोभद्र' दण्डक का लक्षण माना है और मतान्तर का उल्लेख करते हुए लिखा है—'एतस्यैवान्यत्र 'प्रचितक' इति नामान्तरम्।'[3] अत मेरे मतानुसार चतुर्थ अर्द्धसम-प्रकरण तक की रचना चन्द्रशेखर भट्ट की है और पचम विषमवृत्त-प्रकरण से अन्त तक की रचना लक्ष्मीनाथ भट्ट की होनी चाहिये। अस्तु

५. **वृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धार**—चन्द्रशेखरभट्ट रचित वृत्तमौक्तिक-प्रथम खण्ड के प्रथम गाथा-प्रकरणस्थ पद्य ५१ से ८६ तक के ३६ पद्यो पर यह टीका है। टीकाकार ने इसे ११ विश्रामो मे विभक्त किया है। मात्रोद्दिष्ट, मात्रानष्ट, वर्णोद्दिष्ट, वर्णनष्ट, वर्णमेरु, वर्णपताका, मात्रामेरु, मात्रापताका, वृत्तस्थ लघुगुरुसख्या-ज्ञान, वर्णमर्कटी और मात्रामर्कटी नामक विश्राम हैं। छन्द शास्त्र में यदि कोई कठिनतम विषय है तो वह है प्रस्तार। इसी प्रस्तार-स्वरूप का टीकाकार ने बहुत ही रोचक शैली मे विशद वर्णन किया है, जिससे सज्जगण सरलता के साथ इस दुष्कर प्रस्तार का अवगाहन कर सकते हैं। इस टीका की रचना स० १६८७ कार्त्तिककृष्णा पचमी[4] को हुई है। यह टीका प्रस्तुत ग्रथ में पृ० २६२ से ३२६ तक मे मुद्रित है।

६ **शिवस्तुति**—यह शायद भगवान् शिव का स्तोत्र है या अष्टक या कविकृत किसी ग्रथ का अश है निश्चयपूर्वक नही कहा जा सकता। वृत्तमौक्तिक[5] मे मदनगृह नामक मात्रिक छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुए लिखा है— 'यथा वाऽस्मत्पितु शिवस्तुतौ'। अत सभवत यह स्तोत्र ही होना चाहिए। पद्य निम्नलिखित है —

वरकलितकपाल धृतनरमाल
भालस्थानलहुतमदन कृतरिपुकदन।
भवभयहरण गिरिजारमण
सकलजनस्तुतशुभचरित गुणगणभरितम्।

१–देखें, वृत्तमौक्तिक पृ० १८४

२–'अथ प्रचितको दण्डक —प्रचितकसमभिधो धीरधीभि स्मृतो दण्डको नद्वयादुत्तरै सप्तभिर्यै। नगणद्वयादुत्तरै सप्तभिर्यगणैर्धीरधीभि सप्तविंशतिवर्णात्मकचरण प्रचितकाख्यो दण्डक स्मृत।' [प्राकृतपैंगलम् पृ० ५०६]

३–देखें, वृत्तमौक्तिक पृ० १८५

४– ,, पृ० ३२६ ५– ,, पृ० ४५

कृतफणिपतिहार त्रिभुवनसार गण ।;
दक्षमखक्षयसक्षुब्ध रमणीलुब्ध ।
गलराजितगरल गङ्गाविमल
कैलाशाचलधामकर प्रणमामि हरम् ॥

यह पूर्ण स्तोत्र अद्यावधि अप्राप्त है ।

७. नन्दनन्दनाष्टक—यह स्तोत्र भी अद्यावधि अप्राप्त है । इसका केवल एक पद्य चर्चरी छन्द के प्रत्युदाहरण-रूप मे प्राप्त है —

"यथा वा, अस्मत्तातचरणाना श्रीनन्दनन्दनाष्टके—[1]

मन्दहासविराजितं मुनिवृन्दवन्द्यपदाम्बुज,
सुन्दराधरमन्दराचलधारि चारुलसद्भुजम् ।
गोपिकाकुचयुग्मकुंकुमपङ्करूपितवक्षस ,
नन्दनन्दनमाश्रये मम किं करिष्यति भास्करि ।

८. सुन्दरीध्यानाष्टकम्—यह अष्टकस्तोत्र भी अप्राप्त है। इसका भी केवल एक पद्य चर्चरी छन्द के प्रत्युदाहरण-रूप मे प्राप्त है —

"यथा वा, तेषामेव श्रीसुन्दरीध्यानाष्टके[2]—

कल्पपादपवाटिकावृतदिव्यसौधमहार्णवे ,
रत्नसङ्घकृतान्तरीपसुनीपराजिविराजिते ।
चिन्तितार्थविधानदक्षसुरत्नमन्दिरमध्यगा ,
मुक्तिपादपवल्लरीमिह सुन्दरीमहमाश्रये ॥

९ देवीस्तुति —यह देवीस्तोत्र भी अद्यावधि अप्राप्त है। इसका केवल एक पद्य प्रस्तुत ग्रन्थ में 'हीर छन्द' के प्रत्युदाहरण-रूप मे प्राप्त है[3]—

पाहि जननि ! शम्भुरमणि ! शुम्भदलनपण्डिते !
तारतरलरत्नखचितहारवलयमण्डिते ।
भालरुचिरचन्द्रशकलशोभि सकलनन्दिते ।
देहि सततभक्तिमतुलमुक्तिमखिलवन्दिते ।

१० गङ्गावर्णन—इसका एक पद्य स्रग्धराछन्द के प्रत्युदाहरण-रूप में प्रस्तुत ग्रन्थ में प्राप्त है। सभवत कविरचित यह स्फुट पद्य हो, या हो सकता

१, २ वृत्तमौक्तिक पृ १४८
३ वृत्तमौक्तिक पृ ४३

है कि कोई लघुकाव्य का अंश हो ! पद्य निम्न है:—

संग्रामारण्यचारी विकटभटभुजस्तम्भभूभृद्विहारी ,
शत्रुक्षोणीशचेतोमृगनिकरपरानन्दविक्षोभकारी ।
माद्यन्मातङ्गकुम्भस्थलगलदमलस्थूलमुक्ताग्रहारी ,
स्फारीभूताङ्गधारो जगति विजयते खड्गपञ्चाननस्ते ॥[1]

चन्द्रशेखरभट्ट—

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रणेता चन्द्रशेखर भट्ट लक्ष्मीनाथ भट्ट के पुत्र हैं । इनकी माता का नाम लोपामुद्रा[2] है । इन्होंने अपनी अन्तिम रचना वृत्तमौक्तिक (सं० १६७५-७६) में स्वप्रणीत पाण्डवचरित महाकाव्य और पवनदूत खण्डकाव्य का उल्लेख किया है अतः ये दोनों रचनायें सं० १६७५ के पूर्व की हैं । महाकाव्य की रचना के लिए कम से कम २५-३० की अवस्था तो अपेक्षित है ही । इस अनुमान से इनका जन्म १६४० और १६४५ के मध्य माना जा सकता है । सं० १६७५ की वसन्त पंचमी और सं० १६७६ की कार्तिकी पूर्णिमा के मध्य मे इनका अल्पावस्था मे ही स्वर्गवास हो गया था । अनुमान के अतिरिक्त इनके सम्बन्ध में कोई भी ज्ञातव्य वृत्त प्राप्त नही है । चन्द्रशेखर लक्ष्मीनाथ भट्ट के एकाकी पुत्र थे या इनके और भी भाई थे ? और चन्द्रशेखर के भी कोई सन्तान थी या नही ? इनकी वंश-परंपरा यहीं लुप्त हो गई या आगे भी कुछ पीढियों तक चली ? आदि प्रश्न तिमिराच्छन्न ही हैं । इस सम्बन्ध में तो एतद्देशीय भट्ट-वंश के विद्वान् ही प्रकाश डाल सकते हैं ।

ग्रन्थकार द्वारा सर्जित साहित्य इस प्रकार है—

१. पाण्डवचरित महाकाव्य—स्वयं ग्रन्थकार ने प्रस्तुत ग्रन्थ में 'द्रुतविलम्बित, मालिनी, शार्दूलविक्रीडित और स्रग्धरा छन्द के उदाहरण एवं प्रत्युदाहरण देते हुये 'मत्कृतपाण्डवचरिते महाकाव्ये, ममैव पाण्डवचरिते,' लिखा है । अतः उल्लिखित पद्य यहाँ दिये जा रहे हैं—

मत्कृतपाण्डवचरिते महाकाव्ये कर्णवर्णनप्रस्तावे[3] —

नृपु विलक्षणमस्यपुनर्वपुस्सहजकुण्डलवर्मसुमण्डितम् ।
सकललक्षणलक्षितमद्भुतं न घटते रथकारकुलोचितम् ॥

---

१. वृत्तमौक्तिक पृ. १६०

२. छन्दःशास्त्रपयोनिधिलोपामुद्रापतिं पितरम् ।
श्रीमल्लक्ष्मीनाथं सकलागमपारगं वन्दे ॥ पृ. २९०

३. वृत्तमौक्तिक पृ. ९२.

यथा वा, तत्रैव विदुरोक्तौ—

> भिदुरमानसमाशुचिचक्षुष स विदुरो निनदैरतिभीषणैः ।
> सकलबालपराक्रमवर्णनैः सदसि भूमिपतिं समबोधयत् ॥

× × ×

यथा वा, पाण्डवचरिते[1] —

> भवनमिव ततस्ते बाणजालैरकुर्वन्,
> गजरथहयपृष्ठे बाहुयुद्धे च दक्षाः ।
> विधृतनिशितखड्गाश्चर्मणा भासमाना
> विदधुरथ समाजे मण्डलात् सव्यवामात् ॥

× × ×

यथा वा, ममैव पाण्डवचरिते अर्जुनागमने द्रोणवाक्यम्[2] —

> ज्ञानं यस्य ममात्मजादपि जना शस्त्रास्त्रशिक्षाधिकं,
> पार्थः सोऽर्जुनसंज्ञकोऽत्र सकलैः कौतूहलाद् दृश्यताम् ।
> श्रुत्वा वाचमिति द्विजस्य कवची गोधाङ्गुलित्राणवान्,
> पार्थस्तूणशरासनादिरुचिरस्तत्राजगाम द्रुतम् ॥

× × ×

यथा, ममैव पाण्डवचरिते[3]

> तुष्टेनाऽथ द्विजेन त्रिदशपतिसुतस्तत्र दत्ताभ्यनुज्ञः,
> कर्णोऽपि प्राप्तमानस्सदसि कुरुपतेर्द्वन्द्वयुद्धार्थमागात् ।
> जम्भाराति स्वसूनोरुपरि जलधरैस्सव्यधादातपत्रं,
> चण्डांशुश्चापि कर्णोपरि निजकिरणानाततानातिशीतान् ॥

इन पांचों पद्यों की रचनाशैली, शब्दयोजना, लाक्षणिकता और आलंकारिक योजना को देखते हुये निःसंदेह कह सकते हैं कि यह काव्य गुणों से परिपूर्ण महाकाव्य ही है। लघुवयस्क की रचना होते हुये भी इसमें भावों की प्रौढ़ता और भाषा की प्रांजलता परिलक्षित होती है। खेद है कि यह ग्रन्थ अद्यावधि अप्राप्त है। संभव है शोधकर्ताओं को शोध करते हुये यह महाकाव्य प्राप्त हो जाय तो ग्रन्थकार के जीवन और दर्शन पर अधिक प्रकाश डाला जा सके।

१-वृत्तमौक्तिक पृ. १२१, २-पृष्ठ १२१, ३-पृ १६०

२ पवनदूतम्—यह खण्डकाव्य है । इसको 'दूतम्' शब्द से मेघदूत या किसी दूत-काव्य की पादपूर्तिरूप तो नही समझना चाहिए किन्तु रचना इसकी मेघदूत के अनुकरण पर ही हुई हैं । कृष्ण के मथुरा चले जाने पर राधा पवन के द्वारा सदेश भेजती है और स्वय की मानसिक अवस्था का दिग्दर्शन कराती हैं । यह खण्डकाव्य भी अद्यावधि अप्राप्त हैं । इसका केवल एक पद्य प्रस्तुत ग्रन्थ मे शिखरिणी छन्द के प्रत्युदाहरण रूप मे प्राप्त है—

यथा वा, ममैव पवनदूते खण्डकाव्ये[1] —

यदा कसादीना निधनविषये यादवपुरी,
गत श्रीगोविन्द पितृभवनतोऽक्रूरसहित. ।
तदा तस्योन्मीलद्विरहदहनज्वालगहने,
पपात श्रीराधा कलिततदसाधारणगतिः ॥

३. प्राकृतपिङ्गल-'उद्योत' टीका—प्राकृतपिङ्गल मे दो परिच्छेद हैं—१ मात्रावृत्त परिच्छेद और २ वर्णिकवृत्त परिच्छेद । यह उद्योत नामक टीका प्रथम परिच्छेद पर है । इसकी रचना स १६७३ मे हुई है । वैसे तो इस पर बीसो टीकायें हैं जिनमे रविकर, पशुपति, लक्ष्मीनाथभट्ट, वशीधर आदि की मुख्य हैं, किन्तु इस टीका की विशेषता यह हैं कि प्रस्तार और मात्रिक-छदो का विवेचन लालित्यपूर्ण भाषा में होते हुये भी सरलीकरण को लिये हुय है । पाण्डित्य-प्रदर्शन की अपेक्षा वर्ण्यविषय का अधिक स्पष्टता के साथ प्रतिपादन किया है । इसकी १८वी शती की लिखित ४५ पत्रो की एकमात्र-प्रति अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर मे ग्रन्थ न ५४१२ पर सुरक्षित है । यह कृति प्रकाशन-योग्य है । इसका आद्यन्त इस प्रकार है—

आदि— अहितहृदयकील गोपनारीसुलील,
सजलजलदनील लोकसत्राणशीलम् ।
उरगि निहितमाल भक्तवृन्दस्य पाल,
कलय दनुजकाल नन्दगोपालबालम् ॥१॥
तातमरचितपिङ्गलदोषध्वस्तचितघनमोहनसतति (?)
अर्थभारयुतपिङ्गलभावोद्योतमाचरति चन्द्रशेखर ॥२॥
श्रीमत्पिङ्गलनागोक्त सूत्राणा विशदार्थिका ।
शिष्यावबोधसिद्ध्यर्थं सक्षिप्ता वृत्तिरुच्यते ॥३॥

१—वृत्तमौक्तिक पृ १३६

अन्त— श्रीमत्पिङ्गलनागोक्तमात्रावृत्तप्रकाशकम् ।
पिङ्गलोद्योतममलमविस्तृतमपि स्फुटम् ॥
हराक्षिमुनिशास्त्रेन्दुमितेऽब्दे (१६७३) मासि चाश्विने ।
सित मिते चन्द्रशेखर सव्यरीरचत् ॥

पुष्पिका—इति महामहोपाध्यायालङ्कारिकचक्रचूडामणि छन्द शास्त्रप्रस्थानपरमाचार्य-वेदान्तार्णवकर्णधार-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारकात्मज-चन्द्रशेखरभट्टविरचिताया पिङ्गलोद्योताख्याया सूत्रवृत्तौ मात्रावृत्ताख्य प्रथम प्रकाश समाप्तः । समाप्तश्चाय सूत्रवृत्तौ प्रथम खण्ड ।

सयोज्य पाणियुगल याचे साधूनह किमपि ।
मत्सररहितैर्यत्नात् सशोध्य मे क्वचित स्खलितम् ॥

भट्ट लक्ष्मीनाथ ने वृत्तमौक्तिक-वार्त्तिकदुष्करोद्धार[1] मे इस पिंगलोद्योत टीका के उद्धरण दिए हैं ।

४ वृत्तमौक्तिकम्—छन्द शास्त्र का प्रस्तुत ग्रन्थ है । इसमे दो खड हैं । प्रथम मात्रावृत्त खड, जिसकी १६७५ मे रचना हुई है और द्वितीय वर्णवृत्त खड है, जिसकी रचना १६७६ मे हुई है । इस ग्रन्थ का विशेष परिचय आगे दिया जायगा ।

केटलॉगस केटलॉगरम् भाग १, पृष्ठ १८१ पर भट्ट चन्द्रशेखर रचित गगादासीय छन्दोमजरी की टीका छन्दोमञ्जरीजीवन' का भी उल्लेख है । इसकी एकमात्र प्रति इण्डिया ऑफिस लायब्रेरी लन्दन[2] मे है, यह प्रति बगला लिपि मे लिखी हुई है । इस टीका का मगलाचरण निम्न है —

वाणी कमलामभितो दोर्भ्यामालिङ्गितो योऽसौ ।
त नारायणमादि सुरतरुकल्प सदा वन्दे ॥१॥
छन्दसां मञ्जरी तप्ताभिधेया स्फुटमानुना ।
तस्या कि जीवन न स्याच्चन्द्रशेखरभारती ॥२॥

किन्तु, इस टीका के मगलाचरण म टीकाकार ने अपना नाम चन्द्रशेखर

१–वृत्तमौक्तिक पृ० ३०६, ३१३

२–राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर के उपसचालक श्री गोपालनारायणजी बहुरा ने इण्डिया ऑफिस लायब्रेरी लन्दन के कार्यवाहकों से सम्पर्क करके इस प्रति के आद्यन्त भाग की फोटोकॉपी मंगवा कर उपलब्ध की उसके लिए मैं उनका आभारी हूँ ।—स०

भारती दिया है न कि चन्द्रशेखर भट्ट। चन्द्रशेखर भट्ट ने अपनी कृतियो मे अपने नाम के साथ कही भी 'भारती' शब्द का प्रयोग नही किया है। अपने नाम के साथ सर्वत्र भट्ट एव लक्ष्मीनाथात्मज का प्रयोग किया है। अत यह स्पष्ट है कि छन्दोमञ्जरीजीवन के कर्ता चन्द्रशेखर भट्ट नही है, अपितु कोई चन्द्रशेखर भारती हैं। सभव है चन्द्रशेखर नाम-साम्य से भ्रमवशात् सम्पादक ने लिख दिया हो!

वृत्तमौक्तिक का सारांश

नामकरण—

कवि चन्द्रशेखर भट्ट ने प्रस्तुत ग्रथ का नाम 'वृत्तमौक्तिकम्'[1] रखा है, किन्तु द्वितीय-खण्ड के ग्यारहवें प्रकरण मे 'वार्त्तिक वृत्तमौक्तिकम्'[2] तथा प्रथम खण्ड एव द्वितीय-खण्ड की पुष्पिका मे 'वृत्तमौक्तिके पिङ्गलवार्त्तिके'[3] और प्रथम-खण्ड के १,३,४,५वें प्रकरणो की तथा द्वितीय-खण्ड के प्रकरण ५, ७ से १० की पुष्पिकाओ मे 'वृत्तमौक्तिके वार्त्तिके'[4] का उल्लेख है। लक्ष्मीनाथ भट्ट ने इस ग्रथ का नाम 'वृत्तमौक्तिक-वार्त्तिक' ही स्वीकार किया है, इसीलिए टीका का नाम भी 'वृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धार'[5] रखा है। वस्तुत प्राकृतपिंगल, छन्द-सूत्र एव प्राकृतपिंगल के टीकाकार पशुपति और रविकर की टीकाओ और शम्भु[6] प्रणीत छन्दश्चूडामणि (?) के आधार एव अनुकरण पर पिंगल के वार्त्तिक-रूप मे ग्रन्थकार ने इसकी स्वतन्त्र रचना की है। अत वृत्तमौक्तिक-वार्त्तिक नाम स्वीकार कर सकते है, किन्तु मूलत अधिकाश स्थानों पर ग्रन्थकार ने एव टीकाकार महोपाध्याय मेघविजयजी ने 'वृत्तमौक्तिकम्' मौलिक नाम ही ग्रहण किया है, जो कि अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है।

ग्रन्थ का साराश—

प्रस्तुत ग्रन्थ दो खण्डो मे विभक्त हैं। प्रथम-खण्ड मात्रावृत्त खण्ड[7] और द्वितीय-खण्ड वर्णिकवृत्त खड[8] है।

१–श्रीचन्द्रशेखरकविस्तनुते वृत्तमौक्तिकम्। पृ० १,
स्पष्टार्थं वरवृत्तमौक्तिकमिति ग्रथ मुदा निर्ममे। पृ० २६०
श्रीवृत्तमौक्तिकमिदम्। पृ० २६१

२–पृ० २७२ ३–पृ० ५६ एव २६१

४–देखें पृ० १३, ३०, ४६, ४६, १६४, २०६, २१०, २६७, २७१

५–देखें, वार्त्तिक-दुष्करोद्धार का मगलाचरण एव प्रत्येक विश्राम की पुष्पिका।

६–रविकर पशुपति-पिङ्गल शम्भुग्रन्थान् विलोक्य निर्बन्धात्। पृ० २७३

७–तत्र मात्रावृत्तखण्डे प्रथमे। पृ० २७३

८–अथ द्वितीयखण्डस्य वर्णवृत्तस्य। पृ० २७६

प्रथम खंड मे छह प्रकरण हैं :—१ गाथाप्रकरण, २ षट्पदप्रकरण, ३ रड्डाप्रकरण, ४ पद्मावतीप्रकरण, ५ सवैयाप्रकरण और ६ गलितक-प्रकरण।

द्वितीय-खण्ड मे बारह प्रकरण हैं —१ वर्णवृत्त प्रकरण, २. प्रकीर्णक-वृत्त-प्रकरण, ३ दण्डक प्रकरण, ४. अर्ध-समवृत्त-प्रकरण, ५ विषमवृत्त प्रकरण, ६ वैतालीय प्रकरण, ७. यतिनिरूपण प्रकरण, ८ गद्य-निरूपण प्रकरण, ९ विरुदावली-प्रकरण, १० खण्डावली-प्रकरण, ११ विरुदावली-खण्डावली का दोषप्रकरण और १२. दोनों खण्डो की अनुक्रमणिका।

द्वितीय-खण्ड के नवम विरुदावली प्रकरण में चार अवान्तर प्रकरण हैं— १. कलिका-प्रकरण, २ चण्डवृत्त-प्रकरण, ३ त्रिभङ्गीकलिका-प्रकरण और ४ साधारण चण्डवृत्त-प्रकरण।

इस प्रकार दोनो खण्डो के १८ प्रकरण होते हैं और नवम प्रकरण के चारो अवान्तर प्रकरण सम्मिलित करने पर कुल २२ प्रकरण[1] होते हैं।

प्रथम खण्ड का सारांश

१. गाथा प्रकरण :

कवि मंगलाचरण एवं ग्रंथ-प्रतिज्ञा करके वर्णों की गुरु-लघु स्थिति का उदाहरण सहित वर्णन और लक्षण रहित काव्य का अनिष्ट फल का प्रतिपादन करता है। मात्राओं की टगणादि गणो की व्यवस्था और उनके प्रस्तार का निरूपण करते हुए मात्रिक-गणो के नाम तथा उनके पर्यायो की पारिभाषिक-सांकेतिक शब्दों की तालिका[2] देता है। पश्चात् वर्णिकवृत्तों के मगणादि गण, गणदेवता, गणों की मैत्री और गणदेवों का फलाफल प्रदर्शित है।

प्रस्तार का वर्णन करते हुये मात्रोद्दिष्ट, मात्रानष्ट, वर्णोद्दिष्ट, वर्णनष्ट, वर्णमेरु, वर्णपताका, मात्रामेरु, मात्रापताका, वृत्तद्वयस्थ गुरु-लघुज्ञान, वर्णमर्कटी और मात्रामर्कटी का दिग्दर्शन कराते हुये प्रस्तारपिंड-संख्या का निर्देश किया है; जिसके अनुसार समग्रवृत्तों की प्रस्तार संख्या १३,४२,१७,७२६ होती है।

१–उभयो खण्डयोश्चापि सम्भूयैव प्रकरणम्।
द्वाविंशति प्रकरणं रुचिरं वृत्तमौक्तिके ॥ पृ० २८९

२–पारिभाषिक शब्द संकेतों के लिए प्रथम परिशिष्ट देखें।

गाथा के विगाथा, गाहू, उद्गाथा, गाहिनी, सिंहिनी और स्कन्धक आर्या-भेदो का नामोल्लेख कर गाथा का लक्षण और आर्या[1] का सामान्य लक्षण उदाहरण सहित दिया है। प्राचीन परम्परा के अनुसार आर्या का विशिष्ट भेद दिखाया है जिसके अनुसार एक जगणयुक्त आर्या कुलीना, दो जगणयुक्त आर्या अभिसारिका, तीन जगणयुक्त आर्या रण्डा और अनेक जगणयुक्त आर्या वेश्या कहलाती है।[2] गाथा छन्द के २५ भेदो के नाम और लक्षण देकर उदाहरणो के लिये स्वपिता लक्ष्मीनाथ भट्ट रचित 'उदाहरणमजरी' देखने का सकेत किया है।

विगाथा, गाहू, उद्गाथा, गाहिनी, सिंहिनी और स्कन्धक छन्दो के उदाहरण सहित लक्षण दिये हैं और स्कन्धक छन्द के २८ भेदो के नाम और लक्षण देते हुये उदाहरणो के लिये 'उदाहरणमजरी' का उल्लेख किया है।

इस प्रकार प्रथम प्रकरण मे छन्दसख्या की दृष्टि से गाथादि ७ छद और गाथा के २५ भेद एव स्कन्धक के २८ भेदो का प्रतिपादन है।

२. षट्पद प्रकरण

इस प्रकरण मे दोहा, रसिका, रोला, गन्धानक, चौपैया, घत्ता, घत्तानन्द, काव्य, उल्लाल और षट्पद छन्दो के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं। इसमे उल्लाल छन्द का उदाहरण नही है। साथ ही दोहा के २३ भेद, रसिका के ८ भेद रोला के १३ भेद, काव्य के ४५ भेद और षट्पद के ७१ भेदो के नाम और लक्षण दिये हैं तथा इन समस्त भेदो के उदाहरणो के लिए कवि ने 'उदाहरण-मजरी' देखने का सकेत किया है। इसमे काव्य के प्रथम भेद शक्रछन्द का उदाहरण भी दिया है।

चौपैया छन्द के एक चरण मे ३० मात्रायें होती हैं। ग्रथकार ने चार चरणो का अर्थात् १२० मात्राओ का एक पाद स्वीकार कर चार पदो की ४८० मात्रा स्वीकार की है।

प्रकरण के अन्त में काव्य और षट्पद के प्राकृत और सस्कृत साहित्य के अनुसार दोषो का निरूपण है।

१–सस्कृत साहित्य मे जिसे आर्या कहते हैं, उसे प्राकृत और अपभ्र श साहित्य मे गाथा कहते हैं। "आर्येव सस्कृतेतरभाषासु गाथासज्ञेति।" हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन, पत्र १२८।

२–एकस्मात् कुलीना द्वाभ्यामप्यभिसारिका भवति।
नायकहीना रण्डा, वेश्या बहुनायका भवति ॥ पृ० ८

३. रड्डा प्रकरण

इस प्रकरण मे पज्झटिका, अडिल्ला, पादाकुलक, चौबोला और रड्डा छन्द के लक्षण एव उदाहरण हैं। अन्त मे रड्डा छन्द के सात भेद —करभी, नन्दा, मोहिनी, चारुसेना, भद्रा, राजसेना और तालकिनी के लक्षण मात्र दिये हैं और इनके उदाहरणों के लिए "सुबुद्धिभि स्वयमूह्यम्" कह कर प्रकरण समाप्त किया है।

४ पद्मावती प्रकरण :

इस प्रकरण मे पद्मावती, कुण्डलिका, गगनागण, द्विपदी, झुल्लणा, खञ्जा, शिखा, माला, चुलिआला, सोरठा, हाकलि, मधुभार, आभीर, दण्डकला, कामकला, रुचिरा, दीपक, सिंहविलोकित, प्लवगम, लीलावती, हरिगीतम्, त्रिभगी, दुर्मिलका, हीर, जनहरण, मदनगृह और मरहठा छन्दों के लक्षण एव उदाहरण हैं। हरिगीत छन्द के १ हरिगीतम्, २. हरिगीतकम, ३ मनोहर हरिगीत और ४, ५, यतिभेद से लक्षण द्वय सहित हरिगीता के लक्षण एव उदाहरण हैं।

सोरठा, हाकलि, दीपक, हीर और मदनगृह छद के प्रत्युदाहरण भी हैं।

५. सवैया प्रकरण .

इस प्रकरण मे मदिरा, मालती, मल्ली, मल्लिका, माधवी और मागधी सवैयों के लक्षण देकर क्रमश इनके उदाहरण दिये हैं। अन्त मे घनाक्षर छन्द का लक्षण एव उदाहरण दिया है।

६ गलितक प्रकरण

इस प्रकरण में गलितकम्, विगलितकम, सगलितकम्, सुन्दरगलितकम, भूषणगलितकम्, मुखगलितकम्, विलम्बितगलितकम्, समगलितकम्, अपर समगलितकम्, अपर सगलितकम्, अपर लम्बितागलितकम्, विक्षिप्तिकागलितकम्, लम्बितागलितकम्, विषमितागलितकम्, मालागलितकम्, मुग्धमालागलितकम् और उद्गलितकम् छन्दो के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं।

प्रथमखण्ड के छन्द एव भेदो का प्रकरणानुसार वर्गीकरण इस प्रकार है—

प्रकरण सख्या	छन्द सख्या	छन्द भेद नाम	भेद सख्या	मूलभेद की न्यूनता	कुल
१	७	गाथा	२५	१	५८
		स्कन्धक	२८	१	

प्रकरण सख्या	छन्द सख्या	छन्द भेद नाम	भेद सख्या	मूल भेद की न्यूनता	कुल
२	६	दोहा	२३	१	१६४
		रसिका	८	१	
		रोला	१३	१	
		काव्य	४५	१	
		षटपदी	७१	१	
३	१२	रड्डा		१	११
४	२७	हरिगीत	५	१	३१
५	७		०	०	[illegible]
६	१७		०		१७
६	७६		२१८	६	२८८

छन्द का मूल भेद, छन्द-भेद-सख्या मे सम्मिलित होने से ६ भेद कम होते हैं। अत भेद सख्या २१८ मे से ६ कम करने पर २०६ होते हैं और ७६ छद सख्या सम्मिलित करने पर कुल २८८ छन्द होते हैं। अर्थात् मूल छद ७६ और भेद २०६ हैं।

इस प्रकार कवि चद्रशेखर भट्ट ने वि स १६७५ वसत पचमी को इसका प्रथम-खण्ड पूर्ण किया है।

द्वितीय-खण्ड का साराश

१ वर्णिकवृत्त प्रकरण

कवि चद्रशेखर 'गौरीश' का स्मरण कर वर्णिक छन्द कहने की प्रतिज्ञा करता है और एकाक्षर से छब्बीस अक्षरो तक के वर्णिकवृत्तो के लक्षण एव उदाहरण देता है, जो इस प्रकार हैं —

१ अक्षर—श्री और इः छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं।

२ अक्षर—काम, मही, सार और मधु नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं।

३ अक्षर—ताली, शशी, प्रिया, रमण, पञ्चाल, मृगेन्द्र, मन्दर और कमल नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। ताली छन्द का नाम भेद नारी दिया है।

४ अक्षर—तीर्णा, धारी, नगाणिका और शुभ नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। तीर्णा छन्द का नामभेद कन्या दिया है।

५ अक्षर—सम्मोहा, हारी, हस, प्रिया और यमक नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। यमक का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

६ अक्षर—शेषा, तिलका, विमोह, चतुरस, मन्थान, शखनारी, सुमालतिका, तनुमध्या और दमनक नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। प्राकृतपिंगल के मतानुसार विमोह का विज्जोहा, चतुरस का चतुरसा, मन्थान का मन्थाना और सुमालतिका का मालती नामभेद भी दिये हैं।

७ अक्षर—शीर्षा, समानिका, सुवासक, करहञ्चि, कुमारललिता, मधुमती, मदलेखा और कुसुमतति नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं।

८ अक्षर—विद्युन्माला, प्रमाणिका, मल्लिका, तुङ्गा, कमल, माणवकक्रीडितक, चित्रपदा, अनुष्टुप् और जलद नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। मल्लिका का नाम-भेद समानिका दिया है।

९ अक्षर—रूपामाला, महालक्ष्मिका, सारग, पाइन्त, कमल, बिम्ब, तोमर, भुजगशिशुसृता, मणिमध्य, भुजङ्गसङ्गता और सुललित नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। प्राकृतपिंगल के अनुसार सारग का सारगिका और पाइन्त का पाइन्ता नामभेद दिये हैं। भुजगशिशुसृता के लिये लिखा है कि यह नाम आचार्य शम्भु एव प्राचीनाचार्यों द्वारा सम्मत है और आधुनिक छन्दशास्त्री इसका नाम भुजगशिशुभृता मानते हैं। सारग का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

१० अक्षर—गोपाल, सयुत, चम्पकमाला, सारवती, सुषमा, अमृतगति, मत्ता, त्वरितगति, मनोरम, और ललितगति नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। प्राकृतपिंगल के अनुसार सयुत का सयुता, चम्पकमाला का रुक्मवती एव रूपवती तथा मनोरम का मनोरमा नामभेद दिये हैं। सयुत और त्वरितगति छन्दो के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

११ अक्षर—मालती, बन्धु, सुमुखी, शालिनी, वातोर्मी, शालिनी-वातोर्म्युपजाति, दमनक, चण्डिका, सेनिका, इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा, इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रोपजाति, रथोद्धता, स्वागता, भ्रमरविलसिता, अनुकूला, मोटनक, सुकेशी, सुभद्रिका और बकुल नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। बन्धु का दोधक, चण्डिका का सेनिका और श्रेणी नामभेद दिये हैं। रथोद्धता का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

शालिनी-वातोर्मी-उपजाति और इन्द्रवज्रा-उपेन्द्रवज्रा-उपजाति के ग्रन्थकार ने १४-१४ भेद प्रस्तार-दृष्टि से स्वीकार किये हैं किन्तु इन प्रस्तार-भेदो

के लक्षण एवं उदाहरण नहीं दिये हैं। इनके उदाहरणों के लिये स्वपितृ-रचित ग्रन्थ[1] को देखने का संकेत किया है।

१२ अक्षर—आपीड, भुजङ्गप्रयात, लक्ष्मीधर, तोटक, सारंगक, मौक्तिकदाम, मोदक, सुन्दरी, प्रमिताक्षरा, चन्द्रवर्त्म, द्रुतविलम्बित, वंशस्थविला, इन्द्रवंशा, वंशस्थविला-इन्द्रवंशा-उपजाति, जलोद्धतगति, वैश्वदेवी, मन्दाकिनी, कुसुमविचित्रा, तामरस, मालती, मणिमाला, जलधरमाला, प्रियंवदा, ललिता, ललित, कामदत्ता, वसन्तचत्वर, प्रमुदितवदना, नवमालिनी और तरलनयन नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं।

आपीड का विद्याधर, लक्ष्मीधर का स्रग्विणी, वंशस्थविला का वंशस्थविल और वंशस्तनित, मन्दाकिनी का प्रभा, मालती का यमुना, ललिता का सुललिता, ललित का ललना और प्रमुदितवदना का प्रभा, ये नामभेद दिये हैं।

सुन्दरी, प्रमिताक्षरा, चन्द्रवर्त्म, द्रुतविलम्बित, इन्द्रवंशा, मन्दाकिनी और मालती के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं, जिसमें द्रुतविलंबित और मालती के प्रत्युदाहरण दो दो हैं।

१३ अक्षर—वाराह माया, तारक, कन्द, पङ्क्तावली, प्रहर्षिणी रुचिरा, चण्डी, मञ्जुभाषिणी, चन्द्रिका, कलहंस, मृगेन्द्रमुख, क्षमा, लता, चन्द्रलेख, सुद्युति, लक्ष्मी और विमलगति नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। माया का मत्तमयूर, मञ्जुभाषिणी का सुनन्दिनी तथा प्रबोधिता, चन्द्रिका का उत्पलिनी, कलहंस का सिंहनाद तथा कुटज, और चन्द्रलेख का चन्द्रलेखा नामभेद दिये हैं। माया के ५, तारक, प्रहर्षिणी और चन्द्रिका के एक एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

१४ अक्षर—सिंहास्य, वसन्ततिलका, चक्र, असम्बाधा, अपराजिता, प्रहरणकलिका, वासन्ती, लोला, नान्दीमुखी, वैदर्भी, इन्दुवदन, शरभी, अहिधृति, विमला, मल्लिका और मणिगण छन्द के लक्षण एवं उदाहरण हैं। इन्दुवदन का इन्दुवदना नामभेद दिया है। वसन्ततिलका, चक्र और प्रहरणकलिका के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

---

१ भेदाश्चतुर्दशैतस्या क्रमतस्तु प्रदर्शिता।
प्रस्तार्य स्वनिबन्धेषु पित्रातिस्फुटस्ततः॥ पृ. ८१

इससे संभवतः ष चकार का संकेत लक्ष्मीनाथ भट्ट रचित 'उदाहरणमंजरी' ग्रंथ की ओर ही हो।

१५ अक्षर—लीलाखेल, मालिनी, चामर, भ्रमरावलिका, मनोहंस, शरभ, निशिपालक, विपिनतिलक, चन्द्रलेखा, चित्रा, केसर, एला, प्रिया, उत्सव और उडुगण नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। लीलाखेल का सारंगिका चामर का तूणक, भ्रमरावलिका का भ्रमरावली, शरभ का शशिकला तथा यतिभेद से मणिगुणनिकर एवं स्रग्, चन्द्रलेखा का चण्डलेखा, चित्रा का चित्र और प्रिया का यतिभेद से अलि नामभेद दिये हैं।

लीलाखेल, मालिनी, चामर, भ्रमरावलिका, मनोहंस, मणिगुणनिकर, स्रग् निशिपालक, और विपिनतिलक के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं, जिसमे मालिनी के ३ प्रत्युदाहरण हैं।

१६ अक्षर—राम, पञ्चचामर, नील, चञ्चला, मदनललिता, नन्दिनी, प्रवरललित, गरुडरुत, चकिता, गजतुरगविलसित, शैलशिखा, ललित, सुकेसर, ललना और गिरिवरधृति नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। राम का ब्रह्मरूपक, पञ्चचामर का नराच, चञ्चला का चित्रसग, गजतुरगविलसित का ऋषभगजविलसित और गिरिवरधृति का अचलधृति नामभेद दिये है। पञ्चचामर तथा चञ्चला के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

१७ अक्षर—लीलाधृष्ट, पृथ्वी, मालावती, शिखरिणी, हरिणी, मन्दाक्रान्ता , वंशपत्रपतित, नर्दटक, यतिभेद से कोकिलक, हारिणी, भाराक्रान्ता, मतङ्गवाहिनी, पद्मक और दशमुखहर नामक छन्दो के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं। मालावती का प्राकृतपिंगल के अनुसार मालाधर, वंशपत्रपतित का वंशपत्रपतिता और आचार्य शम्भु के मतानुसार वंशवदन नामान्तर दिये हैं। पृथ्वी, शिखरिणी, हरिणी, मन्दाक्रान्ता, वंशपत्रपतित, नर्दटक और कोकिलक के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं, जिसमे शिखरिणी के तीन तथा हरिणी के चार प्रत्युदाहरण हैं।

१८ अक्षर—लीलाचन्द्र, मञ्जीरा, चर्चरी, क्रीडाचन्द्र, कुसुमितलता, नन्दन, नाराच, चित्रलेखा, भ्रमरपद, शार्दूलललित, सुललित और उपवनकुसुम नामक छन्दो के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं। नाराच का मञ्जुला नामान्तर दिया है। मञ्जीरा, चर्चरी, क्रीडाचन्द्र, कुसुमितलता, नन्दन और नाराच के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं जिसमें चर्चरी के पांच और नन्दन के दो प्रत्युदाहरण हैं।

१९ अक्षर—नागानन्द, शार्दूलविक्रीडित, चन्द्र, धवल, शम्भु, मेघविस्फूर्जिता, छाया, सुरसा, फुल्लदाम, और मृदुलकुसुम नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण हैं। प्राकृतपिंगलानुसार चन्द्र का चन्द्रमाला, और धवल का

धवला नामभेद दिये हैं। शार्दूलविक्रीडित के दो, चन्द्र, धवल, शम्भु और मेघविस्फूर्जिता के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२० अक्षर—योगानन्द, गीतिका, गण्डका, शोभा, सुवदना, प्लवङ्ग-भगमगल, शशाङ्कचलित, भद्रक, और अनवधिगुणगण नामक छन्दो के लक्षण सहित उदाहरण हैं। गण्डका का चित्रवृत्त एव वृत्त नामभेद दिया है। गीतिका के दो, गण्डका और सुवदना के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२१ अक्षर—ब्रह्मानन्द, स्रग्धरा, मञ्जरी, नरेन्द्र, सरसी, रुचिरा और निरुपमतिलक नामक छन्दो के लक्षण सहित उदाहरण हैं। सरसी का सुरतरु और सिद्धक नामान्तर दिया है। स्रग्धरा और मञ्जरी के दो-दो, नरेन्द्र और सरसी के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२२ अक्षर—विद्यानन्द, हसी, मदिरा, मन्द्रक, शिखर, अच्युत, मदालस और तरुवर नामक छन्दो के लक्षण सहित उदाहरण हैं। हसी का एक और मदालस के दो प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२३ अक्षर—दिव्यानन्द, सुन्दरिका, यतिभेद से पद्मावतिका, अद्रितनया, मालती, मल्लिका, मत्ताक्रीड और कनकवलय नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। अद्रितनया का अश्वललित नामान्तर दिया है। अद्रितनया और अश्वललित के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२४ अक्षर—रामानन्द, दुर्मिलका, किरीट, तन्वी, माधवी और तरलनयन नामक छन्दो के लक्षण सहित उदाहरण हैं। दुर्मिलका और तन्वी के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२५ अक्षर—कामानन्द, क्रौंचपद, मल्ली और मणिगणनामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। क्रौंचपदा का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

२६ अक्षर—गोविन्दानन्द, भुजङ्गविजृंभित, अपवाह, मागधी और कमल-दल नामक छन्दो के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं। तथा भुजगविजृंभित और अपवाह के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

उपसहार मे कवि कहता है कि इस प्रकरण मे लक्ष्य-लक्षण-सयुक्त २६५ छन्दो का निरूपण किया है और प्रत्युदाहरण के रूप मे प्राचीन कवियो के क्वचित् उदाहरण भी लिये हैं। अन्त मे लक्ष्मीनाथभट्ट रचित पिंगलप्रदीप के अनुसार समस्त वृत्तो की प्रस्तारपिंड-सख्या १३,४२,१७,७२६ बतलाई है।

इस प्रकरण के वर्णाक्षरो के अनुसार प्रस्तारसख्या, छन्दसंख्या, उदाहरण सख्या, प्रत्युदाहरण सख्या और नामभेदो की तालिका इस प्रकार है:—

वर्णाक्षर	प्रस्तार सख्या	छन्द सख्या	उदाहरण संख्या	प्रत्युदाहरण सख्या	नामभेद सख्या
१	२	२	२	×	×
२	४	४	४	×	×
३	८	८	८	×	१
४	१६	४	४	×	१
५	३२	५	५	१	×
६	६४	९	९	×	४
७	१२८	८	८	×	×
८	२५६	९	९	×	१
९	५१२	११	११	१	३
१०	१०२४	१०	१०	२	३
११	२०४८	२०	२०	१	२
१२	४०९६	३०	२९	९	८
१३	८१९२	१८	१८	८	६
१४	१६,३८४	१६	१६	३	१
१५	३२,७६८	१५	१५	११	७
१६	६५,५३६	१५	१५	२	५
१७	१,३१,०७२	१३	१३	१२	२
१८	२,६२,१४४	१२	१२	११	१
१९	५,२४,२८८	१०	१०	६	२
२०	१०,४८,५७६	९	९	४	१
२१	२०,९७,१५२	७	७	६	१
२२	४१,९४,३०४	८	८	३	×
२३	८३,८८,६०८	७	८	२	१
२४	१,६७,७७,२१६	६	६	२	×
२५	३,३५,५४,४३२	४	४	१	×
२६	६,७१,०८,८६४	५	५	२	×
		२६५	२६५	८७	५०

इस प्रकार तालिकानुसार उक्त प्रकरण मे कुल २६५ छन्द हैं, उदाहरण २६५ हैं, प्रत्युदाहरण ८७ हैं और नामभेद ५० हैं।

२. प्रकीर्णक वृत्त-प्रकरण :

इस प्रकरण मे ग्रन्थकार ने पिपीडिका, पिपीडिकाकरभ, पिपीडिकापणव और पिपीडिकामाला-नामक छन्दो के लक्षण की एक प्राचीन आचार्यों की सग्रह-कारिका दी है। स्वय के स्वतन्त्र लक्षण एव उदाहरण नही है। पश्चात् द्वितीय त्रिभगी और शालूर नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं।

३ दण्डक-प्रकरण :

इस प्रकरण मे चण्डवृष्टिप्रपात, प्रचितक, अर्ण, सर्वतोभद्र, अशोकमञ्जरी, कुसुमस्तबक, मत्तमातङ्ग और अनङ्गशेखर नामक दण्डक-वृत्तो के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं। ग्रन्थविस्तार-भय से अन्य प्रचलित दण्डकवृत्तो के लिये लक्ष्मीनाथभट्ट रचित पिंगलप्रदीप देखने के लिये आग्रह किया है।

प्रचितक दण्डक का लक्षण ग्रन्थकार ने छन्द सूत्रानुसार दो नगण और ८ रगण दिया है जो कि छन्द सूत्र और वृत्तमौक्तिक के अनुसार 'अर्ण' दण्डक का भी लक्षण है। छन्द सूत्र के अतिरिक्त समस्त छन्दःशास्त्रियो ने प्रचितक का लक्षण दो नगण, सात यगण स्वीकार किया है। ग्रन्थकार ने इस लक्षण के दण्डक को सर्वतोभद्र दण्डक लिखा है। यही कारण है कि आचार्यो के मतो को ध्यान में रख कर ही 'एतस्यैव अन्यत्र 'प्रचितक' इति नामान्तरम्'[1] लिखा है।

४ अर्धसमवृत्त-प्रकरण :

जिस छन्द मे चारो चरणो के लक्षण समान हो वह समवृत्त कहलाता है; जिस छन्द के प्रथम और तृतीय चरण तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण एक सदृश हो वह अर्धसमवृत्त कहलाता है और जिस छन्द के चारो चरणो के लक्षण विभिन्न हो वह विषमवृत्त कहलाता है।

इस अर्धसमवृत्त प्रकरण में पुष्पिताग्रा, उपचित्र, वेगवती, हरिणप्लुता, अपरवक्त्र, सुन्दरी, भद्रविराट्, केतुमती, वाङ्मती और षट्पदावली नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं। पुष्पिताग्रा के तीन, अपरवक्त्र और सुन्दरी के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं। षट्पदावली का उदाहरण नही दिया है।

---

१. वृत्तमौक्तिक पृ १८५।

५ विषमवृत्त प्रकरण .

जिस छन्द के चारो चरणो के लक्षण भिन्न-भिन्न हो उसे विषमवृत्त कहते हैं । विषमवृत्तो मे उद्गता, उद्गताभेद, सौरभ, ललित, भाव, वक्त्र, पथ्यावक्त्र और अनुष्टुप्-नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं । उद्गताभेद का ग्रन्थकार का स्वोक्त उदाहरण नही है किन्तु भारवि और माघ के दो उदाहरण हैं ।

अनुष्टुप् के लिये लिखा है कि कतिपय आचार्य इसे भी 'वक्त्र' छन्द का ही लक्षण मानते हैं और अनेक पुराणो मे नानागणभेद से यह प्राप्त होता है । अत इसे विषमवृत्त ही मानना चाहिये । पदचतुरूर्ध्वादि और उपस्थित-प्रचुपित आदि विषमवृत्तो के लिये छन्द सूत्र की हलायुध की टीका देखने का सकेत किया है ।

६ वैतालीय-प्रकरण

वैतालीय, औपच्छन्दसक, आपातलिका, नलिन, द्वितीय नलिन, दक्षिणान्तिका वैतालीय, उत्तरान्तिका-वैतालीय, प्राच्यवृत्ति, उदीच्यवृत्ति, प्रवृत्तक, अपरान्तिका और चारुहासिनी नामक वैतालीय छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं । दक्षिणान्तिका-वैतालीय का एक, प्राच्यवृत्ति के दो, उदीच्यवृत्ति का एक प्रवृत्तक का एक, अपरान्तिका के दो और चारुहासिनी के दो प्रत्युदाहरण भी दिये हैं ।

इस प्रकरण मे वृत्तो के लक्षण पूर्ण पद्यो मे न होकर सूत्र-कारिका रूप मे प्राप्त हैं और साथ ही इन कारिकाओ को स्पष्ट करने के लिये टीका भी प्राप्त है ।

७ यतिनिरूपण प्रकरण

पद्य मे जहा पर विच्छेद हो, विभजन हो, विश्राम हो, विराम हो, अवसान हो उसे यति कहते हैं । समुद्र, इन्द्रिय, भूत, इन्दु, रस, पक्ष और दिक् आदि शब्द साकाक्षी होने से यति से सम्बन्ध रखते हैं । ग्रथकार मूल-शास्त्र अर्थात् छन्द सूत्र का आलोडन कर उदाहरण सहित इस प्रकरण पर विवेचन करता है ।

पद्य ४ से ७ तक प्राचीन आचार्यों की सग्रह कारिकायें और इनकी व्याख्या दी गई हैं । ये चारो पद्य और इनकी उदाहरणसहित व्याख्या छन्द सूत्र की हलायुध टीका मे प्राप्त है । किंचित् परिवर्तन के साथ यह स्थल यहा पर ज्यो का त्यो उद्धृत किया गया है । अन्त में आचार्य भरत, आचार्य पिङ्गल, जयदेव, श्वेतमाण्डव्य,

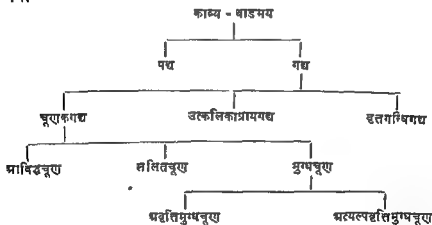
मुरारि, जयदेव (गीतगोविन्दकार), देवेश्वर, गंगादास आदि के मतो का उल्लेख करते हुये यतिभग से दोष और यतिरक्षा से काव्य-सौन्दर्य की अभिवृद्धि आदि का सुन्दर, विश्लेषण किया है।

८ गद्य प्रकरण

वाङमय दो प्रकार का है—१ पद्यात्मक और २ गद्यात्मक। पद्य-वाङ्मय का वर्णन प्रारभ के प्रकरणो मे किया जा चुका है। अत यहाँ इस प्रकरण मे गद्य-वाङ्मय का विवेचन है। गद्य के प्रमुख तीन भेद हैं—१ चूर्णगद्य, २ उत्कलिकाप्राय गद्य और ३ वृत्तगन्धि-गद्य।

चूर्णकगद्य के तीन भद हैं —१ आविद्धचूर्ण, २ ललितचूर्ण और ३ मुग्धचूर्ण। मुग्धचूर्ण के भी दो भेद हैं—१ अवृत्तिमुग्धचूर्ण और २ अत्यल्प-वृत्तिमुग्धचूर्ण।

इस प्रकार इन समस्त गद्य भेदो के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं। उत्कलिकाप्राय का एक और वृत्तगन्धि गद्य के तीन प्रत्युदाहरण भी दिये हैं। यथा —



अन्य ग्रन्थकारो ने गद्य के चार भद स्वीकार किये हैं —१ मुक्तक २ वृत्तगन्धि, ३ उत्कलिकाप्राय और ४ कुलक। इन चारो भदो के लक्षण एव उदाहरण भी ग्रथकार ने दिये हैं। उत्कलिकाप्राय गद्य का प्राकृत-भाषा का उदाहरण भी दिया है।

९ विरुदावली प्रकरण

गद्य-पद्यमयी राजस्तुति को विरुद कहते हैं और विरुदो की आवली = समूह को विरुदावली कहते हैं। यह विरुदावली पाँच प्रकरणो मे विभाजित है —

१. कलिका-प्रकरण, २. चण्डवृत्त-प्रकरण, ३. त्रिभंगीकलिका-प्रकरण, ४. साधारण चण्डवृत्त-प्रकरण और ५. विरुदावली ।

(१) द्विगादिकलिका-अवान्तर-प्रकरण

कलिका के नव भेद माने हैं :—१. द्विगा-कलिका, २. रादिकलिका, ३. मादिकलिका, ४. नादिकलिका, ५. गलादिकलिका, ६. मिश्राकलिका, ७. ७ मध्याकलिका, ८. द्विभङ्गीकलिका और ९. त्रिभङ्गीकलिका । ७. मध्याकालिका के दो भेद हैं ।

त्रिभंगी-कलिका के भी ९ भेद माने हैं :—१. विदग्धत्रिभङ्गी-कलिका, २. तुरगत्रिभङ्गी-कलिका, ३. पद्मत्रिभंगी-कलिका, ४. हरिणप्लुतत्रिभंगी-कलिका, ५. नर्त्तकत्रिभगी-कलिका, ६. भुजंगत्रिभंगी-कलिका, ७. त्रिगतात्रिभंगी-कलिका, ८. वरतनुत्रिभंगी-कलिका और ९ द्विपादिका-युग्मभगा कलिका ।

त्रिगतात्रिभगी-कलिका के दो भेद हैं :—१. ललिता-त्रिगता-त्रिभंगी-कलिका और २. वलिगता-त्रिगता-त्रिभगी-कलिका। वरतनु-त्रिभंगी-कलिका के भी दो भेद माने हैं ।

द्विपादिका-युग्मभंगा-कलिका के ६ भेद माने हैं :—१. मुग्धा-द्विपादिका युग्मभगा-कलिका, २. प्रगल्भा-द्विपादिका-युग्मभंगा-कलिका, ३. मध्या-द्विपादिका-युग्मभगा-कलिका, ४. शिथिला-द्विपादिका-युग्मभगा-कलिका, ५. मधुरा द्विपादिका-युग्मभगा-कलिका और ६. तरुणी-द्विपादिका-युग्मभगा-कलिका। इसमें मध्या-द्विपादिका-युग्मभगा कलिका के भी चार भेद माने हैं ।

इस प्रकार मूलभेद ९ और प्रतिभेद २५ कुल ३४ कलिकाओं के लक्षण और उदाहरण ग्रंथकार ने दिये है । लक्षण पूर्णपद्यों में नही हैं किन्तु पद्य के टुकड़ो मे कारिका रूप मे हैं । इन लक्षणो को स्पष्ट करने के लिये टीका भी दी है। उदाहरण के भी पूर्णपद्य नही है किन्तु प्रत्येक उदाहरण के लिये केवल एक चरण दिया है । मध्याकलिका का उदाहरण नही दिया है । यथा—

कलिका विरुदावली

द्विगा | रादि | मादि | नादि | गलादि | मिश्रा | मध्या (दो भेद) | द्विभगी | त्रिभगी

विदग्ध | तुरग | पद्य | हरिणप्लुता | नर्तक | भुजग | त्रिगता | वरतनु (दो भेद) | द्विपादिका

ललिता | वलिगता

मुग्धा | प्रगल्भा | मध्या (चार भेद) | शिथिला | मधुरा | तरुणी

(२) चण्डवृत्त-अवान्तर प्रकरण

महाकलिकाचण्डवृत्त के दो भेद हैं —१ सलक्षण और २ साधारण।

सलक्षण चण्डवृत्त के तीन भेद हैं —१ शुद्धसलक्षण, २. सकीर्णसलक्षण और ३ गर्भितसलक्षण।

शुद्ध सलक्षण चण्डवृत्त के २० भेद हैं :—१ पुरुषोत्तम, २ तिलक, ३ अच्युत, ४ वर्द्धित, ५ रण, ६ वीर, ७ शाक, ८ मातङ्गखेलित, ९ उत्पल, १० गुणरति, ११ कल्पद्रुम, १२ कन्दल, १३ अपराजित, १४ नर्तन, १५ तरत्समस्त, १६ वेष्टन, १७ अस्खलित, १८. पल्लवित, १९ समग्र और २० तुरग।

सकीर्णसलक्षण चण्डवृत्त के ५ भेद हैं —१ पङ्केरुह, २ सितकञ्ज, ३ पाण्डूत्पल, ४ इन्दीवर और ५ अरुणाम्भोरुह।

गर्भितसलक्षण चण्डवृत्त के ९ भेद हैं —१. फुल्लाम्बुज, २ चम्पक, ३ वजुल, ४ कुन्द ५ बकुलभासुर, ६. बकुलमगल, ७ मञ्जरीकोरक, ८ गुच्छक और ९ कुसुम।

भेदकथन के पश्चात् रचना-वैशिष्ट्य मे प्रयुक्त मधुर, श्लिष्ट, सश्लिष्ट, शिथिल और ह्लादि की परिभाषा और इनका विवेचन करते हुये उपर्युक्त ३४ महाकलिका-चण्डवृत्तो के क्रमश लक्षण एव उदाहरण दिये हैं। लक्षण पूर्ण पद्यो मे न होकर खण्डपद्यो मे कारिका रूप मे हैं और इन लक्षणो को स्पष्ट करने के लिये व्याख्या भी दी है। ग्रथकार ने ग्रथ विस्तार के भय से प्रत्यक चण्डवृत्त के उदाहरण मे एक-एक चरणमात्र दिया है।

श्रीरूपगोस्वामिप्रणीत गोविन्दविरुदावली से निम्नलिखित चण्डवृत्तो के प्रत्युदाहरण दिये हैं —१ तिलक, २ अच्युत, ३ वर्द्धित, ४ रण, ५ वीर, ६ मातगखेलित, ७ उत्पल, ८ गुणरति, ९ पल्लवित, १० तुरग, ११ पकेरुह, १२ सितकज, १३ पाण्डूत्पल, १४ इन्दीवर, १५ अरुणाम्भोरुह, १६ फुल्लाम्बुज, १७ चम्पक, १८ वजुल १९ कुन्द, २०. बकुलभासुर, २१ बकुलमगल, २२ मञ्जरीकोरक, २३ गुच्छ और २४ कुसुम।

वीर का वीरभद्र, रण का समग्र और तुरग का तुरग नामभेद भी दिया है।

(३) त्रिभगी कलिका अवान्तर-प्रकरण

विरुदसहित दण्डक त्रिभगी कलिका, विरुदरहित सम्पूर्ण विदग्धत्रिभगी-कलिका और मिश्रकलिका के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं। लक्षण-कारिकाओ

की टीका भी है। उदाहरण के एक-एक चरण है। तीनो ही विरुदावलियो के प्रत्युदाहरण दिये हैं जो कि रूपगोस्वामिकृत गोविन्दविरुदावली में हैं। ग्रथकार ने तीनों ही भेद चण्डवृत्त के ही प्रभेद माने हैं।

(४) साधारण चण्डवृत्त अवान्तर प्रकरण

इस प्रकरण मे साधारण चण्डवृत्ता के लक्षण एव उदाहरण दिये गये हैं।

(५) विरुदावली प्रकरण

साप्तविभक्तिकी कलिका, अक्षमयी कलिका और सर्वलघु कलिका के लक्षण देकर इन कारिकाओ की व्याख्या दी है। इन तीनों के स्वय के उदाहरण नही हैं। तीनो ही कलिकाओ के उदाहरण गोविन्दविरुदावली से उद्धृत हैं। अन्त मे समग्र कलिकाओ में प्रयुक्त विरुदो के युगपद् लक्षण कहे हैं।

देव, भूपति एव तत्तुल्यवर्णनो में धीर, वीर आदि विरुदो का प्रयोग होता है। सस्कृत प्राकृत के श्रव्यकाव्यो में शौर्य, वीर्य, दया, कीर्ति और प्रतापादि प्रधान विषयो मे कलिकादि का प्रयोग होता है। गुण, अलङ्कार, रीति, मैत्र्यनुप्रास एव छन्दाडम्बर स युक्त कलिका और विरद का निरूपण करन हुए समग्र विरुदावलियो के सामा य लक्षण दिये हैं। इसके अनुसार कलिका श्लोकविरद न्यूनातिन्यून पन्द्रह होते हैं और अधिक से अधिक नब्बे होते हैं। नब्ब कलिकाश्लोक विरद युक्त विरुदावली अखडा विरुदावली या महती विरुदावली कहलाती है। मतान्तर के अनुसार किसी कलिका के स्थान पर केवल गद्य होना है या विरद होता है और कलिका एव विरुद आशीर्वादात्मक पद्यो से युक्त होता है। प्रत्येक विरुदावली म तीन या पाच कलिकायें और इतन ही श्लोको की रचना ऐच्छिक होती है। अत में विरुदावली का फल-निर्देश है।

१०. खण्डावली प्रकरण

विरुदावली के समान ही खडावली होती है किन्तु इतना अतर है कि आदि और अत में आशीर्वादात्मक पद्य विरुदरहित होते हैं। तामरसखडावली और मञ्जरी-खडावली के लक्षणसहित उदाहरण दिये हैं। लक्षणकारिकाओ की टीका भी है। अत में कवि कहता है कि खडावली के हजारो भेद सम्भव हैं किन्तु ग्रथ विस्तारभय से मैंने इसके भेदों के उल्लख नही किये है, केवल सुकुमारमतियो के लिये मार्ग-प्रदर्शन किया है।

११ दोष प्रकरण

इस प्रकरण में विरुदावली और खण्डावली के दोषो का दिग्दर्शन कराया

है। अमैत्री, अनुप्रासाभाव, दौर्बल्य, कलाहृति, असाम्प्रत, हतौचित्य, विपरीतयुत, विशृंखल और स्खलत्तालनामक ९ दोषो के लक्षण एव उदाहरण देते हुये कहा है कि इन नव दोषो को जो विद्वान् नही जानता है और काव्य रचना करता है वह तमोलोक में उलूक होता है अर्थात् काव्य मे इन दोषो का त्याग अनिवार्य है।

१२ अनुक्रमणी-प्रकरण

रविकर, पशुपति, पिंगल एव शम्भु के छद शास्त्रो का अवलोकन कर चद्रशेखर भट्ट ने वृत्तमौक्तिक की रचना की है।

यह प्रकरण दो विभागो में विभक्त है। प्रथम विभागो ४० पद्यो का है जिसमें प्रथम-खण्ड की अनुक्रमणिका दी है और द्वितीय विभाग १८८ पद्यो का है जिसमे द्वितीय-खड की अनुक्रमणिका दी है।

प्रथम खण्डानुक्रम—इसमें मात्रावृत्त नामक प्रथम खड के छहो प्रकरणो की विस्तृत सूची है। प्रत्येक छद का क्रमश नाम दिया है और अत में छद-सख्या भेदो सहित २८८ दिखलाई है।

द्वितीय खण्डानुक्रम:—प्रथम प्रकरण में प्ररूपित अक्षरानुसार अर्थात् एक से छब्बीस अक्षर पर्यन्त छदो के क्रमश. नाम, नामभेद और प्रस्तारभेद के साथ सूची दी है और अत मे प्रस्तारपिंड की सख्या देते हुये उल्लिखित २६५ छदो की सख्या दी है। द्वितीय प्रकरण से छठे प्रकरण तक की सूची मे छदनाम और नामभेद दिये है। सप्तम यतिप्रकरण का उल्लेख करते हुये आठवें गद्य प्रकरण के भेदो का सूचन किया है और नवम तथा दसवें प्रकरण के समस्त छदो के नाम और नामभेद दिये हैं एव ग्यारहवें दोष प्रकरण का उल्लेख किया है।

अत मे दोनो खडो के प्रकरणो की सख्या देते हुये उपसहार किया है।

ग्रन्थकृत्प्रशस्ति—

वि०स० १६७६ कार्तिकी पूर्णिमा को वसिष्ठवशीय लक्ष्मीनाथ भट्ट के पुत्र चद्रशेखर भट्ट ने इसकी (द्वितीय खड) रचना पूर्ण की है। प्रशस्तिपद्य ≡ एव ६ में लिखा है कि चद्रशेखर भट्ट का स्वर्गवास हो जाने के कारण इस ग्रथ की पूर्णाहुति लक्ष्मीनाथ भट्ट ने की है।

ग्रन्थ का वैशिष्ट्य

प्रस्तुत ग्रथ का छद-शास्त्र की परम्परा में एक विशिष्ट स्थान है। इसी ग्रथ के पृष्ठांक ४१४ में उल्लिखित छद शास्त्र के १९ ग्रथ और दो टीका-ग्रथों के साथ

तुलनात्मक अध्ययन करने पर इस ग्रंथ का महत्त्व कई दृष्टियों से आंका जा सकता है। न केवल संस्कृत और प्राकृत अपभ्रंश छन्द-परम्परा की दृष्टि से ही अपितु हिन्दी छंद-परम्परा की दृष्टि से भी इस ग्रंथ को छंद शास्त्र का सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ मान सकते हैं। इस ग्रंथ की प्रमुख-प्रमुख विशेषतायें इस प्रकार हैं —

१ पारिभाषिक शब्द और गण

इस ग्रंथ में मात्रिक और वर्णिक दोनों छंदों का विधान होने से ग्रंथकार ने संस्कृत और प्राकृत-अपभ्रंश की मगणादिगण एवं टगणादिगणों की दोनों प्रणालियों का साधिकार प्रयोग किया है। स्वयंभू छंद, छंदोनुशासन और कविदर्पण आदि ग्रंथों में षट्कल, पञ्चकल, चतुष्कल आदि कलाओं का ही प्रयोग मिलता है किंतु इनके प्रस्तार-भेद, नाम और उसके कर्ण, पयोधर, पक्षिराज आदि पर्यायों का प्रयोग हमें प्राप्त नहीं होता है। इसका सर्वप्रथम प्रयोग हमें कवि विरहांक कृत वृत्तजातिसमुच्चय में प्राप्त होता है। इसके पश्चात् तो इसका प्रयोग प्राकृतपिंगल, वाणीभूषण और वाग्वल्लभ आदि अनेक ग्रंथों में प्राप्त होता है।

वृत्तमौक्तिक में ट = षट्कल, ठ = पञ्चकल ड = चतुष्कल, ढ = त्रिकल, ण = द्विकल गण स्थापित कर इनके प्रस्तारभेद, नाम और प्रत्येक के पर्याय विशदता के साथ प्राप्त हैं। साथ ही पृथक् रूप से मगणादि आठ गण भी दिये हैं। इस पारिभाषिक शब्दावली का तुलनात्मक अध्ययन के साथ परिचय मैंने इसी ग्रंथ के प्रथम परिशिष्ट में दिया है, अतः यहाँ पर पुनः पिष्टपेषण अनावश्यक है, किंतु रत्नमञ्जूषा और जानाश्रयी छन्दोविचिति में हमें एक नये रूप में पारिभाषिक शब्दावली प्राप्त होती है जिसका कि पूर्ववर्ती और परवर्ती किसी भी ग्रंथ में प्रयोग नहीं मिलता है अतः तुलना के लिये दोनों की संकेत सूची यहाँ देना अप्रासंगिक न होगा।

रत्नमञ्जूषा				वृत्तमौक्तिक
क्	और	आ	ऽऽऽ	मगण, हर
च्	"	ए	।ऽऽ	यगण, इन्द्रासन आदि
त्	"	ओ	ऽ।ऽ	रगण, सूर्य, वीणा आदि
प्	"	ई	।।ऽ	सगण, करतल, कर आदि
श्	"	अ	ऽऽ।	तगण, हीर
ष्	"	उ	ऽ।ऽ	जगण, पयोधर, भूपति आदि
स्	"	ऋ	ऽ।।	भगण, दहन, पितामह आदि

ह् और इ	।।।	नगण, भाव, रस, भामिनी आदि
य्	ऽऽ	कर्ण, सुरतलता, आदि
स्	।ऽ	ध्वज, चिह्न, चिरालय आदि
व्	।।	सुप्रिय, परम
म्	ऽ	हार, ताटंक, नूपुर आदि
न्	।	शर, मेरु, कनक, दण्ड आदि

× × × ×

जानाश्रयी छन्दोविचिति		वृत्तमौक्तिक
भ	ऽ	ग, हार, ताटंक आदि
ह	।	ल, शर, मेरु आदि
गङ्गास्	ऽऽ	गुरुयुगल, कर्ण, रसिक आदि
नदीज्	।ऽ	वलय, तोमर, पवन आदि
ननुर्	।।	सुप्रिय, परम,
नूनंसाग्	ऽऽऽ	मगण, हर,
कृशाङ्गीग्	।ऽऽ	यगण, कुञ्जर, रदन, मेघ आदि
धीवराग्	ऽ।ऽ	रगण, गरुड, भुजंगम, विहग आदि
कुरुतेल्	।।ऽ	सगण, कमल, हस्त, रत्न आदि
तेश्रीःश्वव्	ऽऽ।	तगण, हीर,
विभातिक्	।ऽ।	जगण, भूपति, कुच आदि
सातवत्	ऽ।।	भगण, तात, पद, जंघायुगल आदि
तरतिम्	।।।	नगण, रस, ताण्डव आदि
नचरतिद्	।।।।	विप्र, द्विज, बाण आदि
चन्द्रननु	ऽ।।।	अहिगण
नदीननु	।ऽ।।	कुसुम
ननुचन्द्र	।।ऽ।	शेखर
कमलिनीय्	।।।ऽ	चाप
लोलमालाप्	ऽ।ऽऽ	...
रीतिमयूरोज्	ऽ।।ऽऽ	...
धैर्यमस्तुतेट्	ऽ।ऽ।ऽ	...
ननुतरति	।।।।।	पापगण
जयनरयरण्	।।।।।।	शालि

पारिमाषिक शब्दावली का ग्रन्थकार ने सफलता के साथ विविध रूपों में प्रयोग किया है :—१. विशुद्ध टादिगण, २. टादि और मगणादि मिश्र, ३. टादि और पारिभाषिक मिश्र, ४. विशुद्ध पारिभाषिक, ५. विशुद्ध मगणादि और ६. पारिभाषिक एवं मगणादि मिश्र। उदाहरण के तौर पर प्रत्येक प्रयोग का एक-एक पद्य प्रस्तुत है :—

१. विशुद्ध टगणादि का प्रयोग—

आदौ षट्कलमिह रचय डगणत्रयमिह धेहि।
ठगणं डगण द्वयमपि घत्तानन्दे धेहि ॥३२॥ [पृ० १६]

अर्थात् घत्तानन्द नामक मात्रिक छंद में षट्कल = ६ मात्रा, डगणत्रय = चतुष्कल तीन १२ मात्रा, ठगण = पञ्चकल ५ मात्रा और डगणद्वय = चतुष्कलद्वय ८ मात्रा कुल ३१ मात्रा होती है।

२. टादि और मगणादि मिश्र का प्रयोग—

डगणं कुरु विचित्रमन्ते जगणमत्र।
मध्ये द्विलमवेहि दीपकमिति विधेहि ॥३६॥ [पृ० ३८]

अर्थात् दीपक नामक मात्रिक छंद में डगण = चतुष्कल ४ मात्रा, द्विल = दो लघु २ मात्रा और जगण = ४ मात्रा, कुल १० मात्रा होती हैं।

३. टादि और पारिभाषिक-मिश्र का प्रयोग—

यदि योगडगणकृत - चरणविरचित-द्विजगुरुयुगकरवसुचरणा।
नायक-विरहितपद - कविजनकृतमदपठनादपि मानसहरणा।
इह दशवसुमनुभिः क्रियते कविभिर्विरतिर्यदि युगदहनकला।
सा पद्मावतिका फणिपतिभणिता त्रिजगति राजति गुणबहुला ॥१॥
[पृ० ३०]

अर्थात् पद्मावतीनामक मात्रिक छद में 'योगडगण' डगण = चतुष्कल, योग = आठ अर्थात् ३२ मात्रायें होती हैं जिनमे द्विज = ।।।। चार मात्रा, गुरु-युग = ऽऽ चार मात्रा, कर = ।।ऽ सगण ४ मात्रा, वसुचरण = ऽ।। भगण चार मात्रा का प्रयोग अपेक्षित है और नायक = ।ऽ। जगण चार मात्रा का प्रयोग निषिद्ध है। इस छंद में यति १०, ८, १४ मात्रा पर होती है।

४. विशुद्ध पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग—

द्विजरसयुता कर्णद्वन्द्वस्फुरद्वरकुण्डला,
कुचतटगतं पुष्पं हारं तथा दधती मुदा।

विरुतललित सविश्राणं पदान्तगनूपुरं
रसजलनिधिच्छिन्ना नागप्रिया हरिणी मता ॥४१८॥
[पृ० १३७]

हरिणी नामक छंद १७ वर्णों का होता है। इसमे द्विज = । । । ।, रस = ।, कर्णद्वन्द्व = ऽ ऽ ऽ ऽ, कुण्डल = ऽ, कुच = । ऽ ।, पुष्प = ।, हार = ऽ, विरुत = ।, नूपुर = ऽ होते हैं अर्थात् इस छद मे, नगण, सगण मगण, रगण, सगण, लघु और गुरु होते हैं। ६, ४ और ७ पर यति होती है।

५ विशुद्ध मगणादिगणों का प्रयोग—

कुरु नगणयुगं धेहि तं भगणं ततः,
प्रतिपदविरतौ भासते रगणोऽन्ततः।
मुनिरचितयतिर्नागराजफणिप्रिया,
सकलतनुभृतां मानसे लसति प्रिया ॥३६६॥ [पृ० १२७]

१५ वर्ण के प्रियाछन्द का लक्षण है—नगण, नगण, तगण, भगण और रगण। ७ और ८ पर यति होती है।

६ पारिभाषिक और मगणादिमिश्र का प्रयोग—

पूर्वं कर्णत्रितयं कारय पश्चाद्देहि भकारं दिव्यं,
हारं वह्निप्रोक्तं धारय हस्तं देहि मकारं चान्ते।
रन्ध्रैर्वर्णैर्विश्रामं कुरु पादे नागमहाराजोक्तं,
मञ्जीराख्यं वृत्तं भावय शीघ्रं चेतसि कान्ते स्वीये ॥४४३॥
[पृ० १४३]

१८ अक्षरो के मञ्जीराछन्द का लक्षण है —कर्णत्रित्व = ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ, भकार = ऽ । ।, हार वह्नि = ऽ ऽ ऽ, हस्त = । । ऽ और मकार = ऽ ऽ ऽ, अर्थात् इसमें मगण, मगण, भगण, मगण, सगण और मगण होते हैं। यति ९-९ पर है।

इस पारिभाषिक शब्दावली के कारण यह सत्य है कि वृत्तरत्नाकर, छंदोमञ्जरी और श्रुतबोध की तरह वह बाल सरलता अवश्य हो नहीं रही किन्तु इसके सफल प्रयोग से, इस ग्रंथ में जैसा शब्दमाधुर्य, भाषा की प्राञ्जलता, रचना सौष्ठव और लालित्य प्राप्त होता है वैसा उन ग्रंथो मे कहां है ?

२ विशिष्ट छन्द—

वृत्तमौक्तिक में जिन छदो के लक्षण एव उदाहरण ग्रन्थकार ने दिये हैं उनमें से कतिपय छद ऐसे हैं जिनका पृष्ठ ४१४ पर दी हुई सन्दर्भ-ग्रंथ

सूची के प्रसिद्ध छन्दःशास्त्र के २१ ग्रन्थो मे भी उल्लेख नही हैं और कतिपय छन्द ऐसे हैं जो केवल हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन, पिंगलकृत छन्द.सूत्र, हरिहरकृत प्राकृतपिंगल और दु.खभञ्जनकृत वाग्वल्लभ मे ही प्राप्त होते हैं। इन विशिष्ट छन्दों की वर्गीकृत तालिका इस प्रकार है :—

वृत्तमौक्तिक के विशिष्ट छन्द—

मात्रिक छन्द :—कामकला, हरिगीतकम्, मनोहर हरिगीतम्, अपरा हरिगीता, मदिरा सवया, मालती सवया, मल्ली सवया, मल्लिका सवया, माधवी सवया, मागधी सवया, घनाक्षर, अपर समगलितक और अपर सगलितक।

वर्णिक छन्द.—१४ अक्षर – शरभी, अहिधृति; १६ अक्षर – सुकेसरम्, ललना; १७ अक्षर – मत्तगवाहिनी; १६ अक्षर – नागानन्द, मृदुलकुसुम; २० अक्षर – प्लवगभगमगल, अनवधिगुणगण; २१ अक्षर – ब्रह्मानन्द, निरुपमतिलक; २२ अक्षर – विद्यानन्द, शिखर, अच्युत; २३ अक्षर – दिव्यानन्द; कनकवलय; २४ अक्षर – रामानन्द, तरलनयन, २५ अक्षर–कामानन्द, मणिगुण; २६ अक्षर–कमलदल और विषमवृत्तो में भाव तथा वैतालीय छन्दो मे नलिन और अपर नलिन।

इस प्रकार मात्रिक छंद १३ और वर्णिक छन्द २४ कुल ३७ छन्द ऐसे हैं जिनका अन्य छन्द शास्त्रों मे उल्लेख नही है।

निम्नलिखित ११ छन्द केवल हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन एव वृत्तमौक्तिक मे ही प्राप्त है —

मात्रिक छन्द :—विगलितक, सुन्दरगलितक, भूषणगलितक, मुखगलितक, विलम्बितगलितक, समगलितक, विक्षिप्तिकागलितक, विषमितागलितक और मालागलितक।

वर्णिक छन्द—१३ अक्षर – सुद्युति और २१ अक्षर – रुचिरा।

१८ वर्ण का लीलाचन्द्र नामक छन्द प्राकृतपिंगल और वृत्तमौक्तिक मे ही प्राप्त है।

निम्नांकित १७ वर्णिक छंद वृत्तमौक्तिक और दुःखभजन कवि रचित वाग्वल्लभ में ही प्राप्त हैं।

८ अक्षर – जलद; ९ अक्षर – सुललित; १० अक्षर – गोपाल, ललितगति; ११ अक्षर – शालिनी-वातोर्म्युपजाति, बकुल; १३ अक्षर – वाराह, विमलगति; १४ अक्षर – मणिगण; १५ अक्षर – उडुगण; १७ अक्षर – लीलाधृष्ट; १८

अक्षर – उपवनकुसुम; २३ अक्षर – मल्लिका; २४ अक्षर – माधवी; २५ अक्षर – मल्ली, २६ अक्षर – गोविन्दानन्द और मागधी।

दो नगण और आठ रगणयुक्त प्रचितक-नामक दण्डक का प्रयोग केवल छंद सूत्र और वृत्तमौक्तिक मे ही है।

चौपैया नामक मात्रिक छंद अन्य ग्रथो में भी प्राप्त है। किन्तु जहाँ अन्य ग्रथो मे १२० मात्रा का पूर्ण पद्य माना है वहाँ इस ग्रन्थ मे १२० मात्रा का एक पद और ४८० मात्रा का पूर्ण पद्य माना है।

इस वर्गीकरण से स्पष्ट है कि अन्य ग्रथो की अपेक्षा वृत्तमौक्तिक मे छदो का वैशिष्टय और बाहुल्य है।

३. छन्दो के नाम-भेद

प्रस्तुत ग्रथ में ५० छद ऐसे हैं जिनका ग्रथकार ने प्राकृतपिंगल, आचार्य शभु एव तत्कालीन आधुनिक छदःशास्त्रियो के मतानुसार नाम-भेद दिये हैं। इन नामभेदो की तालिका ग्रथ के साराश मे और चतुर्थ परिशिष्ट (ख) मे देखी जा सकती है। इस प्रकार की नामभेदो की प्रणाली अन्य मूलग्रन्थो मे उपलब्ध नही है। हाँ, हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन की स्वोपज्ञ टीका और वृत्तरत्नाकर की नारायणभट्टी टीका आदि कतिपय टीका-ग्रन्थो में यह प्रणाली अवश्य लक्षित होती है किन्तु इतनी विपुलता के साथ नही।

इससे यह तो स्पष्ट है कि ग्रन्थकार ने प्राचीन एव अर्वाचीन अनेक छन्द शास्त्रो का आमन्थन कर प्रस्तुत ग्रन्थ द्वारा नवनीत रखने का प्रयास किया है।

४ विरुदावली और खण्डावली

ग्रन्थ के द्वितीय-खण्ड के नवम प्रकरण मे विरुदावली, दसवें प्रकरण मे खण्डावली और ग्यारहवें प्रकरण मे इन दोनो के दोषो का वर्णन है। विरुदावली में ३४ कलिका, ४० विरुदावली और २ खण्डावली के लक्षण एव उदाहरण ग्रन्थकार ने दिये हैं। यह विरुदावली कवि की मौलिक-सर्जना प्रतीत होती है, क्योकि अन्य छन्द-ग्रथो मे विरुदावली के भेद और लक्षण तो दूर रहे किन्तु इसका नामोल्लेख भी नहीं है। हाँ, इतना अवश्य है कि कवि ने २९ विरुदावलियो के उदाहरण रूपगोस्वामी प्रणीत गोविन्दविरुदावली से दिये हैं, अत. यह अनुमान किया जा सकता है कि रूपगोस्वामी के पूर्व भी इसकी परम्परा विविध-रूपो मे अवश्य विद्यमान थी, अन्यथा इतने भेद और प्रभेद कैसे प्राप्त

हो सकते थे ? संभव है, इसका कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ भी अवश्य रहा हो ! कतिपय स्फुट विरुदावलियां अवश्य प्राप्त होती हैं तथा शोध करने पर और भी प्राप्त होना संभव है किन्तु इनके भेद, प्रभेद उदाहरणों के साथ संकलन अद्यावधि अप्राप्त है। कवि ने इस विच्छिन्नप्राय परम्परा को अक्षुण्ण रख कर जो साहित्य जगत् को अमूल्य देन दी है वह श्लाघ्य ही नहीं महत्त्वपूर्ण भी है।

अद्यावधि जो संस्कृत-वाङ्मय प्रकाश में आया है उसमें विरुदावली-साहित्य पर नहीं के समान प्रकाश पड़ा है। अतः शोध-विद्वानों का कर्त्तव्य है कि वे इस अछूते और वैशिष्टयपूर्ण विरुदावली-साहित्य पर अनुसंधान कर इसके महत्त्व पर प्रकाश डालें।

५. यति एवं गद्य प्रकरण—

समग्र छन्दःशास्त्रियों ने मात्रिक और वर्णिक पद्य के पदान्त और पदमध्य में यतिविधान आवश्यक माना है। वृत्तमौक्तिककार ने भी यति प्रकरण में इस का सुन्दर विश्लेषण और विवेचन किया है। इनके मत से काव्य में मधुरता के लिये यति का बन्धन आवश्यक है। यति से काव्य में सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है। यति के बिना काव्य श्रेष्ठतर नहीं हो सकता[1]।

ग्रन्थकार के मत से भरत, पिंगल और जयदेव संस्कृत-साहित्य में यति आवश्यक मानते हैं और श्वेतमाण्डव्य आदि मुनिगण यति का बन्धन स्वीकार नहीं करते हैं[2]। जयकीर्त्ति के मतानुसार पिंगल वसिष्ठ, कौण्डिन्य, कपिल, कम्बलमुनि यति को अनिवार्य मानते है और भरत, कोहल, माण्डव्य, अश्वतर, सैतव आदि कतिपय आचार्य यति को अनावश्यक मानते हैं—

> वाञ्छन्ति यतिं पिङ्गल-वसिष्ठ-कौण्डिन्य-कपिल-कम्बलमुनयः।
> नेच्छन्ति भरत-कोहल-माण्डव्याश्वतरसैतवाद्याः केचित्॥
> [छन्दोनुशासन, १.१३]

स्वयम्भूछन्द में लिखा है—

> जयदेवपिंगला सक्कयम्मि दुच्चिय जइं समिच्छंति।
> मंडव्वभरहकासवसेयवपमुहा न इच्छंति॥१,७१॥
> [जयदेवपिंगलौ संस्कृते द्वावेव यतिं समिच्छन्ति।
> माण्डव्यभरतकाश्यपसैतवप्रमुखा न इच्छन्ति॥]

अर्थात् जयदेव और पिंगल यति मानते हैं और माण्डव्य, भरत, काश्यप, सैतव आदि नहीं मानते हैं।

१–पृ. २०४ पद्य ८   २–पृ. २०४ पद्य १०

भरत के नाट्यशास्त्र के छन्द-प्रकरण में पादान्त यति तो प्राप्त है ही साथ ही पदमध्ययति भी प्राप्त है।[१] ऐसी अवस्था में जयकीर्ति एवं स्वयम्भू-छन्दकार ने भरत को यतिविरोधी कैसे माना, विचारणीय है। वृत्तमौक्तिककार ने भरत को यतिसमर्थक ही माना है।

यति का सांगोपांग विश्लेषण छन्द सूत्र की हलायुधटीका, हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन की स्वोपज्ञटीका और वृत्तमौक्तिक में ही प्राप्त है। अन्य छन्द-शास्त्रों में कतिपय छन्द-शास्त्रियों ने इसका सामान्य-वर्णन सा ही किया है।

गद्य काव्य-साहित्य का प्रमुख अंग है। प्रस्तुत ग्रन्थ में इसके भेद, प्रभेदों के लक्षण और प्रत्येक के उदाहरण प्राप्त हैं। साथ ही अन्य आचार्यों के मतों का उल्लेख कर उनके मतानुसार ही उदाहरण भी ग्रंथकार ने दिये हैं। इस प्रकार गद्य-काव्य का विवेचन अन्य छंदग्रंथों में प्राप्त नहीं है। संभव है इसे काव्य का अंग मानकर साहित्य-शास्त्रियों के लिये छोड़ दिया हो।

६ रचना-शैली—

छन्दशास्त्र की प्राचीन और अर्वाचीन रचनाशैली अनेक रूपों में प्राप्त होती है जिनमें तीन शैलियां मुख्य हैं—१. गद्य सूत्र रूप, २. कारिका-शैली (लक्षण सम्मत चरण रूप) और ३. पूर्णपद्य-शैली।

गद्यसूत्ररूप शैली में छन्द सूत्र, रत्नमञ्जूषा, जानाश्रयी छन्दोविचिति और हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन की रचनायें आती हैं।

कारिकारूपशैली में जयदेवछन्दस्, स्वयम्भूछन्द, कविदर्पण, जयकीर्त्तिकृत छन्दोनुशासन, वृत्तरत्नाकर, छन्दोमंजरी और वाग्वल्लभ की रचनायें हैं।

पूर्णपद्यशैली में प्राकृतपिंगल, वाणीभूषण, श्रुतबोध और वृत्तमुक्तावली की रचनायें हैं।

भरत नाट्यशास्त्र में लक्षण अनुष्टुप् छन्द में है, वृत्तमुक्तावली में मात्रिक छन्दों के लक्षण गद्य में हैं और वाग्वल्लभ में मात्रिक-छन्दों के लक्षण पूर्ण पद्यों में हैं।

छन्द सूत्र, रत्नमञ्जूषा, जानाश्रयी छन्दोविचिति, जयदेवछन्दस्, जयकीर्त्तीय छन्दोनुशासन, हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन, कविदर्पण, वृत्तरत्नाकर, छन्दोमञ्जरी एवं वाग्वल्लभ में लक्षणमात्र प्राप्त हैं, स्वरचित उदाहरण प्राप्त नहीं हैं। स्वयम्भूछंद, हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन की टीका और प्राकृतपिंगल में कतिपय

१—नाट्यशास्त्र (१६, ३६)

स्वरचित एवं अन्य कवियो के उदाहरण प्राप्त है। नाट्यशास्त्र, वाणीभूषण और वृत्तमुक्तावली मे ग्रन्थकार रचित उदाहरण प्राप्त हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थ की रचना-शैली हमें दो रूपो में प्राप्त होती है—१. पूर्णपद्य-शैली और २. कारिकाशैली। प्रारम्भ से द्वितीय-खण्ड के विषमवृत्तप्रकरण तक मात्रिक एव वर्णिक छन्दो के लक्षण पूर्णपद्यशैली में हैं जिससे छन्द का लक्षण और यति आदि का विश्लेषण विशद और सरल रूप में हो गया है। वैतालीय छन्द तथा विरदावली खण्डावली-प्रकरण कारिकाशैली में होने से विषय को स्पष्ट करने के लिये ग्रन्थकार ने व्याख्या का आधार लिया है। यह हम पहले ही कह आये हैं कि ग्रन्थ के मूललेखक चन्द्रशेखर भट्ट का स्वर्गवास द्वितीय-खण्ड के रचनाकाल के मध्य में हो गया था और तदुपरान्त उसकी इच्छा के अनुसार उनके पिता लक्ष्मीनाथ भट्ट ने ग्रन्थ को पूर्ण करने का कार्य पूर्ण मनोयोग के साथ अपने हाथ में लिया था। पचम प्रकरण में तो उन्होने जैसे तैसे ही लक्षण स्पष्ट करने के लिये पद्यशैली को अपनाये रखनेका प्रयास किया प्रतीत होता है परन्तु छठे प्रकरण (वैतालीय) पर आते ही दोनो लेखको के व्यक्तित्व की भिन्नता का प्रतिबिम्ब हमें शैलीगत भिन्नता में मिल जाता है, क्योकि यहा से लेखक ने कारिका-शैली को इस कार्य के लिये सुविधाजनक समझ कर अपना लिया है और अन्त तक उसी का निर्वाह उन्होने किया है।

कवि ने स्वप्रणीत मुक्तक पद्यो के माध्यम से ही समग्र छन्दो के उदाहरण दिये हैं। प्रत्युदाहरणो में अवश्य ही पूर्ववर्ती कवियो के पद्य उद्धृत किये हैं। हा, विरुदावलीप्रकरण में स्वप्रणीत उदाहरण एक-एक चरण के ही दिये हैं।

लक्षणो के सीमित दायरे में बद्ध रहने पर भी पारिभाषिक शब्दावली के माध्यम से छन्दो के अनुरूप ही शब्दो का चयन कर कवि ने जो लयात्मक सौन्दर्य, माधुर्य और चमत्कार का सृजन किया है वह अनूठा है। यथा—

पूर्णपद्यशैली का उदाहरण—

> हारद्वय स्फुरदुरोजयुत दधाना
> हस्त च गन्धकुसुमोज्ज्वलकङ्कणाढ्यम्।
> पादे तथा सरुतनूपुरयुग्मयुक्ता,
> चित्ते वसन्ततिलका किल चाकसीति ॥२६७॥ [पृ० ११३]

कारिकाशैली का उदाहरण—

> अस्य युग्म रचितापरान्तिका ॥२७॥

[व्या.] अस्य-प्रवृत्तकस्य समपादकृता'—'समपादलक्षणयुक्तैश्चतुर्भिः पादैः रचिताऽपरान्तिका ।

उदाहरण मुक्तक पद्यों में हैं। इसमें छन्द-नामों के अनुरूप ही शृंगार, वीर, रौद्र और शान्त आदि रसों के अनुकूल जिस शाब्दिक गठन, आलंकारिकता और लाक्षणिकता का कवि ने प्रयोग किया है वह भी दर्शनीय है। उदाहरण के तौर पर दो पद्य प्रस्तुत हैं—

मनोहंस-नामानुरूप उदाहरण—

तनुजाग्निना सखि मानसं मम दह्यते,
तनुसन्धिहृण्णगदारुवत् परिभिद्यते ।
अधरं च शुष्यति वारिमुक्तसुधालिवत्,
कुरु मद्‌गृहं कृपया सदा वनमालिमत् ॥३४४॥ [पृ० १२३]

सिंहास्यछन्द के अनुरूप उदाहरण—

यो दैत्यानामिन्द्रं वक्षस्पीठे हस्तस्याग्रै-
र्भिद्यद् ब्रह्माण्डं व्याकुर्योच्चैर्व्यामृद्नादुग्रैः ।
दत्तालोकान्युग्मिश्च निर्यद् विद्युद्वृद्धास्य-
स्तूर्णं सोऽस्माकं रक्षां कुर्याद् घोरः (वीर) सिंहास्यः ॥२९६॥
[पृ० १११]

स्पष्ट है कि उल्लिखित ग्रन्थों की अपेक्षा इस ग्रन्थ की रचनाशैली विशद, स्पष्ट, सरल और विविधता को लिये हुये है।

७. छन्दजाति—

अद्यावधि उपलब्ध समस्त छन्द शास्त्रियों ने एक अक्षर से छब्बीस अक्षर-पर्यन्त के वर्णिक छन्दों की निम्नजाति-संज्ञा स्वीकार की है—

उक्ता	=	१ अक्षर	बृहती	=	९ अक्षर
अत्युक्ता	=	२ अक्षर	पंक्ति	=	१० अक्षर
मध्या	=	३ अक्षर	त्रिष्टुप्	=	११ अक्षर
प्रतिष्ठा	=	४ अक्षर	जगती	=	१२ अक्षर
सुप्रतिष्ठा	=	५ अक्षर	अतिजगती	=	१३ अक्षर
गायत्री	=	६ अक्षर	शक्वरी	=	१४ अक्षर
उष्णिक्	=	७ अक्षर	अतिशक्वरी	=	१५ अक्षर
अनुष्टुप्	=	८ अक्षर	अष्टि	=	१६ अक्षर

अत्यष्टि	=	१७ अक्षर	आकृति	=	२२ अक्षर
धृति	=	१८ अक्षर	विकृति	=	२३ अक्षर
अतिधृति	=	१६ अक्षर	सस्कृति	=	२४ अक्षर
कृति	=	२० अक्षर	अतिकृति	=	२५ अक्षर
प्रकृति	=	२१ अक्षर	उत्कृति	=	२६ अक्षर

किन्तु प्राकृतपिंगल, वाणीभूषण और वृत्तमौक्तिक मे यह परम्परा दृष्टि-गोचर नही होती है। इन तीनो ग्रन्थो में एकाक्षर, द्व्यक्षर, त्र्यक्षर आदि सज्ञा का ही प्रयोग मिलता है। सभवतः मध्ययुगीन हिन्दी-परम्परा के निकट आ जाने के कारण ही इन ग्रन्थकारो ने वैदिक-परम्परा का त्याग कर सामान्य प्रणालिका अपनाई है।

८ विषयसूची—

प्रस्तुत ग्रन्थ के द्वितीय खण्ड के बारहवें प्रकरण में दोनो खण्डो के प्रत्येक प्रकरणस्थ प्रतिपाद्य विषय की विस्तृत अनुक्रमणिका ग्रन्थकार ने दी है। वर्ण्य विषय के साथ साथ छन्द-नाम, नामभेद और प्रत्येक अक्षर की प्रस्तारसख्या का भी उल्लेख है। इस प्रकार की अनुक्रमणिका अन्य छन्द-ग्रन्थो में प्राप्त नही है, केवल प्राकृतपिंगल में प्रथम परिच्छेद के अत में मात्रिक-छन्द-सूची और द्वितीय परिच्छेद के अन्त में वर्णिकवृत्त-सूची गद्य में प्राप्त है। इस प्रकार की बृहत्सूची जिस विधिवत् ढग से दी गई है उससे यह प्रमाणित होता है कि लेखक का ज्ञान बहुत विस्तृत रहा है और उसने छन्दशास्त्र के प्रतिपादन मे वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने का प्रयत्न किया है और वह इसमें सफल भी हुआ है।

निष्कर्ष—उपर्युक्त छन्द-ग्रन्थो के साथ तुलना करने पर यह स्पष्ट है कि सभी दृष्टियो से अन्य ग्रन्थो की अपेक्षा वृत्तमौक्तिक छन्दशास्त्र का सर्वश्रेष्ठ एव प्रौढ ग्रन्थ है। साथ ही मध्ययुगीन हिन्दी-साहित्य मे जो स्थान और महत्त्व प्राकृतपिंगल का है उससे भी अधिक महत्व इस ग्रन्थ का है क्यो कि जहा प्राकृतपिंगल मे सवैया छन्द के उद्भव के अकुर प्राप्त होते हैं वहा वृत्तमौक्तिक मे सवैया (मदिरा, मालती आदि ६ भेद) और घनाक्षरी छन्द सोदाहरण प्राप्त हैं। मध्ययुगीन हिन्दी-साहित्य की दृष्टि से इसमे वे सब छन्द प्राप्त हैं जिनका प्राय प्रयोग तत्कालीन कवि कर रहे थे। अत सस्कृत और हिन्दी दोनो के साहित्यिक दृष्टिकोण से वृत्तमौक्तिक का छन्दशास्त्र में विशिष्ट स्थान और महत्व सुनिश्चित ही है।

वृत्तमौक्तिक और प्राकृतपिंगल

वृत्तमौक्तिक और प्राकृतपिंगल का आलोडन करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि चन्द्रशेखर भट्ट ने वृत्तमौक्तिक के मात्रावृत्तनामक प्रथम खण्ड में न केवल प्राकृतपिंगल का आधार ही लिया है अपितु पांचवां और छठा प्रकरण तथा कतिपय स्थलों को छोड़ कर पूर्णतः प्राकृतपिंगल की छाया या अनुवाद के रूप में ही रचना की है। मुख्य अंतर है तो केवल इतना ही है कि प्राकृतपिंगल की रचना प्राकृत-अपभ्रंश में है तो वृत्तमौक्तिक की रचना संस्कृत में है। दोनों ही ग्रन्थों की समानतायें इस प्रकार हैं—

१. दोनों ही ग्रन्थ मात्रावृत्त और वर्णवृत्त-नामक दो परिच्छेदों में विभक्त हैं। वृत्तमौक्तिक में परिच्छेद के स्थान पर 'खण्ड' शब्द का प्रयोग किया गया है।

२. प्रारम्भ से अन्त तक विषयक्रम और छन्दःक्रम एकसदृश है जो विषय सूची से स्पष्ट है।

३. रचनाशैली में पारिभाषिक (सांकेतिक) शब्दावली और उसका प्रयोग एक-सा ही है।

४. गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और षट्पद-नामक छन्दों के प्रस्तारभेद और नाम एकसमान हैं। नामों में यत्किंचित् अन्तर अवश्य है, जो चतुर्थ परिशिष्ट (क) में द्रष्टव्य है। दोनों में भेदों के लक्षणमात्र ही हैं, उदाहरण नहीं हैं। वृत्तमौक्तिक में गाथा-छन्द के २७ के स्थान पर २५ भेद स्वीकार किये हैं।

५. रड्डा छन्द के सातों भेदों के उदाहरण दोनों में प्राप्त नहीं हैं।

६. लक्षणों की शब्दावली भी प्रायः समान है। उदाहरण के लिये कुछ पद्य प्रस्तुत हैं—

प्राकृतपिंगल	वृत्तमौक्तिक
दीहो संजुत्तपरो बिंदुजुओ पाडिओ अ चरणते। स गुरू वंक दुमत्तो अण्णो लहु होय सुद्ध एक्ककलो ॥२॥	दीर्घः संयुक्तपरः पादान्तो वा विसर्गबिन्दुयुतः। स गुरुर्वक्रो द्विकलो लघुरन्यः शुद्ध एककलः ॥६॥
× ×	× ×

सगणा भगणा दिम्रगणइ
मत्त चउद्दह पम्र पलई ।
सठइ वको विरइ तहा
हाकलि रूग्रउ एहु कहा ॥१७२॥

सगणैर्भगणैर्नलघुयुतैः
सकल चरण प्रविरचितम् ।
गुरुकेन च सर्वं कलित
हाकलिवृत्तमिदं कथितम्॥२२॥
[चतुर्थ प्रकरण]

\+ \+ \+ \+

प्राकृतपिंगल और वृत्तमौक्तिक में निम्न असमानतायें हैं—

१. प्राकृतपिंगलकार ने छन्दों के उदाहरण पूर्ववर्ती कवियो के दिये हैं और वृत्तमौक्तिककार ने समग्र उदाहरण स्वरचित दिये हैं, प्रत्युदाहरण पूर्ववर्ती कवियों के अवश्य दिये हैं ।

२. शिखा, कामकला, रुचिरा, हरिगीत के भेद, मदिरा सवैया, मालती सवैया, मल्ली सवैया, मल्लिका सवैया, माधवी सवैया, मागधी सवैया, घनाक्षर और गलितक प्रकरण के १७ छन्द विशिष्ट हैं जो प्राकृतपिंगल मे प्राप्त नही हैं।

३ प्रथम खण्ड छह प्रकरणो में विभक्त है ।

वृत्तमौक्तिक के द्वितीय खड की रचना प्राकृतपिंगल के अनुकरण पर नही है। रचना-शैली, शब्दावली, प्रकरण आदि सब पृथक् हैं। प्राकृतपिंगल के द्वितीय परिच्छेद मे केवल १०४ वर्णिक छन्द हैं और वृत्तमौक्तिक मे २६५ वर्णिक छन्द, प्रकीर्णक, दण्डक अर्धसम, विषम, वैतालीय छन्द, यति-प्रकरण, गद्य-प्रकरण और विरुदावली आदि कई विशिष्ट प्रकरण हैं जो कि अन्यत्र दुर्लभ हैं।

वृत्तमौक्तिक और वाणीभूषण

प्राकृतपिंगलकार हरिहर के पौत्र, रविकर के पुत्र दामोदरप्रणीत वाणीभूषण प्राकृतपिंगल का सस्कृत रूपान्तर है और इस ग्रथ का वृत्तमौक्तिककार ने भी यथेच्छ प्रयोग किया ह । प्रत्युदाहरणो में सुन्दरी, तारक, चक्र, चामर, निशिपालक, चञ्चला, मञ्जोरा, चर्चरी, क्रीडाचन्द्र, चन्द्र, धवल, गण्डका एव दीपक (मात्रिक) के उदाहरणों का तो प्रयोग किया ही है किन्तु रुचिरा (मात्रिक) और किरीट (वर्णिक) छन्द के तो लक्षण एव उदाहरण भी ज्यो के त्यों उद्धृत कर दिये हैं । अतः यह नि.संकोच मानना होगा कि पूर्ववर्ती वाणीभूषण का वृत्तमौक्तिककार ने पूर्णतया अनुकरण किया है ।

रोलावृत्तमवेहि
नागपिङ्गलकविभणित,
प्रतिपदमिह चतुरधिक-
कलविंशतिपरिगणितम्।
एकादशमधि विरति-
रखिलजनचिन्ताहरण,
सुललितपदमदकारि
विमलकविकण्ठाभरणम् ॥५६॥

या चरणे कलाना
चतुरधिकविंशगदिता,
सा किल रोला भवति
नागकविपिङ्गलकथिता ।
एकादशकलविरति-
रखिलजनचिन्ताहरणा
सुललितपदकुलकलित-
विमलकविकण्ठाभरणा ॥१६॥
[द्वितीय प्रकरण]

\+ \+ \+ \+

अक्षरगुरुलघुनियमविरहित
भुजगराजपिङ्गलपरिगणितम् ।
भवति सुगुम्फितषोडशकलक,
वाणीभूषणपादाकुलकम् ॥७५॥

गुरुलघुकृतगणनियमविरहित,
फणिपतिनायकपिंगलगदितम् ।
रसविधुकलयुतयमकितचरण
पादाकुलक श्रुतिसुखकरणम् ॥५॥
[तृतीय प्रकरण]

\+ \+ \+ \+

षट्कलमादौ तदनु
चतुस्तुरग परिसतनु,
शेषे द्विकल कलय
चतुष्पदमेव सचिनु ।
छन्द षटपदनाम
भवति फणिनायकगीत,
रुद्रे विरतिमुपैति
नृपतिसुखकरमुपनीतम् ।
उल्लालयुगलमत्र च
भवेदष्टाविंशतिकलमित,
शृणु पञ्चदशे विरतिस्थित-
पठनादपि पण्डितजनहितम् ॥७७॥

षट्पदवृत्त कलय
सरसकविपिंगलभणित,
एकादश इह विरति-
रथ च दहनैर्विधुगणितम् ।
षट्कलमादौ तदनु
चतुस्तुरग परिसतनु,
शेषे द्विकल रचय
चतुष्पदमेव सचिनु ।
उल्लालद्वयमत्र हि
भवेदष्टाविंशतिकलयुत,
यदि पञ्चदशे विरतिस्थित
पठनादपि गुणिगणहितम् ॥५३॥
[द्वितीय प्रकरण]

\+ \+ \+ \+

द्वितीय परिच्छेद
नरेन्द्रमुदेहि । मृगेन्द्रमवेहि ॥२१॥
\+ \+

द्वितीय-खण्ड--१ वृत्तनिरूपण प्रकरण
नरेन्द्रविराजि । मृगेन्द्रमवेहि ॥२५॥
\+ \+

द्विजगणमोहर, भगणमुपाहर ।	द्विजमिह धारय, भमनु च कारय ।
भणति सुवासकमिति गुणनायक ॥५६॥	भवति सुवासकमिति गुणलासक ॥७२॥
+ +	+ +
विनिधेहि चतु सगण रुचिर,	यदि वै लघुयुगमगुरुक्रमत
रविसख्यकवर्णकृत सुचिरम् ।	रविसम्मितवर्ण इह प्रमित ।
फणिनायकपिङ्गलसम्भणित	अहिभूपतिना फणिना भणित
कुरु तोटकवृत्तमिद गणितम् ॥१३५॥	सखि तोटकवृत्तमिद गणितम् ॥१६६॥
+ +	+ +
पादयुग कुरु नूपुरसयुत-	पादयुग कुरु नूपुरराजित-
मत्र कर वररत्नमनोहर,	मत्र कर वररत्नमनोहर,
वज्रयुग कुसुमद्वयसगत-	वज्रयुग कुसुमद्वयसङ्गत-
कुण्डलगन्धयुग समुपाहर ।	कुण्डलगन्धयुग समुपाहर ।
पण्डितमण्डलिकाहृतमानस-	पण्डितमण्डलिकाहृतमानस-
कल्पितसज्जनमौलिरसालय,	कल्पितसज्जनमौलिरसालय,
पिङ्गलपन्नगराजनिवेदित-	पिंगलपन्नगराजनिवेदित-
वृत्तकिरीटमिद परिभावय ॥२२१॥	वृत्तकिरीटमिद परिभावय ॥५८१॥
+ +	+ +

वाणीभूषण की अपेक्षा वृत्तमौक्तिक में निम्नलिखित विशेपतायें पाई जाती हैं —

(१) *वाणीभूषण में केवल ४३ मात्रिक छन्द हैं जब कि वृत्तमौक्तिक में ७६* मूल छन्द और २०६ छन्द-भेद हैं। निम्न छन्दो का प्रयोग वाणीभूषणकार ने नही किया है —

रसिका, काव्य, उल्लाल, चौबोला, झुल्लणा, शिखा, दण्डकला, कामकला, हरिगीत के भेद और *पचम सवैया-प्रकरण तथा छठा गलितक प्रकरण* के पूर्ण छन्द।

(२) गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य, और षट्पद के प्रस्तारभेद, नाम एव लक्षण तथा रड्डा छन्द के सातों भेदों के लक्षण वाणीभूषण में नहीं हैं।

(३) वाणीभूषण में ११२ समवर्णिक छन्द हैं जब कि वृत्तमौक्तिक में २६५ छन्द हैं। इसका वर्गीकरण चतुर्थ परिशिष्ट (ख) में देखा जा सकता है।

(४) वृत्तमौक्तिक में ७ प्रकीर्णक, ८ दण्डक, ८ विषम १२ वैतालीय, ७४ विरुदावली और २ खण्डावली छन्दो के लक्षण एव उदाहरण प्राप्त हैं जब कि वाणीभूषण मे इन छन्दो का उल्लेख भी नही है।

(५) वाणीभूषण मे अर्द्धसम छन्दो मे केवल पुष्पिताग्रा छन्द है जब कि वृत्तमौक्तिक मे १० छन्द हैं।

(६) वाणीभूषण मे यतिनिरूपण और गद्य-निरूपण-प्रकरण नही है।

(७) वृत्तमौक्तिक मे दोनो खण्डो के प्रकरणो की सूची है जिसमे छन्द-नाम, नामभेद एव प्रस्तार सख्या दी है, जब कि वाणीभूषण में सूची नही है।

अत. इस तुलना से स्पष्ट है कि वाणीभूषण एक लघुकाय छन्दोग्रन्थ है जब कि वृत्तमौक्तिक छन्दो का आकर और महत्वपूर्ण ग्रन्थ है।

वृत्तमौक्तिक और गोविन्दविरुदावली

वृत्तमौक्तिक के नवम विरुदावली प्रकरण मे चण्डवृत्तो के प्रत्युदाहरण देते हुए ग्रथकार ने श्री रूपगोस्वामी कृत गोविन्दविरुदावली का मुक्त हृदय से प्रयोग किया है। गोविन्दविरुदावली के एक या दो ही उदाहरण ग्रहण नही किये हैं अपितु समग्र विरुदावली ही उद्धृत कर दी है, केवल गोविन्दविरुदावली का मगलाचरण और उपसहार मात्र ही अवशिष्ट रहा है।[1]

विरुदावली छन्द-क्रम में दोनो में अन्तर है; जो तालिका से स्पष्ट है—

गोविन्दविरुदावली		वृत्तमौक्तिक		
क्रम-सख्या	नाम	क्रम-सख्या	नाम	पृष्ठांक
१	वद्वित	४	वद्वित	२२२
२	वीरभद्र	६	वीर (वीरभद्र)	२२५
३	समग्र	५	रण (समग्र)	२२४

१-आदि—इय मङ्गलरूपा स्याद् गोविन्दविरुदावली।
यस्या. पठनमात्रेण श्रीगोविन्दः प्रसीदति ॥
अन्त— स्फुरदन्न: सुस्थिरमतिर्गतग्लानिर्गंतस्वन ।
भक्त: कृष्णे भवेद् य. स विरुदावलिपाठक ॥
य स्तौति विरुदावल्या मथुरामण्डले हरिम्।
अनया रम्यया तस्मै तूर्णमेव प्रसीदति ॥

४	अच्युत	३	अच्युत	२२१
५	उत्पल	६	उत्पल	२२८
६	तुरङ्ग	२०	तुरग	२३४
७	गुणरति	१०	गुणरति	२२९
८	मातङ्गखेलित	८	मातङ्गखेलित	२२६
९	तिलक	२	तिलक	२२०
१०	पङ्केरुह	२१	पङ्केरुह	२३५
११	सितकञ्ज	२२	सितकञ्ज	२३८
१२	पाण्डूत्पल	२३	पाण्डूत्पल	२३९
१३	इन्दीवर	२४	इन्दीवर	२४०
१४	अरुणाम्भोरुह	२५	अरुणाम्भोरुह	२४२
१५	फुलाम्बुज	२६	फुल्लाम्बुज	२४३
१६	चम्पक	२७	चम्पक	२४५
१७	वञ्जुल	२८	वञ्जुल	२४६
१८	कुन्द	२९	कुन्द	२४७
१९	बकुलभासुर	३०	बकुलभासुर	२४८
२०	बकुलमंगल	३१	बकुलमगल	२४९
२१	मञ्जरीकोरक	३२	मजरीकोरक	२५१
२२	गुच्छ	३३	गुच्छक	२५२
२३	कुसुम	३४	कुसुम	२५३
२४	दण्डकत्रिभंगी कलिका	१	दण्डकत्रिभंगी कलिका	२५५
२५	विदग्धत्रिभंगी कलिका	२	संपूर्णा विदग्धत्रिभंगी-कलिका	२५६
२६	मिश्रा कलिका	३	मिश्रकलिका	२५८
२७	साप्तविभक्तिकी कलिका	१	साप्तविभक्तिकी कलिका	२६१
२८	अक्षमयी कलिका	२	अक्षमयी कलिका	२६२
२९	सर्वलघुकलिका	३	सर्वलघु-कलिका	२६४

गोविन्दविरदावली के अतिरिक्त जिन चण्डवृत्तों के लक्षण वृत्तमौक्तिक में दिये गये हैं उनके उदाहरण एक-एक चरण के ही प्राप्त हैं, पूर्ण उदाहरण या प्रत्युदाहरण प्राप्त नहीं हैं। इन चण्डवृत्तों की तालिका इस प्रकार है—

१ पुरुषोत्तम, ७ शाक, ११, कल्पद्रुम, १२ कन्दल, १३ अपराजित, १४ नर्त्तन, १५ तरत्समस्त, १६ वेष्टन, १७ अस्खलित और १८. समग्र ।

पल्लवित-नामक विरुदावली गोविन्दविरुदावली म नही है । चन्द्रशेखरभट्ट ने इसका प्रत्युदाहरण गोविन्दविरुदावली में प्रदत्त फुल्लाम्बुज के उदाहरणस्थ अश का दिया है ।

वृत्तमौक्तिक में चण्डवृत्त के ३४ भेद, त्रिभगी-कलिका के ३ भेद और विरुदावली के तीन भेद माने हैं जब कि गोविन्दविरुदावली में इनका वर्गीकरण इस प्रकार है—

चण्डवृत्त-कलिका के दो भेद हैं—१ नख और २ विशिख ।

नख के ९ भेद है—१. वर्धित, २ वीरभद्र, ३ समग्र, ४ अच्युत, ५ उत्पल ६ तरङ्ग, ७ गुणरति, ८ मातगखेलित और ९ तिलक ।

विशिख के ११ भेद हैं—१ पङ्केरुह, २ सितकञ्ज, ३ पाण्डूत्पल, ४ इन्दीवर, ५ अरुणाम्भोरुह, ६ फुल्लाम्बुज, ७ चम्पक, ८ वञ्जुल, ९ कुन्द, १० वकुलभासुर और ११. वकुलमगल ।

द्विगादिगणवृत्त-कलिका मजरी के तीन भेद हैं—१ मञ्जरी-कोरक, २ गुच्छ और ३ कुसुम ।

त्रिभगी-कलिका के दो भेद हैं—१ दण्डकत्रिभगी कलिका और २ विदग्ध-त्रिभगी-कलिका ।

मिश्रकलिका के ४ भेद हैं—१ मिश्राकलिका, २ साप्तविभक्तिकी कलिका, ३ अक्षमयी-कलिका और ४ सर्वलघु कलिका ।

इस प्रकार गोविन्दविरुदावली मे विरुदावली के कुल २९ भेदो का दिग्दर्शन है तो वृत्तमौक्तिक में ४० विरुदावलियो और ३४ कलिकाओ का निरूपण है।

वृत्तमौक्तिक में उद्धृत अप्राप्त ग्रन्थ

प्रस्तुत ग्रथ में चन्द्रशेखरभट्ट ने छन्दो के प्रत्युदाहरण देते हुए जिन जिन ग्रन्थकारो और जिन जिन ग्रन्थो का उल्लेख किया है उनमें से कतिपय ग्रन्थ अद्यावधि अप्राप्त हैं। अप्राप्त ग्रन्थों की अक्षरानुक्रम से तालिका इस प्रकार है–

संख्या	ग्रन्थ नाम	ग्रन्थकार	उल्लेख-पृष्ठाङ्क
१	उदाहरणमञ्जरी	लक्ष्मीनाथ भट्ट	१०,१३,१६ आदि

२	कृष्णकुतूहल-महाकाव्य	रामचन्द्र भट्ट	१०५,१०७ आदि
३	दशावतारस्तोत्र	,,	१२६
४	नन्दनन्दनाष्टक	लक्ष्मीनाथ भट्ट	१४४
५	नारायणाष्टक	रामचन्द्र भट्ट	१६७
६	पवनदूतम्	चन्द्रशेखर भट्ट	१३६
७	पाण्डवचरित-महाकाव्य	,,	९२,१२१ आदि
८	शिको-काव्य		१५६
९	शिवस्तुति	लक्ष्मीनाथ भट्ट	४५
१०	सुन्दरीध्यानाष्टक	,,	१४४

इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे स्थल हैं जिनमें केवल ग्रन्थकार के नाम हैं और वर्ण्य विषय का संकेत है किन्तु उनके ग्रन्थों का कोई उल्लेख नहीं मिलता।

१	राक्षसकवि	दक्षिणानिलवर्णन	१५३
२	लक्ष्मीनाथभट्ट	खड्गवर्णन	१६०
३	,,	देवीस्तुति	४३
४	शम्भु	छन्दःशास्त्र	१०९,१३६,१६७आदि

वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका में (पृ. १४५) पर शम्भु-प्रणीत छन्दश्चूडामणि ग्रन्थ का उल्लेख है। संभवतः यही शम्भु हों! किन्तु ग्रन्थ अप्राप्त है।

मालती छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुये भारवि रचित निम्न पद्य दिया है—

अयि विजहीहि दृढोपगूहनं, त्यज नवसङ्गमभीरु वल्लभम्।
अरुणकरोद्गम एष वर्तते, वरतनु सम्प्रवदन्ति कुक्कुटाः ॥ पृ. १००

इसका उल्लेख छन्दोमञ्जरी (पृ. ५६) में भी है किन्तु भारवि कृत किरातार्जुनीय काव्य (मुद्रित) में यह पद्य प्राप्त नहीं है। अतः भारवि कृत किस ग्रन्थ का यह पद्य है, अन्वेषणीय है।

प्रस्तुत संस्करण की विशेषतायें

ग्रन्थकार ने प्रस्तुत ग्रन्थ में ६७१ छन्दों के लक्षण एवं उदाहरणों का निरूपण किया है। इन छन्दों के अतिरिक्त मैंने ग्रन्थान्तरों से पाद-टिप्पणियों में ७७ और पंचम परिशिष्ट में १३८१ छन्दों के लक्षण दिये हैं। अर्थात् इस संकलन में २१२९ छन्दों का दिग्दर्शन है जो कि इस संस्करण की प्रमुख विशेषता है।

इस सस्करण मे मूल ग्रन्थ के पश्चात् दो टीकायें और ८ परिशिष्ट दिये हैं जिनका सक्षिप्त परिचय इस प्रकार है :—

(१) वृत्तमौक्तिक-वार्तिक-दुष्करोद्धार-टीका

इस टीका और टीकाकार लक्ष्मीनाथ भट्ट का परिचय प्रारभ मे कवि-वश-परिचय मे दिया जा चुका है, अत यहाँ पिष्टपेषण अनावश्यक है।

(२) वृत्तमौक्तिक-दुर्गमबोध-टीका

इस दुर्गमबोधटीका के प्रणेता महोपाध्याय मेघविजय १८ वी शताब्दी के बहुमुखी प्रतिभासम्पन्न विशिष्टतम विद्वान् है। इनका जन्म सवत्, जन्म स्थान और गार्हस्थ्य जीवन का ऐतिह्य परिचय अद्यावधि अप्राप्त है। श्रीवल्लभोपाध्याय प्रणीत 'विजयदेवमाहात्म्य' पर मेघविजयजी रचित विवरण की स १७०९ की लिखित हस्तलिखित[1] प्रति प्राप्त होने से यह निश्चित है कि विवरण की रचना १७०९ के पूर्व ही हो चुकी थी। अत यह अनुमान सहज-भाव से लगाया जा सकता है कि इस रचना के समय इनकी अवस्था कम से कम २०-२५ वर्ष की अवश्य होगी। अतः १६८५ और १६९० के मध्य इनका जन्म-समय माना जा सकता है।

मेघविजयजी श्वेताम्बर-जैन-परम्परा मे तपागच्छीय अकबर-प्रतिबोधक जगद्गुरु हीरविजयसूरि की शिष्य-परम्परा मे कृपाविजयजी के शिष्य हैं[2]। विजयसिंहसूरि के पट्टधर विजयप्रभसूरि ने इनको उपाध्यायपद प्रदान किया था।[3]

मेघविजयजी-गुम्फित साहित्य को देखने पर यह साधिकार कहा जा सकता है कि ये एकदेशीय विद्वान् न होकर सार्वदेशीय विद्वान् थे। काव्य-साहित्य, पादपूर्ति, व्याकरण, छन्द, अनेकार्थ, न्यायशास्त्र, दर्शनशास्त्र, ज्योतिष, सामुद्रिक और अध्यात्मशास्त्र आदि प्रत्येक विषय के ये प्रगाढ पण्डित थे और इन्होने प्रत्येक विषय पर साधिकार सर्वस्वपूर्ण लेखिनी चलाई है। इनका साहित्य-सर्जना काल वि स १७०९ से १७६० तक का तो निश्चित ही है। वर्तमान समय में प्राप्त इनकी रचित साहित्य-सामग्री की सूची निम्न है—

१—विजयदेवमाहात्म्य प्रान्तपुष्पिका

२—युक्तिप्रबोध प्रशस्ति

३—देवानन्द महाकाव्य प्रशस्ति

१	सप्तसन्धान-महाकाव्य	र. सं. १७६०[१]	प्रकाशित
२	दिग्विजय-महाकाव्य		,,
३	शान्तिनाथचरित्र (नैषधीय-पादपूर्ति)		,,
४	देवानन्द-महाकाव्य (माघ-पादपूर्ति)		,,
५	किरातसमस्यापूर्ति[२]		अप्रकाशित
६	मेघदूत-समस्यालेख (मेघदूत-पादपूर्ति)		प्रकाशित
७	लघुत्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र		अप्रकाशित
८	भविष्यदत्तचरित्र		प्रकाशित
९	पञ्चाख्यान		अप्रकाशित
१०	पाणिनिद्व्याश्रयविज्ञप्तिलेख[३]		,,
११	,, [४]		,,
१२	विज्ञप्तिका		प्रकाशित[५]
१३	गुरुविज्ञप्तिलेखरूप-चित्रकोशकाव्य		अप्रकाशित[६]
१४	विज्ञप्तिपत्र		,, [७]
१५	,, अपूर्ण[८]		,,
१६	,,		,, [९]
१७	,, अपूर्ण[१०]		,,
१८	चन्द्रप्रभा-व्याकरण (हैमकौमुदी)	र० सं० १७५७[११]	प्रकाशित
१९	हैमशब्दचन्द्रिका		,,
२०	हैमशब्दप्रक्रिया[१२]		अप्रकाशित

१–विधुद्रसमुनीन्दूनां प्रमाणात् परिवत्सरे । [सप्तसन्धान प्रशस्ति]

२–देखें, दिग्विजय-महाकाव्य-प्रस्तावना

३-४ भाण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूना २११A, १८८२-८३

५–विज्ञप्तिलेखसंग्रह प्रथम भाग (सिंघी जैन ग्रन्थमाला, बम्बई)

६–अभयजैन-ग्रंथालय, बीकानेर

७–राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, सं० २०४१५

८,९,१०–,, ,, ,, शाखा कार्यालय बीकानेर, मोतीचंद खजांची-संग्रह, 'च' २८४

११–विजयन्ते ते गुरवः दीप्तरुचीं-दुवत्सरे । [चन्द्रप्रभाप्रशस्ति ७]

१२–भाण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना

२१	चिन्तामणि-परीक्षा[1] (नव्यन्यायप्रवर्तक गंगेशोपाध्याय-कृत तत्त्वचिन्तामणि का परीक्षण)	अप्रकाशित
२२	युक्तिप्रबोध	प्रकाशित
२३	धर्ममञ्जूषा	अप्रकाशित
२४	मेघमहोदयवर्षप्रबोध	प्रकाशित
२५	हस्तसञ्जीवन स्वोपज्ञ-टीका-सहित	,,
२६	रमलशास्त्र	उल्लेख, मेघमहोदय-वर्षप्रबोध
२७	उदयदीपिका, र० सं० १७५२	अप्रकाशित
२८	प्रश्नसुन्दरी	,,
२९	वीसायन्त्रविधि	प्रकाशित
३०	मातृकाप्रसाद र० सं० १७४७[2]	अप्रकाशित
३१	ब्रह्मबोध	अप्राप्य[3]
३२	अर्हद्गीता	प्रकाशित
३३	विजयदेवमाहात्म्यविवरण	,,
३४	वृत्तमौक्तिक-'दुर्गमबोध' टीका	(प्रस्तुत)
३५	पञ्चतीर्थीस्तुति सटीक[4]	अप्रकाशित
३६	भक्तामरस्तोत्र-टीका[5]	,,
३७	चतुर्विंशतिजिनस्तव[6]	,,
३८	आदिनाथस्तोत्र[7] अपूर्ण	,,

गुर्जर-भाषा में रचित कृतियें

३९	विजयदेवसूरिनिर्वाणरास[8]	अप्रकाशित
४०	कृपाविजयनिर्वाणरास[9]	,,
४१	जैनधर्मदीपकस्वाध्याय[10]	,,
४२	जैनशासनदीपकस्वाध्याय[11]	,,

१-इसका मैं सम्पादन कर रहा हूँ जो राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर से प्रकाशित होगा।

२-संवत्सरेऽब्दवाध्यंश्वभूमिते पौष उज्ज्वले ।
श्रीधर्मनगरे ग्रन्थः पूर्णोऽभिधर्मसिध्ययत् । [मातृकाप्रसाद प्रशस्ति]

३,४,५-देखें दिग्विजयमहाकाव्य — प्रस्तावना

६-महोपाध्याय विनयसागर-संग्रह, कोटा

७-राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, सं. १०४१५

८-११-देखें, दिग्विजय-महाकाव्य — प्रस्तावना

वृत्तमौक्तिक की दुर्गमबोध नामक टीका की रचना मेघविजयजी ने अपने शिष्य भानुविजय के पठनार्थ सं० १६५५ में की है। भट्ट लक्ष्मीनाथीय 'दुष्करोद्धार' टीका के समान ही यह टीका भी वृत्तमौक्तिक के प्रथम खण्ड, प्रथम गाथा-प्रकरण के पद्य ५१ से ८६ तक अर्थात् ३६ पद्यों पर रची गई है। पूर्व टीका की तरह यह भी ६ प्रकरणों में विभक्त है। इसमें वर्णोद्दिष्ट और वर्णनष्ट एक-साथ दे दिये हैं और वृत्तस्थ गुरु-लघु-ज्ञान का स्वतन्त्र प्रकरण नहीं है। प्रस्तार जैसे गहन विषय को मेघविजयजी ने अपनी लेखिनी द्वारा सरलतम बना दिया है। प्राकृत-पिंगल, वाणीभूषण और छन्दोरत्नावली आदि ग्रन्थों के उद्धरण और अनेकों चित्र देकर प्रत्येक प्रकरण के वर्ण्य विषय का विशदता के साथ स्पष्टीकरण किया है। भाषा में प्रवाह और सरलता है। कहीं-कहीं देश्य शब्दों का प्रयोग भी मिलता है।

यह टीका अद्यावधि अज्ञात और अप्राप्त थी। इसकी स्वयं टीकाकार द्वारा लिखित एक मात्र प्रति मेरे निजी संग्रह में है।

परिशिष्टों का परिचय

प्रथम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट में वृत्तमौक्तिककार द्वारा स्वीकृत पारिभाषिक-शब्दावली दी गई है। टगणादि गण, इनका प्रस्तारभेद, नाम तथा उनके पर्याय यहाँ क्रमशः दिये हैं और अन्त में इस पद्धति से मगणादि ८ गणों के पर्याय दिये हैं।

पाद-टिप्पणियों में स्वयम्भूछन्द, वृत्तजातिसमुच्चय, कविदर्पण, हेमचन्द्रीय-छन्दोनुशासन, प्राकृतपिंगल, वाणीभूषण और वाग्वल्लभ के साथ इस पद्धति की तुलना की है अर्थात् इन ग्रन्थकारों ने इस प्रणाली को किस रूप में स्वीकार किया है, कौन-कौन से शब्द स्वीकृत किये हैं, कौन-कौन से शब्द इन ग्रन्थों में नहीं हैं और कौन-कौन से नये पारिभाषिक शब्दों को स्वीकृत किया है; इन सब का दिग्दर्शन है।

---

१ - ३— देखें, दिग्विजय-महाकाव्य — प्रस्तावना।

४—महोपाध्याय विनयसागर-संग्रह, कोटा.

द्वितीय परिशिष्ट—

(क) मात्रिक छन्दो का अकारानुक्रम—इसमें मात्रिक छन्द ७६ और गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और षट्पद आदि के २१८ भेदो के नामो को अकारानुक्रम से दिया है।

(ख) वर्णिक छन्दो का अकारानुक्रम—इसमें वर्णिक सम-छन्द, प्रकीर्णक, दण्डक, अर्द्धसम, विषम और वैतालीय-छन्दो का एव टिप्पणियो में उद्धृत छन्दो का अकारानुक्रम दिया है। छन्दो के आगे ( ) कोष्ठक में प्रकीर्णक का प्र, दण्डक का द, अर्द्धसम का अ, विषम का वि, वैतालीय का वै और टिप्पणी का टि दिया है। सकेत-कोष्ठक में ग्रन्थकार ने जो छन्दो के नाम-भेद दिये हैं वे भी अकारानुक्रम में सम्मिलित हैं, वे नाम-भेद भी ( ) कोष्ठक में दिये हैं।

(ग) विरुदावली-छन्दो का अकारानुक्रम—इसमें कलिका-विरुदावली, चण्डवृत्त-विरुदावली आदि समस्त विरुदावली-छन्दो का अकारानुक्रम दिया है।

तृतीय परिशिष्ट—

(क) पद्यानुक्रम—इसमे प्रतिपाद्य विषय के पद्यो और छन्द के लक्षण-पद्यो को अकारानुक्रम से दिया है। वैतालीय-प्रकरण की लक्षण-कारिकायें भी इसी मे अकारानुक्रम से सम्मिलित कर दी गई हैं।

(ख) उदाहरण-पद्यानुक्रम—इसमे ग्रन्थकार द्वारा स्वरचित-उदाहरण, पूर्ववर्ती कवियों के प्रत्युदाहरण, गद्याश के उदाहरण और टिप्पणियो मे उद्धृत उदाहरण अकारानुक्रम से दिये हैं। गद्याश के लिये कोष्ठक ( ) मे ग, और टिप्पणी के लिये टि का सकेत दिया है। यति-प्रकरण में उद्धृत और विरुदावली में प्रयुक्त एक-एक चरण के पद्यो को भी अकारानुक्रम मे सम्मिलित किया गया है।

चतुर्थ परिशिष्ट—

क (१) मात्रिक छन्दो के लक्षण एव नाम-भेद—प्रारभ मे सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची और सकेत देकर वृत्तमौक्तिक के अनुसार छन्द-नाम और उसके टगणादि में लक्षण एव प्रतिचरण को मात्रायें दी हैं। पश्चात् सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची के २२ ग्रन्थों के साथ छन्द नाम और लक्षणो की तुलना की गई है। जिन-जिन ग्रन्थो मे वृत्तमौक्तिक-लक्षण-सम्मत छन्द का वही नाम है तो उन ग्रन्थो के अक दे दिये हैं और लक्षण वही होते हुये भी नाम यदि पृथक् है तो वह नाम-भेद देकर

उन-उन ग्रन्थो के अक लगा दिये हैं । ग्रन्थ-विस्तार-भय से यहा पर ग्रन्थो के नाम न देकर उनके अक दिये हैं ।

क (२) गाथादि छन्द-भेदो के लक्षण एव नामभेद—इसमे गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और षटपद नामक छन्दो के प्रस्तार सख्या-क्रम से लक्षण, छन्द-नाम और नामभेद दिये हैं । इन छन्दो के प्रस्तारभेद कुछ ही ग्रन्थो मे प्राप्त हैं, समग्र ग्रन्थो में नही हैं, इसलिये अको का प्रयोग न करके ग्रन्थनाम-शीर्षक से ही दिये हैं ।

ख वर्णिक-छन्दो के लक्षण एव नामभेद—इसम वर्णिक-सम, प्रकीर्णक, दण्डक, अर्द्धसम, विषम और वैतालीय-छन्दो के वृत्तमौक्तिक के अनुसार छन्द-नाम और लक्षण दिये हैं । लक्षण मगणादिगणो के सक्षिप्त रूप 'म य र स त, ज भ न ल ग' रूप मे दिये हैं । पश्चात् सन्दर्भ-ग्रन्थो के अक, नामभेद और अक दिये हैं । यह प्रणालिका 'क १ मात्रिक-छन्दो के लक्षण एव नामभेद' के अनुसार ही है ।

केवल २६५ वर्णिक सम-छन्दो में से ६१ छन्द ही ऐसे हैं जिनके कि नाम-भेद प्राप्त नही है । एक ही छन्द के एक से लेकर आठ तक नामभेद प्राप्त होते हैं । नामभेदो की तुलना से यह स्पष्ट है कि इसका प्रयोग कितना व्यापक था ! ऐसा प्रतीत होता है कि नाम निर्वाचन के लिये छन्द शास्त्रियो के सम्मुख कोई निश्चित परिपाटी नही थी, वे स्वेच्छा से छन्दो का नाम-निर्वाचन कर सकते थे, अन्यथा इतने नामभेद प्राप्त नही होते !

ग छन्दो के लक्षण एव प्रस्तार-सख्या—इसमें वृत्तमौक्तिक में प्रयुक्त एकाक्षर से षड्विंशाक्षर तक के सम-वर्णिक छन्दो के क्रमश नाम देकर 'ऽ, ।' गुरु-लघुरूप में लक्षण दिये हैं पश्चात् उसकी प्रस्तारसख्या दिखाई है कि यह भेद प्रस्तारसख्या की दृष्टि से कोन सा है । मैंने यथासाध्य समग्र छन्दो की प्रस्तार-सख्या देने का प्रयत्न किया है, फिर भी कतिपय छन्द ऐसे हे जिनकी प्रस्तार-सख्या प्राप्त नही हुइ हैं । तज्ञो से निवेदन है कि इसकी पूर्ति करने का वे प्रयत्न करें ।

प्रकीर्णक, दण्डक, अधसम और विषम छन्दो के नाम और लक्षण 'ऽ,।' प्रणालिका से ही दिये हैं ।

पञ्चम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट में जिन छन्दो का वृत्तमौक्तिक में उल्लेख नही है और जो सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची के २१ ग्रन्थो में प्रयुक्त हैं उन छन्दो को भी छन्द शास्त्रविषयक

जिज्ञासुओं के लिये प्रस्तार-संख्या के क्रम से दिये हैं। प्रारंभ में प्रस्तार-सख्या, छन्द-नाम, लक्षण और सन्दर्भग्रन्थ के अंक, नामभेद तथा अंक दिये हैं। यह पद्धति 'क. (१) मात्रिक-छन्दो के लक्षण एवं नामभेद' के अनुसार ही है।

इसमें अक्षरानुक्रम से इतने विशिष्ट छन्द प्राप्त हैं :—

४	अक्षर	१२	छन्द		१६	अक्षर	३६	छन्द
५	,,	२७	,,		१७	,,	२७	,,
६	,,	५५	,,		१८	,,	३३	,,
७	,,	१२०	,,		१९	,,	२५	,,
८	,,	८९	,,		२०	,,	१६	,,
९	,,	५७	,,		२१	,,	१८	,,
१०	,,	९८	,,		२२	,,	२०	,,
११	,,	१०३	,,		२३	,,	१८	,,
१२	,,	११२	,,		२४	,,	२१	,,
१३	,,	९०	,,		२५	,,	२०	,,
१४	,,	७७	,,		२६	,,	२७	,,
१५	,,	३८	,,					

इस प्रकार वर्णिक-सम के ११३९, प्रकीर्णक वृत्त २४, दण्डक-वृत्त ६६ तथा अर्धसमवृत्त १५२ अर्थात् कुल १३८१ अवशिष्ट प्राप्त-छन्दों का इसमे संकलन है।

विषमवृत्त के भी सैकडो छन्द और वैतालीय के प्रस्तार-भेद से अनेकों भेद प्राप्त होते हैं, जिनका संकलन इस सग्रह मे समयाभाव से नही किया जा सका।

षष्ठ परिशिष्ट—

वृत्तमौक्तिक में गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और षट्पद के प्रस्तार-भेद से भेदो के नाम एवं सक्षेप मे लक्षण प्राप्त हैं किन्तु इनके उदाहरण प्राप्त नही हैं। ग्रन्थान्तरो में भी इनके उदाहरण प्राप्त नहीं हैं। केवल कविदर्पण में गाथा-भेदों के उदाहरण और वाग्वल्लभ मे गाथा और दोहा-भेदों के लक्षणयुक्त उदाहरण प्राप्त होते हैं। अतः गाथा और दोहा-भेदों के स्वरूप का दिग्दर्शन कराने के लिये इस परिशिष्ट में वाग्वल्लभ से गाथा और दोहा-भेदों के लक्षण-युक्त उदाहरण उद्धृत किये हैं।

सप्तम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट मे ग्रन्थकार चन्द्रशेखर भट्ट ने वृत्तमौक्तिक में छन्दों के प्रत्युदाहरण देते हुए जिन ग्रन्थकारो और ग्रन्थो के उद्धरण दिये हैं उनकी अकारानुक्रम से सूची दी है। कतिपय स्थलो पर 'अन्ये च' 'यथा वा' कह कर जो उद्धरण दिये हैं, उनका भी मैंने इस सूची मे उल्लेख कर दिया है।

अष्टम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट मे मैंने अनेक सूचीपत्रो के आधार से 'छन्द' शास्त्र के ग्रन्थ और उनकी टीकायें' शीर्षक से ग्रन्थो की अकारानुक्रम से विस्तृत सूची दी है। इसमे ग्रन्थ का नाम, उसकी टीका, ग्रन्थकार एव टीकाकार का नाम तथा यह ग्रन्थ कहा प्राप्त है या किस सूची मे इसका उल्लेख है, सकेत किया है। शोध करने पर और भी अनेको ग्रन्थ प्राप्त हो सकते हैं। मैं समझता हूँ कि छन्द शास्त्रियों और शोधकर्त्ताओ के लिये यह सूची अवश्य ही उपादेय एव मार्ग दर्शक सिद्ध होगी।

प्रति-परिचय

मूल ग्रन्थ का सम्पादन पाच प्रतियो के आधार से किया गया है जिसम तीन प्रतिया प्रथम खण्ड की हैं और दो प्रतिया द्वितीय खण्ड की हैं। इन पाचो प्रतियो का परिचय इस प्रकार है—

वृत्तमौक्तिक, प्रथम खण्ड

१ क सज्ञक, आदर्श प्रति

अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर सख्या ५५२७

माप—२६ ५ c m × ११ ३ c.m

पत्र सख्या ४१, पक्ति ७, अक्षर ३६

लखन-काल १८वी शती का पूर्वार्द्ध

शुद्धलेखन, शुद्धतम प्रति

२ ख सज्ञक प्रति

अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर सख्या ५५२८

माप—२५ २ c m × १० ६ c m

पत्र सख्या २३, पक्ति १०, अक्षर ४२

लेखन काल १६६० के लगभग, सम्भवत लालमनि मिश्र की ही लिखी हुई है।

अपूर्ण प्रति। शुद्धलेखन, शुद्धतम प्रति

३ ग सज्ञक प्रति

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर सख्या ५८३

माप—२५ ८ cm × १० ७ cm

पत्र सख्या १० , पक्ति १८ , अक्षर ५६

लेखनकाल अनुमानत १८वी शती का प्रथम चरण, लिपि सुन्दर है किन्तु अशुद्ध है।

इसमे रचना और लेखन-प्रशस्ति नही है।

वृत्तमौक्तिक द्वितीय खण्ड

१ क सज्ञक. आदर्श प्रति

अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर सख्या ५५३०

माप—२५ २ cm × १० ६ cm

पत्र सख्या १६६ ; पक्ति ७ , अक्षर ३६

लेखनकाल १६६० वि० लेखक—लालमनि मिश्र

लेखनस्थान—अर्गलपुर (आगरा)

शुद्धतम एव सशोधित प्रति है। लेखन प्रशस्ति इस प्रकार है—

"॥सवत् १६६० समये श्रावणवदि ११ रवौ शुभदिने लिखित शुभस्थाने अर्गलपुरनगरे लालमनिमिश्रेण। शुभम्। इद ग्रथसख्या ३८५०।"

२ ख सज्ञक प्रति

अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर सख्या ५५२६

माप २६ ५ cm × ११ ३ cm

पत्रसख्या १६१, पक्ति ७, अक्षर ३६

लेखनकाल १८वी शती का पूर्वार्द्ध

शुद्धलेखन, शुद्धप्रति लेखन प्रशस्ति नही है।

दोनो टीकाओ की अद्यावधि एक-एक ही प्रति प्राप्त होने से उन्ही के आधार से सम्पादन किया है। दोनो टीकाओ की प्रतियो का परिचय इस प्रकार है—

वृत्तमौक्तिक वार्त्तिकदुष्करोद्धार

टी० लक्ष्मीनाथ भट्ट

अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर सख्या ५५३३

माप २७ ५ cm × ११ ५ cm

पत्र सख्या ३८, पक्ति ७; अक्षर ३७
लेखनकाल १६९० वि० लेखक - लालमनि मिश्र
लेखन स्थान - अर्गलपुर (आगरा)
शुद्ध एव सशोधित पूर्णप्रति एकमात्र प्रति

लेखन-प्रशस्ति इस प्रकार है —

"॥ सवत् १६९० समये भाद्रपदशुदि३ भौमे शुभदिने अर्गलपुरस्थाने लिखित लालमनिमिश्रेण । शुभ भूयात् । श्रीविष्णवे नम ॥"

वृत्तमौक्तिकदुर्गमबोध

टी० महोपाध्याय मेघविजय

महोपाध्याय विनयसागर सग्रह, कोटा, पोथी २३, प्र न ११
माप २५ ५ cm × १० ७ c.m
पत्रसख्या १०, पक्ति २१; अक्षर ६०
लेखनकाल १८वी शती टीकाकार - महोपाध्याय मेघविजय द्वारा स्वय लिखित शुद्ध एव सशोधित एकमात्र प्रति पत्र २-५ तक प्रस्तार चित्र

सम्पादन-शैली

सम्पादन मे प्रथम खण्ड की तीनो प्रतियो को क, ख, ग और द्वितीय-खण्ड की दोनो प्रतियो को क, ख, सज्ञा प्रदान की है ।

प्रथमखण्ड की ख सज्ञक प्रति और द्वितीयखण्ड की क सज्ञक प्रति एक ही व्यक्ति की लिखी हुई और प्रथमखण्ड की क सज्ञक और द्वितीयखण्ड की ख सज्ञक प्रति सभवत इसी प्रति की प्रतिलिपि हो, क्योकि दोनो मे अतीव सामीप्य होने से विशेष पाठ-भेद प्राप्त नहीं होते ।

दोनो खण्डो की क सज्ञक प्रति को मैंने आदर्श माना है और अन्य प्रतियो के पाठभेदो को मैंने टिप्पणी में पाठान्तर-रूप मे दिये हैं । कतिपय स्थलो पर प्रतिलिपिकार के भ्रम से जो अश या पक्तिया क सज्ञक प्रति मे छूट गई हैं वे ख सज्ञक प्रति से मूल में सम्मिलित कर दी गई हैं और कतिपय शब्द ख प्रति के शुद्ध होने से उसे मूल मे रखकर क प्रति के पाठ को पाठान्तर में दे दिया है ।

ग्रथकार ने प्रत्युदाहरणों और नामभेदो मे जिन ग्रथो का उल्लेख किया है उन ग्रथो के स्थल, सर्गसख्या और पद्यसख्या टिप्पणी में दी गई हैं और जिन प्रत्यु

दाहरणो के कही-कही पूर्णपद्य न देकर एक-एक चरण-मात्र दिये हैं उन्हें पूर्णरूप मे टिप्पणी मे दे दिये है ।

इन्द्रवज्रा उपेन्द्रवज्रा-उपजाति, वशस्थविला-इन्द्रवशा-उपजाति और शालिनी-वातोर्मी-उपजाति के ग्रथकार ने १४-१४ भेद स्वीकार किये हैं किन्तु उनके नाम, लक्षण एव उदाहरण न होने से मैंने टिप्पणी मे इन्द्रवज्रा-उपेन्द्रवज्रा-उपजाति और वशस्थविला-इन्द्रवशा-उपजाति के १४-१४ भेदो के नाम, लक्षण एव उदाहरण अन्य ग्रथो के आधार से दिये हैं तथा शालिनी-वातोर्मी-उपजाति एव रथोद्धता-स्वागता-उपजाति के टिप्पणी मे लक्षणमात्र दिये हैं क्योकि अन्य ग्रथो मे इनके नाम और उदाहरण पूर्णरूप मे मुझे प्राप्त नही हुये ।

कतिपय स्थलो पर लक्षण स्पष्ट न होने से एव उदाहरण न होने से मैंने टिप्पणी मे लक्षणो को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है, साथ ही अन्य ग्रथो से प्राप्त उदाहरण भी दिये हैं । गाथादि छदभेदो के लक्षण और नाम टिप्पणी में देकर इन भेदो को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है ।

प्रतियो मे छन्द के प्रारम्भ में कही 'अथ' का प्रयोग है और कही नहीं है, कही नाम के साथ 'वृत्त' या 'छन्द' का प्रयोग है और कही नही है तथा छन्द के अत मे केवल नाम ही प्राप्त है, किन्तु मैंने ग्रथ मे एकरूपता रखने के लिये प्रारभ मे 'अथ' और छन्द का नाम और अत मे 'इति' और छन्द नाम का सर्वत्र प्रयोग किया है । इसी प्रकार श्लोक-सख्या में भी एकरूपता की दृष्टि से मैंने प्रत्येक प्रकरण की श्लोक-सख्या पृथक् पृथक् दी है ।

गोविन्दविरुदावली के पाठान्तर मैंने राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ग्रन्थाक २३४८० पत्र ८ पक्ति १६, अक्षर ४१ की प्रति से दिये हैं ।

पाठान्तर, टिप्पणिया और परिशिष्टो द्वारा मैंने यथासम्भव इस ग्रन्थ को श्रेष्ठ बनाने का प्रयास किया है किन्तु मैं इसमें कहाँ तक सफल हुआ हूँ इसका निर्णय तो एतद्विषय के विद्वान् ही कर सकेंगे ।

आभार प्रदर्शन—

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर के सम्मान्य सञ्चालक, मनीषी पद्मश्री मुनि श्री जिनविजयजी पुरातत्त्वाचार्य ने इस ग्रन्थ के सम्पादन का कार्य प्रदान कर मुझे जो साहित्य-साधना का अवसर दिया तथा प्रतिष्ठान के उपसचालक, सम्माननीय श्री गोपालनारायणजी बहुरा, एम ए ने जिस आत्मीयता

के साथ समय-समय पर परामर्श एवं सहयोग देकर कृतार्थ किया, उसके लिये मैं इन दोनो का हार्दिक अभिनन्दन करता हू ।

श्री अगरचन्दजी नाहटा के सत्प्रयत्न से अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर के सरक्षक बीकानेर के महाराजा एव व्यवस्थापको ने वृत्तमौक्तिक की प्रतिया सम्पादनार्थ प्रदान की; अत मैं इन सब का आभारी हूँ ।

प्रो० श्री कण्ठमणिशास्त्री कांकरोली, श्री गगाधरजी द्विवेदी जयपुर, श्री भवरलालजी नाहटा कलकत्ता, डॉ० श्री नारायणसिंहजी भाटी एम ए, पी एच डी , सचालक राजस्थानी शोध सस्थान जोधपुर, श्रीबद्रीप्रसाद पचोली एम ए, एव इण्डिया ऑफिस लायब्रेरी, लन्दन, के व्यवस्थापक आदि ने परामर्श देकर एव ग्रन्थो की आद्यन्त-प्रशस्तिया भेज कर जो सहयोग प्रदान किया है उसके लिये मै इन सब का उपकृत हूँ ।

मेरे परममित्र श्री लक्ष्मीनारायणजी गोस्वामी का अभिनन्दन मैं किन शब्दो में करू ! इस ग्रन्थ को शुद्ध एव श्रेष्ठ बनाने का सारा श्रेय ही इन्ही को है ।

साधना प्रेस जोधपुर के सचालक श्री हरिप्रसादजी पारीक भी धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने इसके मुद्रण मे पूर्ण सहयोग दिया है ।

अन्त मे, मैं अपने पूज्य गुरुदेव श्रीजिनमणिसागरसूरिजी महाराज का अत्यन्त ही ऋणी हूँ कि जिनकी कृपा और आशीर्वाद से आज मैं इस ग्रन्थ का सम्पादन करने योग्य बन सका !

श्रीमती सन्तोषकुमारी जैन (मेरी धर्मपत्नी) के सहयोग और प्रेरणा से मैं इस कार्य में सलग्न रहा इसके लिये उसको भी साधुवाद ।

—म विनयसागर

आनन्द निवास, जोधपुर
२४-५-६५

परिभाषिक-शब्द

शब्द	गण, कला-मात्रा	पृष्ठ-संख्या	पद्य-संख्या
अधिप	I S S	४	३४
अमृत	S I S	४	३५
अहि	I S I S	३	१६
अहिगण	S I I I	३	२०
आनन्द	S I	३	२४
इन्द्रासन	I S S	३	२०
ऐरावत	I S S	४	३४
कङ्कण	S	८४	१७६
कनक	S	३	२६
कनक	I	४	३७
कमल	S I S I	३	१६
कमल	I I S	३	२६
कर	I I S	३	२६
करतल	I I S	३	२१
करताल	S I	३	२४
कर्ण	S S	३	२१
कर्णपर्याय	S S	३	३०
कर्णसमान	S S	३	२८
कलि	S S I I	३	१६
काहल	I	४	३८
कुच-पर्याय	I S I	४	३१
कुञ्जर-पर्याय	I S S	४	३४
कुण्डल	S	३	२६
कुन्तीसुत	S S	६५	६४
कुसुम	I S I I	३	२०
"	I	९०	२०४
केयूर	S	४	३७
ग	S		
गज	चतुर्मात्रा	४	३६
गजपति	I S I	४	३१
गजाभरण	I I S	३	२६
गण्ड	S I I	४	३२
गन्ध	I	४	३८
गरुड पर्याय	S I S	४	३५
गुरुयुगल	S S	३	२८
गोपाल	I S I	४	३१
चमर	I I S I I	३	१६
चाप	I I I S	३	२०
चामर	S	३	२६
चित्त	S	१२५	३५८
चिर	I S	३	२३
चिरालय	I S	३	२३
चिह्न	I S	३	२३
चूतमाला	I S	३	२३
जगण	I S I	४	३६
जङ्घायुगल	S I I	४	३२
जोहल	S I S	४	३५
टगण	षण्मात्रा	२	१५
ठगण	पञ्चमात्रा	२	१५
डगण	चतुर्मात्रा	२	१५
ढगण	त्रिमात्रा	२	१५
णगण	द्विमात्रा	२	१५
तगण	S S I	४	३६
ताटङ्क	S	४	३७
ताण्डव	I I I	३	२५
तात	S I I	४	३२
तारापति	I S S	४	३४
ताल	S I	३	२४

शब्द	गण, कला-मात्रा	पृष्ठ-संख्या	पद्य-संख्या
तुम्बुरु	।ऽ	१६१	५२६
तुरङ्गम	चतुर्मात्रा	४	३६
तूर्य-पर्याय	ऽ।	३	२४
तोमर	।ऽ	३	२३
दण्ड	।	४	३७
दहन	ऽ।।	४	३२
द्विजजाति	।।।।	४	३३
द्विजवर	।।।।	४	३३
धर्म	ऽ।।।।	३	१९
धातु	।।।ऽ।	३	१९
ध्रुव	।ऽ।।।	३	१६
ध्वज	।ऽ	३	२३
नगण	।।।	४	४०
नरेन्द्र-पर्याय	।ऽ।	४	३१
नायक	।ऽ।	४	३१
नारी	।।।	३	२५
निर्वाण	ऽ।	३	२४
नूपुर	ऽ	३	२६
पक्षी	ऽ।ऽ	३१	६१
पक्षिराज	ऽ।ऽ	५४	६४
पञ्चशर	।।।।	४	३३
पटह	ऽ।	३	२४
पत्र	।ऽ	३	२३
पदपर्याय	ऽ।।	४	३२
पदाति	चतुर्मात्रा	४	३६
पयोधर	।ऽ।	३	२१
परम	।।	३	२७
पवन	।ऽ	३	२३
पवन	।ऽ।	४	३१
पाणि	।।ऽ	३	२९
पापगण	।।।।।	३	२०
पितामह	ऽ।।	४	३२
पुष्प	।	४	३८
प्रहरण	।।ऽ	३	२९
प्रहरणनामानि	पञ्चमात्रा	४	३६
फणि	ऽ।	३	२६
बाण	।।।।	४	३३
बाण	।	४	३८
बलभद्र	ऽ।।	४	३२
बाहु	।।ऽ	३	२९
भगण	ऽ।।	४	४०
भामिनी-पर्याय	।।।	३	२५
भाव	।।।	३	२५
भुजङ्ग	ऽ।ऽ	४	३५
भुजदण्ड	।।ऽ	३	२९
भुजाभरण	।।ऽ	३	२९
भूपति	।ऽ।	४	३१
मगण	ऽऽऽ	४	३९
मनोहर	ऽऽ	३	२८
मानस	ऽ	३	२६
मुग्धाभरण	ऽ	३	२६
मुनिगण	।।।।	४४	६३
मृगेन्द्र	ऽ।ऽ	४	३५
मेघ	।ऽऽ	४	३४
मेरु	।	४	३७
यश	ऽ।ऽ	४	३५
यगण	।ऽऽ	४	३९
रगण	ऽ।ऽ	४	३९
रज्जु	।ऽ।	४	३१
रति	ऽ।।	४	३२
रत्न	।।ऽ	३	२९
रथ	चतुर्मात्रा	४	३६
रदन	।ऽऽ	४	३४
रस	।ऽ	३	२३
रस	।	४	३८
रसना	ऽ	३	२६
रसलग्न	ऽऽ	३	२८
रसिक	ऽऽ	३	२८

शब्द	गण, कला-मात्रा	पृष्ठ-सख्या	पद्य-सख्या	शब्द	गण, कला मात्रा	पृष्ठ-सख्या	पद्य-सख्या
रूप	I	४	३८	शिखर	I I I I	४	३३
ल, लघु	I			शेखर	I I S I	३	२०
लहलहित	S S	३	२८	शेष	I I I I S	३	१६
वक्र	S	३	२६	सगण	I I S	४	३६
वज्र	I I S	३	२६	सागर	S I	३	२४
वलय	I S	३	२३	सात्त्विकभाव	I I I	३	२५
वलय	S	३	२६	सुनरेन्द्र	I S S	४	३४
वसुचरण	S I I	३	२२	सुप्रिय	I I	३	२७
वास	I S	३	२३	सुमतिलम्बित	I S S	३	२८
विप्र	I I I I	३	२२	सुरतलता	S S	३	२८
विराट्	S I S	४	३५	सुरपति	S I	३	२४
विहग	S I S	४	३५	सूर्य	I S S I	३	१६
वीणा	S I S	४	३५	सूर्य	S I S	३	२०
शक्र	S I I S	३	१६	हर	S S S	३	१६
शङ्ख	I	४	३८	हस्त	I I S	३	२६
शब्द	I	४	३८	हस्तायुध-पर्याय	I I S	३	३०
शर	I	४	३७	हार	S	४	३७
शशि	I I S S	३	१६	हारावलि	S	३	२६
शालि	I I I I I I	३	१६	हीर	S S I	३	२०

॥ ईं ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीगुरुभ्यो नमः ॥ [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] श्रीपितृचरणसेवासुमतिना तदीयाभिर्वाग्भिर्विरचितपथगम्यता [illegible]
[illegible] ॥ श्रीलक्ष्मीनाथभट्टस्य पितुर्नत्वा पदाम्बुजम् । श्रीचन्द्रशेखरः कविः [illegible]
[illegible] ॥ २ ॥ श्रीमत्पिङ्गलनागोक्तछन्दःशास्त्रमहोदधेः ॥ पितुः प्रसादात् [illegible]
[illegible]

॥ १ ॥

५७२
१

[illegible]
[illegible]
क्ष्मीनाथभट्टात्मजकविशेखरश्रीचन्द्रशेखरभट्टविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिके पिङ्ग
लवार्तिकमात्रावृत्त्य प्रथमपरिच्छेदः ॥ ॥ श्रीरस्तु ॥ ॥ शुभमस्तु ॥

॥ राम ॥
४५ ॥

अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर से प्राप्त प्रथमखण्ड, क संज्ञक प्रति के आद्यन्त पत्रों की प्रतिकृति

अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर से प्राप्त द्वितीय खण्ड क संज्ञक प्रति के प्रथम पत्र और ख संज्ञक प्रति के अंतिम पत्र की प्रतिकृति

अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर से प्राप्त वृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धार टीका के आद्यन्त पत्रों की प्रतिकृति

महोपाध्याय विनयसागर संग्रह, कोटा से प्राप्त वृत्तमौक्तिकदुर्गमबोध टीका के आद्यन्त पत्रों की प्रतिकृति

कविशेखर-भट्टश्रीचन्द्रशेखरप्रणीतं

वृत्तमौक्तिकम्

प्रथमः खण्डः



प्रथमं गाथाप्रकरणम्

[मङ्गलाचरणम्]

युष्मान् पातु चिरन्तन किमपि तत्सत्य चिदेकात्मक,
प्रोन यत्र चराचरात्मकमिद वाक्चेतसोर्यत्परम् ।
यस्माद् विश्वमुदेति भाति च यतो यस्मिन्पुनर्लीयते,
यद्वित्त श्रुतिशान्तदान्तमनसामानन्दकन्द मह ॥ १ ॥

अमुष्मिन् मे दर्वी करकलितदुर्बोधविषमे,
मति छन्द शास्त्रे यदपि चरित नास्ति विपुला ।
तथाप्याराध्यश्रीपितृचरणसेवा[1] सुमतिना,
तदीयाभिर्वाग्भिर्विरचितपथे गम्यत इह ॥ २ ॥

श्रीलक्ष्मीनाथभट्टस्य पितुर्नत्वा पदाम्बुजम् ।
श्रीचन्द्रशेखरकविस्तनुते वृत्तमौक्तिकम् ॥ ३ ॥

श्रीमत्पिङ्गलनागोक्तच्छन्द शास्त्रमहोदधि ।
पितृप्रसादादभवन् मम गोष्पदसन्निभ[2] ॥ ४ ॥

अलसा प्राकृते केचिद् भवन्ति सुधिय क्वचित् ।
तत्सन्तोषाय भवतु वार्त्तिक वृत्तमौक्तिकम् ॥ ५ ॥

यो नानाविधमात्राप्रस्तारात् सागर प्राप्य ।
गरुडमवञ्चयदतुल स हि नाग पिङ्गलो जयति ॥ ६ ॥

गुरुलघुस्थिति

दीर्घ सयुक्तपर पादान्तो वा विसर्गबिन्दुयुत ।
स गुरुर्वङ्को द्विकलो लघुरन्य शुद्ध एककल ॥ [illegible] ॥

---

१ ग सेवां । २. ग सन्निभो ।

यथा –

गौरीवर भस्मविभूषिताङ्ग, इन्दुप्रभाभासितभालदेशम् ।
गङ्गातरङ्गावलिभासमानमूर्द्धानमानन्दितमानमामि ॥ ८ ॥

रेफहकारव्यञ्जनसयोगात् पूर्वसस्थितस्य भवेत् ।
वैकल्पिक लघुत्व वर्णस्योदाहरन्ति विद्वास ॥ ९ ॥

यथा –

जयति प्रदीपितकामो मम मानसह्रदनिमज्जनाश्रियम् ।
यस्य गलगरलदम्भान् मालिन्यमन्तरस्थित[1] लग्नम् ॥ १० ॥

विकल्पस्थिति

यद्यपि दीर्घं वर्णं जिह्वा लघु पठति भवति सोऽपि लघु ।
वर्णास्त्वरित पठितान् द्वित्रानेक विजानीत[2] ॥ ११ ॥

यथा –

अरे रे[*] ! कथय वार्त्ता दूति तस्यातिचित्रा
मम सविधमुपैष्यत्येष कृष्ण कदा नु ।
इति चटु कथयन्त्या राधिकाया तदानी
मति-डगमगदेह केशवोप्याऽऽविरासीत् ॥ १२ ॥

काव्यलक्षणेऽनिष्टफलवेदनम्

कनकतुला यद्वाहि सहते परमाणुवैषम्यम् ।
श्रवणतुला नहि तद्वच्छन्दोभङ्गेन वैषम्यम् ॥ १३ ॥
लक्षणविकल काव्य पण्डितससत्सु यो बुध पठति ।
हस्ताग्रलग्नखड्गं कृत्त शीर्षं न जानाति ॥ १४ ॥

मात्राणां गणव्यवस्थाप्रस्तारश्च

रसबाणवेददहनै पक्षाभ्या चैव सम्मिता मात्रा ।
येषा ते प्रस्ताराष्ट-ठ-ड-ढ णेत्येव सज्ञका प्रोक्ता ॥ १५ ॥
ट-त्रयोदशभेदा स्युरष्टौ भेदाष्ठकारजा ।
डस्य भेदा पञ्च टस्य त्रयो द्वावन्तिमस्य तु[3] ॥ १६ ॥
गुरो माद्यस्याधो[4] लघुकमवधेहि प्रथमत-
स्तत दोपान् वर्णानुपरितनतुल्यान् घटयत[5] ।

---

१ क ख मेलस्थित । अन्त स्थितमिति पाठ समीचीन (स०) । २ ग विजानीयात् ।
३ ग द्रम भस्य द्वयं स्मृतम् । ४. ग पूर्वस्याधो । ५ ख ग घिरचय ।
*अत्र 'रे रे' इति लघुपठनीये स्त ।

स्थले शून्ये तद्वद् घटय[1] गुरुमेवेति नियमी,
लघुं सर्वो वर्णो भवति पदमध्ये च शिशुका[2] ॥ १७ ॥
मात्राप्रस्तारे खलु यावद्भिः स्यात् कलापूर्ति ।
तावन्तो गुरुलघवो देया इत्यनियम प्रोक्त ॥ १८ ॥

मात्रागणानां नामानि

हर-शशि-सूर्या शक्र शेषोऽप्यहि-कमल-धातृ-कलि-चन्द्रा ।
ध्रुव-धर्म-शालिसंज्ञा षण्मात्राणा त्रयोदशैव भिदा[3] ॥ १९ ॥
इन्द्रासनमथ सूर्यश्चापो हीरश्च शेखर कुसुमम् ।
अहिगण-पापगणाविति पञ्चकलस्यैव संज्ञा स्यु ॥ २० ॥
गुरुयुग्म किल कर्णो गुर्वन्त करतलो भवति ।
गुरुमध्यम पयोधर इति विज्ञेयस्तृतीयोऽपि ॥ २१ ॥
आदिगुरुर्वसुचरणो विप्रो लघुभिश्चतुर्भिरेव स्यात् ।
इति हि चतुष्कलभेदा पञ्चैव भवन्ति पिङ्गलेनोक्ता ॥ २२ ॥
ध्वज-चिह्न-चिर-चिरालय-तोमर-पत्राणि चूतमाले च ।
रस-वास-पवन-वलया भेदास्त्रिकलस्य लघुकमालम्ब्य ॥ २३ ॥
करताल-पटह-ताला सुरपतिरानन्दतूर्यपर्याया ।
निर्वाण-सागरावपि गुर्वादित्रिकलनामानि ॥ २४ ॥
सात्त्विकभावास्ताण्डवनारीणा भामिनीना च ।
नामानि यानि लोके त्रिलघुगणस्यैव तानि जानीत ॥ २५ ॥
नूपुर-रसना चामर फणि मुग्धाभरण-कनक-कुण्डलकम् ।
वक्रो मानस-वलयौ हारावलिरिति गुरोश्च नामानि ॥ २६ ॥
सुप्रिय-परमौ कथितौ द्विलघोरिति नाम सक्षेपात् ।
अथ वक्ष्यामि चतुष्कलनामान्यन्यानि पिङ्गलोक्तानि* ॥ २७ ॥
सुरतलता गुरुयुगल कर्णसमानेन रसिक-रसलग्नौ ।
लम्बित-सुमति-मनोहर-सहलहिताना च नाम्नापि[4] ॥ २८ ॥
कर-पाणि-कमल-हस्ता प्रहरण भुजदण्ड-बाहु-रत्नानि ।
वज्र[5] गजभुजयोरप्याभरण स्याच्चतुष्कले संज्ञा ॥ २९ ॥
कर्णपर्यायित शब्दा गुरुयुग्मस्य वाचका ।
हस्तायुधस्य पर्याया गुर्वन्तस्यैव बोधका ॥ ३० ॥

---

१ ग. पूरय स्थाय । २ क नियम । ३ ग भेद । ४ ख ग नामानि ।
५. ग वज्रो ।
* टि. द्रष्टव्य-वाग्वल्लभम् । (परि० १, गाथा २१-२२) ।

भूपति-नायक-गजपति-नरेन्द्र-कुचवाचका शब्दा ।
गोपाल-रज्जु-पवना मध्यगुरोर्बोधका[1] ज्ञेया ॥ ३१ ॥
दहन-पितामह-ताता पदपर्यायश्च गण्ड[2]-बलभद्रौ ।
जङ्घायुगल रतिरित्यादिगुरौ स्युश्चतुष्कले सज्ञा ॥ ३२ ॥
द्विज-जाति-शिखर-विप्रा परमोपायेन[3] पञ्चशर-बाणौ ।
द्विजवर इत्यपि कथिता[4] लघुकचतुष्कले गणे सज्ञा ॥ ३३ ॥
सुनरेन्द्राधिप-कुञ्जरपर्याया रदन-मेघयोश्चापि ।
ऐरावत तारापतिरित्यादि लघोश्च पञ्चमात्रस्य ॥ ३४ ॥
वीणा-विराट्-मृगेन्द्रामृत-विहगा गरुडपर्याया ।
जोहल[5]-यक्ष-भुजङ्गा मध्यलघो पञ्चमात्रस्य ॥ ३५ ॥
विविधप्रहरणनामा पञ्चकल पिङ्गलेनोक्त ।
गज-रथ-तुरङ्गम-पदातिसज्ञक स्याच्चतुर्मात्र ॥ ३६ ॥
ताटङ्क-हार-नूपुर-केयूरकमिति भवन्ति गुरुभेदा ।
शर-मेरुदण्ड कनक लघुभेदा इति विजानीत ॥ ३७ ॥
शब्द रूप-रस गन्ध काहलं पुष्प शङ्ख-वाणनामभि ।
सत्प्रबन्ध इह वृत्तमौक्तिके ज्ञायता लघुकनाम पण्डिता ॥ ३८ ॥

वर्णवृत्तानां गणसज्ञा

मस्त्रिगुरुरादिलघुको यगणो रगणश्च लघुमध्य ।
अन्तगुरु सस्तगणोऽप्यन्तर्लघुमध्यगुरुको ज ॥ ३९ ॥
आदिगुरुर्भगणोऽपि च नगणस्त्रिलघुर्मत सद्भि ।
इति पिङ्गलप्रकाशित गणसज्ञा वर्णवृत्तानाम् ॥ ४० ॥

गणदेवता

पृथ्वी-जल शिखि-पवना गगन द्युमणीदु-पन्नगान् क्रमत[6] ।
इत्यष्टौ गणदेवान् पिङ्गलकथितान् विजानीत ॥ ४१ ॥

गणानां मैत्री

मगणस्त्रिलघू[7] मित्रे भृत्यौ भयगणौ स्मृतौ ।
उदासीनौ जतगणावरी रसगणौ मतौ ॥ ४२ ॥

गणदेवानां फलाफलम्

मगणो ऋद्धिकार्यं यगण सुखसम्पदो धत्ते ।
रगणो ददाति रमण 'सगणोदेशाद् विवासयति'[8] ॥ ४३ ॥

---

१ ग बोधिका । २ ग गण्डु । ३ ग परमोपासनम । ४ ग नास्ति पाठ । ५ ग योहल । ६ ख ग पृथिवीजलशिखिकाला गगनं सर्यंद्र च क्रमात् नाग । ७ ग त्रिगुरु । ८ '-' ग सगणो दशमारयात्येव ।

*तगण शून्य[1] तनुते जगणो रुजमादधात्येव ।
भगणो मङ्गलदायी नगण सकल फल दिशति* ॥ ४४ ॥
इति पिङ्गलेन कथितो गणदेवाना फलाफलविचार ।
ग्रन्थस्यादौ कविना बोद्धव्य सर्वथा यत्नात् ॥ ४५ ॥
मित्रद्वयेन ऋद्धि स्थिरकार्यं भृत्ययोर्भवति ।
मित्रोदास्ताभ्यामपि कार्याभावश्च बन्धोऽपि ॥ ४६ ॥
मित्रारिभ्या बान्धवपीडा कार्यं च मित्रभृत्याभ्याम् ।
भृत्याभ्यामुग्रो[2]ऽमुख[3]-मुदास्तभृत्यौ धन हरत ॥ ४७ ॥
भृत्योदासीनाभ्या भृत्यारिभ्या[4] च ह्याक्रन्द[5] ।
अल्प कार्यमुदास्तात् मित्रात् सजायतेप्युदास्ताभ्याम् ॥ ४८ ॥
सम्पदसम्पद् न भवत्युदास्तशत्रू च वैरिण[6] कुरुत ।
शत्रोर्मित्रात फल स्त्रीनाश शत्रुभृत्ययोर्भवति ॥ ४९ ॥
शत्रूदासीनाभ्या धननाश सर्वथा भवति ।
शत्रुभ्या नायकमृतिरिति फलमफल गणद्वये कथितम् ॥ ५० ॥

मात्रोद्दिष्टम्

दद्यात् पूर्वयुगाङ्कान् लघोरुपरि गस्य तूभयत ।
अन्त्याङ्क गुरुशीर्षस्थितान् विलुम्पेदथाङ्कांश्च ॥ ५१ ॥
उर्वरितैश्च[7] तथाङ्कैर्मात्रोद्दिष्ट विजानीयात् ।

मात्रानष्टम्

अथ मात्राणा नष्ट यददृष्ट[8] पृच्छ्यते रूपम् ॥ ५२ ॥
यत्कलकप्रस्तारो लघव कार्याश्च तावन्त ।
दत्वा पूर्वयुगाङ्कान पृष्ठाङ्क[9] लोपयेदन्त्ये ॥ ५३ ॥
उर्वरितोवरितानामङ्काना यत्र[10] लभ्यते भाग ।
परमात्रा च गृहीत्वा स एव गुरुतामुपागच्छेत् ॥ ५४ ॥

वर्णोद्दिष्टम्

द्विगुणानङ्कान दत्वा वर्णोपरि लघुशिर स्थितानङ्कान् ।
एकेन पूरयित्वा वर्णोद्दिष्ट विजानीत ॥ ५५ ॥

** ग प्रतौ – त्याजयति सोऽपि देशं, तगण शून्यफल च विदधाति ।
मगल भगणो दायी, नगणात सर्वं समीचीनम ।

१ ख शून्य फलन विदधाति । २ ख ग मग्रे । ३ क सस । ४ ग भृत्या दिभ्यां । ५ ग महाक्र द । ६ ग वैरिणां । ७ ग चस्चरितैश्च । ८ ग विद्वद्धि यत्र । ९. ग प्रश्नाङ्क । १० ग नास्ति पाठ ।

वर्णनष्टम्

नष्टे पृष्ठे भाग कर्त्तव्य पृष्ठसङ्ख्याया ।
समभागे ल[1] कुर्यात् विषमे दत्वैकमानयेद् गुरुकम् ॥ ५६ ॥

वर्णमेरु

कोष्ठानेकाधिकान् वर्णे[2] कुर्यादाद्यन्तयो पुन ।
एकाङ्कमुपरिस्थाङ्कद्वयैरन्यात्(न्?)प्रपूरयेत् ॥ ५७ ॥
वर्णमेरुस्य सर्वगुर्वादिगणवेदकम्[3] ।
प्रस्तारसङ्ख्याज्ञानञ्च फल तस्योच्यते बुधै ॥ ५८ ॥

वर्णपताका

दत्वा पूर्वयुगाङ्कान् पूर्वाङ्कैर्योजयेदपरान् ।
अङ्क पूर्व यो वै भृतस्तत पङ्क्तिसञ्चार ॥ ५९ ॥
अङ्का पूर्व भृता येन तमङ्क भरणे[4] त्यजेत् ।
अङ्कश्च पूर्व य सिद्धस्तमङ्क नैव साधयेत् ॥ ६० ॥
प्रस्तारसख्यया चैवमङ्कविस्तारकल्पना ।
पताका सर्वगुर्वादिवेदिकेय विशिष्य तु ॥ ६१ ॥

मात्रामेरु

एकाधिककोष्ठाना द्वे द्वे पङ्क्ती समे कार्ये ।
तासामन्तिमकोष्ठेष्वेकाङ्क पूर्वभागे तु ॥ ६२ ॥
एकाङ्कमयुक्पङ्क्ते समपङ्क्ते पूर्वयुग्माङ्कम् ।
दद्यादादिमकोष्ठे यावत् पङ्क्ति प्रपूर्ति स्यात् ॥ ६३ ॥
आद्याङ्केन तदीयं शीर्षाङ्कंर्वामभागस्थै ।
उपरिस्थितेन कोष्ठ विषमाया पूरयेत् पङ्क्तौ ॥ ६४ ॥
समपङ्क्तौ कोष्ठानां पूरणमाद्याङ्कमपहाय ।
उपरिस्थाङ्कैस्तदुपरिसस्थैर्वामस्थितैरङ्कै ॥ ६५ ॥
मात्रामेरुस्य प्रोक्त पूर्वोक्तफलभागिति ।

मात्रापताका

अथ मात्रापताकाऽपि कथ्यते कवितुष्टये ॥ ६६ ॥
दत्वोद्दिष्टवदङ्कान् वामावर्तन लोपयेदन्त्ये[5] ।
अवशिष्टो वै योऽङ्कस्ततो भवेत्[6] पङ्क्तिसञ्चार ॥ ६७ ॥
एर्वकाङ्कस्य लोपे तु ज्ञानमेकगुरोर्भवेत् ।
द्विव्यादीनां विलोपे तु पङ्क्तिर्द्विव्यादिबोधिनी ॥ ६८ ॥

---

१. ग लघु । २ ख वर्णान् । ३ ख ग वेदनम् । ४. ग भरण । ५ ग.चान्त्यं । ६ ग नास्ति पाठ ।

वृत्तद्वयस्यगुरुलघुज्ञानम्

पृष्ठे वर्णच्छन्दसि कृत्वा वर्णास्तथा मात्राः ।
वर्णाङ्केन कलाया लोपे गुरवोऽवशिष्यन्ते[1] ॥ ६९ ॥

वर्णमर्कटी

मर्कटी लिख्यते वर्णप्रस्तारस्यातिदुर्गमा ।
कोष्ठमक्षरसंख्यातं[2] पंक्ती[3] रचय षट् तया ॥ ७० ॥
प्रथमायामाद्यादीन् दद्यादङ्कांश्च सर्वकोष्ठेषु ।
अपरायां तु द्विगुणान् अक्षरसंज्ञेषु तेष्वेव ॥ ७१ ॥
आदिपंक्तिस्थितैरङ्कैर्विभाव्यापरपंक्तिगान् ।
अङ्कांश्चतुर्थपंक्तिस्थकोष्ठकानपि पूरयेत् ॥ ७२ ॥
[4]पूरयेत् षष्ठ-पञ्चम्याव(म)र्द्धैस्तुर्याङ्कसम्भवैः ।
एकीकृत्य चतुर्थस्थ-पञ्चमस्थाङ्कान् सुधीः ॥ ७३ ॥
कुर्यात् पंक्तितृतीयस्थकोष्ठकानपि पूरितान् ।
वर्णानां मर्कटी सेयं पिङ्गलेन प्रकाशिता ॥ ७४ ॥
वृत्तं भेदो मात्रा वर्णा गुरवस्तथा च लघवोऽपि ।
प्रस्तारस्य[5] षडेते ज्ञायन्ते पंक्तितः क्रमतः ॥ ७५ ॥

मात्रामर्कटी

कोष्ठान् मात्रासम्मितान् पंक्तिषट्कं[6],
　　कुर्यात्　मात्रामर्कटीसिद्धिहेतोः ।
तेषु द्वयादोनादिपंक्ति(का)वथाङ्कां-
　　स्त्यक्त्वाऽऽद्याङ्कं सर्वकोष्ठेषु दद्यात् ॥ ७६ ॥
दद्यादङ्कान्　पूर्वयुग्माङ्कतुल्या-
　　स्त्यक्त्वाऽऽद्याङ्कं　पक्षपंक्तावथाऽपि ।
पूर्वस्थाङ्कैर्भावयित्वा　ततस्तान्,
　　कुर्यात्　पूर्णान्नेत्रपंक्तिस्थकोष्ठान् ॥ ७७ ॥
प्रथमे द्वितीयमङ्कं द्वितीयकोष्ठे च पञ्चमाङ्कमपि ।
हत्वा बाणद्विगुणं तद् द्विगुणं नेत्रतुर्ययोर्दद्यात् ॥ ७८ ॥
एकीकृत्य तथाङ्कान् पञ्चमपंक्तिस्थितान् पूर्वान् ।
दत्वा तथैकमङ्कं कुर्यात्तमेव पञ्चमं[7] पूर्णम्[8] ॥ ७९ ॥

---

१. ग विशिष्यते । २. ग. सख्यातं । ३. ग. पंक्ति । ४. ग. पूरयत्षष्टपञ्चम्या वेधैः
५. ग. प्रस्तारश्च । ६. ग. षट्के । ७. ग. पञ्चमीं । ८. ग. पूर्णाम् ।

त्यक्त्वा पञ्चममङ्कं पूर्वोक्तानेव भावमापाद्य ।
दत्वा तथैवमङ्क षष्ठ[1] कोष्ठं प्रपूरयेद्[2] विद्वान् ॥ ८० ॥
कृत्वैक्य चाङ्कानां पञ्चमपक्तिस्थितानां च ।
त्यक्त्वा पञ्चदशाङ्क हित्वैक पूरयेन् मुने:[3] कोष्ठम् ॥ ८१ ॥
एवं निरवधिमात्राप्रस्तारेष्वङ्कबाहुल्यात् ।
[4]प्रकृतानुपयोगवशान्न कृतोऽङ्कविस्तारः ॥ ८२ ॥
एव पञ्चमपंक्ति कृत्वा पूर्णां च प्रथममेकाङ्कम्[5] ।
दत्वा पञ्चमपक्तिस्थितैरथाङ्कैः प्रपूरयेत् षष्ठीम् ॥ ८३ ॥
एकीकृत्य तथाङ्कान् पञ्चम-षष्ठस्थितान् विद्वान् ।
कुर्याच्चतुर्थपंक्ति पूर्णां नागाज्ञया तूर्णम् ॥ ८४ ॥
वृत्त प्रभेदो मात्राश्च वर्णा लघुगुरू तथा ।
एते षट्पंक्तित. पूर्णप्रस्तारस्य विभान्ति वै ॥ ८५ ॥

नष्टादिफलम्

नष्टोद्दिष्टं यद्वन् मेरुद्वितयं तथा पताका च ।
मर्कटिकाऽपि तद्वत् कौतुकहेतुर्निबध्यते तज्ज्ञैः ॥ ८६ ॥

प्रस्तारसंख्या

षड्विंशतिः सप्तशतानि चैव,
तथा सहस्राण्यपि सप्तपङ्क्तिः ।
लक्षाणि[6] दृग्वेदसुसम्मितानि,
कोटयस्तथा रामनिशाकरैः स्युः ॥ ८७ ॥

१३४२१७७२६ समस्तप्रस्तारपिण्डसंख्या ।

एकाक्षरादिषड्धिकविंशतिवर्णान्तवर्णवृत्तानाम् ।
उक्ताः समस्तसंख्या लक्ष्यन्ते जातयश्चार्याः[7] ॥ ८८ ॥

गाथाभेदाः

मुनिबाणकला गाथा विगाथापि तथा भवेत् ।
वेदबाणकला गाहू[8] षष्ट्यो(यु)द्गाथा भवेत् पुनः ॥ ८९ ॥
गाहिनी स्याद् द्विषष्ट्या तु मात्राणां सिंहिनी तथा ।
चतुःषष्ट्या मताना तु स्कन्धक कथ्यते बुधैः ॥ ९० ॥

---

१. ग. नास्ति पाठ । २. ग. वै पूरयेद् । ३. ग. नास्ति पाठः । ४. ग. प्रकृतोपयोग-वशाते । ५. ग. एकैकम् । ६. ख. ग. लक्षाणि पञ्चाशदथाष्टसख्या, होनानि कोटयो भव-वशितसंख्या: । ७ ग. न तथा जातयश्चार्या. । ख. चार्याः । ८. ग. गूणा ।

१ गाथा

प्रथमे द्वादशमात्रा मात्रा ह्यष्टादश द्वितीये तु[1] ।
दहने द्वादशमात्रास्तुर्ये दशपञ्च सम्प्रोक्ता ॥ ९१ ॥
इति गाथाया लक्षणमार्यासामान्यलक्षण चाऽत्र ।
षष्ठे जो वा विप्रो विषमे न हि जो गणाश्च गुर्वन्ता ॥ ९२ ॥
सप्त हरय सहारा षष्ठे रज्जुर्द्विजोऽपि वा भवति ।
चरमदले लघु षष्ठ विषमे पवनस्तु नैव स्यात् ॥ ९३ ॥

यथा–

गोकुलहारी मानसहारी वृन्दावनान्तसञ्चारी ।
यमुनाकुञ्जविहारी गिरिवरधारी हरि पायात् ॥ ९४ ॥

एकस्मात्तु कुलीना द्वाभ्यामप्यभिसारिका भवति ।
नायकहीना रण्डा वेश्या बहुनायका भवति ॥ ९५ ॥

गाथाया. पञ्चविंशतिभेदा

सर्वस्या गाथाया मुनिबाणसमाख्यया कला ज्ञेया ।
प्रथमे दले खरामैरपरेऽपि दलेऽब्धपक्षाभ्याम्[2] ॥ ९६ ॥
नखमुनिपरिमितहारा वह्निमिता यत्र लघव स्यु ।
सा गाथाना गाथा प्रथमा खाग्न्यक्षरा लक्ष्मी ॥ ९७ ॥[3]
एकैकगुरुवियोगाल्लघुद्वयस्यापि सयोगात् ।
अस्या भवन्ति भेदा शरपक्षाभ्या मिता एव ॥ ९८ ॥[4]
मुनिपक्षाभ्या हारा लघवो दहनैश्च स प्रथम ।
विधुवार्णैर्लघव स्युर्गुरवो दहनैश्च सोऽन्त्य स्यात् ॥ ९९ ॥
त्रिंशद्वर्णा लक्ष्मी वदते सर्वपण्डिता कवय ।
गद्यत्येकैको यद्वर्णं कथयामि तानि नामानि ॥ १०० ॥[5]
लक्ष्मीर्ऋद्धिर्बुद्धि[6]र्लज्जा विद्या क्षमा च वै देही[7] ।
गौरी धात्री चूर्णा[8] छाया कान्तिर्महामाया ॥ १०१ ॥
कीर्ति सिद्धिर्मानी[9] रामा विश्वा च वासिता च मता ।
शोभा हरिणी चक्री कुररी[10] हसी च सारसी च मता ॥ १०२ ॥

---

१. ग ऽपि । २ ग प्रथमदले च खराम स्वरपक्षाभ्यां मिता एव । ख स्वरपक्षाभ्याम । ३-४ ग पद्यद्वयं ९७ ९८ नास्ति । ५. ख ग. पद्यमक १०० नास्ति । ६ ग बुद्धि । ७ ख ग देही च । ८ ग पूर्णा । ९ ग मानिनी । १० ग. कुररी ।

इति भेदाभिधाः पित्रा रचितायामतिस्फुटम् ।
उदाहरणमञ्जर्यां बोध्यैतासामुदाहृतिः* ॥ १०३ ॥

इति गाथा

२. विगाथा

यस्या द्वितीयचरणे मात्राः शरभूमिभिः प्रोक्ताः ।
सैव विगाथा तुर्ये चरणे वसुभूमिसंख्यकाश्च कलाः ॥ १०४ ॥

---

*टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथविरचितायां पिङ्गलप्रदीपाख्यायां प्राकृतपिङ्गलवृत्तौ गाथाच्छन्दसः सप्तविंशतिभेदाः—

१ लक्ष्मीः	२७ गुरु	३ लघु	३० अक्षर
२ ऋद्धिः	२६ गुरु	५ लघु	३१ अक्षर
३ बुद्धिः	२५ गुरु	७ लघु	३२ अक्षर
४ लज्जा	२४ गुरु	९ लघु	३३ अक्षर
५ विद्या	२३ गुरु	११ लघु	३४ अक्षर
६ क्षमा	२२ गुरु	१३ लघु	३५ अक्षर
७ देही	२१ गुरु	१५ लघु	३६ अक्षर
८ गौरी	२० गुरु	१७ लघु	३७ अक्षर
९ धात्री	१९ गुरु	१९ लघु	३८ अक्षर
१० चूर्णा	१८ गुरु	२१ लघु	३९ अक्षर
११ छाया	१७ गुरु	२३ लघु	४० अक्षर
१२ कान्ति	१६ गुरु	२५ लघु	४१ अक्षर
१३ महामाया	१५ गुरु	२७ लघु	४२ अक्षर
१४ कीर्तिः	१४ गुरु	२९ लघु	४३ अक्षर
१५ सिद्धिः	१३ गुरु	३१ लघु	४४ अक्षर
१६ मानिनी	१२ गुरु	३३ लघु	४५ अक्षर
१७ रामा	११ गुरु	३५ लघु	४६ अक्षर
१८ गाहिनी	१० गुरु	३७ लघु	४७ अक्षर
१९ विश्वा	९ गुरु	३९ लघु	४८ अक्षर
२० वासिता	८ गुरु	४१ लघु	४९ अक्षर
२१ शोभा	७ गुरु	४३ लघु	५० अक्षर
२२ हरिणी	६ गुरु	४५ लघु	५१ अक्षर
२३ चक्री	५ गुरु	४७ लघु	५२ अक्षर
२४ सारसी	४ गुरु	४९ लघु	५३ अक्षर
२५ कुररी	३ गुरु	५१ लघु	५४ अक्षर
२६ सिंही	२ गुरु	५३ लघु	५५ अक्षर
२७ हंसी	१ गुरु	५५ लघु	५६ अक्षर

ग्रन्थेऽस्मिन् सिंही-गाहिनीति द्वौ भेदौ नैव स्वीकृतौ ।

यथा–

सरणितनूजातीरे चीरेऽपहृतेऽपि वीरेण ।
हिमनीरे रमणीनामकुटिलधारेव मनसि संजज्ञे ॥ १०५ ॥

इति विगाथा

३. गाहू[1]

पूर्वार्द्धे च परार्द्धे सप्ताधिकविंशतिर्मात्राः ।
अर्द्धद्वयेऽपि यस्याः षष्ठो लः सैव गाहू स्यात् ॥ १०६ ॥

यथा–

अतिचटुलचन्द्रिकाञ्चितचञ्चलनवकुन्तलं किमपि ।
राधावितनुज[2]बाधासाधारणमौषधं जयति ॥ १०७ ॥

यथा वा –

कलशीगलदधिचोरं रदजितहीरं स्फुरच्चीरम् ।
राधावदनचकोरं नन्दकिशोरं नमस्यामः ॥ १०८ ॥

इति गाहू ।

४. उद्गाथा

यस्या द्वितीयचरणे चतुर्थचरणे भवन्ति वै मात्राः ।
वसुविधुसंख्यायुक्ता. सोद्गाथा पिङ्गलेन सम्प्रोक्ता ॥ १०९ ॥

यथा –

उपवनमध्यादभिनवविलोकनासक्तराधिकाकृष्णौ ।
अन्योन्यगमनवेलामपेक्षमाणौ[3]न जग्मतुः क्वापि ॥ ११० ॥

इत्युद्गाथा

५. गाहिनी

यस्या द्वितीयचरणे वसुविधुमात्रा भवन्ति तुर्ये तु ।
पादे विंशतिमात्रा सा गाहिनिका तु सिंहिनी विपरीता ॥ १११ ॥

---

१. ग. गाहा । २. ग. वितनु । ३. ख. प्रवेक्षमाणौ, ग. प्रवेक्षमाणौ ।

यथा–

स जयति मुरलीवादनकेलिकलाभिर्विमोहयन् गोपीः ।
वृन्दावनान्तभूमौ रासरसाक्षिप्तविबुध[1]विधिरुद्रमुखः ॥ ११२ ॥

इति वाहिनी ।

६. सिंहिनी

यस्या द्वितीयचरणे विंशतिमात्रा मनोहराकारगुणाः ।
सा सिंहिनी प्रदिष्टा नागाधिपपिङ्गलेन सम्प्रोक्ता ॥ ११३ ॥

यथा–

वन्देऽरविन्दनयनं वृन्दारकवृन्दवन्दितपदाम्भोजम् ।
नन्दानन्दनिधानं नवजलधररुचिरमन्दिरारमणम् ॥ ११४ ॥

इति सिंहिनी

७. अथ स्कन्धकम्

यस्य द्वितीयचरणे चतुर्थचरणे च विंशतिर्मात्राः स्युः ।
स स्कन्धक[2] इति कथितो यस्मिन्नष्टौ गणाश्चतुर्मात्राभिः ॥ ११५ ॥

यथा–

राधामुखाब्जतरणिः तरणिः संसारसागरोत्तरणविधौ ।
स जयति निजभक्तानां कामितदाता दुरन्तशक्तिसहायः ॥ ११६ ॥

स्कन्धकस्याऽष्टाविंशतिभेदाः

नन्दो[3] भद्रः शिवः शेषः सारङ्ग-ब्रह्म-वारणाः[4] ।
वरुणो मदनो नीलः तालाङ्कः शेखरः शरः ॥ ११७ ॥
गगनं शरभो विमतिः क्षीरं नगरं नरः स्निग्धः ।
स्नेहलु-मदकल-भूपा[5] शुद्धः कुम्भः सरित् कलशः ॥ ११८ ॥
शशीति सञ्ज्ञका भेदाः स्कन्धकस्य प्रकीर्तिताः ।
वसुपक्षमितास्ते स्युः गुरुह्रासाल्लवृद्धितः ॥ ११९ ॥
त्रिंशद्गुरवो यस्मिन् वेदा लघवश्च स प्रथमः ।
वसुशरलघवो यस्मिन् गुरुत्रयं चैव सोऽन्त्यः स्यात् ॥ १२० ॥

---

१. ग. विबुध इति पाठो नास्ति । २. ग. स्कन्धं । ३. ग. नन्दो. । ४. ग वारिण ।
५. ग. स्नेहलुकमलभूपालाः ।

वसुपक्षपरिमितानामुदाहृति स्वप्रबन्धे तु ।
एतेषामतिरुचिरा पितृचरणैः स्फुटतया प्रोक्ता ॥ १२१ ॥*

इति स्कन्धकम् ।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके[1] प्रथमं गाथाप्रकरणं समाप्तम् ।

---

१ ग नास्ति पाठ ।

*टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथविरचितायां पिङ्गलप्रदीपाख्यायां प्राकृतपिङ्गलवृत्तौ गुरुह्रास-लघुवृद्धयनुपातेन स्कन्धकस्याष्टाविंशतिभेदा प्रदर्शितास्तद्यथा—

१ नन्द	३० गुरु	४ लघु	३४ अक्षर
२ भद्र	२९ गुरु	६ लघु	३५ अक्षर
३ शेष	२८ गुरु	८ लघु	३६ अक्षर
४ सारङ्ग	२७ गुरु	१० लघु	३७ अक्षर
५ शिव	२६ गुरु	१२ लघु	३८ अक्षर
६ ब्रह्मा	२५ गुरु	१४ लघु	३९ अक्षर
७ वारण	२४ गुरु	१६ लघु	४० अक्षर
८ वरुण	२३ गुरु	१८ लघु	४१ अक्षर
९ नील	२२ गुरु	२० लघु	४२ अक्षर
१० मदन	२१ गुरु	२२ लघु	४३ अक्षर
११ तालाङ्क	२० गुरु	२४ लघु	४४ अक्षर
१२ शेखर	१९ गुरु	२६ लघु	४५ अक्षर
१३ शर	१८ गुरु	२८ लघु	४६ अक्षर
१४ गगनम्	१७ गुरु	३० लघु	४७ अक्षर
१५ शरभ	१६ गुरु	३२ लघु	४८ अक्षर
१६ विमति	१५ गुरु	३४ लघु	४९ अक्षर
१७ क्षीरम्	१४ गुरु	३६ लघु	५० अक्षर
१८ नगरम्	१३ गुरु	३८ लघु	५१ अक्षर
१९ नर	१२ गुरु	४० लघु	५२ अक्षर
२० स्निग्ध	११ गुरु	४२ लघु	५३ अक्षर
२१ स्नेह	१० गुरु	४४ लघु	५४ अक्षर
२२ मदकल	९ गुरु	४६ लघु	५५ अक्षर
२३ भूपाल	८ गुरु	४८ लघु	५६ अक्षर
२४ शुद्ध	७ गुरु	५० लघु	५७ अक्षर
२५ सरित्	६ गुरु	५२ लघु	५८ अक्षर
२६ कुम्भ	५ गुरु	५४ लघु	५९ अक्षर
२७ कलश	४ गुरु	५६ लघु	६० अक्षर
२८ शशी	३ गुरु	५८ लघु	६१ अक्षर

द्वितीयं षट्पद-प्रकरणम्

१. दोहा

त्रिदशकलाः विषमे रचय सम एकादश धेहि ।
दोहालक्षणमेतदिति कविभिः कथितमवेहि ॥ १ ॥
टगण-डगण-ढगणाः क्रमत इति विषमे च पतन्ति ।
समपादान्ते चैककलमिति दोहां कथयन्ति ॥ २ ॥

यथा–

गौरीविरचिततनुशकल मस्तकराजितगङ्ग ।
जय वृषभध्वज पुरमथन महादेव निःसङ्गः ॥ ३ ॥

दोहायाः त्रयोविंशतिभेदाः

यस्याः प्रथमतृतीये पादे जगणा भवन्ति सा कर्त्तुः[1] ।
श्वपचगृहीतस्त्रीवद्[2] दोहादोषं प्रकाशयति ॥ ४ ॥
भ्रमर-भ्रामर-शरभाः श्येनो मण्डूक[3]-मर्कटौ करभः ।
मदकल-पयोधर-चलाः नरो मराल[4]स्तथा त्रिकलः ॥ ५ ॥
वानर-कच्छौ मत्स्यः शार्दूलोप्यहिवरो व्याघ्रः ।
उन्दुर-शुनक-बिडालाः सर्पश्चैते प्रभेदाः स्यु. ॥ ६ ॥
रसपक्षवर्णयुक्तो द्वाविंशतिगुरुक-वेदलघुसहितः ।
कथितः प्रथमो भेदः गुरुशून्यः सर्वलघुकोऽन्त्यः ॥ ७ ॥[*]
एकैकस्य गुरोर्लोपाल्लघुद्वयविवृद्धितः ।
दोहाभेदस्समुद्दिष्टास्त्रयोविंशतिसंख्यकाः ॥ ८ ॥
स्फुटतरमेते भेदाः समुदाहृत्य प्रदर्शिताः चित्राः ।
स्वनिबन्धे[5] कविवर्यैस्तत एव विलोकनीयास्ते ॥ ९ ॥

इति दोहा ।

---

१. ग. कर्तुः । २. ग. तावद् । ३. ग. मट्ट क । ४. ग. रसाल । ५. ग. पद्यद्वय ६–७. नास्ति ।

*टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे गुरुह्रास-लघुवृद्ध्यनुपातेन दोहा-द्विपदाच्छन्दसः त्रयोविंशभेदानां वर्गीकरणम्—

१ भ्रमरः	२२ गुरु	४ लघु	२६ अक्षर
२ भ्रामरः	२१ गुरु	६ लघु	२७ अक्षर
३ शरभः	२० गुरु	८ लघु	२८ अक्षर

२. रसिका

द्विजवरयुगलमुपनय,
दहनलघुकमिह रचय ।
इति विधिशरभववदन-
चरणमिह कुरु सुवदन ।
इति हि रसिकमनुकलय,
भुजगवर कथितमभय ॥ १० ॥

यथा –

जय जय हर वृषगमन,
तरणिदहन विधुनयन ।
नयनदहन जितमदन,
निजशरकृतपुरकदन ।
मम हृदयगतमपनय-
मविनयमधिकमपनय ॥ ११ ॥

---

४ श्येनः	१६ गुरु	१० लघु	२६ अक्षर
५ मण्डूकः	१८ गुरु	१२ लघु	३० अक्षर
६ मर्कटः	१७ गुरु	१४ लघु	३१ अक्षर
७ करभः	१६ गुरु	१६ लघु	३२ अक्षर
८ नरः	१५ गुरु	१८ लघु	३३ अक्षर
९ मरालः	१४ गुरु	२० लघु	३४ अक्षर
१० मदकलः	१३ गुरु	२२ लघु	३५ अक्षर
११ पयोधरः	१२ गुरु	२४ लघु	३६ अक्षर
१२ चलः	११ गुरु	२६ लघु	३७ अक्षर
१३ वानरः	१० गुरु	२८ लघु	३८ अक्षर
१४ त्रिकलः	९ गुरु	३० लघु	३९ अक्षर
१५ कच्छपः	८ गुरु	३२ लघु	४० अक्षर
१६ मत्स्यः	७ गुरु	३४ लघु	४१ अक्षर
१७ शार्दूलः	६ गुरु	३६ लघु	४२ अक्षर
१८ अहिवरः	५ गुरु	३८ लघु	४३ अक्षर
१९ व्याघ्र	४ गुरु	४० लघु	४४ अक्षर
२० बिडालः	३ गुरु	४२ लघु	४५ अक्षर
२१ शुनकः	२ गुरु	४४ लघु	४६ अक्षर
२२ उन्दुरः	१ गुरु	४६ लघु	४७ अक्षर
२३ सर्प	० गुरु	४८ लघु	४८ अक्षर

रसिकाया अष्टौ भेदाः

यस्याश्चतुष्कलद्वयमादौ स्यात् पुनरपि त्रिकलः ।
एवं षट्पदयुक्ता या सोक्कच्छा[1] भुजङ्गमप्रोक्ता ॥ १२ ॥
अत्र लघुयुगवियोगादेकैकगुरोश्च संयोगात् ।
अष्टौ भवन्ति भेदाः शेषाः स्युर्दण्डकन्यायात् ॥ १३ ॥
रसिका हंसी रेखा तालाङ्का कम्पिनी च गम्भीरा ।
काली कलरुद्राणी इत्यष्टौ भेदनामानि ॥ १४ ॥
उदाहरणमञ्जर्यामुदाहृतिरतिस्फुटाः ।*
एतेषामपि भेदानां द्रष्टव्या कविपण्डितैः[2] ॥ १५ ॥

इति रसिका

३. रोला

या चरणे कलानां चतुरधिकविंशंगदिता,
सा किल रोला भवति नागकविपिङ्गलकथिता ।
एकादशकलविरतिरखिलजनचिन्ताहरणा,
सुललितपदकुलकलितविमलकविकण्ठाभरणा ॥ १६ ॥

यथा–

अरिगणमभितापयति विबुधलोकानुपगच्छति,
धरणिविवरगतभुजगनिकरमभितापेनच्छंति ।
सकलदिगीशपुरमभिनिजतापैरभियोजयति,
भूप कथं प्रतापस्तव[3] कीर्त्ति न शोषयति ॥ १७ ॥

---

१. ग. यासौ छन्दा । ख. या सा कच्छो । २. ग. केश्चिद् पण्डितैः । ३. ग. प्रस्तावस्तव ।

*टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे गुरुवृद्धि-लघुह्रासानुक्रमेण रसिकाया अष्टौ भेदाः—

१ रसिका	६६ लघु	० गुरु	६६ मात्रा
२ हंसी	६४ लघु	१ गुरु	,, ,,
३ रेखा	६२ लघु	२ गुरु	,, ,,
४ तालङ्किनी	६० लघु	३ गुरु	,, ,,
५ कम्पिनी	५८ लघु	४ गुरु	,, ,,
६ गम्भीरा	५६ लघु	५ गुरु	,, ,,
७ काली	५४ लघु	६ गुरु	,, ,,
८ कलरुद्राणी	५२ लघु	७ गुरु	,, ,,

रोलायाः त्रयोदशभेदाः

कुन्दः करतल-मेघौ तालाङ्कौ रुद्र-कोकिलौ कमलम् ।
इन्दुः शम्भुश्चमरो गणेश-शेषौ सहस्राक्षः ॥ १८ ॥
त्रयोदशगुरुर्यत्र सप्ततिर्लघवस्तथा ।
स आद्यभेदो[1] विज्ञेयस्सोऽन्त्य एकगुरुर्यतः ॥ १९ ॥
एकैकस्य गुरोर्नाशा[2] ल्लघुद्वयनिवेशतः[3] ।
भेदास्त्रयोदश ज्ञेया रोलायाः[4] कविशेखरैः ॥ २० ॥
त्रयोदशैव भेदानामुदाहृतिरुदीरिता ।
उदाहरणमञ्जर्यां* द्रष्टव्या तत एव हि ॥ २१ ॥

इति रोला ।

४. गन्धानकम्

रचय प्रथमं पदं मुनिविधुवर्णरचितं,
तथा द्वितीयमपि वसुविधुवर्णैर्यमकचितम्[5] ।
तथान्यदलमपि यतिगणनियमरहितं,
गन्धानकवृत्तमवधेहि कविपिङ्गलगदितम् ॥ २२ ॥

---

१. ग. आदिभेदो । २. ग. ह्रासात् । ३. ग. विवृद्धितः । ४ ग. रोलायां ।
५. ग. युतम् ।

* टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे रोलायाः त्रयोदशभेदानां गुरुह्रास-लघुवृद्ध्यनुसारेण प्रदर्शनम्:—

१ कुन्दः	१३ गुरु	७० लघु	९६ मात्रा
२ करतलः	१२ गुरु	७२ लघु	,, ,,
३ मेघ.	११ गुरु	७४ लघु	,, ,,
४ तालाङ्क	१० गुरु	७६ लघु	,, ,,
५ कालरुद्रः	९ गुरु	७८ लघु	,, ,,
६ कोकिलः	८ गुरु	८० लघु	,, ,,
७ कमलम्	७ गुरु	८२ लघु	,, ,,
८ इन्दुः	६ गुरु	८४ लघु	,, ,,
९ शम्भुः	५ गुरु	८६ लघु	,, ,,
१० चामरः	४ गुरु	८८ लघु	,, ,,
११ गणेश्वरः	३ गुरु	९० लघु	,, ,,
१२ सहस्राक्षः	२ गुरु	९२ लघु	,, ,,
१३ शेषः	१ गुरु	९४ लघु	,, ,,

यथा–

लक्ष्मण दिशि दिशि विलसति घनमनु शम्पा,
इयमपि चञ्चलतरङ्गचलजलरुहपम्पा ।
दयितोदन्त सम्प्रति[1] कथमपि न ह्यवगत,
सोढ शक्यो विरह कथमिह हि मयकानुगत[2] ॥ २३ ॥

यथा वा–

गर्जति जलधर परिनृत्यति शिखिनिवह,
नोपवनीमवधूय वहति दक्षिणगन्धवह ।
दूरे दयित कथय सखि[3] किमिह हि[3] करवै,
प्रज्वालय दहन कटिति[4] शलभमनुकरवै ॥ २४ ॥

इति गन्धानकम् ।

५ चौपैया छन्द

चौपैया छन्द कविकुलचन्द्र कथयति पिङ्गलनाग,
कुरु सप्तचतुष्कलगणमिह पुष्कलमधिगुरुचरणविभाग ।
इह दिग्वसुसूर्यै पण्डितवर्यैर्यतिरिह मात्रास्त्रिंशत्,
यस्मिन किल[5] कथिते कविजनमथिते राजति नृपवरससत् ॥२५॥
या विंशत्यधिकशतैर्मात्राणामेकपादेयु ।
सा चौपैया न्यस्यादशीत्यधिकशतचतुष्टयकलाका ॥ २६ ॥

यथा–

चेत स्मरमहित कमलासहित दारितदारुणकस,
हतधेनुकदानवमिच्छामानवमृषिजनमानसहसम् ।
यमुनावरतीरे तरलसमीरे कारितगोपीरास,
भवबाधाहरण राधारमण कुन्दकुसुमसमहासम् ॥

व्रजजनकुलपाल लालितवाल वादितमृदुरववश,[6]
रोचनयुतभाल धृतवनमाल शोभिततरलवतसम् ।
दितिजव्रजकाल वादितताल कृतसुरमुनिगणशस,
रुचिकलिततमाल जितघनजाल भासितयादववशम् ॥

सरसीरुहनयन जगतामयन कण्ठतलस्थितहार,
धृतगोपसुवेप कुञ्चितकेश स्मितजितनवघनसारम् ।

---

१ ग दयितोदन्तमिदानीं । २ ख ग म सहनमिद कुर्वे मरणं दारणमनुगत । ३ ग नास्ति पाठ । ४ ख ग झटिति । ५ ग कल । ६ ग मृदुतरवश ।

जितनयनचकोरं नन्दकिशोरं गोपीमानसचोरं,
कृतराधाधारं सज्जनतारं दितिसुतनाशकठोरम् ।।
नवकलितकदम्बं जगदवलम्बं सेवितयमुनातीरं,
नन्दितसुरवृन्दं जगदानन्दं गोपीजनहृतचीरम् ।
धृतधरणीवलयं करुणानिलयं दन्तविनिर्जितहीरं,
भवसागरपारं भुवनागारं नन्दसुतं यदुवीरम् ।। २७ ।।

इति चौपैया

६. घत्ता

पिङ्गलकविकथिता त्रिभुवनविदिता घत्ता द्विरसकला भवति ।
कुरु सप्तचतुष्कल-मन्तान्त्रिकल-त्रिलघुकमेतदपि द्विपदि ।। २८ ।।
प्रथमं दशसु यतिः स्याद् वसुमात्राभिर्द्वितीयाऽपि ।
दहनावनिभिः पुनरपि यतिरिह(य)मेकार्द्धघत्तायाः ।। २९ ।।

यथा–

भवबाधाहरण राधारमण नन्दकिशोर स्मर हृदय ।
यमुनायास्तीरे तरलसमीरे कृतमनुरागं त्वमनुसर[1] ।। ३० ।।

इति घत्ता ।

७. घत्तानन्दम्

अहिपतिपिङ्गलकथितमयुतगुणयुतमिह भवति घत्तानन्दम् ।
यद्येकादशविरतिर्मुनिपु च भवति यतिरधिकजनितानन्दम् ।। ३१ ।।
आदौ षट्कलमिह रचय डगणत्रयमिह धेहि ।
ठगणं डगणं द्वयमपि घत्तानन्दे धेहि ।। ३२ ।।

यथा[2]–

दितिसुतनिवहगञ्जनमसुखभञ्जनमनुगतजनतापहरणम् ।
निखिलमानसरञ्जनमतिनिरञ्जनमस्तु किमपि महः शरणम् ।। ३३ ।।

इति घत्तानन्दम्

८[१] काव्यम्

अथ षट्पदहेतुत्वात् काव्यं सम्यङ् निरूप्यते ।
लक्ष्यलक्षणसंयुक्तं प्रोल्लालं[3] सप्रभेदकम् ।। ३४ ।।

---

१. ग. समनुसर । २. ग. तद्यथा । ३. ख. ग. प्रोल्लासम् । उल्लालस्थाने ख. ग. प्रतौ सर्वत्रापि उल्लासं विद्यते ।

टगणमिहादौ कलय जलधिकलत्रयमनु च कुरु ।
टगण चान्ते रचय दहनयुतविप्र ज कुरु ॥ ३५ ॥
एकादशकलविरतिरथ दहनविधुभिरपि भवति ।
काव्य भुजगकविरिति बुधजनसुखकरमनुवदति ॥ ३६ ॥

यथा-

मुकुटविराजितचन्द्र चन्द्रकलोपमतिलकवर,
तिलकदहनवरनयन नयनजितमदनमनोहर ।
भ्रमरनिकरकृतमनन मननिरवधिकरुणाकर,
करधृतमनुजकपाल विबुधजनतिमिरविभाकर ॥ ३७ ॥

६. उल्लालम्

आदौ त्रयस्तुरगास्तदनु त्रिकलो रसस्तथा तुरग ।
त्रिकलश्चान्ते यस्मिन्नुल्लाल त विजानीयात् ॥ ३८ ॥
षट्पदवृत्त द्वाभ्या वृत्ताभ्या जायते यस्मात् ।
काव्योल्लालौ तस्मान्निरूपितौ वृत्तमौक्तिके स्फुटत ॥ ३९ ॥
प्रस्तारस्तु द्विधा प्रोक्तो गुरुलघ्वादिभेदत ।
अत्र लघ्वादिभेदेन प्रस्तारपरिकल्पना ॥ ४० ॥
चतुरधिका इह चत्वारिंशद् गुरवो भवन्ति काव्येऽस्मिन् ।
यद् गुरुहीन वृत्त शक्र तन्नामतो वृत्तम्[1] ॥ ४१ ॥

यथा –

अभिनवजलधरपटलसदृशतर कनकवसनधर,
परिणतशशधरवदन समरविधिकरणचतुरतर ।
अविरतवितरणनिपुण सकलरिपुकुलवनकरिवर,
विदलितगजदलतुरग विगतभय जय जय यदुवर ॥ ४२ ॥

काव्यस्य पञ्चचत्वारिंशद्भेदा

यथा यथाऽस्मिन् वलयो विवर्द्धते,
तथा तथा नाम विधिर्विधीयताम् ।
पठन्तु[2] शम्भु प्रथम ततो बुधा,
भृङ्ग तदन्ते श्रुतियुग्मसम्भवम् ॥ ४३ ॥

---

१ ग वित्त। २. ख ग पठंति।

आदाय गुरुविहीनं शक्रं भेदान् बुधाः पठत ।
इन्द्रियवेदैर्गणितान् नागाधिपपिङ्गलप्रोक्तान् ॥ ४४ ॥
अथ लघुयुग्मविलोपा[1]देकैकगुरोर्विवृद्धित क्रमशः ।
बाणाम्बुधिपरिगणिता भेदाः सम्यक् प्रदर्श्यन्ते ॥ ४५ ॥

यथा–

शक्रः शम्भुः सूर्यो गण्डः स्कन्धस्तथा विजयः ।
तालाङ्क-दर्प-समराः सिंहः शेषस्तथोत्तेजा ॥ ४६ ॥
प्रतिपक्षः परिधर्मो मराल-दण्डौ मृगेन्द्रश्च ।
मर्कट-मदनौ राष्ट्रो वसन्त-कण्ठौ मयूरोऽपि ॥ ४७ ॥
बन्धो भ्रमरोऽपि तथा भिन्नोऽथ स्यान्महाराष्ट्रः ।
बलभद्रोऽपि च राजा वलितो रामस्तथा च मन्थानः ॥ ४८ ॥
मोहो बली ततः स्यात् सहस्रनेत्रस्तथा बालः ।
दृप्तः शरभो दम्भो दिवसोद्दम्भो तथा च वलिताङ्कः ॥ ४९ ॥
तुरगो हरिणोऽप्यन्धो भृङ्गश्चैते प्रसख्याताः ।
वास्तुकाख्ये छन्दसि बाणाम्बुधिभिर्मिता भेदाः ॥ ५० ॥
पादे यत्यनुरोधात् तृतीयजगणानुरोधाच्च ।
वेदाङ्कलघुकयुक्तश्चन्द्रगुरुर्यः स आद्यः स्यात् ॥ ५१ ॥
शरवेदमिता भेदाः काव्यवृत्तस्य दर्शिताः ।
उदाहरणमञ्जर्यां बोध्यं तेषामुदाहृतिः ॥ ५२ ॥*

इति काव्यम् ।

---

१ ॥ ह ताद ।

टिप्पणी – भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे काव्यवृत्तस्य गुरुवृद्धि-लघुह्रासक्रमेण पञ्च-चत्वारिंशद्भेदाना वर्गीकरणम्—

१ शक्र	० गुरु	९६ लघु	९६ अक्षर
२ शम्भु	१ गुरु	९४ लघु	९५ अक्षर
३ सूर्य	२ गुरु	९२ लघु	९४ अक्षर
४ गण्ड	३ गुरु	९० लघु	९३ अक्षर
५ स्कन्ध	४ गुरु	८८ लघु	९२ अक्षर
६ विजय	५ गुरु	८६ लघु	९१ अक्षर
७ दर्प	६ गुरु	८४ लघु	९० अक्षर
८ तालाङ्क	७ गुरु	८२ लघु	८९ अक्षर
९ समर	८ गुरु	८० लघु	८८ अक्षर
१० सिंह	९ गुरु	७८ लघु	८७ अक्षर

११ शेषः	१० गुरु	७६ लघु	८६ अक्षर
१२ उत्तेजाः	११ गुरु	७४ लघु	८५ अक्षर
१३ प्रतिपक्षः	१२ गुरु	७२ लघु	८४ अक्षर
१४ परिधर्मः	१३ गुरु	७० लघु	८३ अक्षर
१५ मरालः	१४ गुरु	६८ लघु	८२ अक्षर
१६ मृगेन्द्रः	१५ गुरु	६६ लघु	८१ अक्षर
१७ दण्डः	१६ गुरु	६४ लघु	८० अक्षर
१८ मर्कटः	१७ गुरु	६२ लघु	७९ अक्षर
१९ मदनः	१८ गुरु	६० लघु	७८ अक्षर
२० महाराष्ट्रः	१९ गुरु	५८ लघु	७७ अक्षर
२१ वसन्तः	२० गुरु	५६ लघु	७६ अक्षर
२२ कण्ठः	२१ गुरु	५४ लघु	७५ अक्षर
२३ मयूरः	२२ गुरु	५२ लघु	७४ अक्षर
२४ बन्धः	२३ गुरु	५० लघु	७३ अक्षर
२५ भ्रमरः	२४ गुरु	४८ लघु	७२ अक्षर
२६ द्वितीयो महाराष्ट्रः	२५ गुरु	४६ लघु	७१ अक्षर
२७ बलभद्रः	२६ गुरु	४४ लघु	७० अक्षर
२८ राजा	२७ गुरु	४२ लघु	६९ अक्षर
२९ वलितः	२८ गुरु	४० लघु	६८ अक्षर
३० रामः	२९ गुरु	३८ लघु	६७ अक्षर
३१ मन्थानः	३० गुरु	३६ लघु	६६ अक्षर
३२ बली	३१ गुरु	३४ लघु	६५ अक्षर
३३ मोहः	३२ गुरु	३२ लघु	६४ अक्षर
३४ सहस्राक्षः	३३ गुरु	३० लघु	६३ अक्षर
३५ बालः	३४ गुरु	२८ लघु	६२ अक्षर
३६ दृप्तः	३५ गुरु	२६ लघु	६१ अक्षर
३७ शरभः	३६ गुरु	२४ लघु	६० अक्षर
३८ दम्भः	३७ गुरु	२२ लघु	५९ अक्षर
३९ अहः	३८ गुरु	२० लघु	५८ अक्षर
४० उद्दम्भः	३९ गुरु	१८ लघु	५७ अक्षर
४१ वलिताङ्कः	४० गुरु	१६ लघु	५६ अक्षर
४२ तुरङ्गः	४१ गुरु	१४ लघु	५५ अक्षर
४३ हरिणः	४२ गुरु	१२ लघु	५४ अक्षर
४४ अन्धः	४३ गुरु	१० लघु	५३ अक्षर
४५ भृङ्गः	४४ गुरु	८ लघु	५२ अक्षर

१०. षट्पदम्

षट्पदवृत्तं कलय सरसकविपिङ्गलभणितं,
एकादश इह विरतिरथ च दहनैर्विधुगणितम् ।
षट्कलमादौ तदनु चतुस्तुरग परिसतनु,
शेषे द्विकल रचय चतुष्पदमेवं सचिनु ॥
उल्लालद्वयमत्र हि भवेदष्टाविंशतिकलयुतम् ।
यदि पञ्चदशे विरतिस्थितं पठनादपि गुणिगणहितम् ॥ ५३ ॥

दहनगणनियमविरहितकाव्यं सोल्लालचरणयुगलेन ।
कथयति पिङ्गलनागः षट्पदवृत्तं मनोहारि ॥ ५४ ॥

यथा–

जय जय नन्दकुमार मारसुन्दर वरलोचन,
लोचनजितनवकज कञ्जनिभशय भवमोचन ।
नूतनजलधरनील शीलभूषित गतदूषण,
दूषणहर धृतभाल भालभूषितवरभूषण ॥
दूषणगणमिह[१] मम निखिलमपि कुरु दूरे नन्दकिशोर ।
तव चरणकमलयुगलमनुदिनमनुसेवे नयनचकोर ॥ ५५ ॥

षट्पदवृत्तस्यैकसप्ततिर्भेदा.

वेदयुग्मगुरून् काव्यादुल्लालाद् रसपक्षकान् ।
आदाय तस्य स्थाने तु लघुद्वयनिवेशतः[२] ॥ ५६ ॥
भेदाः स्युर्भूमिमुनिभिर्गृहीत्वान्त्य तु सर्वलम् ।
आद्यस्तु रविलो विन्दुर्मुनिग सोऽजयः स्मृत ॥ ५७ ॥
विजय-बलि-कर्ण-वीरा वैताल-बृहन्नरी मर्कट. ।
हरि-हर-विधीन्दु-चन्दन-शुभङ्करा. श्वा च सिंहश्च ॥ ५८ ॥
शार्दूल-कूर्म-कोकिल-खर-कुञ्जर-मदन-मत्स्य-तालाङ्का ।
शेषः सारङ्गोऽपि च पयोधरः कुन्द-कमले च ॥ ५९ ॥
वारण-जङ्गम-शरभास्तथा द्युतीष्टोऽपि दाता च ।
शर-सुशर-समर-सारस-शारद-मद-मदकरा मेरु. ॥ ६० ॥
सिद्धिर्बुद्धिः करतल-कमलाकर-धवल-मानस-ध्रुवकाः ।
कनक कृष्णो रञ्जन-मेघकर-ग्रीष्म-गरुड-शशि-सूर्याः ॥ ६१ ॥

---

१ ग दूषणमिह । २. ग. निवेशितः ।

शल्यो नवरङ्ग-मनोहरौ गगन-रत्न-नर-हीराः ।
भ्रमरः शेखर-कुसुमाकरौ ततो दीप्त-शख-वसु-शब्दाः ॥ ६२ ॥
इति भेदाभिधा. पित्रा रचितायामपि स्फुटम् ।
उदाहरणमञ्जर्यामुक्तं तासामुदाहृतिः* ॥ ६३ ॥

इतिषट्पदम् ।

*टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे षट्पदच्छन्दसः गुरुह्रास-लघुवृद्धिपरिपाट्या एकसप्ततिभेदानामुदाहरणानि—

१ अजय	७० गुरु	१२ लघु	८२ अक्षर
२ विजयः	६६ गुरु	१४ लघु	८३ अक्षर
३ बलिः	६८ गुरु	१६ लघु	८४ अक्षर
४ कर्णः	६७ गुरु	१८ लघु	८५ अक्षर
५ वीरः	६६ गुरु	२० लघु	८६ अक्षर
६ वैतालः	६५ गुरु	२२ लघु	८७ अक्षर
७ वृहन्नलः	६४ गुरु	२४ लघु	८८ अक्षर
८ मर्कटः	६३ गुरु	२६ लघु	८९ अक्षर
९ हरि.	६२ गुरु	२८ लघु	९० अक्षर
१० हरः	६१ गुरु	३० लघु	९१ अक्षर
११ ब्रह्मा	६० गुरु	३२ लघु	९२ अक्षर
१२ इन्दु'	५९ गुरु	३४ लघु	९३ अक्षर
१३ चन्दनम्	५८ गुरु	३६ लघु	९४ अक्षर
१४ शुभङ्करः	५७ गुरु	३८ लघु	९५ अक्षर
१५ श्वा	५६ गुरु	४० लघु	९६ अक्षर
१६ सिंहः	५५ गुरु	४२ लघु	९७ अक्षर
१७ शार्दूलः	५४ गुरु	४४ लघु	९८ अक्षर
१८ कूर्मः	५३ गुरु	४६ लघु	९९ अक्षर
१९ कोकिलः	५२ गुरु	४८ लघु	१०० अक्षर
२० खरः	५१ गुरु	५० लघु	१०१ अक्षर
२१ कुञ्जरः	५० गुरु	५२ लघु	१०२ अक्षर
२२ मदनः	४९ गुरु	५४ लघु	१०३ अक्षर
२३ मत्स्यः	४८ गुरु	५६ लघु	१०४ अक्षर
२४ ताटङ्कः	४७ गुरु	५८ लघु	१०५ अक्षर
२५ शेषः	४६ गुरु	६० लघु	१०६ अक्षर
२६ सारङ्गः	४५ गुरु	६२ लघु	१०७ अक्षर
२७ पयोधरः	४४ गुरु	६४ लघु	१०८ अक्षर

काव्यषट्पदयोर्दोषा

काव्यषट्पदयोश्चापि दोषा पन्नगभाषिता ।
वक्ष्यन्ते यान् विदित्वैव काव्यं वक्तुमिहार्हति ॥ ६४ ॥
पददुष्टो भवेत्पङ्गु कलाहीनस्तु खञ्जकः ।
कलाधिको वातूलः स्यात् तेन शून्यफलश्रुतिः ॥ ६५ ॥
अन्धोऽलङ्काररहितो बधिरो फलवर्जित. ।
प्राकृते संस्कृते चाऽपि विज्ञेयं पददूषणम् ॥ ६६ ॥
गणोद्दवर्णिका यस्य पञ्चत्रिकलका भवेत् ।
स मूक कथ्यतेऽर्थेन विना स्याद् दुर्बलस्तथा ॥ ६७ ॥

---

२८ कुन्द	४३ गुरु	६६ लघु	१०९ अक्षर
२९ कमलम्	४२ गुरु	६८ लघु	११० अक्षर
३० वारण	४१ गुरु	७० लघु	१११ अक्षर
३१ शरभ	४० गुरु	७२ लघु	११२ अक्षर
३२ जङ्गम	३९ गुरु	७४ लघु	११३ अक्षर
३३ ज्योतिष्टम्	३८ गुरु	७६ लघु	११४ अक्षर
३४ दाता	३७ गुरु	७८ लघु	११५ अक्षर
३५ शर	३६ गुरु	८० लघु	११६ अक्षर
३६ सुशर	३५ गुरु	८२ लघु	११७ अक्षर
३७ समर	३४ गुरु	८४ लघु	११८ अक्षर
३८ सारस	३३ गुरु	८६ लघु	११९ अक्षर
३९ शारद	३२ गुरु	८८ लघु	१२० अक्षर
४० मेरु	३१ गुरु	९० लघु	१२१ अक्षर
४१ मदकर	३० गुरु	९२ लघु	१२२ अक्षर
४२ मद	२९ गुरु	९४ लघु	१२३ अक्षर
४३ सिद्धि	२८ गुरु	९६ लघु	१२४ अक्षर
४४ बुद्धि	२७ गुरु	९८ लघु	१२५ अक्षर
४५ करतलम्	२६ गुरु	१०० लघु	१२६ अक्षर
४६ कमलाकर	२५ गुरु	१०२ लघु	१२७ अक्षर
४७ धवल	२४ गुरु	१०४ लघु	१२८ अक्षर
४८ मन	२३ गुरु	१०६ लघु	१२९ अक्षर
४९ ध्रुव	२२ गुरु	१०८ लघु	१३० अक्षर
५० कनकम्	२१ गुरु	११० लघु	१३१ अक्षर
५१ कृष्ण	२० गुरु	११२ लघु	१३२ अक्षर

हठात्कृष्टाक्षरैश्चापि कठोर केकरोऽपि च ।
श्लेष प्रसादादिगुणैर्विहीन काण उच्यते ॥ ६८ ॥
सर्वैरङ्गै सम शुद्ध स लक्ष्मीक स रूपवान् ।
काव्यात्मा पुरुष कोऽपि राजते वृत्तमौक्तिके ॥ ६९ ॥
दोषानिमानविज्ञाय यस्तु काव्य चिकीर्षति ।
न ससदि स मान्य स्यात कवीनामसदहृण ॥ ७० ॥
एते दोषा समुद्दिष्टा सस्कृत प्राकृतेऽपि च ।
विशेषतश्च तत्रापि केचित्प्राकृत एव हि ॥ ७१ ॥

इति शाल्मलीप्रस्तारे द्वितीय षट्पदप्रकरण समाप्तम् ।

---

५२ रञ्जनम्	१९ गुरु	११४ लघु	१३३ अक्षर
५३ मेघकर	१८ गुरु	११६ लघु	१३४ अक्षर
५४ ग्रीष्म	१७ गुरु	११८ लघु	१३५ अक्षर
५५ गरुड	१६ गुरु	१२० लघु	१३६ अक्षर
५६ शशी	१५ गुरु	१२२ लघु	१३७ अक्षर
५७ सूर्य	१४ गुरु	१२४ लघु	१३८ अक्षर
५८ शल्य	१३ गुरु	१२६ लघु	१३९ अक्षर
५९ नवरङ्ग	१२ गुरु	१२८ लघु	१४० अक्षर
६० मनोहर	११ गुरु	१३० लघु	१४१ अक्षर
६१ गगनम्	१० गुरु	१३२ लघु	१४२ अक्षर
६२ रत्नम्	९ गुरु	१३४ लघु	१४३ अक्षर
६३ नर	८ गुरु	१३६ लघु	१४४ अक्षर
६४ हीर	७ गुरु	१३८ लघु	१४५ अक्षर
६५ भ्रमर	६ गुरु	१४० लघु	१४६ अक्षर
६६ शेखर	५ गुरु	१४२ लघु	१४७ अक्षर
६७ कुसुमाकर	४ गुरु	१४४ लघु	१४८ अक्षर
६८ दीप	३ गुरु	१४६ लघु	१४९ अक्षर
६९ शङ्ख	२ गुरु	१४८ लघु	१५० अक्षर
७० वसु	१ गुरु	१५० लघु	१५१ अक्षर
७१ शब्द	० गुरु	१५२ लघु	१५२ अक्षर (१५२मात्रा)

तृतीयं रड्डा-प्रकरणम्

१. पज्झटिका

डगणाश्चतुरः पादे विधेहि,
अन्ते गणमिह मध्यगमवेहि ।
इति पज्झटिका निखिलचरणेषु,
षोडशमात्रा सर्वचरणेषु ॥ १ ॥

यथा–

गाङ्ग वन्द्य परिजयति वारि,
निखिलजनानां दुरितविनिवारि[1] ।
भवमुकुटविराजिजटाविहारि,
मज्जज्जनमानससंतापहारि ॥ २ ॥

इति पज्झटिका ।

२. अडिल्ला[2] [अरिल्ला]

सर्वे डगणा अरिल्ला छन्दसि,
नायकमत्र नयति तं नन्दसि ।
षोडशमात्रा विदिता यस्मि-
न्नन्ते सुप्रियमपि कुरु तस्मिन् ॥ ३ ॥

यथा–

हरिरुपगत इति सखि ! मयि वेदय,
कुञ्जगृहोदरगतमपि खेदय ।
इह यदि सपदि सविधमुपयास्यति,
रदवसनामृतमिदमनुपास्यति ॥ ४ ॥

इति अरिल्ला ।

३. पादाकुलकम्

गुरुलघुकृतगण[3]-नियमविरहितं,
फणिपतिनायकपिङ्गलगदितम् ।
रसविधुकलयुतयमकितचरणं,
पादाकुलकं श्रुतिसुखकरणम् ॥ ५ ॥

---

१. ग. विनिवासव । २. ग. अडल्ला । ३. ग. गुण ।

यथा–

जलभरदान[1]-हरितवनभागः,
शीतलमारुतकृतपरभागः[2] ।
चञ्चलचपलाधृतवनमालः,
समुपागत इह जलधरकालः ॥ ६ ॥

इति पादाकुलकम् ।

४. चौबोला

रसविधुकलकमयुगमवधारय,
सममपि वेदविधूपमितम् ।
सर्वमपि षष्टिकलं विचारय,
चौबोलाख्यं फणिकथितम् ॥ ७ ॥

यथा–

दिशि दिशि विलसति जलधरगर्जित-
मथ ताकेका राजयते ।
सा मम चेतः कुरुते तर्जित-
मपि कां कान्तो भासयते ॥ ८ ॥

इति चौबोला ।

५. रड्डा[3]

विषमचरणेषु ढगण[4]मुपनय
डगणत्रयमनुविरचय
जगणमुत[5] विप्रमन्त्यमुपनय
डगणत्रयमपि रचय
समेऽन्ते[6] सर्वलघु विरचय ।
दोहाचरणचतुष्टयं तेषामन्ते धेहि ।
फणिपतिपिङ्गलभाषितं रड्डा[7]वृत्तमवेहि ॥ ९ ॥

विषमः शरविधुमात्रो द्वादशमात्रास्तथा द्वितीयोऽपि ।
तुर्यो रुद्रकलाक. प्रथमान्ते जगणविप्रनियमः स्यात् ॥ १० ॥

---

१. जलधरदाव । २. परिभाष: । ३. ग. प्रवरम । ४. ग. टगण । ५ ग. मनु । ६. ख. ग. सम ते । ७. ग. रड्डा । ग. प्रतौ रड्डाया स्थाने सर्वत्रापि रड्डायाः प्रयोगो विद्यते ।

अपरान्ते लघुयुगनियमः स्यात् कलाद्वयम् ।
समादौ स्याच्चतुर्थान्ते त्रिलघुर्गण ईरितः ॥ ११ ॥

यथा–

पिकरुतमिदमनुविलसति　दिक्षु
किंशुककलिका　विकसति[1]
वहति मलयमरुदयमपि मुलघु
विरुतमलिरपि　कलयति
विकसति मञ्जुल[2]मञ्जरिरपि च ।

इति मधुरनुवनमनुसरति वहुलीभूय सुकेशि !
हरिरपि विनमति चरणयुगमनुसर त हृदयेशि ! ॥ १२ ॥

रड्डाया सप्तभेदाः

अथैतस्याः सप्तभेदाः कथ्यन्ते पिङ्गलोदिताः ।
यान् विधाय कविः काव्यगोष्ठ्या बहुमतो भवत् ॥ १३ ॥
प्रथमा करभी प्रोक्ता ततो नन्दा च मोहिनी ।
चारुसेना चतुर्थी स्यात्तथा[3] भद्रापि पञ्चमी ॥ १४ ॥
राजसेना तु षष्ठी स्यात् तथा तालङ्किनी मता ।
सप्तमी कथिता रड्डा भेदा लक्षणमुच्यते ॥ १५ ॥

५[१] करभी

विषमेऽग्निविधुकलाको रुद्रकलाको द्वितीयोऽपि ।
तुर्योऽपि रुद्रमात्र पञ्चपदानीह कथितानि ॥ १६ ॥
एवं पञ्चपदानामग्रे दोहापि यस्यास्ताम ।
करभीति नागराज कथयति यणकल्पना तु दोहावत् ॥ १७ ॥

इति करभी ।

५[२] नन्दा

विषमेषु वेदविधुर्भिर्द्वितीयतुर्यौ च रुद्रमात्राभिः ।
अग्रे दोहा यस्या[4] ता नन्दामामनन्ति वृत्तज्ञाः ॥ १८ ॥

इति नन्दा ।

---

१ ग विलसति । २ ग मञ्जुर । ३ ख ग अथ । ४ ग यस्याः

५[३] मोहिनी

अयुजि पदे नवमात्राः समेऽपि दिग्रुद्रसंख्याभिः ।
पुरतो दोहा यस्यां शेषस्तां मोहिनीमाह ॥ १९ ॥

इति मोहिनी ।

५[४] चारुसेना

असमपदे शरचन्द्राः[1] समयोरेकादशैव यस्यास्ताम् ।
दोहाविरचितशीर्षां भणति फणीन्द्रस्तु[2] चारुसेनेति ॥ २० ॥

इति चारुसेना ।

५[५] भद्रा

विषमेषु पञ्चदशभिर्द्वितीयतुर्यौ च सूर्यसंख्याभिः ।
या दोहाङ्कितशीर्षा सा भद्रा भवति पिङ्गलेनोक्ता ॥ २१ ॥

इति भद्रा ।

५[६] राजसेना

पूर्ववदेव हि विषमे समे क्रमादेव सूर्यरुद्रैश्च ।
पूर्ववदेव हि दोहा यत्र स्याद् राजसेना सा ॥ २२ ॥

इति राजसेना ।

५[७] तालङ्किनी

विषमे पदेषु(च) यस्यां षोडशमात्रा विराजन्ते ।
पूर्ववदेव हि समयोर्दोहाऽपि च पूर्ववद्भवति ॥ २३ ॥
तालङ्किनीति कथिता सा रड्डा नागराजेन ।
एवं सप्तविभेदा विविच्य सम्यक् प्रदर्शिताः क्रमशः[3] ॥ २४ ॥
उदाहरणमेतेषां ग्रन्थविस्तरशङ्कया ।
नोक्तं सुबुद्धिभिस्तद्धि[4] स्वयमूह्य[5] महात्मभिः ॥ २५ ॥

इति श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिके[6] तृतीयं रड्डा[7]-प्रकरणं समाप्तम् ।

---

१. ग. शरद्रो । २. ख. ग. घ. । ३. ग. क्रमतः । ४. ग. तद् । ५. ग. विरचया ।
६. ग. 'वार्त्तिके' नास्ति । ७. ग. षड्डा ।

चतुर्थं पद्मावती-प्रकरणम्

१. पद्मावती

यदि योगढगणकृत-चरणविरचित-द्विजगुरुयुगकरवसुचरणाः ,
नायकविरहितपद-कविजनकृतमद-पठनादपि मानसहरणाः ।
इह दशवसुमनुभिः[1] क्रियते कविभिर्विरतिर्यदि युगदहनकला ,
सा पद्मावतिका फणिपतिभणिता त्रिजगति राजति गुणबहुला ॥ १ ॥

यथा[2] –

करयुगधृतवंशी रुचिरवतंसी गोवर्द्धनधारणशीलः ,
प्रियगोपविहारी भवसन्तारी वृन्दावनविरचितलोलः ।
धृतवरवनमाली निजजनपाली वरयमुनाजलरुचिशाली[3] ,
मम मङ्गलदायी कृतभवमायी[4] वरभूषणभूषितभाली[5] ॥ २ ॥

इति पद्मावती ।

२. कुण्डलिका

दोहाचरणचतुष्टय प्रथम नियतमवेहि,
कुण्डलिका फणिरनुवदति काव्य तदनु विधेहि ।
काव्य तदनु विधेहि पदं प्रतियमकितचरणं,
तदुभयविरतौ भवति पुनरपि च[6] तदुभयपठनम् ।
तदुभयसुपठनसमयरचितकरकविजनमोहा ।
कुण्डलिका सा भवति भवति यदि पूर्वं दोहा ॥ ३ ॥

यथा–

चरणं शरण भवतु तव मुरलीवादनशील,
सुरगणवन्दितचरणयुग वनभुवि विरचितलोल ।
वनभुवि विरचितलोल दुष्टजनखण्डनपण्डित,
दुर्जनजनहृदि कील गण्डयुगकुण्डलमण्डित ।
दुर्जनजनहृदि कील[7] भीतभयतापविहरण[8],
मुनिजनमानसहस हरतु मम तापं चरणम्[9] ॥ ४ ॥

---

१. ग. मुनिभिः । २ ग तद्यथा । ग प्रतौ यथा शब्दस्य स्थाने सर्वत्र तद्यथा पाठो दृश्यते । ३ ग माली । ४. ग नववरदायी । ५. ग माली । ६. ग नास्ति पाठ । ७ ग. नास्ति पाठ । ८ ख विहरण । ९ ख. चरण, ग चरणम् ।

३. गगनाङ्गणम्

टगण[1]मिहादौ रचयत विरमित[2]विनतानन्दन[3],
मध्ये नियमविरहितं रविकृतयति कविवन्दनम्[4] ।
शरपक्षकलितकलाक[5]-नखमित[6]-वर्णविकासितं,
गगनाङ्गणमिदं भवति फणिपतिपिङ्गलभाषितम् ॥ ५ ॥

यथा –

मानसमिह मम कृन्तति कोकिलविरुतमकारणं,
कलितशरासनसायकमतनुः कलयति मारणम् ।
मधुसमये कथमपि[7] सखि[8] ! जीवं निजमपि धारये,
रुचिरमधुभिदमन्तरा क्षणमपि सोढुमपारये ॥ ६ ॥

इति गगनाङ्गणम् ।

४. द्विपदी

आदौ टगणसमुपरचितं तदनु च षरडगणसुविहितम् ।
गान्तं द्विपदीवृत्तं वसुपक्षकलं फणिपतिभणितम्[9] ॥ ७ ॥

यथा–

मम मानसमभिलषति सखि-कृतरासकेलिरसनायके ।
निजरुचिजितनूवनजलधर-मुरलीनादसुखदायके ॥ ८ ॥

इति द्विपदी ।

५. भुल्लणा[10]

प्रथममिह दशसु यतिरनु च तदवधि भवति,
तदुपरि च मुनिविधुभिरत्र युक्ता ।
इति[11] हि विधियुगदला मुनिदहनकृतकला
झुल्लणा भवति गणनियमयुक्ता ॥ ९ ॥

यथा–

करविधृतवंशरवकृतहृदय-चित्तभव
गोकुलानन्दकररचिररासे ।

---

१. म. डगण । २. म. विरचित । ३. म. विनतानन्द । ४. म. कविवन्द ।
५. म. कलां । ६. म. मतमिति । ७. म. कथितमपि । ८. म. सखी । ९. म.
भाषितम् । १०. म. भुल्लणा । ११. म. इह ।

मम सविधमुपयासि मम वचनमनुपासि
वल्लवीरभिभूय जनितदासे[1] ॥ १० ॥

इति भुल्लणा* ।

---

१. ग. हासे ।

*टिप्पणी—श्रीकृष्णभट्टेन वृत्तमुक्तावल्या द्वितीयगुम्फेऽस्य छन्दसः भुल्लण-उपभुल्लण-सुभुल्लन-प्रतिभुल्लननामभिश्चत्वारो भेदाः प्रदर्शितास्ते चात्राविकल समुद्ध्रियन्ते—

अथ भुल्लनच्छन्दः

यस्य चरणे सप्त पञ्चकलास्ततो द्वे कले तज् भुल्लन नाम। यद्यपि पञ्चकलभेदा अविशेषेणैव गृहीतास्तथापि प्रतिगण द्वितीया कला परया कलया मिथितोद्वेजिकेत्यनुभवसाक्षिकम् ।

यथा—

दोषपतगेशविबुधेशभुवनेशभूतेशसविशेषसुनिदेशधरणी,
कन्दलितसुन्दरानन्दमकरन्दरसमज्जनमिलिन्दभवसिन्धुतरणी ।
ज्ञानमण्डनपरा कर्मखण्डनधरा शमनदण्डनपरा भूतिहरणी,
नित्यमिह वक्ति मुनिवृन्दमनुरक्तिमज्जयति हरिभक्तिरासक्तिकरणी ॥ ६१ ॥

अष्टत्रिंशत् कल उपभुल्लम् । तस्मिश्चोपान्त्यो गुरुरन्त्यो लघुर्नियत ।

यथा—

चण्डभुजदण्डसदखण्डकोदण्ड(द)शिखण्डशरखण्डभरदण्डितविपक्ष,
पर्वभृतपर्वरीनाथरुचिगर्वहरसर्वहृदखर्वसुखलीलनचलक्ष ।
दुष्टनरदुष्टतरपुष्टनयजुष्टजनतुष्टमतिघुष्टचरितोघकृतिदक्ष,
तरक्षणसमक्षकृतरक्षणसपक्षगणलक्षितसुलक्षण जयेश गतलक्ष ॥ ६२ ॥

कलाद्वयाधिक्येन एकोनचत्वारिंशत्कलचरणमपि सम्भवति, तच्च सुभुल्लन नाम ।

यथा—

चूतनवपल्लवकषायकलकण्ठबलमञ्जुकलकोकिलाकूजितनिदान,
माधुरीमधुरमधुपानमत्तालिकुलवल्लकीतारझङ्कारसुखदानम् ।
चारुमलयाचलोद्यातपवमानजवजागरितचित्तभवसायकवितानम्,
पश्य सखि पश्य कुसुमाकरमुदित्वर मा कलय मानसे मानमतिमानम् ॥ ६३ ॥

चत्वारिंशत्कल प्रतिभुल्लनमपि स्वीकार्यम् ।

यथा—

कासकैलासमविलासहरहासमधुमाससविकाससितमारससमानगति,
शारदतुषारवरसारघनसारमरहारहिमपारदविसारसमुदारमनि ।
बालकमृणालमृदुमालतीजालरुचिचालितविशालविबुधालयमरालतति,
राजमृगराजवर राजते तव यशो राम सुरराजसुमभाजितसमाजनति ॥ ६४ ॥

६. खञ्ज ।

नवजलधिकलमितगणमिह[1] समुपनय
तदनु च कुरुत रगणमपि फणिभणितखञ्जके ।
इति विधिविरचितदलयुगमिह भवति
निखिलभुवनगतवरकविजनहृदयसुखसञ्जके ॥ ११ ॥

यथा–

निजतनुरुचिविजितनवजलधररुचि-
विधृतरुचिरतर[2]मुकुट हरिरिह मम हृदि भासताम् ।
मम हृदयमविरतमनुभवतु तव
निजजनसुखवितरणरसिकचरणसरसिजदासताम् ॥ १२ ॥

इति खञ्जा ।

७. शिखा

रसजलधिकलमुपनयत फणिरिति वदति सकलकविसखा हि ।
अपरदलमथ मुनिकृतमुभयमपि जगणविरतिगमिति[3] भवति शिखा हि ॥१३

यथा–

विकचनलिनगतमधुरमधुकरकलरवमनुकलय सुकेशि ।
हरिरिति विनमति चरणयुगमपि मयि[4] कुरु हृदयमपरुषमति[5] सुवेषि। ॥१४।

इति शिखा ।

८. माला

जलनिधिकलमिह[6] नवगणमुपनय तदनु च
रगणमपि हि गुरुयुगगणमथ कुरु पिङ्गलप्रोक्तम् ।
गाथोत्तरार्द्धसहितं मालावृत्तं विजानीहि ॥ १५ ॥

यथा–

अपितहृदय करयुगकृतवसन वसनहरण-
परवशयुवतिकृतविनतिरभयमान्ततद्वाग्मा:[7] (?) ।
तीरे कदम्बशाली वरवनमाली हरिः पायात् ॥ १६ ॥

इति माला ।

---

१. ग. कलमगुलनगलमिह । २. ग वर । ३. ग. विरचितमिति । ४. ग. तम् ।
५. ग हृदि रवमति । । ६. ग. सिह । ७ ग. कृतत्रातः ।

९ चुलिआला[1]

यदि दोहादलविरतिकृत,
शरकलकुसुमगणो हि विराजति ।
फणिनायकपिङ्गलरचित,
चुलिआला किल जातिषु राजति ॥ १७ ॥

यथा–

क्षणमुपविश वनभुवि हरे,
मम पुनरागमनाऽवधि पालय ।
उपयाता[2]मिह मम सखी[3],
तामङ्के राधामुपलालय[4]॥ १८ ॥

इति चुलिआला ।

१० सोरठा

सोरठाख्य तत्तु फणिनायक भणित भवति ।
दोहावृत्त यत्तु विपरीत कविजनमवति ॥ १९ ॥

यथा–

रूपविनिर्जितमार ! सकलयादवकुलपालक ! ।
जय जय नन्दकुमार ! गोपगोपीजनलालक ! ॥ २० ॥

यथा वा–

गलकृतमस्तकमाल ! भालगतदहनविराजित !
जय जय हर ! भूतेश ! शेषकृतभूषणभासित ॥ २१ ॥

इति सोरठा

११ हाकलि

सगणं[5]भगणंद्विलघुयुतं,
सकल चरण प्रविरचितम्[6] ।
गुरुणैन च सर्वे कलित,
हाकलिवृत्तमिद कथितम् ॥ २२ ॥

प्रथमद्वितीयचरणौ रुद्रार्णवय तृतीयतुर्यौ च ।
दशमणौ सकलेषु च मात्रा वेदन्दुभि प्रोक्ता ॥ २३ ॥

---

१. ग चुलीआला ।　२ ख. उपयाता ।　३ ख ग सखी ।　४ ग पालय ।
५. ग सगुणं ।　६ ख प्रविरचित ।

यथा–

विकृतभयानकवेपकलं,
चरणाङ्कितवरभूमितलम् ।
व्योमतलामलकम्बुगलं,
नौमि विभूषितभालतलम् ॥ २४ ॥

यथा वा[1]–

यमुनाजलकेलिषु कलितं,
वनिताजनमानसवलितम् ।
सुरभीगणसङ्घा[2]च्चलितं,
नौमि हृदा बलसम्मिलितम् ॥ २५ ॥

इति हाकलि ।

१२. मधुभारः

डगणमवधेहि, जगणमनु देहि ।
मधुभारमाशु, परिकलय वासु ॥ २६ ॥

यथा–

उरसि कृतमाल, भक्तजनपाल ।
रुचिजिततमाल, जय नन्दबाल ॥ २७ ॥

इति मधुभारः ।

१३. आभीरः

अन्ते जगणमवेहि,
विधुयुगकला विधेहि ।
आभीरं परिशोभि,
कविजनमानसलोभि ॥ २८ ॥

यथा –

व्रजभुवि रचितविहार,
श्रुतिशतकलितविचार ।
यदुकुलजनितनिवास,
जय भूतलकृतरास[3] ॥ २९ ॥

इत्याभीरः ।

---

१. ग उक्तञ्च । २ ग संगात् । ३. ग. जय जय भुवि कृतरास ।

१४. दण्डकला

वेदडगणविरचितमनु[1] च[2] टगणकृत[3]-मन्ते डगणद्वयविहित,
गुरुकृतपदविरत कविजनसुमत दण्डकलाख्यमिद विदितम् ।
वरफणिकुलपतिना विमलसुमतिना पक्षदहनकृतचरणकल,
गगनेन्दुविराजित-योगविकासित-वेदावनिकृतयतिविमलम् ॥ ३० ॥

यथा–

खरकेशिनिषूदन-विनिहतपूतन-रचितदितिजकुलबलदलन,
बाणावलिमालित-सङ्गरपालित-पार्थविलोकितशुभवदनम् ।
कृतमायामानव-रणहतदानव-दुस्तरभवजलराशितरिं,
सुरसिद्धि[4]-विधायक-यादवनायकमशुभहर प्रणमामि हरिम् ॥ ३१ ॥

इति दण्डकला ।

१५ कामकला

यदि रसविधुमात्राणामन्ते विरतिर्भवेत्तदा सैव[5] ।
कामकलेति फणीश्वरपिङ्गलकथिता मता सद्भिः[6] ॥ ३२ ॥

यथा–

कमलाकरलालितपदकमल निजजनहृदयविनाशित[7]शमल,
पीतवसनपरिभासिततमल जितकम्बुमनोहरविमलगलम् ।
नाभिकमलगतविधिकृतनमन फणिमणिकुण्डलमण्डितवदन,
नौमि जलधिशयमतिरुचिसदन दानवनिवहसमरकृतकदनम् ॥ ३३ ॥

इति कामकला ।

१६ रुचिरा

सप्तचतुष्कलवलितसवलदल-भल्याहितकुण्डलरुचिरा ।
न कुरु पयोधरमिह फणिपतिवर-भणितमिद वृत्त रुचिरा ॥ ३४ ॥

यथा–

कस्य तनुर्मनुजस्य सितासित-सङ्गममधिविधित पतिता ।
यस्य कृते करभोरु विपोदसि मिहिरातपनिहिते[8]च सता ॥३५॥

इति रुचिरा ।

---

१. ग. तनु । २ ग 'च नास्ति । ३. ग विरचित । ४ ग. सिद्ध । ५ ग. सैव । ६ ग सद्भ्य । ७ हृदयविभासित । ८ ग विहितेव ।

१७. दीपकम्

डगणं कुरु विचित्र-
मन्ते जगणमत्र ।
मध्ये द्विलमवेहि[1],
दीपकमिति विधेहि ॥ ३६ ॥

यथा—

शेषविरचितहार,
पितृकाननविहार ।
जय जय हर ! महेश,
गौरीकृतसुवेष ! ॥ ३७ ॥

अथवा—

तुरगैकमुपधाय,
सुनरेन्द्र[2]मवधाय ।
इति[3] दीपकमवेहि,
घु मन्तमधिधेहि ॥ ३८ ॥

यथा[4]—

क्षणमात्रमतिवल्गु,
जगदेतदतिफल्गु ।
धनलोभमपहाय,
नम पद्मनयनाय ॥ ३९ ॥

इति दीपकम् ।

१८ सिंहविलोकितम्

सगणद्विजगणविरचितचरणं,
चरणे रसभूमिकलाभरणम् ।
फणिनायकपिङ्गलभणितवरं,
वरसिंहविलोकितहृदयहरम् ॥ ४० ॥

यथा—

हृतदूषणकृतजलनिधितरणं,
रणभुवि[5]कृतदानवकुलमरणम् ।
रणरणितशरासन[6]भङ्गकर,
करकलितशिरो नम[7] देववरम् ॥४१॥

इति सिंहविलोकितम् ।

---

१. ग. द्विकलमवेहि । २. ग. सुनवेन्द्र । ३. ग. द्रह । ४. ग. उप
५. ग. 'रण' नास्ति । ६ ग. शरासन । ग. मम ।

१९. प्लवङ्गमः

आदावादिगुरुं कुरु षट्कलभाषितं,
[पञ्चकलं तदनु च डगणं विभूषितम् ।
अन्ते नायकमथ रचय गुरुविकासितं][1]
वृत्तमिदं प्लवङ्गममहिपतिसुभाषितम् ॥ ४२ ॥

यथा–

कुञ्चितचञ्चलकुन्तलकलितवराननं,
वेणुविरावविनोदविमोहित[2]काननम् ।
मण्डलनायकदानवखण्डनपण्डित,
चिन्तय चण्डकरोपमकुण्डलमण्डितम् ॥ ४३ ॥

इति प्लवङ्गमः ।

२०. लीलावती

लघुगुरुवर्णरचित-नियमविरहित-वसुडगणकृत-चरणविरचिता,
सगणद्विजवर-जगण-भगण-गुरुयुगकृतपदमतियमकसुकथिता ।
लीलावतिका पक्षदहनकृतकला वरकविजनहृदयमहिता,
विरचितललितपद-जनहृदयकृतमद-फणिनायकपिङ्गलभणिता ॥ ४४ ॥

यथा–

गुञ्जाहृतभूषणमखिलजनहृतदूषणमधिकवृतरासकलं,
करयुगधृतमुरलि नवजलधर[3]नील वृन्दावनभुवि चपलम् ।
हृतगोपीमान नारदकृतगान लीलाबलदेवयुतं,
स्मर नन्दतनूज सुरवरकृतपूजं मम हृदयमुनिजननुतम् ॥ ४५ ॥

इति लीलावती ।

२१[१] हरिगीतम्

चरणे प्रथम विरचय ठगण तदनु टगणविराजित,
रचय दारकल तदनु दहनमिह्मन्ते गुरुविकासितम् ।
वसुपक्षकलाकं कविजनसंसदि हृदयसुखदायकं,
हरिगीतमिति वृत्तमहिपतिकविनृपतिजल्पितनायकम् ॥ ४६ ॥

---

१. कोष्ठकान्तर्गतोऽयं पाठः ख. ग. प्रतावेवास्ति । पाठेऽस्मिन् पञ्चकल-चतुष्कलयो-विधानं दृश्यते तच्च प्राकृतपैङ्गलसमनविरुद्ध 'पचमस चउमत्त णत्ता णहि किज्जए' इति नियमात् । (स०)

२. ग. विमोहित । ३ नवजलधर ।

यथा-

रचय कदलीदलनवशयनं कमलदलावलिमालितं,
वीजय मृदुपवनेन घनाघनसुन्दरविरहदालितम् ।
अङ्कमपि घनसारविराजितचन्दनरचनलालितं,
कुरु मम वचनमानय कमलाननवनमालिनमालि तम् ॥ ४७ ॥

इति हरिगीतम्*

२१. [२] हरिगीत[क]म्

अन्ते यदि गुरुयुगकृतचरणं नूनं भवेदिदं हि तदा ।
हरिगीत[क]मिति फणीश्वरपिङ्गलकथितं विजानीत ॥ ४८ ॥

यथा-

उरसि विलसिता[१]ऽनुपमनलिनकृतमधुकररुतयुतवनमालं,
मुनिजनयमनियमादिविनाशकसकलदनुजकुलविकरालम् ।

---

१ ग विलसता ।

*टिप्पणी—श्रीकृष्णभट्टेन वृत्तमुक्तावल्यां द्वितीयगुम्फे 'हरिगीत' वृत्तस्य अनुहरिगीत मन्द्रहरिगीत लघुहरिगीतञ्चेति त्रयो भेदाः स्वीकृतास्ते यथा—

'अन्त्यगुरुमात्रेण हीनं अनुहरिगीतम् । यथा —
नवकोकिलाकुललालितकलकलकलितजागरकाम
अतिधीरमलयसमीरघोरणिवलितमधुकरदाम ।
सखि भूरिकुसुमपरागपूरितकुञ्जमञ्जुलधाम,
परिपश्य मानिनि मधुदिनं रमणेन सन्तनु साम ॥ ४६ ॥

यदा तु अनुहरिगीतस्यादौ कलाद्वयं वर्द्धते तदा मन्द्र(हरि)गीतं उत्प्रेक्षितं भवति । यथा-

जलधरधामधारण मोहतारण भवनिवारणशील,
मधुमुरनरकगञ्जन दुरितभञ्जन नयनरञ्जनलील ।
त्रिभुवनभव्यभावक निजजननायक कलितपावकपान,
जय रसकेलिभाजन सुरभाजन कृतसभाजनमान ॥ ५० ॥

अथ कलाद्वयह्रासे लघुहरिगीतम् । यथा —

मल्लिकानवमल्लिकासुमतल्लिकारसपीन,
मालिकानवमालिकाकमलालिकामधुलीन ।
सोऽधुना विकरालकालकलाकुलोचित एव,
कुन्दकाननकौतुकी मा धाव मधुकरदेव ॥ ५१ ॥"

मुरलीरव[1]-मोहनमनु[2]-मोहितनिखिलयुवतिजन[3]-कृतरास,
विलसतु मम हृदि किमपि गोपिकाजनमानसजनितविलासम् ॥ ४६ ॥

इति हरिगीत[क]म् ।

२१ [३] मनोहर हरिगीतम्[4]

इयमेव यदि विरामे गुर्वन्त शरकल भवति ।
नैयत्येन कवीन्द्रैर्वसुपक्षकल मनोहर कथितम् ॥ ५० ॥

एतदनुसारेण पाठान्तर यथा–

उरसि विलसितानुपमनलिनकृतमधुकररुतयुतमाल,
मुनिजनयमनियमादिविनाशकसकलदनुजकुलकालम् ।
मुरलीरवमोहनमनुमोहितनिखिलयुवतिकृतरास,
विलसतु मम हृदि किमपि गोपिकामानसजनितविलासम् ॥ ५१ ॥

इति मनोहर हरिगीतम्

२१ [४] हरिगीता

रन्ध्रैर्मुनिभि सूर्यै कृतविरतिर्भाविता कविभि ।
इद(य)मेव हि हरिगीता फणिनायकपिङ्गलोदिता भवति ॥ ५२ ॥

यथा–

भुजगपरिवारित-वृषभधारित-हस्तडमरुविराजित,
कृतमदनगञ्जन मनुभभञ्जन-सुरमुनिगणसभाजितम् ।
हिमकरणभासित-दहनभूषित-भालमुमया सङ्गत,
धृतकृत्तिवाससममलमानसमनुसर सुखदमङ्ग तम् ॥ ५३ ॥

इति हरिगीता ।

२१ [५] अपरा हरिगीता

इयमेव वेदचन्द्रै कृतविरतिर्भाविता कविभि ।
पितृचरणैरतिविशदा पिङ्गलविवृतावुदाहृता स्फुटत ॥ ५४ ॥

तदुदाहरण यथा[5]–

सखि ! वभ्रमीति मनो भृश जगदेव शून्यमवेदयते,
परिभिद्यते मम हृदयमर्म न शर्म सम्प्रति वोदयते ।

---

१. ग हर । २ मम । ३ ग 'जन' नास्ति । ४. ग प्रतौ छन्दसोऽस्य लक्षणो दाहरणे न स्त । ५ ग प्रतौ नास्त्युदाहरणपद्यमिदम् ।

परिहीयते वपुषा भृशं नलिनीव हिमततिसङ्गता,
नुदती वने[1] वदतीति सा सुदती रतीशवशंगता ॥ ५५ ॥

इत्यपरा हरिगीता ।

२२ त्रिभङ्गी

प्रथमं दशसु च[2] यतिरनु च वसुषु यतिरथ च तदधिकृति-रस[3]कथितं,
शेषे गुरुगदितं त्रिभुवनविदितं जगणविरहितं जगति हितम् ।
वसुडगणकृतचरण-मधिकसुखकरण-सकलजनशरणं मतिसुमतिं,
वदतीति त्रिभङ्गीमिह निरनङ्गीकृतरतिसङ्गी फणिनृपतिः ॥ ५६ ॥

यथा–

वरमुक्ताहारं हृदि कृतभारं विरहितसारं कुरु मुषितं,
छादय विधुबिम्बं न कुरु विलम्बं हर निकुरम्बं कमलकृतम् ।
जहि[4] मलयजपवनं लघु लघुवहनं तनुकृतदहनं मोहकरं,
मम चित्तमधीरं रदजितहीरं यदुवरवीरं याति परम् ॥ ५७ ॥

इति त्रिभङ्गी ।

२३ दुर्मिलका

यत्राऽष्टौ डगणाः कविसुखकरणाः प्रतिपदगुम्फनललितयुता
गगनावनिरचिता वसुषु च कथिता यत्र वेदविधुयतिरुचिता ।
द्वात्रिंशन्मात्राः स्युरतिविचित्राश्चरणे यस्मिन् कविगणिता
जनहृदि सुखदात्री बुद्धिविधात्री सा दुर्मिलका फणिभणिता ॥ ५८ ॥

यथा–

हैयङ्गवचोरं नन्दकिशोरं तन्दुलकणरुचिसमरदनं,
घनकुञ्चितकेशं मञ्जुलवेषं विजितमनुजसुररुचिसदनम् ।
अपरिस्फुटगदनं दधियुतवदनं नौमि दितिजवरशकटहरं,
मुक्ताभूपालकमद्भुतबालकमखिलमुनिजनहृदि सुखकरम्[5] ॥ ५९ ॥

इति दुर्मिलका ।

१ 'रुदती परं' इति पाठः पिङ्गलप्रदीपे । २ ग नास्ति । ३. क रस । ४. ग नास्ति । ५ 'मुक्ताभूपालकमद्भुतबालकमुषिजनहृदये सौख्यकरम्' इति पाठे श्रुतिकटुत्व-दोषनिवृत्तिः स्यात् (स)

२४. हीरम्

आदिगयुत-वेदलयुत-नागरचितपट्कलं,
वह्निगदित-लोकविदितमन्त्यकथितमध्यकलम् ।
भाति यदनु-पादमतनु-कान्तिसुतनुसङ्गत,
हीरमहिपवीरकथितमीदृगखिलसम्मतम् ॥ ६० ॥

यथा–

चन्द्रवदन-कुन्दरदन-मन्दहसनभूपणं,
भीतिकदन-नोतिसदन[1]-कान्तिमदनदूपणम् ।
धीरमतुलहीरवहुलचीरहरणपण्डित,
नौमि विमलधूतकमलनेत्रयुगलमण्डितम् ॥ ६१ ॥

यथा वाऽस्मत्तातचरणानाम्–

पाहि जननि ! शम्भुरमणि ! शुम्भ[2]दलनपण्डिते !
तारतरलरत्नखचितहारवलयमण्डिते ।
भालरुचिरचन्द्रशकलशोभि[3]सकलनन्दिते[4] !
देहि सततभक्तिमतुलमुक्तिमखिलवन्दिते ! ॥ ६२ ॥

इत्यादिमहाकविप्रबन्धेषु शतशः प्रत्युदाहरणानि ।

इति हीरम्* ।

---

१ ग. नास्ति । २. ग. शम्भु । ३. ग कलशशोभि । ४. ग. सकलसनन्दिते ।

*टिप्पणी—वृत्तमुक्तावल्यां द्वितीयगुम्फे 'हीर'वृत्तस्य सुहीर हीर लघुहीरक परिवृताहीरक-चेति चत्वारो भेदा निबद्धास्तेऽत्र प्रदर्श्यन्ते—

प्रतिपट्कल यत्या रहित सुहीरम् ।

यथा–

रासललितलासकलितहासवलितशोभन,
लोकसकलशोकशमलमोकमखिललोभनम् ।
जातनयनपातजनितशातमुदितभारम,
भाति मदनमानकदनमीनवदनसारसम् ॥ ५५ ॥

यथा–

प्रतिपट्कल यत्या सहित हीरम् ।

सञ्जनवरगञ्जनकरमञ्जनरुचिराजित,
कामहृदभिराममतिललामरतिसमाजितम् ।
नीलकमलशीलमुदितकीलविरहमोचन,
जातिकुटिलयाति. मुदति भाति तव विलोचनम् ॥ ५६ ॥

२५. जनहरणम्

गगनविधुयतिमहित-वसुजयतिसहित-
मनु वसुजविहितचरणयतिं,
कुरु मुनिर्मुनिगणकल[1]-विगत[2]सकलमल-
वरसगणबहुलपदविरतिम् ।
वसुङगणकृतचरण सकलसुखकरण-
मधिकरुचिधरणकविशरण,
फणिवरनृपतिरचित-निखिलमनुजहित-
सकलगुरुरहितजनहरणम् ॥ ६३ ॥

यथा—

वरजलनिधिजलशय निरुपमरुचिचय
सुरगणहृतभय गतकुमते,
बहुदितिसुतकुलहर निजजनसुखकर
सुरमुनिगणवरकृतसुमते ।
अमलकनकसुवसन कटिधृतसुरसन
कुसुमनिभहसन सुखकरण,
तव भवतु पदकमलमधिकतरविमल
सुखद शुभयुगल भवतरणम् ॥ ६४ ॥

इति जनहरणम् ।

---

१ अत्र मुनिगणो विप्रगणपर्याय (ख.) । २. ग. गलित ।

अत्र पटकलस्य सर्वलघुत्वे, तुर्याक्षरस्यैव गुरुत्वे वा छन्दोऽन्तरमुत्प्रेक्षित भवति । तच्च लघुहीरक परिवृत्तहीरक चेति व्यवहर्त्तव्यम । द्वयमपि यथा—

विरहगरलभरिततरलकुटिलसरसलोचना,
चरणनखरकलितमदनयुवतिमदविमोचना ।
अमलकमलरजनिरमणमुकुरविलसितानना,
त्वमिह जयसि सुतनु किरणवलितसकलकानना ॥ ५७ ॥

विलसदङ्गरुचितरङ्गललितरङ्गरञ्जिनी,
लसदपारपटिमभारमदनदारगञ्जिनी ।
सकलयामसुखदवामतरललामसीलना,
जयसि नामहृदभिरामरतिनिकामशीलना ॥ ५८ ॥

२६ मदनगृहम्

प्रथम द्विल[1]सहित वरगुरुमहित
　　विरतौ विमलसकल[2]-चरणे श्रुति[3]-सुखकरणे,
नवडगणविकासित मध्यविराजित-
　　जनशुभदायकदेहधर फणिभणितवरम् ।
गगनावलिकल्पित-वसुमितजल्पित-
　　वेदविधूदितयतिसहित[4] वसुयतिमहित,[5]
गगनोदधिमात्र भवति विचित्र
　　मदनगृह पवनविरहित[6] सकलकविहितम् ॥ ६५ ॥

यथा–

सुरनतपदकमल हृतजनशमल
　　वारिजविजयिनयनयुगल वारिद[7]विमल,
दितिसुतकुलविलय कमलानिलय
　　कल[8]करयुगलकलितवलय केलिषु सलयम् ।
चन्द्रकचित[9]-मुकुट विनिहतशकट
　　दुष्टकसहृदि बहुविकट मुनिजननिकट,
गतयमुनारूप कृतबहुरूप
　　नमतारुहरितनीप[10] श्रुतिशतदीपम् ॥ ६६ ॥

यथा वाऽस्मत्पितु शिवस्तुतौ—

करकलितकपाल धृतनरमाल
　　भालस्थानलहुतमदन कृतरिपुकदन,
भवभयभरहरण[11]गिरिजारमण
　　सकलजनस्तुतशुभचरित गुणगणभरितम्[12] ।
कृतफणिपतिहार त्रिभुवनसार
　　दक्षमखक्षयसक्षुब्ध रमणीलुब्ध,
गलराजितगरल गङ्गाविमल
　　कैलाशाचलधामकर प्रणमामि हरम् ॥ ६७ ॥

इति प्रत्युदाहरणम् ।
इति मदनगृहम् ।

---

१ ग द्विजसहितम । २ ग कमल । ३ ग यति । ४ ख महितम । ५. ग 'वसुयतिमहित नास्ति । ६ पवनविरहित मदनगृह' इति पाठात् श्रुतिकटुत्वदोषनिरास स्यात । (स०) ७ ग वारिज । ८ ग वरकर । ९ ग चन्द्रकयुत । १० ग हरितानीपम् । ११ ख ग भवभवभयहरणम् । १२ ग वंसोचयहितम् ।

२७ मरहट्टा [महाराष्ट्रम्]

प्रथमं कुरु टगणं पुनरपि डगण शरपरिमितमतिशोभि,
　　शेषे कुरु हार लघुमथ सार कविजनमानसलोभि ।
गगनेन्दौ विरतिं तदनु वसुयतिं पुनरथ विधुयुगलेऽपि,
　　मरहट्टावृत्ते कविजनचित्ते नवयुगरचितकलेऽपि ॥ ६८ ॥

यथा-

गर्वावलिभासुर हतकंसासुर भुवि कृतविमलविलास,
मुरलीभासितकर वृषभासुरहर वरतरुणीकृतरास[1] ।
दावानलबालक[2]गोधनपालक हिमकरकरनिभहास,
कृपया कुरु दृष्टिं मयि सुखवृष्टिं मुनिहृदि[3]जनितविकास ॥ ६९ ॥

इति मरहट्टा ।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके चतुर्थं पद्यावलीप्रकरणम् ।

---

१. ग॰ हास । २. ग॰ भिहकर । ३. ग॰ नास्ति ।

पञ्चमं सवया-प्रकरणम्

अथ सवया[1]

सप्तभकारविभूषित पिंगलभाषितमन्तगुरूपहित[2],
अन्यदथापि तथैव मभूषितमन्तगुरुद्वयसविहितम् ।
अष्टसकारमयो गुरुसङ्गतमेतदथान्यदपि प्रथित,
सप्तजकारविराजितमन्त्यलघु[3] गुरु[4]भासितमन्यदिदम् ॥ १ ॥
अन्यदिद [मुनिनायकभाषितमन्त्यलघुं गुरुयुग्मसुयुक्त,
योगचतुष्कलपूजित][5]मन्यदिद युगवह्निकलाभिरमुक्तम्[6] ।
पण्डितमण्डलिनायकभूपतिमानसरञ्जनमद्भुतवृत्त,
सर्वमिद सवयाभिधमुक्तमशेषकवीन्द्रविमोहितचित्तम् ॥ २ ॥

अथैतेषां भेदाना नामानि

मदिरा मालती मल्ली मल्लिका माधवी तथा ।
मागधीति च नामानि तेषामुक्तान्यशेषत ॥ ३ ॥

क्रमेणोदाहरणानि[7], यथा[8]—

१ मदिरा सवया

भालविराजितचन्द्रकल नयनानलदाहितकामवर,
बाहुविराजितशेषफणीन्द्रफणामणिभासुरकान्तिधरम् ।
भूधरराजसुतापरिमण्डितखण्डित[9]नूपुरदण्डधर,
नौमि महेशमशेषसुरेशविलक्षणवेषमुमेश[10] 'हरम् ॥ ४ ॥

इति मदिरा सवया ।

२ मालती सवया

चन्द्रकचारुचमत्कृतिचञ्चलमौलिविलुम्पित-[11]चन्द्रकशोभ,
वन्यनवीनविभूषणभूषितनन्दसुत वनिताधरलोभम् ।
धेनुकदानवदारणदक्ष-दयानिधिदुर्गमवेदरहस्य
नौमि हरिं दितिजावलिमालित[12]-भूमिभरापनुद सुयशस्यम् ॥ ५ ॥

इति मालती सवया ।

---

१ ग सवईया । २ ग विहितम । ३ ख ग लघु । ४ ग मुनि । ५ कोष्टकस्थोंशो नास्ति क प्रतौ । ६ ग कलारसयुक्तम् । ७ ग तासां क्रमेणोदाहरणानि । ८ ग तद्यथा । ९ क प्रतौ 'खण्डित' शब्दो नैव । १० ग मुमेश । ११ ग विलम्बित । १२ ग दितिजावलिभारित ।

३ मल्ली सवया

गिरिराजसुताकमनीयमनङ्गविभङ्गकर गलमस्तकमाल,
परिधूतगजाजिनवाससमुद्धतनृत्यकर विगृहीतकपालम् ।
गरलानलभूपित दोनदयालु मदभ्रमरोद्धत[1]-दानवकाल,
प्रणमामि विलोलजटातटगुम्फितशेप[2] कलानिधिलालितभालम् ॥ ६ ॥

इति मल्ली सवया ।

४ मल्लिका सवया

धुनोति मनो मम चम्पककाननकल्पितकेलिरय पवन ,
कथमपि नैव करोमि तथापि वृथा कदन कुरुते मदन ।
कलानिधिरेप बलादयि[1] मुञ्चति वह्निकलापमलीकहिम
विधेहि तथा मतिमेति यथा सविधेन पथा व्रजभूमहिम ॥ ७ ॥

इति मल्लिका सवया ।

५ माधवी सवया

विलोलविलोचनकोणविलोकित मोहितगोपवधूजनचित्त ,
मयूरकलापविकल्पितमौलिरपारकलानिधिबालचरित्र ।
करोति मनो मम विह्वलमिन्दुनिभस्मितसु दरकुन्दसुदन्त ,
सखीमिति[2] कापि जगाद हरेरनुरागवशेन विभावितमन्त ॥ ८ ॥

इति माधवी सवया ।

६ मागधी सवया

माधव[3]विद्युदिव गगने तव कलयति पीतवसनमभिरामम्,
जलधरनीलगगनपद्धतिरपि तव तनुरुचिमनुसरति निकामम ।
इन्द्रशरासनमपि तव वक्षसि भासितवरवनमालाशोभ
[कुरु मम वचन सफलय हृदय राधाधरमधुविरचितलोभम्[4]] ॥ ९ ॥

इति मागधी सवया ।

उक्तानि सवयाख्यानि छन्दास्येतानि कानिचित् ।
ऊह्यानि लक्ष्यमालोच्य[5] शेपाणि निजबुद्धित ॥ १० ॥

---

१ ग मदोधक । २ ग सखीरिति । ३ ग मागध । ४ चतुर्थचरण क प्रतौ नास्ति । ५ ग आलोच्य ।

७ घनाक्षरम्[1]

रसभूमिवर्णयतिक[2] तदनु च शरभूमिविरतिक यत्तु[3] ।
विधुवह्निवर्ण[4]सङ्गतमिदमप्रतिम घनाक्षर वृत्तम् ॥ ११ ॥

यथा–

रावणादिमानपूर-दूरनाशनेति वीर
　　राम किं विशालदुर्गमायाजालमेव ते,
मैथिलीविलासहास धूतसिन्धुवासर(रा)स[5]
　　भूतपतिशरासनभङ्गकर[6] भासते ।
दीनदु:खदानसावधान पारावारपार[7]-
　　यान-वीरवानरेन्द्रपक्ष किं महामते[8],
ते रणप्रचण्डबाहुदण्डमेव हनुमत्र
　　बाणदावदग्धदानुसैनिका प्रभुवंते ॥ १२ ॥

इति घनाक्षरम् ।

इति वृत्तमौक्तिके वार्त्तिके[8] पञ्चमं सवया[9] प्रकरणम् ।



१ ग तरवया ग्रार्या । २ ग य कि । ३ ग यम्नु । ४ ग विधुवर्णो वह्नी । ५ ग भासतार । ६ ग सतकर । ७ ग पाराबान । ८ ग मातिम । ९ ग सवाय ।

षष्ठं गलितकप्रकरणम्

अथ गलितकानि—

१. गलितकम्

शरकल पञ्चपरिमित जलधिकलयुग
प्रविलसति यस्मिश्चरणे लघुगुर्वनुगम्[1] ।
विधुयुगकलारचितमहिपतिफणिकलितकं
वरकविजनमानसहर[2] भवति गलितकम् ॥ १ ॥

यथा–

मल्लि[3]-मालतियूथिपङ्कजकुन्दकलिके,
कुमुदचम्पककेतकिपरिमलवलदलिके[4] ।
मलयपर्वतशीतल त्वयि जातपवनः,
हरिवियोगतनोरिय मम कथं दहन. ॥ २ ॥

इति गलितकम् ।

२ विगलितकम्

ठगणद्वय[5] भवति चतुष्कलद्वयसङ्गत
तदनु च शरकल भवति सुललितकविसम्मतम् ।
दहनपक्षकलाविलसितविमलसकलचरण,
विगलितकमेतत् फणिपतिमधिकसुखकरणम् ॥ ३ ॥

यथा –

भवजलधितारिणि[6] सकलतापहारिणि गङ्गे,
अघदहनकारिणि रुचिधारिणि हरकृतसङ्गे ।
गिरिनिकरदारिणि मनोहारिणि तरलभङ्गे,
स्वपिमि वारिणि हसहारिणि तव विलसदङ्गे ॥ ४ ॥

इति विगलितकम् ।

३. सङ्गलितकम्

डगणयुगेन विराजित,
पञ्चकलेन सभाजितम् ।
सङ्गलितकमिति कल्पित,
फणिपतिपिङ्गलजल्पितम् ॥ ५ ॥

---

१. ग. गुर्वलुग· । २. ग मानसहर तवति । ३ ग. मल्लिका । ४. ग कुन्दचम्पकके परिमलवल्लिके । ५. ख टगणद्वयम् । ६. ग. भवजलधितरणि ।

धृतिमवधारय मानसे,
हरिमपि[1] गततनुरानशे ।
सखि ! तव वचनं मानये,
ननु वनमालिनमानये ॥ ६ ॥

इति सङ्गलितकम् ।

४. सुन्दरगलितकम्

ठगणद्वयेन भावित,
लादित्रिकलविकासितम्[2] ।
सुन्दरगलितकनामकं,
वृत्तममलरुचिधामकम् ॥ ७ ॥

यथा–

विगलितचिकुरविलासिनी,
नवहिमकरनिभहासिनीम् ।
सुवलराधिकान्तामये[3],
तनुजितकनकां कामये ॥ ८ ॥

इति सुन्दरगलितकम् ।

५. भूषणगलितकम्

ठगणद्वितय प्रथम चरणे,
रसभूमिसुसख्यकलाभरणे ।
त्रिकलद्वितय पुनरेव यदा,
फणिभाषित-भूषणकेति तदा[4] ॥ ९ ॥

यथा–

रुचिरवेणुविरावविमोहिता
द्रुतपदाः धृतरासरसे[5] हिता ।
हरिमदूरवने हरिणेक्षणा
स्तमनुजग्मुरनन्यगतेक्षणाः[6] ॥ १० ॥

इति भूषणगलितकम् ।

६. मुग्धगलितकम्

षट्कलं प्रथममथ वेदत्रिकलयुत,
पुनरपि यच्चरणदोपगतवलयचितम् ।

---

१. ग. हरिमपगत । २. ग बिलासितम् । ३. ग. सुबलितराधिकाम् । ४. ग. यदा । ५. ख. ग. रसे । ६. ग दाम्‌म् ।

गगनपक्षकलाकृतचरणविकासित,
मुखगलितकमिद वरफणिपतिभाषितम् ॥ ११ ॥

यथा–

ब्रह्म भवादिकनुतपदपङ्कजयुगल,
नाशितभक्तहृदयगतदारुणशमलम् ।
दीनकृपानिधि-भवजलराशितारक,
नौमि हरिं कमलनयनमशुभदारकम्[१] ॥ १२ ॥

इति मुखगलितकम् ।

७. विलम्बितगलितकम्

आदौ पट्कल तदनु चान्तगेन सहित,
जलनिधिकलचतुष्कमहिनायकेन विहितम् ।
समगणे जगणेन सहित[२] फणीन्द्रभणित,
विलम्बिताख्यमेतदखिलसुकवीन्द्रगणितम्[३] ॥ १३ ॥

यथा–

नमामि पङ्कजानन सकलदुःखहरण,
भवाम्बुराशितारक निखिलवन्द्यचरणम्[४] ।
कपोललोलकुण्डल[५] व्रजवधूजनसहित,
विलासहासपेशल सरसरासमहितम् ॥ १४ ॥

इति विलम्बितगलितकम् ।

८ [१] समगलितकम्

डगणविभूप प्रथममवेहि पञ्चकलयुगयुत[६],
तदनु चतुष्कलयुगसहित विरतौ लगुरुमहितम्[७] ।
शरयुगमात्रासहितमनुत्तमपिङ्गलभाषित,
समगलितकमिदमतिसुखकरसुललितपदभासितम् ॥ १५ ॥

यथा–

निखिलसुरगणविनुतपङ्कजकोमलचरणयुगल,
पीतवसनविलसितशरीरमनुत्तमकम्बुगलम् ।
नौमि निगमपरिगदितमपारगुणयुतमिन्दुमुख,
नन्दतनूज निखिलगोपवधूजनदत्तसुखम् ॥ १६ ॥

इति समगलितकम् ।

---

१ ग दायकम् । २ ग रहितम् । ३ ग गदितम् । ४. ग कन्धा चरणम् ।
५ ग कुञ्ज । ६ ग ज्युतम् । ७ ग लघुगुरुसहितम् ।

८ [२]. अपरं समगलितकम्

समगलितकं प्रभवति[1] विषमे यदि डगणत्रिकलाभ्यां कलितकम्[2] ।
मुखगलितकं समचरणे किल भवति निखिलपण्डितमुखवलितकम्[3] ॥ १७ ॥

यथा–

विभूतिसित शिरसि निवसिता[4]-नुपमनदीभवपङ्कजविलसितम् ।
अहिप[5]-रुचिरं किमपि विलसिता[6] मम हृदि वेदरहस्यमतिसुचिरम् ॥ १८ ॥

इति द्वितीयं समगलितकम् ।

८ [३] अपरं सङ्गलितकम्

विपरीतस्थितसकलपदयुतमेव समगलितकं सङ्गलितकम्[7] ॥ १९ ॥

विपरीतपठितमिदमेवोदाहरणम् । यथा–

शिरसि निवसिता[8]नुपमनदीभव-पङ्कजविलसितं विभूतिसितम् ।
किमपि विलसिता मम हृदि वेदरहस्यमतिसुचिरं अहिप[9]-रुचिरम् ॥ २० ॥

इति द्वितीयं सङ्गलितकम् ।

८ [४] अपरं लम्बितागलितकम्

दारमितडगणे स्याद् भाविता[10] निखिलपादे
विषमजगणमुक्ता चान्तगा[11]विगतवादे ।
युगयुगकृतमात्राः कल्पिता[12] यदनुपादं,
फणिपतिभणितेयं लम्बिता त्यज विषादम् ॥ २१ ॥

यथा–

राजति वधीरुतमेतत् काननदेशे,
गच्छति कृष्णे तस्मिन्नथ मञ्जुलवेशे ।
याहि मया सार्द्धमितो रासाहितचित्ते,
तत्सविधे प्रेमविलोले तेन च वित्ते[13] ॥ २२ ॥

इति द्वितीयं लम्बितागलितकम् ।

९ विक्षिप्तिकागलितकम्

दारोदितकलो यदि भाति[14] गणो विषमस्थितियुत
समस्थित(ति)विभूषितेन तदनु चतुष्कलेन युत ।

---

१. ग 'समगलितकं' नास्ति, भवति च । २. ग. सकलितकम् । ३ ग मुखवलितकम् । ४. ग निवासिता । ५. ग फणिप । ६ ग. विमलता । ७ ग. नास्ति ८. ग. विलासिता । ९. ख ग. फणिप । १०. ग भावित । ११ ग वाग्तगाविगतवादे । १२. ग कल्पित । १३. ग धनचित्ते । १४. ग. भाति ।

शरोदितगणैः परिभावितसकलचरणैः सहिता[1],
कवीन्द्रकथितान्तगुरुः[2] किल विक्षिप्तिका महिता[3] ॥ २३ ॥

यथा–

चन्द्रकचितमुकुटमखिलमुनिजनहृदयसुखकरणं,
धृतवेणुकलं वरभक्तजनस्याद्भुतं शरणम् ।
वृन्दावनभूमिषु वल्लवनारीमनोहरणं,
रुचिरं निजचेतसि चिन्तय गोवर्द्धनोद्धरणम्[4] ॥ २४ ॥

इति विक्षिप्तिकागलितकम् ।

१०. ललितागलितकम्

पूर्वं कथिता विक्षिप्तिकैव[5] चरणसुकलिता,
ठगणे[6] चतुष्कलेन भूषिता प्रभवति ललिता ॥ २५ ॥

यथा–

कमलापतिं कमलसुलोचनमिन्दुनिभाननं,
मञ्जुलपरिपीतवाससमपारगुणकाननम् ।
सनकादिकमानसजनितनिवाससमस्तनुतं,
प्रणमामि हरिं निजभक्तजनस्य हिते निरतम् ॥ २६ ॥

इति ललितागलितकम् ।

११. विषमितागलितकम्

पूर्वं द्वितीयचरणे विषमस्थितिकपञ्चकलः,
तुर्ये[7] तृतीयचरणे प्रथमं भवति चतुष्कलः ।
सकले समस्थित(ति)भेदकलो[8] विरतौ विरचिता,
या(यो)गेन[9] शरोक्तगणेन च सा भवति विषमिता ॥ २७ ॥

यथा–

वेणुं करे[10] कलयता सखि ! गोपकुमारकेण,
पीताम्बरावृतशरीरभृता भवतारकेण ।
प्रेमोद्गतस्मितरुचा वनजभूषणशोभिना,
चेतो ममाऽपि कवलीकृतं मानसलोभिना ॥ २८ ॥

इति विषमितागलितकम् ।

---

१. ग. सहिताः । २. ग. गुरु । ३. ग. महिताः । ४. ग. धरणम् । ५. ग. विक्षिप्तिकः कलिता च । ६. ग. ठगणेन । ७. ग. तुर्यं । ८. ग. कलो । ९. ग. सागेन । १०. ग. वेणुकरे ।

१२ मालागलितकम्

पट्कलविरचित तदनु च दश[1]-सल्यडगण-
परिभावितचरणमुदेति मालाभिध गलितकम् ।
मध्यगुरुजगणेन विरचितसमस्तसमगण-
रसोदधिकलकमहीन्द्रफणिवदने[2] वलितकम् ।।२९।।

यथा[3]—

कालियकुलविभञ्जक-मसुरविडम्बक-दनुजविलुम्पक-
मखिलजनस्तुतशुभचरितमुनिनुत,
नौमि विमलतर सकलसुखकर कलिकलुपहर,
भवजलधितरिं हरिं पालने सुनियतम् ।
घसहृदि विकट मुनिगणनिकट विनिहतशकट
परिधृतमुकुट जगद्विरचनेऽतिचतुर,
भक्तजनशरण भवभयहरण वरसुखकरण
स्वपदवितरण जगनाशने धृतधुरम् ।। ३० ।।

इति मालागलितकम् ।

१३ मुग्धमालागलितकम्[4]

मालाभिख्यमेव[5] हि भवति चतुष्कल-
युगरहित फणिपविप्र[6] मुग्धपूर्वम् ।। ३१ ।।

यथा[7]—

वन्दे नन्दनन्दनमनवरत मरकतसुतनु धृतरुचि मुरारिमा(मी)श,
वादितवशमानतमुनिजन-नारदविरचितगानमवनीमणीमनीपम् ।
कारितरामहासपरवशरत विरचितसुरत विततकुङ्कुमेन पीत,
त देव प्रमोदभरसुविदित मुदितसुरनुत सततमात्मजेन गीतम् ।। ३२ ।।

इति मुग्धमालागलितकम् ।

१४ उद्गलितकम्

मुग्धपूर्वकमेव टगणयुगलेन रहितपदमुद्गलितकम् ।। ३३ ।।

यथा[8]—

नन्दनन्दनमेव कलयति न किञ्चिदिह जगति सारमपर,
पुत्रमित्रकलत्रमखिलमपि चित्रघटितमिव भाति न परम् ।

---

१. ग दासप्तय । २ ग फणिपवने । ३. ग ऊह्यमुदाहरण, उदाहरण नास्ति । ४ ग मुग्धमालागलितकम् । ५ ग मालाभिसरयमेव । ६ ग विप्र । ७ ग ऊह्यमुदाहरणं, उदाहरणं नास्ति । ८ ग लक्षणानुसारादेव कविभिरुदाहरणमूह्यम्, उदाहरणं नास्ति ।

सावधानतयैव लवमपि मन परमचलमिद न विदित
भावयन्तु दिवानिशमनिमिषमात्मनि परमपद प्रमुदितम् ॥ ३४ ॥

इत्युद्गलितकम् ।

एव गलितकादीनि वृत्तान्युक्तानि कानिचित् ।
लक्ष्याणि लक्ष्यमालक्ष्य शेषाणि निजवुद्धित [1] ॥ ३५ ॥

इति गलितक-प्रकरणं षष्ठम् [2] ।

[ग्रन्थकृत्प्रशस्तिः]

रन्ध्रसूर्याश्वसख्यात मात्राच्छन्द इहोदितम् ।
सप्रभेदवसुद्वन्द्वशतद्वयमुदीरितम् २८८ ॥ ३६ ॥

सोदाहरणमेतावदस्मिन्खण्डे मयोदितम् ।
प्रस्तारसख्यया तेषा भाषणे पिङ्गल क्षम ॥ ३७ ॥

[3]श्रीचन्द्रशेखरकृते रुचिरतरे वृत्तमौक्तिकेऽमुष्मिन् ।
मात्रावृत्तविधायकखण्ड सम्पूर्णतामगमत् ॥ ३८ ॥

बाणमुनितर्कचन्द्रे [१६७५] गणितेऽब्दे वृत्तमौक्तिके रुचिरम् ।
माघे धवलपक्षे पञ्चम्या चन्द्रशेखरश्चक्रे [4] ॥ ३९ ॥

[5]इत्यालङ्कारिकचक्रचूडामणि छन्द शास्त्रपरमाचार्य सकलोपनिषद्रहस्यार्णव-
कर्णधारश्रीलक्ष्मीनाथभट्टात्मज-कविशेखर श्रीचन्द्रशेखरभट्ट-
विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिके पिङ्गलवार्तिके
मात्रावृत्त प्रथम परिच्छेद ।

श्रीरस्तु ।

---

१. ग पूर्ण पद्य नास्ति । २ ग इति वृत्तमौक्तिके गलितक प्रकरण षष्ठ । तदनन्तर ग प्रतौ निम्नपद्य वर्तते—

जनकुमपाल लालितबालं वादितमृदुतरशाल,
रोचनयुतभाल धृतवनमाल शोभिततरलवशालम् ।
विदितविशाल बाधितताल हृतसुरमुनिगणशाल,
रचितरसितमाल जितघनजाल भासितयादववशम् ॥

३ ग इति श्रीमच्चन्द्रशेखरकृते रुचिरतरे वृत्तमौक्तिकेऽमुष्मिन् मात्रावृत्तविधायकखण्ड समाप्तम् । ४ ग पूर्ण पद्य नास्ति । ५ ग 'इत्याल आरभ्य 'परिच्छेद' पर्यन्त पाठ नास्ति' ।

श्रीलक्ष्मीनाथभट्टसूनु-कविचन्द्रशेखरभट्टप्रणीतं

वृत्तमौक्तिकम्

द्वितीयः खण्डः

प्रथमं वृत्तनिरूपण - प्रकरणम्

[मङ्गलाचरणम्]

शिरोऽदिव्यद्[1] गङ्गाजलभवकलालोलकमला-
न्यल शुण्डादण्डोद्धरणविपयान्यारचयता ।
जटाया घृष्टाया द्विरदवदनेनाथ रभसा,
दुदश्रुर्गौरीश क्षपयतु मन क्षोभनिकरम् ॥ १ ॥
मात्रावृत्तान्युक्त्वा कौतूहलत फणीन्द्रभणितानि ।
अथ चन्द्रशेखरकृती वर्णच्छन्दासि कथयति स्फुटत ॥ २ ॥

[अथैकाक्षर वृत्तम्]

१ श्री

यो ग । सा श्री ॥ ३ ॥

यथा–

श्री मां मव्यात् ॥ ४ ॥

इति श्री १

२ अथ इ

स इ रि-ति ॥ ५ ॥

यथा–

दा म यु द ॥ ६ ॥

इति इ २

अत्रैकाक्षरस्य प्रस्तारगत्या द्वावेव भेदौ भवत[2] ।

इत्येकाक्षरं वृत्तम् ।

---

१ क दीव्यद् । २ पङ्क्तिरिय नास्ति क प्रतौ ।

अथ द्व्यक्षरम्

तत्र–

३. कामः

गौ चेत् कामो ।
नाग-प्रोक्तः ॥ ७ ॥

यथा

वन्दे कृष्णम् ।
केली-तृष्णम् ॥ ८ ॥

इति कामः ३.

४. अथ मही

लगौ महीम् ।
वदत्यहिः ॥ ९ ॥

यथा–

रमापते ।
नमोऽस्तु ते ॥ १० ॥

इति मही ४.

५. अथ सारम्

वक्र-लौ च ।
सार-मत्र ॥ ११ ॥

यथा–

कंस-काल ।
नौमि बाल ॥ १२ ॥

इति सारम् ५.

६. अथ मधुः

द्विलकृति ।
मधुरिति ॥ १३ ॥

यथा–

मतिमव ।
मम भव ॥ १४ ॥

इति मधु ६.

अत्रापि द्व्यक्षरस्य प्रस्तारगत्या चत्वार ४ एव भेदा भवन्तीति, तावन्तोऽप्युक्ताः ।

इति द्व्यक्षरम् ।

अथ त्र्यक्षरम्

तत्र—

७. तालो

पादे या म प्रोक्ता ।
　　ताली सा नागोक्ता ॥१५॥

यथा—

गोवृन्दे सञ्चारी ।
　　पायाद् दुग्धाहारी ॥ १६ ॥

इति तालो ७. 'नारी'त्यन्यत्र ।

८ अथ शशी

शशीवृत्तमेतत् ।
　　यकारो यदि स्यात् ॥ १७ ॥

यथा—

मुदे नोऽस्तु कृष्णः ।
　　प्रियायां सतृष्णः ॥ १८ ॥

इति शशी ८.

९. अथ प्रिया

वल्लकी राजते ।
　　सा प्रिया भासते ॥ १९ ॥[1]

यथा—

राधिका-रागिणम् ।
　　नौमि गोचारिणम् ॥ २० ॥

इति प्रिया .९

१०. अथ रमणः

भ्रियते सगणः ।
　　फणिना रमणः ॥ २१ ॥

यथा—

सखि मे भविता ।
　　हरिरप्यचिता ॥ २२ ॥

इति रमणः १०.

---

१. वृत्तमेतद् रगणोदाहृतेः । (ख)

११. अथ पञ्चालम्[1]

पादेषु तो यहि ।
पञ्चाल-वृत्तं हि ॥२३॥

यथा–

शं देहि गोपेश ।
मन्दे महत्केश ॥ २४ ॥

इति पञ्चालम् ११.

१२. अथ मृगेन्द्रः

नरेन्द्र विराजि ।
मृगेन्द्र मवेहि ॥ २५ ॥

यथा–

विलोलवतंस ।
नमो धृतवंश ॥ २६ ॥

इति मृगेन्द्रः १२.

१३. अथ मन्दरः

भो यदि सुन्दरि ।
मन्दरमेव हि ॥ २७ ॥

यथा–

चञ्चलकुन्तल ।
नौमि सुमङ्गल ॥ २८ ॥

इति मन्दरः १३.

१४. अथ कमलम्

नमनुकलय ।
कमलममल ॥ २९ ॥

यथा–

अहिपवलय ।
शमिह कलय ॥ ३० ॥

इति कमलम् १४.

अत्राऽपि त्र्यक्षरस्य प्रस्तारगत्या अष्टौ भेदा भवन्तीति तावन्तोऽप्युदाहृताः ।

इति त्र्यक्षरम् ।

---

१. क. प्रतौ पाञ्चालवृत्तस्य लक्षणमुदाहरणं नोल्लिखिते ।

अथ चतुरक्षरम्

तत्र–

१५. तीर्णा

यस्मिन् कर्णौ वृत्ते स्वर्णौ ।
सा स्यात् तीर्णा नागोत्कीर्णा ॥ ३१ ॥

यथा–

गोपीचित्ताकर्षे सक्तम् ।
वन्दे कृष्णं गोभिर्युक्तम् ॥ ३२ ॥

इति तीर्णा १५. 'कन्या' इत्यन्यत्र ।

१६. अथ धारी

पक्षिभासि मेरुधारि ।
वारिराशि वर्णधारि[1] ॥ ३३ ॥

यथा–

गोपिकोडुसङ्घचन्द्र ।
नौमि जन्मपूतनन्द ॥ ३४ ॥

इति धारी १६.

१७. अथ नगाणिका

विधेहि ज ततो गुरुम् ।
नगाणिका भवेदरम् ॥ ३५ ॥

यथा–

विलोलमौलिभासुरम् ।
नमामि संहृतासुरम् ॥ ३६ ॥

इति नगाणिका १७.

१८. अथ शुभम्

द्विजवरमिह यदि ।
विदधत, शुभमिति ॥ ३७ ॥

यथा–

अशुभमपहरतु ।
हृदि हरिरुदयतु ॥ ३८ ॥

इति शुभम् १८.

अत्रापि चतुरक्षरस्य प्रस्तारगत्या षोडश १६ भेदा भवन्ति, तेषु चाद्यन्तभेद-युक्ता ग्रन्थविस्तरशङ्कयाऽत्र चत्वारो भेदा प्रदर्शिताः,शेषभेदा सुधीभिरूह्या इति।*

इति चतुरक्षरम् ।

---

१. ख. वर्णवारि ।

*शेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः ।

अथ पञ्चाक्षरम्

तत्र–

१९ सम्मोहा

आदौ म प्रोक्त पश्चात् कर्णोक्तम् ।
बाणार्णैर्युक्त सम्मोहावृत्तम् ॥ ३९ ॥

यथा–

वन्दे गोपाल दैत्याना कालम् ।
गोपीगोपाना पाल दीनानाम् ॥ ४० ॥

इति सम्मोहा १९

२० अथ हारी

यस्मिन तकार पक्षोक्तहार ।
पञ्चार्णयुक्त हारीति वृत्तम् ॥ ४१ ॥

यथा–

आनन्दकारी गोपीविहारी ।
मा पातु बाल केलीरसाल ॥ ४२ ॥

इति हारी २०

२१ अथ हस

आदिरथान्त कुण्डलयुक्त ।
मध्यगत सो यत्र स हस ॥ ४३ ॥

यथा –

नन्दकुमार सुन्दरहार ।
गोकुलपाल पातु स बाल ॥ ४४ ॥

इति हस २१

२२ अथ प्रिया

सगणाहिता लग-सयुता ।
भवतीह या किल सा प्रिया ॥ ४५ ॥

यथा –

सखि ! गोकुले सुरसकुले[1] ।
व्रजसुन्दरो ननु निर्दय ॥ ४६ ॥

इति प्रिया २२.

---

१ ख 'सुरसकुले' नास्ति ।

२३. अथ यमकम्

नमिह कुरु लयुगमय ।
इति यमकमनुकलय ॥ ४७ ॥

यथा–

असुरयम शमिह मम ।
अनुकलय फणिवलय ॥ ४८ ॥

यथा वा–

नृपहर धरणिधर ।
दलितमव सुजनमव ॥ ४९ ॥

इति यमकम् २३

अत्र प्रस्तारगत्या पञ्चाक्षरस्य द्वात्रिंशद् ३२ भेदा भवन्ति, तेषु कतिचनोक्ताः शेषास्तूह्या ।*

इति पञ्चाक्षरम् ।

अथ षडक्षरम्

तत्र–

२४ शेषा

नागाधीशप्रोक्त सर्वैर्दीर्घैर्युक्तम् ।
षड्भिर्वर्णैर्वृत्त[1] शेषाख्यं स्याद् वृत्तम् ॥ ५० ॥

यथा–

कंसादीनां कालं गोगोपीनां पालं ।
पायान्मायाबालं मुक्ताभूषामालं[2] ॥ ५१ ॥

इति शेषा २४

२५ अथ तिलका

यदि सद्वितयाचितं सर्वं पदा ।
तिलकेति फणिर्वदतीह तदा ॥ ५२ ॥

यथा–

कमनीयवपुः शकटादिरिपुः ।
जयतीह हरिः भवसिन्धुतरिः ॥ ५३ ॥

इति तिलका २५

---

१ ग विग्न इव । २ ख मालं ।

*टिप्पणी—शेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः ।

२६. अथ विमोहम्

पक्षिराजद्वय यत्र पादस्थितम् ।
पिङ्गलेनोदित तद् विमोह मतम् ॥ ५४ ॥

यथा–

गोपिकामानसे य सदा व्यानशे ।
पातु मा सेवक सोऽङ्गनघो बकम्[1] ॥ ५५ ॥

इति विमोहम् २६.

'विज्जोहा' इति स्त्रीलिङ्ग पिङ्गले*[1] ।

२७ अथ चतुरसम्

प्रथमनकार[2] तदनु यकारम् ।
कुरु चतुरसे फणिकृतशसे ॥ ५६ ॥

यथा–

विनिहतकस तरलवतसम् ।
नम धृतवश सुरकृतशसम् ॥ ५७ ॥

इति चतुरसम् २७

'चउरसा' इति स्त्रीलिङ्ग पिङ्गले*[2]।

२८ अथ मन्थानम्

पादे द्वित देहि षड्वर्णमाधेहि ।
जानीहि नागोक्तमन्थानमेतद्धि ॥ ५८ ॥

यथा-

धूतासुराधीश गोगोपकाधीश ।
मा पाहि गोविन्द गोपीजनानन्द[3] ॥ ५९ ॥

इति मन्थानम् २८. स्त्रीलिङ्गमन्यत्र ।

२९ अथ शङ्खनारी

यदा स्तो यकारौ रसप्रोक्तवर्णौ ।
तदा शङ्खनारी फणीन्द्रोदिता स्यात् ॥ ६० ॥

यथा

व्रजे रासकारी मनस्तापहारी ।
वधूभि समेतो हरि पातु चेत ॥ ६१ ॥

इति शङ्खनारी २९ 'सोमराजी' त्यन्यत्र ।

---

१. ख. पक्तिरिय नास्ति । २ क ख. पुस्तके 'नकार' स्थाने 'नमस्कार' पाठ सोऽसमीचीन । (स०) ३. ख. प्रमन्द ।

*टिप्पणी—१ प्राकृतपैङ्गलमपरिच्छेद २ पद्य ४५

*टिप्पणी—२ ,, ,, ,, ४७

३०. अथ सुमालतिका

जकारयुगेन विभाति युतेन ।
अहिर्वदतीति सुमालतिकेति ॥ ६२ ॥

यथा–
व्रजाधिपबाल विभूषितबाल[1] ।
सुरारिविनाश नमाम्यनलाश ॥ ६३ ॥

इति सुमालतिका ३०. 'मालती'ति पिङ्गले*[1] ।

३१. अथ तनुमध्या

यस्या शरयुग्मं कुन्तीसुतयुग्मे ।
अन्त्यैः खलु साध्या सा स्यात्तनुमध्या ॥ ६४ ॥

यथा–
राधासुखकारी वृन्दावनचारी ।
कंसासुरहारी पायाद् गिरिधारी ॥ ६५ ॥

इति तनुमध्या ३१.

३२. अथ दमनकम्

नगणयुगलमिह रचयत ।
दमनकमिति परिकलयत ॥ ६६ ॥

यथा–
व्रजजनयुत सुरगणवृत ।
जय मुनिनुत व्रजपतिसुत ॥ ६७ ॥

इति दमनकम् ३२.

अत्र प्रस्तारगत्या षडक्षरस्य चतुःषष्टिः ६४ भेदा भवन्ति, तेषु आद्यन्त-सहिता कियन्तो भेदा उक्ता, शेषभेदा सुधीभिरूह्या । ग्रन्थविस्तरशङ्कया नात्रोक्ता इति ।*[2]

इति षडक्षरम् ।६।

अथ सप्ताक्षरम्

तत्र–
३३. शीर्षा

वर्णा दीर्घा यस्मिन् स्युः पादेऽष्टौ सख्याकाः ।
नागाधीशप्रोक्तं तत् शीर्षामित्थं वृत्तं स्यात् ॥६८॥

यथा–
मुण्डाना मालाजालै-र्भास्वत्कण्ठं भूतेशम् ।
कालव्यालैः खेलन्तं वन्दे देवं गौरीशम् ॥ ६९ ॥

इति शीर्षा ३३.

---

१ ख भाल ।
*टिप्पणी—१ प्राकृतपैङ्गलम्–परिच्छेद २ पद्य ५४ ।
*टिप्पणी—२ शेषभेदा. पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः ।

३४ अथ समानिका

पक्षिराजभासिता जेन सविभूषिता ।
अन्तगेन शोभिता सा समानिका मता ॥ ७० ॥

यथा–

फुल्लपङ्कजानन केलिशोभिकाननम् ।
वल्लवीमनोहर नौमि राधिकावरम् ॥ ७१ ॥

इति समानिका ३४.

३५ अथ सुवासकम्

द्विजमिह धारय भमनु च कारय ।
भवति सुवासक-मिति गुणलासक ॥ ७२ ॥

यथा–

विबुधतरङ्गिणि भुवि कृत[1]रिङ्गिणि ।
तरलतरङ्गिणि जय हरसङ्गिनि ॥ ७३ ॥

इति सुवासकम् ३५

३६ अथ करहञ्चि

नगणमिह धेहि तदनु समवेहि ।
इति किन[श]राचि भवति करहञ्चि ॥ ७४ ॥

यथा–

व्रजभुवि विलास युवतिकृत[रा]स ।
जय निहतदैत्य जघन[2]कृतशैत्य ॥ ७५ ॥

इति करहञ्चि ३६

३७ अथ कुमारललिता

जका'रयुतकर्णा मुनीन्द्रमितवर्णा ।
लघुद्वितयमध्या कुमारललिता स्यात् ॥ ७६ ॥

यथा–

व्रजाधिपकिशोर नवीनदधिचोरम् ।
कुमारललित [त] नमामि हृदि सत्तम् ॥ ७७ ॥

इति कुमारललिता ३७.

३८. अथ मधुमती

नगणयुगयुता तदनु ग-महिता ।
वदति मधुमती-महिरतिसुमतिः ॥ ७८ ॥

---

१ ख 'सुभ' । २. ■ नयन ।

यथा—

दितिसुतकदन शशधरवदन ।
विलसतु हृदि न तनुजितमदन ॥ ७९ ॥

इति मधुमती ३८

३९ अथ मदलेखा

आद्यन्ते कृतकर्णा शैलैः सम्मितवर्णा ।
मध्ये भेन विशेषा नागोक्ता मदलेखा ॥ ८० ॥

यथा—

गोपालं कृतरासं गो - गोपीजनवासम् ।
वन्दे कुन्दसुहासं वृन्दारण्यनिवासम् ॥ ८१ ॥

इति मदलेखा ३९.

४०, अथ कुसुमतति

द्विजमनुकलय नमनु विरचय ।
अहिरनुवदति कुसुमततिरिति ॥ ८२ ॥

यथा—

विषमशरकृत कुसुमततियुत ।
युवतिमनुसर मनसि-शयकर ॥ ८३ ॥

इति कुसुमतति ४०.

अत्र प्रस्तारगत्या सप्ताक्षरस्य अष्टाविंशत्यधिकं शतं १२८ भेदा भवन्ति, तेषु आद्यन्तसहितं भेदाष्टकं प्रोक्तं, शेषभेदा ऊहनीया सुबुद्धिभिर्ग्रन्थविस्तर-शङ्कया नागोक्ता इति ।*[1]

इति सप्ताक्षरम् ।

अथ अष्टाक्षरं वृत्तम्

तत्र—

४१. विद्युन्माला

सर्वे वर्णा दीर्घा यस्मिन्नष्टौ नागाधीशप्रोक्ता ।
अब्धावब्धौ विश्रामः स्याद् विद्युन्मालावृत्तं तत् स्यात् ॥ ८४ ॥

यथा—

कण्ठे राजद्विद्युन्मालः श्यामाम्भोदप्रख्यो बालः ।
गो-गोपीनां नित्यं पालः पायात् कंसादीनां कालः ॥ ८५ ॥

इति विद्युन्माला ४१

*१ शेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः ।

४२. अथ प्रमाणिका

शरैस्तथा च कुण्डलैः क्रमेण याऽतिशोभिता ।
गिरीन्द्रवर्णभासिता प्रमाणिकेति सा मता ॥ ८६ ॥

यथा–

विलोलमौलिशोभितं व्रजाङ्गनासु लोभितम् ।
नमामि नन्ददारकं तटस्थचीरहारकम् ॥ ८७ ॥

इति प्रमाणिका ४२.

४३. अथ मल्लिका

हारमेरुमत्र देहि तं पुनः क्रमादवेहि ।
धेहि योगवर्णमासु(शु) मल्लिका कुरुष्व वासु ॥ ८८ ॥

यथा–

वेणुरन्ध्रपूरकाय गोपिकासु मध्यगाय ।
वन्यहारमण्डिताय मे नमोऽस्तु केशवाय ॥ ८९ ॥

इति मल्लिका ४३.

इयमेव ग्रन्थान्तरे अष्टाक्षरप्रस्तारे समानिका इत्युच्यते । अस्माभिस्तु सप्ताक्षरप्रस्तारे समानिका प्रोक्तेति विशेष. ।

४४. अथ तुङ्गा

द्विजवरगणयुक्ता तदनु करतलोक्ता ।
पुनरपि गुरुसङ्गा फणिपतिकृततुङ्गा ॥ ९० ॥

यथा–

व्रजविहरणशीलः युवतिषु कृतलीलः ।
हृदि विलसतु विष्णुः दितिसुतकुलजिष्णुः ॥ ९१ ॥

इति तुङ्गा ४४.

४५. अथ कमलम्

नगण-सगणाचितं लघुगुरुविराजितम् ।
फणिनृपविकासितं कमलमिति भाषितम् ॥ ९२ ॥

यथा–

वरमुकुटभासुरः व्रजभुवि हतासुरः ।
व्रजनृपतिनन्दनः जयति हृदि[१] चन्दनः ॥ ९३ ॥

इति कमलम् ४५.

---

१. क मृत ।

४६ अथ माणवकक्रीडितकम्

भेन युतं तेन चितं दण्डकृतं हारवृतम् ।
वेदयति नागमतं माणवकक्रीडितकम् ॥ ९४ ॥

यथा–

वेणुधरं तापहरं[1] नन्दसुतं बालयुतम् ।
चन्द्रमुखं भक्तसुखं नौमि सदा शुद्धहृदा ॥ ९५ ॥

इति माणवकक्रीडितकम् ४६

४७ अथ चित्रपदा

भद्वितयाचितकर्णा शैलविकासितवर्णा ।
वारिनिधौ यतियुक्ता चित्रपदा फणिनोक्ता ॥ ९६ ॥

यथा–

वेणुविराजितहस्तं गोपकुमारकदास्तम् ।
वारिदसुन्दरदेहं नौमि कलाकुलगेहम् ॥ ९७ ॥

इति चित्रपदा ४७

४८ अथ अनुष्टुप्

सर्वत्र पञ्चमं यस्य लघु षष्ठं गुरु स्मृतम् ।
सप्तमं समपादे तु ह्रस्वं तत्स्यादनुष्टुभम् ॥ ९८ ॥

यथा–

कमलं ललितापाङ्गि कालालिकुलसङ्कुलम् ।
विलुलत् कुन्तलं सुभ्रु ! कलयत्यतुलं सुखम् ॥ ९९ ॥

इति अनुष्टुप् ४८

४९ अथ जलदम्

कुरु नगणयुगलं मनु च लयुगमिह ।
वरफणिपतिकृति[2] कलय जलदमिति ॥ १०० ॥

यथा–

नवजलदविमल शुभनयनकमल ।
कलय मम हृदय-मखिलजनसदय ॥ १०१ ॥

इति जलदम् ४९

अत्र च प्रस्तारगत्या अष्टाक्षरस्य षट्पञ्चाशदधिकं द्विशतं २५६ भेदास्तेषु आद्यन्तसहितं कियन्तस्समुदाहृता, शेषभेदा प्रस्तार्य समुदाहर्त्तव्या इति ।*
इत्यष्टाक्षरम् ।

---

१. 'तापहरं' क प्रतौ नास्ति । २ ख फणिपतिकृतमथ ।

*टिप्पणी—ग्रन्थान्तरेषु सम्प्राप्ता ये शेषभेदास्ते पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्या ।

अथ नवाक्षरम्

तत्र–

५०. रूपामाला

नेत्रोक्ता माः पादे दृश्यन्ते यस्मिन्नङ्का वर्णा भासन्ते ।
यच्छ्रुत्वा भूपाला मोदन्ते तद् रूपामालाख्यं प्रोक्तं ते ॥ १०२ ॥

यथा –

भव्याभिः केकाभिः सम्मिश्राः कुर्वन्त' सम्पूर्णाः सर्वाशाः ।
एते दन्तीन्द्राणां संकाशा मेघाः पूर्णास्तस्मात् सन्त्वाशाः ॥ १०३ ॥

इति रूपामाला ५०.

५१. महालक्ष्मिका

वैनतेयो यदा भासते साऽपि चेद् वह्निना भूष्यते ।
रन्ध्रवर्णा यदा सङ्गताः सा महालक्ष्मिका सम्मता ॥ १०४ ॥

यथा–

कानने भाति वंशीरुतं कामबाणावलीसंयुतम् ।
मानसं भावनादाहितं धीतय स्वं मनो याहि तम् ॥ १०५ ॥

इति महालक्ष्मिका ५१.

५२. अथ सारङ्गम्

नगणयकारप्रथितं लघुयुगगैः[१] सकथितम् ।
कविजनसञ्जातमदं कलयत सारङ्गमिदम् ॥ १०६ ॥

यथा–

सखि हरिरायाति यदा विरचितकम्पेन हृदा ।
न किमपि वक्तुं कलये कथमपि दृष्टे वलये ॥ १०७ ॥

यथा वा–

प्रणमत सर्वाघहरं दितिसुतगर्वापहरम् ।
सुरपतिसर्वाहरण विलसदखर्वाचरणम् ॥ १०८ ॥

इति सारङ्गम् ५२.

इदमेव सारङ्गिकेति पिङ्गले* नामान्तरेणोक्तम् ।

---

१. क. युगकैः ।

*टिप्पणी—१ प्राकृतपैंगलम्–परि० २, पद्य

५३ अथ पाइन्तम्

यस्यादिर्वै मगणकृतश्चान्तो हस्तेन विरचित ।
मध्ये भो यस्य विलसित तत् पाइन्त फणिभणितम् ।। १०६ ।।

यथा–

गोपालाना रचितसुख सम्पूर्णेन्दुप्रतिममुखम् ।
कालिन्दीकेलिषु ललित वन्दे गोपीजनवलितम् ।। ११० ।।

इति पाइन्तम् ५३ पाइन्ता इति पिङ्गले* ।

५४ अथ कमलम्

नगणयुगलमहित तदनु करविरचितम् ।
फणिकृतमतिविमल प्रभवति किल कमलम् ।। १११ ।।

यथा–

सरलनयनकमल रुचिरजलदविमलम् ।
शुभदचरणकमल कलय हरिमपमलम् ।। ११२ ।।

इति कमलम् ५४.

५५ अथ बिम्बम्

द्विजवरनरेन्द्रकर्णं प्रविरचितनन्दवर्णं ।
फणिनृपतिनागवित्त कविसुखदबिम्बवृत्तम् ।। ११३ ।।

यथा–

ललितनलिनालसाक्ष शठललितवाचिदक्ष ।
कलयसि सुरागिवक्ष त्वमपि मयि जातभिक्ष ।। ११४ ।।

इति बिम्बम् ५५.

५६ अथ तोमरम

सगण मुदा त्वमवेहि जगणद्वय च विधेहि ।
नवसङ्ख्या वर्णविधारि कुरु तोमर सुखकारि ।। ११५ ।।

यथा–

कमलेषु 'सलुलितालि वकुलीकृत] वरमालि ।
अवलोकये वनमालि वपुरेति'¹ किं वनमालि ।। ११६ ।।

इति तोमरम् ५६

१. ' ' चिह्नमध्यगः पाठो नास्ति ख प्रतौ ।

* टिप्पणी—प्राकृतपैङ्गलम्-परि. २ पद्य ८० ।

यथा–

माधवमासि हिमांशुकर चिन्तय चेतसि तापकरम् ।
माधवमानय जातरस चित्तमिद मम तस्य वशम् ॥ १३३ ॥

इति सारवती ६४

६५ अथ सुषमा

आदौ ज(त)गण पश्चाद् यगण यस्यामनु पाद स्याद् भगण ।
हार कथितश्चान्ते महिता सेय सुषमा नागप्रथिता¹ ॥ १३४ ॥

यथा–

गोपीजनचित्ते सवलित वृन्दावनकुञ्जे सललितम् ।
वन्दे यमुनातीरे तरल कसादिकदैत्याना गरलम् ॥ १३५ ॥

इति सुषमा ६५

६६ अथ अमृतगति

नगण-नरेन्द्र-नविहिता तदनु च चामरमहिता ।
अमृतगति कविकथिता फणिभणितोदधिमथिता ॥ १३६ ॥

यथा–

सखि मनसो मम हरण हरिमुरलीकृत²करणम् ।
भव मम जीवितशरण किमु कलये निजमरणम् ॥ १३७ ॥

इति अमृतगति ६६.

६७ अथ मत्ता

आदौ कुर्यात् मगणसुयुक्त ज्ञेय पश्चाद् भगणसुवित्तम् ।
अन्ते हस्त कुरु युतहार मत्तावृत्त कविजनसारम् ॥ १३८ ॥

यथा–

वृ दारण्ये कुसुमितकुञ्जे गोपीवृन्दे सह सुखपुञ्जे ।
रासासक्त जलधरनील घोर वन्दे भुवि कृतलीलम् ॥ १३९ ॥

इति मत्ता ६७

६८ अथ त्वरितगति

नगणकृता जगणधृता नगणहिता गुरुसहिता ।
इति हृ फणिभंणति यदा त्वरितगतिर्भवति सदा ॥ १४० ॥

---

१ ख प्रहिता । २ ख धृत ।

यथा–

सरसमतिर्यदुनृपति परमततिस्त्वरितगति ।
क्षपितमद कलितगद सकलतरिर्जयति हरि ॥ १४१ ॥

यथा वा–

क्षितिविजिति स्थितिविहिति-व्रतरतय परगतय ।
उरु रुरुधुर्गुरु दुधुवुर्युधि कुरव स्वमरिकुलम ॥ १४२ ॥

इति दण्डिनी*[१]

इति त्वरितगति ६८

६९ अथ मनोरमम्

नगणपक्षिराजराजित कुरु मनोरम समाजितम् ।
जगणकुण्डलप्रकाशित फणिप-पिङ्गलेन भावितम् ॥ १४३ ॥

यथा–

कलय भाय नन्दनन्दन सकललोकचित्तचन्दनम् ।
दितिज-देवराजवन्दन कठिनपूतनानिकन्दनम् ॥ १४४ ॥

इति मनोरमम ६९

स्त्रीलिङ्गमिदमन्यत्र*[२] । अत्रापि न तेन काचित् क्षति ।

७० अथ ललितगति

दहननमिह कलयत तदनु शरमपि गुरुत ।
वदति फणिनृपतिरिति पठत ललितगतिमिति ॥ १४५ ॥

यथा–

ललितललिततरगति हरिरिह समुपसरति ।
स्रव मविघमयि सुदति ! सफलय निजजनुरति ॥ १४६ ॥

इति ललितगति ७०.

अत्र प्रस्तारगतया दशाक्षरस्य चतुर्विंशत्यधिक सहस्र १०२४ भेदा भवन्ति तेषु कियन्तो भेदा लक्षिता, शेषभेदा [स्तु सुधीभिरूह्या ।][१] ।*[३]

इति दशाक्षरं वृत्तम् ।

---

१ ख प्रतायं समभीधा ।

*टिप्पणी—१ काव्यादर्श तृतीय परिच्छेद पद्य ८५

*टिप्पणी—२ छन्दोमंजरी द्वि० स्त० का० ३४

*टिप्पणी—३ प्रस्तारेपूरलभ्या शेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्या ।

५७ अथ भुजगशिशुसृता

नगणयुगलसदिष्ट तदनु मगणनिर्दिष्टम् ।
भुजगशिशुसृतावृत्त कलयत फणिना वित्तम् ॥ ११७ ॥

यथा– अनुपमयमुनातीरे नवपवस(कमल)लसन्नीरे ।
प्रणमत कदलीकुञ्जे हरिमिह सुदृशा पुञ्जे ॥ ११८ ॥

इति भुजगशिशुसृता ५७

सृता इत्येव शम्भुप्रभृतिषु पाठ । भृता इति आधुनिका पठन्ति*[1]

५८ अथ मणिमध्यम

आदिभकार देहि तत सोऽपि गणान्ते[1] नागमत ।
मध्यमकारो भाति यदा स्यान्मणिमध्य नाम तदा ॥ ११९ ॥

यथा– वल्लवनारीमानहर पूरितवंशीरावपरः ।
गोकुलनेता गोपुचर पातु हरिस्त्वा गोपवर ॥ १२० ॥

इति मणिमध्यम ५८

५९ अथ भुजङ्गसङ्गता

सगण विधेहि सङ्गत जगण ततोऽपि सयुतम् ।
रगण च नागसम्मता कथिता भुजङ्गसङ्गता ॥ १२१ ॥

यथा– मम दह्यते मनो भृश परिभावयाङ्क कृताम् ।
कथयामि य तमानये धृतिमालि येन धारये ॥ १२२ ॥

इति भुजङ्गसङ्गता ५९

६० अथ सुललितम्

दहन-नमिह वितनु चरणमनु च सुतनु ।
फणिपतिनृपतिकृति कलय सुललितमिति ॥ १२३ ॥

यथा– कलितललितमुकुट निहतदितिजशकट ।
मम सुखमनुकलय करयुगधृतवलय ॥ १२४ ॥

इति सुललितम् ६०.

अत्र प्रस्तारगत्या नवाक्षरस्य द्वादशाधिकपञ्चशत भेदेषु ५१२ आद्यन्त-महिता एकादशभेदा प्रदर्शिता, शेषभेदा उहनीया ॥ ६ ॥*[2]

इति नवाक्षरं वृत्तम् ।

---

१. ख गणोन्ते ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी द्वि० स्त० कारिका २४

*टिप्पणी—२ अवशिष्टा प्राप्तभेदा पञ्चमपरिशिष्टे पर्यालोच्या ।

अथ दशाक्षरम्

तत्र प्रथमम् —

६१ गोपाल

वह्लेस्सस्याका मा पादे यस्मिन्नन्ते हारश्चैको युक्तो यस्मिन् ।
नागाधीशप्रोक्त तद् गोपाल पक्त्यर्णैर्युक्त मुह्यद्भूपालम् ॥ १२५ ॥

यथा–

गो-गोपालाना वृन्दे मञ्चारी भूमौ दृप्यद्दैत्याना सहारी ।
यद्वेणुक्वाणैर्मोह सप्रापु गोप्य सोऽव्यान् मा य देवा नापु[१] ॥ १२६ ॥

इति गोपाल. ६१

६२. अथ सयुतम्

सगण विधाय मनोहर जगणद्वय च ततोऽपरम् ।
गुरुसङ्गत फणिजल्पित सखि ! सयुत परिकल्पितम् ॥ १२७ ॥

यथा–

सखि गोपवेशविहारिण शिखिपिच्छचूडविधारिणम् ।
मधुसुन्दराधरशालिन ननु कामये वनमालिनम् ॥ १२८ ॥

यथा वा–

व्रजनायिका हृतकालिय कलयन्ति या मनसालि यम् ।
सदय मया सह शालिन कुरु तासु त वनमालिनम् ॥ १२९ ॥

इति सयुतम् ६२

सयुता इति स्त्रीलिङ्ग पिङ्गले ।*

६३ अथ चम्पकमाला

आदिभकारो यत्र धृत स्यात् प्रेयसि पश्चात् मोपि मत स्यात् ।
अन्तमकारो गेन युत स्यात् चम्पकमालावृत्तमिद स्यात् ॥ १३० ॥

यथा–

सवमह जाने हृदय ते कामिनि ! कि कोपेन धृत ते ।
पङ्कजधानैर्लोचनपानै कामितमाप्त चेतसि ता ते ॥ १३१ ॥

इति चम्पकमाला ६३

रुक्मवतीति अन्यत्र । रूपवतीति च क्वचित् नामान्तरेण इयमेव ज्ञेया ।

६४ अथ सारवती

भत्रितयाचित सर्वपदा पण्डितमण्डलिजातमदा ।
गेन युता किल सारवती नागमता गुणभारवती ॥ १३२ ॥

---

१. स पर्ववानापु ।

*टिप्पणी — प्राकृतपैङ्गलम्, परि० २, पद्य ६० ।

अथ एकादशाक्षरम्

तत्र–

७१. मालती

यस्या पादे हारा रुद्रं सख्याता,
सर्वे वर्णास्तद्वद् यस्या विख्याता ।
सर्वेषा नागाना भूपेनोक्ता सा,
मालत्युक्तेय लोकाना पूर्णाशा ॥ १४७ ॥

यथा–

सिन्धूना पृष्ठा[1] यत्पृष्ठे लीयन्ते,
दैत्यात् सर्वे वेदा येनादीयन्ते ।
यत्पुच्छोच्छालैर्देवेन्द्रा घूर्णन्ते,
धर्म सोऽव्यान्मायामीनस्तूर्णं ते ॥ १४८ ॥

इति मालती ७१

७२ अथ बन्धु*

भ्त्रितय-प्रविकाशितवर्णं,
शेषविभूषितभासुरकर्णं ।
पण्डितचेतसि राजति बन्धु,
पिङ्गलनागकृतो गुणसिन्धु ॥ १४९ ॥

यथा–

श्यामललोलगजालिसदृक्ष-
श्चण्डसमीरणकम्पितवृक्ष ।
वारिधरस्तरुभञ्जितनीड,
भूतविसृष्टिकृतावनिपीड ॥ १५० ॥

इति बन्धु ७२

इदमेवान्यत्र दोधकमिति नामान्तरेणोक्त, पिङ्गले* तु उट्टवणिकान्तरकृत-लक्षणान्तरमादाय रूपभेद इति न कश्चिद्विशेष फलत इति समञ्जसम् ।

७३ अथ सुमुखी

कुरु चरणे प्रथम नगण,
तदनु च पक्षमित जगणम् ।

---

१. ख प्रेष्ठा ।

*टिप्पणी—१ प्राकृतपैंगलम् परि० २, पद्य १००

लघुमथ ग च जनः सुमुखी,
भवति[1] यतः किल सा सुमुखी ॥ १५१ ॥

यथा–

तरुणविधूपमितं वदन,
मम हृदये कुरुते मदनम् ।
इति कथयश्चरणौ नमते[2],
हरिरनुधेहि दृश वनिते ॥ १५२ ॥

इति सुमुखी ७३.

७४. अथ शालिनी

कृत्वा पादे नूपुरौ हारयुग्म,
धृत्वा वीणामङ्कितां चामरेण ।
पुष्पप्रोत चापि[3] कर्णं दधाना,
नागप्रोक्ता शालिनीयं विभाति ॥ १५३ ॥

यथा–

चन्द्रार्कौ ते राम[4]कीर्तिप्रतापौ,
चित्र शत्रुक्षोणिपालापकीर्तिम् ।
भासागाढध्वान्तमध्वसयन्तौ,
त्रैलोक्यस्य[5] श्वेतता सन्दधाते ॥ १५४ ॥

यतिरप्यत्र वेदलोकैर्ज्ञेया ।

इति शालिनी ७४.

७५ अथ वातोर्मी

पूर्वं पादे मगणेन प्रयुक्ता,
या वै पश्चाद् भगणेनाथ युक्ता ।
वातोर्मीय तगणान्तस्यकर्णा,
वेदैर्लोकैः स यती रुद्रवर्णा ॥ १५५ ॥

यथा–

मायामीनोऽवतु लोक समस्त,
लीलागत्या क्षुभिताम्भोधिमध्य ।
धात्रे दास्यन्नयन वेदरूप,
य कल्पान्धौ जगृहे तिर्यगाख्याम् ॥ १५६ ॥

इति वातोर्मी ७५.

---

१. ख. भवत यत । २. ख भजते । ३. ख. चापि । ४. ख. मोम । ५. ख. विश्वस्यापि ।

७६. अथानयोरुपजातिः

चेद् वातोर्मीचरणानां यदि स्यात्,
पाठः सार्द्धं शालिनीवृत्तपादैः ।
इन्द्रप्रोक्ताः सम्भवन्तीह भेदा-
स्तेषां नामान्युपजातीति विद्धि ॥ १५७ ॥

यथा–

गोपं वन्दे गोपिकाचित्तचौरं,
हास्यज्योत्स्नालुब्धहृल्यच्चकोरम् ।
शब्दायन्तं[1] धेनुसघे धुनानं,
वक्त्रं वंशीमधरे सन्दधानम् ॥ १५८ ॥

इति शालिनी-वातोर्म्युपजातिः ७६.

अनयोरेकत्र पञ्चमाक्षरगुरुत्वादपरत्र च पञ्चमलघुत्वात् अल्पो भेद इति चतुर्दशोपजातिभेदाः, पदेन पदाभ्यां पदैश्च परस्परं योजनात् प्रस्तारचनया जायन्त इत्युपदेशः ।

७७. अथ दमनकम्

दहनमितनगणरचितं,
तदनु कुरु लघुगुरुयुतम् ।
फणिवरनरपतिमथित,
दमनकमिदमिति कथितम् ॥ १५९ ॥

---

१. ख. गवर्न्तं ।

*टिप्पणी—१ छन्दसोऽस्य चतुर्दशभेदानां नामलक्षणोदाहृतयो ग्रन्थकृताप्यनुल्लिखिता, नैव चान्यत्र ग्रन्थेषु भवन्ति समुपलब्धाः,अतश्चात्र प्रस्तारीत्या चतुर्दशभेदानां लक्षणान्यधो निरूप्यन्ते—

१.	शा.	वा.	वा.	वा.	८.	वा.	वा.	वा.	शा,
२.	वा.	शा.	वा.	वा.	९.	शा.	वा.	वा.	शा.
३.	शा.	शा.	वा.	वा.	१०.	वा.	शा.	वा	शा.
४.	वा.	वा.	शा.	वा.	११.	वा.	शा.	वा.	वा.
५.	शा.	वा.	शा.	वा.	१२.	वा.	वा.	शा.	शा.
६.	शा.	वा.	वा.	शा.	१३.	वा.	वा.	शा.	वा.
७.	शा.	शा.	शा.	वा.	१४.	वा.	वा.	वा.	शा.

अत्र 'शा' 'वा' इति संकेतद्वयेन शालिनी-वातोर्मी क्रमशो ज्ञेये ।

यथा –

हृदि कलयत मधुमथन,
गिरिकृतजलनिधिमथनम् ।
रचितसलिलनिधिशयन,
तरलकमलनिभनयनम् ॥ १६० ॥

इति दमनकम् ७७.

७८. अथ चण्डिका

प्रादिशेषशोभिहारभूषितौ,
बिभ्रती पयोधरावदूषितौ ।
स्वर्णशङ्खकुण्डलावभासिता,
चण्डिकाऽहिभूषणस्य सम्मता ॥ १६१ ॥

यथा–

व्यालकालमालिकाविकाशित,
भालभासितानलप्रकाशितम् ।
शैलराजकन्यकासभाजित,
नौमि चारुचन्द्रिकाविराजितम् ॥ १६२ ॥

इति चण्डिका ।

सेनिका इति अन्यत्र । क्वचिच्च श्रेणीति[१] रगण-जगण-रगण-लघु-गुरुभिर्नामान्तर, फलतस्तु न कश्चिद्विशेष । किन्च इयमेव चण्डिका यदि लघुगुरुक्रमेण क्रियते तदा सेनिका इत्यस्मन्मतम् । अतएव भूषणकारोऽपि*[१] हारशङ्खविपरीताभ्या रूपनूपुराभ्या लघुगुरुभ्या क्रमशो मण्डिता चण्डिकामेव सेनिकामुदाजहार । तन्मतमवलम्ब्य वयमपि सलक्षणमुदाहराम ।

७९. अथ सेनिका

हारेण कुण्डलेन च क्रमेण,
महेश-वर्णसख्यया भ्रमेण ।
समस्तपादपूरण विधेहि,
फणिप्रयुक्त-सेनिकामवेहि ॥ १६३ ॥

---

१ ख रेणीति ।

*टिप्पणी—हारशङ्खकुण्डलेन मण्डिता या पयोधरेण वीणयाङ्किता ।
रूपनूपुरेण चापि दुर्लभा सेनिका भुजङ्गराजवल्लभा ॥ २१२ ॥
[वाणीभूषण द्वि० प०]

यथा–

सरोजसस्तरादि सविधेहि,
पिकालिवक्त्रमुद्रण विधेहि ।
मुरारिवश्यजीवमालि देहि,
मृतामथाऽयथा च मामवेहि ॥ १६४ ॥

इति सैनिका ७६.

८०. अथ इन्द्रवज्रा

हारद्वय मेरुयुत दधाना,
पादे तथा नूपुरयुग्मक च ।
हस्त सुपुष्प वलयद्वय च,
सधारयन्ती जयतीन्द्रवज्रा ॥ १६५ ॥

यथा–

आलोक्य वेदस्य सुरारिभीति,
यो दैत्यदाव दय(दद)दादिदेव[1] ।
पाठीनदेह[2] कठिन बभार,
मीन[3] स नो मङ्गलमातनोतु ॥ १६६ ॥

इति इन्द्रवज्रा ८०

८१ अथ उपेन्द्रवज्रा

पयोधर कुण्डलयुग्मयुक्त,
विधारयन्ती वरमेरुयुग्मम् ।
सहारपुष्प दधती सुकर्ण-
मुपे द्रवज्रा रभमेन भाति ॥ १६७ ॥

यथा–

पराम्बुधावामिषवत्सुधाशु[4],
विलोकितु पूर्वदरीगतस्य ।
महेन्द्रसिहस्य विभाति जिह्वा,
सम पुर सामिसरागुविम्बम्[5] ॥ १६८ ॥

इति उपेन्द्रवज्रा ८२.

---

१. ख ददादिदेव । २ ख पाठानदेह । ३ ख विष्णु । ४ धाराशे । ५ ख सामिमुधांशुबिम्बम् ।

८२. प्रधानयोरुपजातयः

उपेन्द्रवज्राचरणेन युक्तं,
स्यादिन्द्रवज्राचरणं यदैव ।
नागप्रयुक्ताश्च तदैव भेदाः,
महेन्द्रसंस्या उपजातयः स्युः ॥ १६९ ॥

यथा–

मुखन्तवैणाक्षि ! कठोरमानोः,
सोढुं कर नालमिति ब्रुवाणः ।
पटेन पीतेन वनेषु राधां[1],
चकार कृष्णः परिधूतबाधाम् ॥ १७० ॥

इति उपजातिः ८२.

भेदाश्चतुर्दशैतस्याः क्रमतस्तु प्रदर्शिताः ।
प्रस्तारं स्वनिबन्धेषु पिथाऽतिस्फुटस्ततः ॥ १७१ ॥
विलोकनीया भेदास्ते नास्माभिस्समुदाहृताः ।
कथितत्वाद् विशेषेण ग्रन्थविस्तरशङ्कया*[1] ॥ १७२ ॥

---

१. ख. राधा ।

*टिप्पणी—१. ग्रन्थकृता वृत्तस्यास्य भेदानां लक्षणोदाहरणार्थं स्वपितृश्रीलक्ष्मीनाथभट्टकृतोदाहरणमञ्जरी द्रष्टव्येति समूचितम्, किन्तु उदाहरणमञ्जरीपुस्तकस्याप्यनुपलब्धत्वादस्माभिः 'प्राकृतपैङ्गल' २(१२२) नामलक्षणानि, छन्दःसूत्र- (निर्णयसागरसंस्करण) स्य अनन्तशर्मकृतटिप्पणीत उदाहरणानि समुद्धृतान्यत्र प्रदर्शितानि—

१. कीर्तिः [उ. इ. इ. इ.]
२. वाणी [इ. उ. इ. इ.]
३. माला [उ. उ. इ. इ.]
४. शाला [इ. इ. उ. इ.]
५. हंसी [उ. इ. उ. इ.]
६. माया [उ. उ. उ. इ.]
७. जाया [इ. उ. उ. उ.]
८. बाला [इ. इ. इ. उ.]
९. आर्द्रा [उ. इ. [illegible] उ.]
१० भद्रा [इ. उ. [illegible] उ.]
११. प्रेमा [उ. उ. इ. उ.]
१२. रामा [इ. इ. उ. उ.]
१३. ऋद्धिः [उ. इ. उ. उ.]
१४. बुद्धि [इ. उ. उ. उ.]

१. कीर्तिः –
(उ.) स मानसीं मेरुसखः पितॄणां,
(इ.) कन्यां कुलस्य स्थितये स्थितिज्ञः ।

(इ) मेना मुनीनामपि माननीया-
(इ) मात्मानुरूपां विधिनोपयेमे ॥
[कुमारसम्भव १।१८]

२ वाणी—
(इ.) यः पूरयन् कीचकरन्ध्रभागान्,
(उ) दरीमुखोत्थेन समीरणेन ।
(इ.) उद्गास्यतामिच्छति किन्नराणां,
(इ.) तानप्रदायित्वमिवोपगन्तुम् ॥
[कुमारसम्भव १।८]

३. माला—
(उ.) कपोलकण्डूः करिभिर्विनेतुं,
(उ) विघट्टितानां सरलद्रुमाणाम् ।
(इ.) यत्र स्नुतक्षीरतया प्रसूतः,
(इ) सानूनि गन्धः सुरभीकरोति ॥
[कुमारसम्भव १।९]

४. शाला—
(इ.) उद्वेजयत्यङ्गुलिपार्ष्णिभागान्,
(इ.) मार्गे शिलीभूतहिमेऽपि यत्र ।
(उ.) न दुर्वहश्रोणिपयोधरार्ता
(इ.) भिन्दन्ति मन्दां गतिमश्वमुख्यः ॥
[कुमारसम्भव १।११]

५. हंसी [विपरीताख्यानिकी]
(उ) पदं तुषारस्रुतिधौतरक्तं,
(इ) यस्मिन्नदृष्ट्वापि हतद्विपानाम् ।
(उ) विदन्ति मार्गं नखरन्ध्रमुक्तै-
(इ) र्मुक्ताफलैः केसरिणां किराताः ॥
[कुमारसम्भव १।६]

६. माया—
(उ) प्रसीद विश्राम्यतु वीर वज्रं,
(उ) शरैर्मदीयैः कतमः सुरारिः ।
(उ) बिभेतु मोघीकृतबाहुवीर्यः,
(इ) स्त्रीभ्योऽपि कोपस्फुरिताधराभ्यः ॥
[कुमारसम्भव ३।६]

७ जाया—
(इ) कालक्रमेणाथ तयोः प्रवृत्ते,
(उ.) स्वरूपयोग्ये सुरतप्रसङ्गे ।

(उ) मनोरमं यौवनमुद्वहन्त्या
(उ) गर्भोऽभवद् भूधरराजपत्न्या ॥

[कुमारसम्भव १।१९]

८ बाला—

(इ) यं सर्वशैला परिकल्प्य वत्सं,
(इ) मेरौ स्थिते दोग्धरि दोहदक्षे ।
(इ) भास्वन्ति रत्नानि महौषधीश्च,
(उ) पृथूपदिष्टां दुदुहुर्धरित्रीम् ॥

[कुमारसम्भव १।२]

९ आर्द्रा—

(उ) दिवाकराद् रक्षति यो गुहासु,
(इ) लीनं दिवाभीतमिवान्धकारम् ।
(इ) क्षुद्रेऽपि नूनं शरणं प्रपन्ने,
(उ) ममत्वमुच्चैः शिरसां सतीव ॥

[कुमारसम्भव १।१२]

१० भद्रा (आख्यानिकी)—

(इ) अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा
(उ) हिमालयो नाम नगाधिराजः ।
(इ) पूर्वापरौ तोयनिधी वगाह्य,
(उ) स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः ॥

[कुमारसम्भव १।१]

११ प्रेमा—

(उ) अनन्तरत्नप्रभवस्य यस्य,
(उ) हिमं न सौभाग्यविलोपि जातम् ।
(इ) एको हि दोषो गुणसंनिपाते,
(उ) निमज्जतीन्दोः किरणेष्विवाङ्कः ॥

[कुमारसम्भव १।३]

१२ रामा—

(इ.) यश्चाप्सरोविभ्रममण्डनानां
(इ) सम्पादयित्रीं शिखरैर्बिभर्ति ।
(उ) बलाहकच्छेदविभक्तरागा
(उ) मकालसन्ध्यामिव धातुमत्ताम् ॥

[कुमारसम्भव १।४]

८३. अथ रथोद्धता

स्वर्णशङ्खवलयं रसाहितं,
सुन्दरं करतलेन सङ्गतम् ।
पुष्पहारमथ राविनूपुरं,
बिभ्रती विजयते रथोद्धता ॥ १७३ ॥

यथा–

यामिनीयधिजगाम धामत.,
कामिनीकुलमनन्तसीरिणो[:] ।
नामनी कथयदाशु संगलत्-
सामिनीवि सखि नन्दनन्दनम् ॥ १७४ ॥

यथा वा–

गोपिके तव सुतोऽपि केवलो,
मायिनामयि[1] ममापि नायक. ।
[2]नीतमेव नवनीतमेधय-
त्येष यः कपटवेषनन्दनः[2] ॥ १७५ ॥

इति रथोद्धता ८३.

८४. अथ स्वागता

हारभूपितकुचाऽतनुवाण-
भ्राजिता कुसुमकङ्कणहस्ता ।

१. क मायिनामय । २. ख. '–'चोरयत्यनुदिन गृहे गृहे, न तथैव नवनीतमेयत् ।

१३. ऋद्धि —

(उ.) प्रसन्नदिक्पांसुविविक्तवात,
(इ.) शङ्खस्वनानन्तरपुष्पवृष्टिः ।
(उ) शरीरिणां स्थावरजङ्गमाना,
(उ) सुखाय तज्जन्मदिन बभूव ॥

[कुमारसम्भव १।२३]

१४, बुद्धिः—

(इ.) यत्रांशुकाक्षेपविलज्जितानां,
(उ.) यदृच्छया किंपुरुषाङ्गनानाम् ।
(उ) दरीगृहद्वारविलम्बिबिम्बा-
(उ.) स्तिरस्करिण्यो जलदा भवन्ति ॥

[कुमारसम्भव १।१४]

नूपुरेण च विराजितपादा,
स्वागता भवति चेत् किमिहाऽन्यत् ॥ १७६ ॥

यथा

वल्लवीनयनपङ्कजभानु,
दानवेन्द्रकुलदावकृशानु ।
राधिकावदनचन्द्रचकोर,
सकटादवतु नन्दकिशोर ॥ १७७ ॥

इति स्वागता*[1] ८४

८५ अथ भ्रमरविलसिता

पूर्वं म स्यात् तदनु च भगण,
पश्चाद् यस्मिन् प्रकटितनगण ।
अन्ते लो ग कविजनसहिता,
सेय प्रोक्ता भ्रमरविलसिता ॥ १७८ ॥

यथा–

स्वान्ते चिन्ता परिहर वनिते,
नन्दादेशात् सपदि सुललिते ।
आगन्तास्मिन हरिरिह न चिर,
कुञ्जे शय्या सफलय सुचिरम् ॥ १७९ ॥

इति भ्रमरविलसिता ८५

---

*टिप्पणी—१ रथोद्धता–स्वागतोपजातिवृत्तास्यास्य ग्रन्थेऽस्मिँल्लक्षणोदाहरणान्यनुल्लिखितानि, नैव च ग्रन्थान्तरेषु समुपलब्धानि, अतोऽत्र चतुर्दशभेदाना प्रस्तारगत्या निम्न लक्षणा येव समुद्धियन्तेऽस्माभि —

१	र	स्वा	स्वा	स्वा	८	स्वा	स्वा	स्वा	र
२	स्वा	र	स्वा	स्वा	९	र	स्वा	स्वा	र
३	र	र	स्वा	स्वा	१०	स्वा	र	स्वा	र
४	स्वा	स्वा	र	स्वा	११	र	र	स्वा	र.
५	र	स्वा	र	स्वा	१२	स्वा	स्वा	र	र
६	र	र	र	स्वा	१३	र	स्वा	र	र
७	स्वा	र	र	र	१४	स्वा	र	र.	र

अत्र 'र' कारेण रथोद्धता 'स्वा'शब्देन स्वागतेति च सबोध्या ।

८६ अथ अनुकूला

नूपुरमुच्चैः कलितसुराव,
　　पुष्पसुहारं सरससुवक्रम् ।
रूपविराजत्सवलयहस्तं,
　　स्यादनुकूला यदि किमिहाऽन्यत् ॥ १८० ॥

यथा–

गोकुलनारीवलयविहारी,
　　गोधनचारी दितिसुतहारी ।
नन्दकुमारस्तनुजितमारः,
　　पातु सहारः सुरकुलसारः ॥ १८१ ॥

इति अनुकूला ८६.

८७. अथ मोटनकम्

वन्दे वलयद्वयसवलितं,
　　हस्तद्वितय कलयन्तममुम् ।
गन्धोसमपुष्पसुहारधर,
　　नागस्य सदा प्रियमोटनकम् ॥ १८२ ॥

यथा–

कृष्णं कलये वनितावलये,
　　नृत्ये सरसे ललिते सलये ।
दिव्यैः कुसुमैः कलित मुकुटे,
　　स्तुत्य मुनिभिर्वलितं लकुटे ॥ १८३ ॥

इति मोटनकम् ८७.

८८. अथ सुकेशी

बिभ्राणा वलयौ सुवर्णचित्रौ,
　　संराजत्करसङ्गशोभमानौ ।
हाराभ्यां ललितं कुच दधाना-
　　मायन्तं कुरुते न कं सुकेशी ॥ १८४ ॥

यथा–

गोपालं कलये विलासिनीनां,
　　मध्यस्थं कलचारुहासिनीनाम् ।

कुर्वन्त वदनेन वशराव,
यस्तासा प्रकटीचकार भासः[1] ॥ १८५ ॥

इति सुकेशो ८८

८८. अथ सुभद्रिका

अतनुरचितबाणपञ्चकं,
कुसुमकलितहारसङ्गतम् ।
कुचमनुदधती च नूपुरं,
मुदमिह तनुते सुभद्रिका ॥ १८६ ॥

यथा–

हृदि कलयतु कोपि बालकः,
सुललितमुखलम्बितालकः ।
अलिविलसितपङ्कजश्रिय,
परिकलयति य स मत्प्रियम् ॥ १८७ ॥

इति सुभद्रिका ८६.

६०. अथ बकुलम्

द्विजवरगणयुगलमिति,
तदनु नगणमपि भवति ।
सुकविफणिपतिविरचित-
मनुकलयत बकुलमिति ॥ १८८ ॥

यथा–

ग्रथय कमलनिचयमिह,
बकुलशयनमनुरचय ।
कुरु मणिहततिमिरगृह-
मिह हरिरुपसरति सखि ! ॥ १८६ ॥

इति बकुलम् ६०.

अत्रापि प्रस्तारगत्या रुद्रसख्याक्षरस्य अष्टचत्वारिंशदधिक सहस्रद्वय २०४८ भेदा भवन्ति। तत्र कियन्तोऽपि भेदा प्रोक्ताः,शेषभेदा प्रस्तार्य सूचनीया इति[2] ।*[1]

इत्येकादशाक्षरम् ।

---

१. ख भावम् । २. पंक्तिद्वय नास्ति क प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ ग्रन्थान्तरेषु समुपलभ्यमाना. शेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे पर्यवेक्षणीया ।

अथ द्वादशाक्षरम्

तत्र–

९१. आपीडः

यस्मिन् वेदानां संख्याका मा दृश्यन्ते,
पादे वर्णाः सूर्यैः सम्प्रोक्ता जायन्ते ।
आपीडाख्यं दिव्यं वृत्तं धेहि स्वान्ते,
सम्प्रोक्तं नागानामीशेनैतत्कान्ते ! ॥ १९० ॥

यथा–

कूर्मो नित्यं मामव्यादत्यन्तं पीनः,
यत्पृष्ठेऽद्रिः कस्मिंश्चित्कोणे संलीनः ।
यः सर्वेषां देवानां कार्यार्थं जात-
स्त्रैलोक्ये नानारत्नादाता विख्यातः ॥ १९१ ॥

इति आपीडः ९१.

अयमेवान्यत्र विद्याधरः*[1] ।

९२. अथ भुजङ्गप्रयातम्

लघुः पूर्वमन्ते भवेद् यत्र कर्णः,
रवेः संख्यया यत्र चाऽऽभाति वर्णः ।
तकारत्रयं यत्र मध्ये सुयुक्तं,
भुजङ्गप्रयातं तदा भाति वृत्तम् ॥ १९२ ॥

यथा–

चलत्कुन्तलं केलिलोलाकुलाक्षं,
सदा वल्लवीलालितं नन्दबालम् ।
कपोलोल्लसत्कुण्डलालङ्कृताऽऽस्यं,
विलोलामलस्रग्ललामं नमामि ॥ १९३ ॥

इति भुजङ्गप्रयातम् ९२.

९३. अथ लक्ष्मीधरम्

भानुसंख्यामितैरक्षरैर्भासितं,
वेदसंख्यैस्तथा पक्षिभिः शोभितम् ।
सर्वनागाधिराजेन संभाषितं,
तद्धि लक्ष्मीधरं मानसे लोभितम् ॥ १९४ ॥

---

*टिप्पणी—१ प्राकृतपैंगलम्, परि० २, पद्य ११२, एवं वाणीभूषणम् द्वि० प० २२६

यथा–

वेणुनादेन संमोहयन् गोकुले,
　　वल्लवीमानसं रासकेलीं व्यधात् ।
यः सदा योगिभिर्वन्दितस्तं तदा[1],
　　गोपिकानायकं गोकुलेन्द्रं भजे ॥ १६५ ॥

इति लक्ष्मीधरम् ९३.

इदमेवान्यत्र स्रग्विणी* इति नामान्तरं लभते ।

९४. अथ तोटकम्

यदि वै लघुयुग्मगुरुक्रमतः
　　रविसम्मितवर्णं इह प्रमितः ।
अहिभूपतिना फणिना भणितं,
　　सखि तोटकवृत्तमिदं गणितम् ॥ १६६ ॥

यथा–

अलिमालितमालतिभिर्ललितं,
　　ललितादिनितम्बवतीकलितम् ।
कलितापहरं　कलवेणुकलं,
　　कलये नलिनामलपादतलम् ॥ १६७ ॥

इति तोटकम् ९४.

९५. अथ सारङ्गकम्

जायेत हारद्वयेनाथ शङ्खेन,
　　यद्वै क्रमात् सूर्यसंख्यातवर्णेन ।
सारङ्गकं तत्तु सारङ्गनेत्रेण,
　　संभाषितं सर्वनागाधिराजेन ॥ १६८ ॥

यथा–

श्रीनन्दसूनो कथं धृष्ट गोपाल,
　　गोपीषु धाष्ट्यं विधत्से महामाल ।
आस्थाय बालैः सहाय सुखस्थस्य,
　　भीतिर्न ते कंसतो गोकुलस्य ॥ १६९ ॥

इति सारङ्गकम् ९५.

---

१. ख. हृदा ।

*टिप्पणी—छन्दोमञ्जरी, द्वि० स्त० का० ७१, एवं वृत्तरत्नाकर द्वि० अ० ।

९६. अथ मौक्तिकदाम

पयोनिधिभूपतिमन्त्र विधेहि,
खरांशुविराजितवर्णमवेहि ।
फणीन्द्रविकासितसुन्दरनाम,
हृदा परिभावय मौक्तिकदाम ॥ २०० ॥

यथा–

स्वबाहुबलेन विनाशितकंस,
कपोलविलोलललामवतंस ।
समस्तमुनीश्वरमानसहंस,
सदा जय भासितयादववंश ॥ २०१ ॥

इति मौक्तिकदाम ९६

९७ अथ मोदकम्

वेदविभावितभं परिभावय,
भानुविभासितवर्णमिहानय ।
भामिनि ! पिङ्गलनागसुभाषित-
मोदकवृत्तमितीह निभालय ॥ २०२ ॥

यथा–

नन्दकुमार विपारगुणाकर,
गोपवधूमुखकंजदिवाकर ।
मद्वचनं हितमाशु निशामय,
कुञ्जगृहं ननु याहि[1] निशामय ॥ २०३ ॥

इति मोदकम् ९७.

९८. अथ सुन्दरी

कुसुमदपरसेन समाहिता,
ललितनूपुररावविहारिणी ।
कुचयुगोपरिहारविराजिता,
हरति कस्य मनो न हि सुन्दरी ॥ २०४ ॥

यथा–

उदयदर्द्धदिवाकरडंबर[2],
ललितवर्तुलवाद्यविशेषकम् ।

---

[1] ख माधि। २. ख. डंबुर।

सकलदिग्रचित विहगारवै,
स स्तमातनुते विधिभिक्षुक ॥ २०५ ॥

यथा वा, 'वाणीभूषणे'*१–

असुलभा शरदिन्दुमुखीप्रिया,
मनसि कामविचेष्टितमीदृशम् ।
मलयमारुतचालितमालती-
परिमलप्रसरो हतवासर ॥ २०६ ॥

इति सुन्दरी ९८

९९. अथ प्रमिताक्षरा

सुमुगन्धपुष्पकृतहारकुचा[१],
सन्सेन शखरचितेन यथा ।
वलयेन शोभितकरा कुरुते,
प्रमिताक्षरा रसिकचित्तमुदम् ॥ २०७ ॥

यथा–

हरपर्वत इ(ए)व बभुगिरय,
पतगास्तथा जगति हसनिभा ।
यमुनापि देवतटिनीव बभौ,
हिमभासभा जगति सवलिते ॥ २०८ ॥

यथा वा भूषणे'*२–

अभजद् भयादिव नभो वसुधा,
दधुरेकतामिव समेत्य दिश ।
अभवन् महीपदयुगप्रमिता,
तिमिरावलीकवलिते जगति ॥ २०९ ॥

इति प्रमिताक्षरा ९९

१०० अथ चन्द्रवर्त्म

पक्षिराजमथन कुरु चरणे,
स विधेहि भगण सुखकरणे ।
हस्तमत्र कुरु पिङ्गलकथित,
चन्द्रवर्त्म कविभिर्हृदि मथितम ॥ २१० ॥

---

१ क रुचा ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम् द्वितीय अध्याय, पद्य २५२
" २ " " २५४

यथा–

देवकूलिनि मिलद्घनसलिले,
दिव्यपुष्पकलिते सुरनमिते ।
चन्द्रशेखरजटावलिवलिते,
देहि शं मम सदा भुवि ललिते ॥ २११ ॥

यथा वा–

चन्द्रवर्त्म पिहितं घनतिमिरै-
राजवर्त्म रहितं जनगमनैः ।
इष्टवर्त्म तदलङ्कुरु सरसे,
कुञ्जवर्त्मनि हरिस्तव कुतुकी ॥ २१२ ॥

इति छन्दोमञ्जर्यामपि*[1] ।

इति चन्द्रवर्त्म १००.

इति प्रथमं शतकम् ।

१०१. अथ द्रुतविलम्बितम्

कुरु नकारमथो भगणं ततः,
सरवनूपुरपुष्पगुरुं कुरु ।
कलय शब्दमतो गुरुरन्ततो,
द्रुतविलम्बितवृत्तमिदं सखि ! ॥ २१३ ॥

अत्रापि समपादस्थयोः पादान्तलघ्वोः वैकल्पिकं गुरुत्वम् ।

यथा–मत्कृत 'पाण्डवचरिते' महाकाव्ये कर्णवर्णनप्रस्तावे—

नृप! विलक्षणमस्य पुनर्वपु-
स्सहजकुण्डलवर्मसुमण्डितम् ।
सकललक्षणलक्षितमद्भुतं,
न घटते रथकारकुलोचितम् ॥ २१४ ॥

यथा वा, तत्रैव विदुरोक्तौ—

भिदुरमानसमाशुचिचक्षुषं,
स विदुरो निनदैरतिभीषणैः ।
सकलबालपराक्रमवर्णनैः
सदसि भूमिपतिं समबोधयत् ॥ २१५ ॥

टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तबक, कारिकाया ६५ उदाहरणम् ।

यथा वा, छन्दोमञ्जर्याम्[१]—

तरणिजापुलिने नवपल्लवी-
परिषदा सह केलिकुतूहलात् ।
द्रुतविलम्बितचारुविहारिणं,
हरिमहं हृदयेन सदा वहे ॥ २१६ ॥

इत्यादि रघुवंशमहाकाव्यादिषु च सहस्रशो निदर्शनानि ।

इति द्रुतविलम्बितम् १०१.

१०२. अथ वंशस्थविला

पयोधरं हारयुगेन सङ्गतं,
करं तथा पुष्पसुकङ्कणान्वितम् ।
सुरावयुक्तं दधती च नूपुरं,
विभाति वंशस्थविला सखे ! पुरः ॥ २१७ ॥

यथा—

विलोलमौलिं तरलावतंसकं,
व्रजाङ्गनामानसलोभकारकम् ।
करस्थवंशं परिवीतबालकं,
हरिं भजे गोकुलगोपनायकम् ॥ २१८ ॥

इति वंशस्थविला १०२.

नपुंसकमिदमन्यत्र[२] । वंशस्तनितमिति क्वचित् ।

१०३. अथ इन्द्रवंशा

कर्णं सुरूपं धृतकुण्डलद्वयं,
पुष्पं सुगन्धं दधती च नूपुरम् ।
वक्षोजसंभूषितहारशोभिनी,
स्यादिन्द्रवंशा हृदि मोददायिनी ॥ २१९ ॥

यथा—

कूर्मः श(स)मव्यात् मम यः पयोनिधौ,
पृष्ठे महापर्वतघोरघर्षणात् ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीय स्तबक, कारिकाया ७४ उदाहरणम् ।
२ 'वदन्ति वंशस्थविलं जतौ जरौ' छन्दोमंजरी द्वि० स्त० का० ६६

कद्रू[1]विनोदेन सुखातिसभ्रमान्,
निद्रां जगामालसमीलितेक्षणः ॥ २२० ॥

यथा वा–

कम्पायमाना सखि ! सर्वतो दिश,
शम्पा दधाना नवनीरदावलिः ।
कम्पायित सविदधाति मानसं,
मा पाहि नन्दस्य सुतं समानय ॥ २२१ ॥

इति इन्द्रवंशा १०३.

१०४. अथानयोरुपजातयः

यदीन्द्रवंशाचरणेन सङ्गता[2],
पादोऽपि वंशस्थविलस्य जायते ।
भेदास्तदा स्युः सुरराजसख्यकाः,
नागोदितास्तेऽप्युपजातिसज्ञकाः ॥ २२२ ॥

इति वंशस्थविलेन्द्रवंशोपजातिः*[1] ।

अनयोरप्येकत्र प्रथमाक्षरं लघुः, अपरत्र च प्रथमाक्षरं गुरुरिति स्वल्पभेदत्वाच्चतुर्दशोपजातिभेदाः पूर्ववदेव प्रस्तारररचनया भवन्ति । तथा चात्र सर्वत्र स्वल्पभेदाच्छन्दोभ्यामुपजातयो भवन्तीति उपदिश्यत इति दिक् ।

---

१. ख. कुण्डविनोदेन । २. ख. सङ्गत ।

*टिप्पणी—१ क. ख. प्रतौ वंशस्थविलेन्द्रवंशोपजातेरुदाहरणं न विद्यते ।

*टिप्पणी—२ ग्रन्थकारेण वंशस्थविलेन्द्रवंशोपजातेर्यद्यपि चतुर्दशभेदाः स्वीकृताः, परं तत्तद्भेदानां लक्षणोदाहरणादिभिः प्रतिपादनं नैव कृतम् । अतोऽत्रास्माभिरन्यग्रन्थाधारेण तत्तन्नामलक्षणोदाहरणानि प्रस्तूयन्ते ।

१. वैरासिकी	[व. इ. इ इ]	८ वासन्तिका	[इ. इ. इ व.]
२. रताख्यानिकी	[इ. व. इ. इ.]	९. मन्दहासा	[वं. इ. इ. व.]
३. इन्दुमा	[व. व. इ. इ]	१०. शिशिरा	[इ. व. इ. व.]
४. पुष्टिदा	[इ. इ. वं. इ.]	११. वैधात्री	[व. व. [illegible] व.]
५. उपमेया	[व. इ. व. इ.]	१२. शङ्खचूडा	[इ. इ. व. व.]
६. सौरभेयी	[इ. व. व. इ]	१३. रमणा	[व. इ. व. व.]
७. शीलातुरा	[व. वं. वं. इ.]	१४. कुमारी	[इ. व. व. व.]

१. वैतालिकी—

व. महाचमूनामधिपाः समन्ततः,
इ. सनह्य सद्यः सुतरामुदायुधाः ।
इ. तस्थुविनम्रक्षितिपालसङ्कुले,
इ. तस्याङ्गणद्वारि बहिः प्रकोष्ठके ॥

[कुमारसम्भव १५।६]

२ रतात्याख्यानिकी—

इ. पश्चाद्रनन्वीतवधूमुखद्युतो,
व. गता न हंसैः श्रियमातपत्रजाम् ।
इ दूरेऽभवन् भोजबलस्य गच्छत,
इ शैलोपमातीतगजस्य निम्नगाः ॥

[शिशुपालवधम् १२।६१]

३ इन्दुमा—

व चमूप्रभुं मन्मथमर्दनात्मजं,
व. विजित्वरीभिर्विजयश्रियाश्रितम् ।
इ श्रुत्वा सुराणा पृतनाभिरागतं,
इ चित्ते चिरं चुक्षुभिरे महासुराः ॥

[कुमारसम्भव १५।२]

४ पुष्टिदा—

इ श्रुत्वेति वाच वियती गरीयसी,
इ. क्रोधादहङ्कारपरो महासुर ।
व प्रकम्पिताशेषजगत्त्रयोऽपि स-
इ. साकम्पतोच्चैर्दिवमभ्यधाच्च स ।

[कुमारसम्भव १५।३६]

५ उपमेया [रामणीयकम्]—

व. नितान्तमुत्तुङ्गतुरङ्गहेषितै-
इ रुद्दामदानद्विपबृंहितैः शतैः ।
व. चलद्ध्वजस्यन्दननेमिनिस्वनै-
इ. श्चाभून्निरुच्छ्वासमथाकुलं नभ ।

[कुमारसम्भव १५।४१]

६. सौरभेयी—

इ सङ्गेन वो गर्भतपस्विनः शिशु
व. र्वराक एषोऽन्तमवाप्स्यति ध्रुवम् ।
व. प्रतस्करस्तस्करसङ्गतो यथो,
इ हन्तो निहन्मि प्रथमं ततोप्यमुम् ।

[कुमारसम्भव १५।४२]

७. शीलातुरा—

व	निवार्यमाणैरभितोनुयायिभि-
व.	र्ग्रहीतुकामैरिव त मुहुर्मुहु ।
व	अपाति गृध्रैरभिमौलि चाकुलै-
इ	र्भविष्यदेतन्मरणोपदेशिभि ।

[कुमारसम्भव १५।२६]

८ वार्ताशिका—

इ	अभ्याजतोऽभ्यागततूर्णतर्णका-
इ	न्निर्याणहस्तस्य पुरो दुधुक्षत ।
इ	वर्गाद्गवा हुकृतिचारु निर्यती-
व	मरमघोरैक्षत गोमतल्लिकाम् ।

[शिशुपालवध १२।४१]

९ मन्दहासा—

व	न जामदग्न्य क्षयकालरात्रिकृत्,
इ	स क्षत्रियाणा समराय वल्गति ।
इ	येन त्रिलोकीसुभटेन तेन ते,
व	कुतोऽवकाश सह विग्रहग्रहे ।

[कुमारसम्भव १५।३७]

१० शिशिरा—

इ.	साऽवशमुन्मील्य विलोचने सकृत,
व	क्षण मृगेन्द्रेण सुषुप्सुना पुन ।
इ	सैन्याग्र यात समयाऽपि विस्मये,
व.	कथ सुराजम्भवमन्ययाऽथवा ।

[शिशुपालवध १२।५२]

११ वैधात्री—

व	प्रयाति मन्त्र (न्त्रै) प्रशम भुजङ्गमा
व	न मन्त्रसाध्यास्तु भवति धातव ।
इ	केचिच्च वञ्चिच्च दशन्ति पन्नगा,
व	सदा च सर्वं च तुदन्ति धातव ।

[सौन्दरानन्द   ]

१२ शङ्खचूडा—

इ	निम्ना प्रदेशा स्थलतामुपागमन्
इ	निम्नत्वमुच्चैरपि सर्वतस्थ ते ।
व.	तुरङ्गमाणां व्रजता सुरं द्वता-
व.	रथांगनेमेः परित समीकृता ॥

[कुमारसम्भव १४।४४]

१०५ अथ जलोद्धतगति

प्रवेहि जगण ततोऽपि सगण,
विधेहि जगण पुनश्च सगणम् ।
फणीन्द्रकथिता जलोद्धतगति,
चकास्ति हृदये कृतातिसुमति ॥ २२३ ॥

यथा–

नवीननलिनोपमाननयन,
पयोदरुचिर पयोधिशयनम् ।
नमामि कमलासुसेवितहरि,
सदा निजहृदा भवाम्बुधितरिम् ॥ २२४ ॥

इति जलोद्धतगति १०५

१०६ अथ वैश्वदेवी

कर्णा जायन्ते यत्र पूर्वं नियुक्ता,
बह्लेस्सख्याका य-द्वयेन प्रयुक्ता ।
बाणार्णैश्छिन्ना वाजिभिश्चापि भिन्ना,
नागेनोक्ता सा वैश्वदेवी विभाति ॥ २२५ ॥

यथा–

वन्दे गोविन्द वारिधौ राजमान,
श्रीलक्ष्मीकान्त नागतल्पे शयानम् ।
अत्यन्त पीत वस्त्रयुग्म दधान,
पार्श्वे तिष्ठत्या पद्मया सेव्यमानम् ॥ २२६ ॥

इति वैश्वदेवी १०६.

---

१३ रमणा—
य बली बलारातिबलाऽतिशातन,
इ द्विदन्तिनादद्रवनाशनस्वनम् ।
थ महीधराम्भोधिनवारितक्रम,
व ययो रथ घोरमथाधिरुह्य स ॥
[कुमारसम्भव १५।८]

१४ कुमारी—
द किं ब्रूथ रे व्योमचरा महासुरा,
व स्मरारिसूनुप्रतिपक्षवर्तिन ।
व मदीयबाणव्रणवेदना हि सा
व ऽधुना कथ विस्मृतिगोचरीकृता ।
[कुमारसम्भव १५।४०]

१०७ अथ मन्दाकिनी

इह यदि नगणद्वय जायते,
तदनु च रगणद्वय दीयते ।
फणिपमुखसुमेरुमन्दाकिनी,
प्रभवति हि तदैव मन्दाकिनी ॥ २२७ ॥

यथा–

सखि ! मम पुरतो मुरारे कथा,
कुरु न कुरु तथा वृथाऽन्या कथाम् ।
दि मधुरिपुरेति वृन्दावन,
कलय मम तदा शरीरावनम् ॥ २२८ ॥

इति मन्दाकिनी १०७

क्वचिदियमेव प्रभेति*[1] नामान्तर लभते । 'सह शरधि निज तथा कार्मुकम्' इत्यादि किराते*[2] । यथा वा–'अतिसुरभिरभाजि पुष्पश्रिया' इति माघेऽपि । *[3]

१०८ अथ कुसुमविचित्रा

विरचय विप्र तदनु च कर्णं,
पुनरपि तद्वत् कुरु रविवर्णम् ।
श्रुतिमितपादे विमलचरित्रा,
परमपवित्रा कुसुमविचित्रा ॥ २२९ ॥

---

*टिप्पणी–१ शृङ्गाररत्नाकर स० ३, का० ६१

*टिप्पणी–२ सह शरधि निजस्तथा कार्मुक
वपुरतनु तथैव सवर्मितम् ।
निहितमपि तथैव पश्यन्नसि,
वृषभगतिरुपाययौ विस्मयम् ॥

[किरातार्जुनीयम् स० १८, प० १६]

*टिप्पणी–३ अतिसुरभिरभाजि पुष्पश्रिया-
मतनुतरतयेव सतानक ।
तरुणपरभृत स्वन रागिणा-
मतनुत रतये वसन्तानक ॥

[शिशुपालवधम् स० ६, प० ६७]

यथा–

मययुतचित्तो विगतविलम्ब,
　　कथमपि यातो हरितक्दम्बम ।
तरणिसुतायास्तटभुवि कृष्ण,
　　स जयति गोपीवसनसतृष्ण ॥ २३० ॥

इति कुसुमविचित्रा १०८.

१०९ अथ तामरसम्

सरससुरूपसुगन्धसशोभ,
　　कुचयुगसङ्गमसवृत्त[1]लोभम् ।
रसयुतहारयुगाहितमुक्त,
　　कलयत तामरस वरवृत्तम् ॥ २३१ ॥

यथा –

विलसति मालतिपुष्पविकास,
　　न हि हरिदर्शनतो वनवास ।
सखि ! नवकेतकिकण्टककर्प,
　　वनकलितोनुतनूरुहहर्ष ॥ २३२ ॥

इति तामरसम १०९

११० अथ मालती

कलय नकारमतोपि नायकौ,
　　तदनु विधारय पक्षिणा पतिम् ।
फणिपतिपिङ्गलनागभाषिता,
　　कविहृदि राजति मालती मता ॥ २३३ ॥

यथा–

कलयति[2] चेतसि नन्ददारक,
　　सकलवधूजनचित्त[3]हारकम् ।
निखिलविमोहकवेणुधारक,
　　दितिसुतसङ्घविनाशकारकम् ॥ २३४ ॥

इति मालती ११०

---

१ ख सभृतम् । २ ख कलमत । ३ घ चोरहारकम् ।

कुत्रचिद् इयमेव यमुना इति नामान्तर लभते । 'अयि विजहीहि दृढोपगूहनम्' इत्युदाहरणान्तर भारविस्थिरम्'* ।

१११. अथ मणिमाला

आदौ विदधाना हारौ वरमेरू,
युक्ता रववद्भ्या सन्नूपुरकाभ्याम् ।
कर्णे रसपुष्पोद्यत्कुण्डलयुग्मा,
छिन्ना रसयुक्तैर्वर्णैर्मणिमाला ॥ २३५ ॥

यथा–

गौरीकृतदेह व्यालावलिमाल,
नृत्ये विधुनान कृत्ति पुरकालम् ।
लोलानलकाले [1] सभूपितभाल,
कामै शरण त्व सप्राप्य शिवालम् ॥ २३६ ॥

इति मणिमाला १११

११२ अथ जलधरमाला

यस्यामादौ पदविरतौ वा कर्णा,
पक्षप्रोक्ता दिनकरसख्यावर्णा ।
मध्ये विप्रो जलनिधिशैलैश्छिन्ना,
नागप्रोक्ता जलधरमाला भिन्ना ॥ २३७ ॥

यथा–

शीतै पुष्पैरभिनवशय्या कृत्वा,
ताम्यच्चित्ता मलयजभूतिं धृत्वा ।
वक्षस्पीठे तव सुचिर ध्यायन्ती,
तिष्ठत्येषा शठविधिदोष पश्यन्ती ॥ २३८ ॥

इति जलधरमाला ११२

---

१ ख कोलै ।

*टिप्पणी—१ अयि विजहीहि दृढोपगूहन
त्यज नवसङ्गमभीरु ! वल्लमम् ।
अरुणकरोद्गम एप वर्तते,
वरतनु ! सप्रवदन्ति कुक्कुटा ॥

पद्यमिद वृत्तमौक्तिककारेण छन्दोमञ्जरीकृता च भारवे स्वीकृत किन्तु तत्कृतो किरातार्जुनीये तु नास्त्युपलब्धिरस्य । मतोऽयत्र चोह्यम ।

११३. अथ प्रियंवदा

कुसुमसङ्कुलकरा रसाहिता,
विमलगन्धकुचहारभूषिता ।
सरुतनूपुरसुशोभिता सदा,
जयति चेतसि सखे ! प्रियंवदा ॥ २३९ ॥

यथा–

व्रजवधूजनमनोविमोहनं,
सरसकेलिषु कलानिकेतनम् ।
सरसचन्दनविलेपचर्चितं,
कलय चेतसि हरिं सदार्चितम् ॥ २४० ॥

इति प्रियंवदा ११३.

११४. अथ ललिता

हारद्वयाचितकुचेन भूषिता,
हस्तस्थितोज्ज्वलसुपुष्पकङ्कणा ।
पादे विरावयुतनूपुराञ्चिता,
चित्ते चकास्ति ललिता विलासिनी ॥ २४१ ॥

यथा–

गोपीषु केलिरससक्तचेतसं,
सूर्यात्मजा विलुलितातिवेतसम् ।
चित्तावमोहकरवेणुधारकं,
वन्दे सदा ललितनन्ददारकम् ॥ २४२ ॥

इति ललिता ११४.

इयमेव अन्यत्र सुललिता इति गणभेदेन उक्तम् । अतएव 'तो भो जरौ सुललिता श्रुतौ यतिः ।' इति वृत्तसारे सयति लक्षणं लक्षितमिति ।

११५. अथ ललितम्

धेहि भकारं तदनु च तगणं,
धारय नं वा तदनु च सगणम् ।
बाणविराम फणिपतिकलितं,
चेतसि वृत्तं कलयत ललितम् ॥ २४३ ॥

यथा–

चेतसि कृष्ण कलयति[1] ललित,
गोकुलगोपीजनहृदि वलितम् ।
वादितवंश तरलितमुकुट,
कारितरास विनिहतशकटम् ॥ २४४ ॥

इति ललितम् ११५

इदमेव अन्यत्र ललना*[1] इत्युक्तम् ।

११६ अथ कामदत्ता

द्विजवर-सगणौ विधेहि तूर्णं,
जगणमथ ततोऽपि देहि कर्णम् ।
सरससुकविपिङ्गलेन वित्ता,
लसति कविमुखेषु कामदत्ता ॥ २४५ ॥

यथा–

कलपरिमलचञ्चलालिमाल,
सुललितदलमालतीविशालम् ।
वनमिदमलिसङ्कुलद्रसाल,
हरिमिह हि विना सुखाय नालम् ॥ २४६ ॥

इति कामदत्ता ११६

११७ अथ वसन्तचत्वरम्

यदा लघुर्गुरु क्रमेण भासते,
खराग्रवर्णकेन चेद् विकासते ।
फणीन्द्रनागभाषित सुसत्वर,
विधेहि मानसे वसन्तचत्वरम् ॥ २४७ ॥

यथा–

मुदा विलोलमौलिगोपनायक,
हृदा सदैव चित्तमोददायकम् ।
यदा विभावयिष्यसि त्वमाशु रे,
तदा सुखे निमज्जितासि[2] भासुरे ॥ २४८ ॥

इति वसन्तचत्वरम् ११७

---

१ ख ■ कलयत । २ ख. निमङ्क्ष्यसि प्रभासुरे ।

*टिप्पणी—१ द्रष्टव्य टि०पृ० १२७

११८. अथ प्रमुदितवदना

सरसकविजनाहिता भाविता,
भवति सुकविपिङ्गलेनोदिता ।
सकलरसिकचित्तहृद्या तदा,
प्रमुदितवदना तु नौ रौ यदा ॥ २४९ ॥

यथा–

कलय सखि ! विराजि वृन्दावनं,
सहचरि ! कुरु मे शरीरावनम् ।
यदि कथमपि मानसे भावयेः,
यदुकुलतिलकं तदैवानये. ॥ २५० ॥

इति प्रमुदितवदना ११८.

इयमेव अन्यत्र प्रभा*[1] ।

११९. अथ नवमालिनी

सखि ! नवमालिनी रसविरामां,
ननु कलयालि पूर्वयतियुक्ताम् ।
नजभयकारभावितपदाढ्या,
फणिपतिनागपिङ्गलविभक्ताम् ॥ २५१ ॥

यथा–

इह कलयालि ! नन्दसुतबाल,
नवघनकान्तिनिर्जिततमालम् ।
सरसविलासरासकृतमाल,
मुनिवरयोगिमानसमरालम् ॥ २५२ ॥

इति नवमालिनी ११९.

१२०. अथ तरलनयनम्

जलधि-नगणमिह रचयत,
रविमित लघुमिह कलयत ।
सुकविफणिपतिरिति वदति,
तरलनयनमिति हि भवति ॥ २५३ ॥

*टिप्पणी—१ वृत्तरत्नाकरः अ० ३, का० ६५

यथा–

तव कुसुमनिभहसितमयि,
गततनुमनुकलयति मयि ।
इति हि सखि ! हरिरनुवदति,
परिकलय दृशमयि सुदति ! ॥ २५४ ॥

इति तरलनयनम् १२०

'अत्र प्रस्तारगत्या द्वादशाक्षरस्य पण्णवत्यधिक सहस्रचतुष्टय ४०९६ भेदा भवन्ति, तेषु कियन्त प्रदर्शिता शेषभेदा, सुधीभि प्रस्तार्य सूचनीया इति' ।[१*]

इति द्वादशाक्षरम् ।

अथ त्रयोदशाक्षरम्

तत्र–

१२१ वाराह

यस्मिन् पादे दृश्यन्ते सयुक्ता पटकर्णा,
सूर्याणामेकेनाप्राणा सख्याका वर्णा ।
कर्णस्यान्ते यस्मिन् सप्रोक्तश्चैको हार,
सोऽय नागोक्तो वाराहो वृत्ताना सार ॥ २५५ ॥

यथा–

कल्पान्तप्रोद्यदवारा राशौ दृब्धा मग्न,
स क्षोणीपृष्ठ दप्टाग्रे कृत्वा सलग्नम् ।
हत्वा दैत्य दृप्यन्त सिन्धोर्मध्यादागात्,
कुर्यात् काल[२] सोऽय सर्वेषा रक्षा वेगात् ॥ २५६ ॥

इति वाराह १२१.

१२२ अथ माया

हारौ धृत्वा स्वर्णसुमेरुद्वययुक्तो,
प्रत्येक हस्तौ वलयाभ्यामपि सक्तो ।
मिथ्याचित्तस्थस्य दधाना[३]वरवर्णं,
माया सर्वेषा हृदये राजति तूर्णं[४] ॥ २५७ ॥

---

१ क प्रतौ '–' चिह्नद्वयं नास्ति । २ ख कोल । ३ ख दधानां वरवर्णम् । ४ ख तूर्णम् ।

*टिप्पणी–१ अन्यग्रन्थेषु प्राप्तशेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टेऽवलोकनीया ।

एतस्या एवान्यत्र श्रुति नवयतिसहित मगण - तगण - यगण-सगण-गुरुयुत मत्तमयूरमिति गणान्तरेण नामान्तरमुक्तम्। तथा च छन्दोमञ्जर्याम् [द्वितीयस्तवके का ६७] 'वेदै रन्ध्रैर्म्तौ यसगा मत्तमयूरम्।' इति लक्षणात्।

यथा–

वन्दे गोप गोपवधूभिः कृतरास,
　　हस्ते वंश रावि दधान वरहासम्।
नव्ये कुञ्जे सविदधान नवकेलि,
　　लोलाक्ष राधामुखपद्माकरहेलिम् ॥ २५८ ॥

इति माया १२२

यथा वा,

अस्मद्वृद्धप्रपितामहश्रीरामचन्द्रभट्टविरचित कृष्णकुतूहले महाकाव्य रासवर्णनप्रस्तावे—

रासक्रीडासक्तवचस्कायमनस्का,
　　सत्कारातिप्रापितनाट्यादिविशेषा।
वृन्दारण्य तालतलोदघट्टनवाचा-
　　मत्यासगाच्चक्रुरिमा मत्तमयूरम् ॥ २५९ ॥

यथा वा, छन्दोमञ्जर्याम् [द्वितीयस्तवके का० ६७]

लीलानृत्यन्मत्तमयूरध्वनिकान्त,
　　चञ्चत्नीपामोदिपयोदानिलरम्यम्।
कामक्रीडाहृष्टमना गोपवधूभि,
　　कसध्वसी निर्जनवृन्दावनमाप ॥ २६० ॥

'गौरीमम्बामम्बुरुहाक्षीमहमीडे,*[1] स ससारध्वान्तविनाश हरिमीडे*[2]'

---

*टिप्पणी—१　'लीलारब्धस्थापितलुप्ताखिललोका
लोकातीतैर्योगिभिरन्तश्चिरमृग्याम्।
बालादित्यश्रेणिसमानद्युतिपुञ्जा
गौरीमम्बामम्बुरुहाक्षीमहमीडे ॥ १ ॥
[शङ्कराचार्यकृतगौरीदशकस्तोत्र प० १]

*टिप्पणी—२　स्तोष्ये भक्त्या विष्णुमनादि जगदादि
यस्मिन्नेतत् संसृतिचक्र भ्रमतीत्थम्।
यस्मिन् दृष्टे नश्यति तत्संसृतिचक्र,
स ससारध्वान्तविनाश हरिमीडे ॥ १ ॥
[शङ्कराचार्यकृतहरिमीडे स्तोत्र प०-१]

इति च श्रीशङ्कराचार्यविरचिते गौरीदशके हरिस्तोत्रे च। 'हा तातेति-क्रन्दितमाकर्ण्यविषण्ण' *[1] इत्यादि रघुवंशे च सहस्रशो निदर्शनानि।

इति मत्तमयूरम् १२२

१२३ अथ तारकम्

अलराशिविराजितहस्तसयुक्त,
चरणस्य तथा विरतौ गुरुवृत्तम्[1]।
हृदये कुरुताखिलमोहितचित्त,
फणिनायकभाषित-तारकवृत्तम् ॥ २६१ ॥

यथा–

विमल कमल गरल मनुते सा,
सरसेन विसेन सुसेवितवेषा।
श्रवन गमन तदनन्दितचित्त,
हृदये सदये तदये कुरु वित्तम् ॥ २६२ ॥

यथा वा, भूषणे*[2]–

अतिभारतर हृदि चन्दनपङ्क,
मनुते सरसीपवन विषशङ्कम्।
तव दुस्तरतारवियोगपयोधि-
र्न हि पारमसौ भविता परमार्थे ॥ २६३ ॥

इति तारकम् १२३

१२४. अथ कन्दम्

शर हारयुग्म क्रमादत्र सधेहि,
नय पतितसस्याकवर्णं तथा धेहि।
इद कन्दसज्ञ समुक्त फणीन्द्रेण,
कवीना यथा मोदकन्द कवीन्द्रेण ॥ २६४ ॥

---

१ ख वित्तम्।

*टिप्पणी—१ हा तातेति क्रन्दितमाकर्ण्य विषण्ण-
स्तस्यान्विष्यन् वेतसगूढ प्रभव स।
शल्यप्रोत वीक्ष्य सकुम्भ मुनिपुत्र,
तापादन्त शल्य इवासीत् क्षितिपोऽपि ॥

[रघुवश स० ६, प० ७५]

*टिप्पणी—२ वाणीभूषणम् द्वि० स० पद्य २४८

यथा–

विलोलद्विरेफावलीनां विरावेण,
हिमांशोः कराणां च सङ्गेन दावेण ।
वपुर्मे सदा दाहितं शीतयस्वालि,
पुरो दर्शयित्वा वपुर्मालतीमालि ॥ २६५ ॥

इति कन्दम् १२४.

१२५. अथ पङ्क्तावलिः

भ कुरु तदनु नकारमिहानय,
धेहि जमथ जगण परिभावय ।
शंखमिह तदनु भामिनि मानय,
पङ्कमुपरिकलितावलिमानय ॥ २६६ ॥

यथा–

कोमलसुललितमालति[1] मालिनि,
पङ्कजपरिमलसलुलितालिनि ।
कोकिलकलकल[2] कूजितशालिनि,
राजति हरिरिह वञ्जुलजालिनि ॥ २६७ ॥

इति पङ्क्तावलि: १२५.

१२६. अथ प्रहर्षिणी

कर्णाभ्यां सुललितकुण्डलं दधाना,
शखाभ्यामतिसुरसा कुचाढ्यहारा ।
विश्राम ननु रवनूपुरस्य युग्मे,
बिभ्राणा सखि ! जयति प्रहर्षिणीयम् ॥ २६८ ॥

यथा–

यद्दन्ते विलसति भूमिमण्डलं त-
न्मालिन्यश्रियमुपयातमुज्ज्वलाभे ।
देवेन्द्रैरभिकलितः स्तवप्रयोगै-
रस्माकं वितरतु शं स कोलदेहः ॥ २६९ ॥

यथा वा,

अस्मद्वृद्धप्रपितामह-महाकविपण्डितश्रीरामचन्द्रभट्टविरचिते कृष्णकुतूहले महाकाव्ये श्रीभगवदाविर्भाववर्णनप्रस्तावे—

---

१. ख. कुन्दसुमालिनि । २. ख. कोकिलनवकल ।

सत्य सद्वसु वसुदेवदेवकीभ्या,
रोहिण्यामुडुनि नभस्य कृष्णपक्षे ।
पर्जन्ये कटति निशीथनीरवाया-
मष्टम्या निगमरहस्यमाविरासीत् ॥ २७० ॥

इति प्रहर्षिणी १२६

१२७ अथ रुचिरा

पयोधरे कुसुमितहारभूषिता,
सुपुष्पिणी सरसविराविनूपुरा ।
रसान्विता सकनकरावकङ्कणा,
चतुर्यति सखि ! रुचिरा विराजते ॥ २७१ ॥

यथा–

कलापिन निजदयिताविहारिण
पयोधर सखि ! कलये विराविणम् ।
हरिं विना मम सकल विषायित,
हरे पुन सकलमिद सुखायितम् ॥ २७२ ॥

इति रुचिरा १२७

१२८. अथ चण्डी

वलय नयुगमिह धारय हस्त,
तदनु च विरचय स किल शस्तम् ।
चरणविरतियुतभासुरहारा,
त्रिजगति वरसखि राजति चण्डी ॥ २७३ ॥

यथा–

सरभचरणयुतनूपुरशोभा,
बहुविधविरचितमानसलोभा ।
हरिगतवनमनुगच्छति राधा
सखि मनसिजकृतमानसबाधा ॥ २७४ ॥

इति चण्डी १२८

१२६. अथ मञ्जुभाषिणी

करसङ्गिपुष्पयुतकङ्कणान्विता,
रसरूपरावमितनूपुराञ्चिता ।
कुचशोभमानवरहारधारिणी,
कुरुते मुदं मनसि मञ्जुभाषिणी ॥ २७५ ॥

यथा–

जनितेन मित्रविरहेण दुःखिता,
मिलितुं तथैव वनिता हरेर्हरित् ।
विधुबिम्बचित्तभवयन्त्रपूजनं,
कुसुमैस्तनोति नवतारकामयैः ॥ २७६ ॥

इति मञ्जुभाषिणी १२६

सुनन्दिनी इत्यन्यत्र । प्रन्यत्रेति शम्भौ । क्वचिदियमेव प्रबोधिता च[*1] ।

१३०. अथ चन्द्रिका

कुरु नगणयुगं धेहि पादे ततः,
तगणयुगलकं गोऽपि चान्ते ततः ।
चरणमनु तथा कामवर्णान्विता,
हयरसविरतिश्चन्द्रिका पूजिता ॥ २७७ ॥

यथा[1]–

कलयत हृदये गोरसधारकं,
मुनिजनमहितं देवकीदारकम् ।
व्रजजनवनिता-दुःखसन्तारकं,
जलधररुचिरं दैत्यसंहारकम् ॥ २७८ ॥

इति चन्द्रिका १३०.

यथा वा–

'इह दुरधिगमैः किञ्चिदेवागमैः ।' इत्यादि किरातार्जुनीये[*2] । क्वचिदियमेव उत्पलिनी इति प्रसिद्धा ।

---

१. ख यथा उदाहरण नास्ति ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तबक, कारिका ६६ एवं १०२ ।

*टिप्पणी—२ 'इह दुरधिगमैः किञ्चिदेवागमं
सततमसुतरं वर्णयन्त्यन्तरम् ॥
अमुमतिविपिनं वेददिग्व्यापिनं
पुरुषमिव परं पद्मयोनिः परम् ॥
[किरातार्जुनीयम् स० ५, प० १८]

१३१ अथ कलहंसः

सगणं विधेहि जगणं च सुयुक्तं,
सगणद्वयं कुरु पुनः फणिवित्तम् ।
गुरुमन्तगं कुरु तथा हृतचित्तं,
कलहंसनामकमिदं वरवृत्तम् ॥ २७९ ॥

यथा–

नवनीतचोरममलद्युतिशोभं,
व्रजसुन्दरीवदनपङ्कजलोभम् ।
ललितादिगोपवनिताकृतरासं,
कलये हरिं निजहृदा वरहासम् ॥ २८० ॥

इति कलहंसः १३१.

कुत्रचिदयमेव सिंहनाद इति, क्वचिच्च कुटजाख्यमिति ।

१३२. अथ मृगेन्द्रमुखम्

कुरु नगणं तदनन्तरं नरेन्द्रं,
तदनु च जं कुरु पक्षिणामधेन्द्रम् ।
तदनु विधारय नूपुरं पदान्ते
रचय मृगेन्द्रमुखं सुखेन कान्ते ! ॥ २८१ ॥

यथा–

कुमुदवनीषु सखे ! विधूतबन्धः,
कमलवनस्य सदा हृतातिगन्धः ।
विधुरुदितो धवलीकृतातिलोकः,
प्रतिरजनीषु च दत्तकोकशोकः ॥ २८२ ॥

इति मृगेन्द्रमुखम् १३२.

१३३. अथ क्षमा

द्विजवर-सगणौ धेहि वैनतेयं,
यगणमथ तथा पण्डितालिगेयम् ।
मुनिरचितयतिः सज्जनादिमेयं,
फणिपतिकथिता राजति क्षमेयम् ॥ २८३ ॥

यथा–

कलयत हृदये नन्दगोपसूनुं,
फणिपतिदमनं न्यक्कृतातिभानुम् ।

शशधरवदन राधिकारसाल,
सरसिजनयन पङ्कजालिमालम् ॥ २८४ ॥

इति क्षमा १३३.

इयमेव क्वचिद् गणान्तरेणापि क्षमैव[1] भवति ।

१३४ अथ लता

कलय नगण विधेहि तत कर,
जगणयुगल च देहि तत परम् ।
चरणविरतो गुरु कुरु सम्मता,
रसकृतयतिर्मुदा विहिता लता ॥ २८५ ॥

यथा–

कलय हृदये मुदा व्रजनायक,
ललितमुकुट सदा सुखदायकम् ।
युवतिसहित व्रजेन्द्रसुत हरिं,
कनकवसन भवाम्बुनिधेस्तरिम् ॥ २८६ ॥

इति लता १३४.

१३५ अथ चन्द्रलेखम्

कुरु न-सगणौ पक्षिराज च युक्त,
रचय रगण कामवर्णैरमुकम् ।
तदनु च पुन कुण्डल धेहि दीप,
कलय फणिना भाषित चन्द्रलेखम् ॥२८७॥

यथा–

नमत सतत नन्दगोपस्य सूनु,
फणिप दमन दानवोलूकभानुम् ।
कमलवदन राधिकाया रसाल,
तरलनयन पङ्कजालीसुमालम् ॥ २८८ ॥

इति चन्द्रलेखम् १३५

चन्द्रलेखा[2] इत्यन्यत्र ।

---

[1] टिप्पणी—१ वृत्तरत्नाकरस्य (अ० ३ का० ७५) नारायणीटीकायां 'इय क्षमैव आचार्यो मतभेदेन सज्ञान्तरार्थं पुनरुक्ते' ।

[2] टिप्पणी—२ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तवक, कारिका १०५

१३६ अथ सुद्युति

कुरु न-सगणौ पादे तकारौ तथा,
कलय वलय स्यु कामवर्णा यथा ।
रसपरिमितैर्वर्णैस्तथा स्याद यति,
फणिपकथिता सशोभते सुद्युति ॥ २८९ ॥

यथा–

वदनवलितैर्भृङ्गैर्युता सद्वया,
लुलितललिता लोलालसाक्षिद्वया ।
सखि हरिगृहाद् याति प्रगे राधिका,
सकलसुदृशा नित्य मनोबाधिका ॥ २९० ॥

इति सुद्युति १३६

१३७ अथ लक्ष्मी

कर्णे विराजिसरसकुण्डलान्विता,
गन्धाढ्यपुष्पयुतकरेण शोभिता ।
वक्षोरुहे च विमलहारशोभिनी,
लक्ष्मी सदा फलतु ममातुल फलम् ॥ २९१ ॥

यथा–

वन्दे हरिं फणिपतिभोगशायिन,
सर्वेश्वर सकलजनेष्टदायिनम् ।
पीताम्बर मणिमुकुटादिभासुर,
गो-गोपिकानिकरवृत हतासुरम् ॥ २९२ ॥

इति लक्ष्मी १३७

१३८ अथ विमलगति

जलधिमित नगणमिह कलय,
तदनु च सखि लघुमिह रचय ।
फणिपतिसुकलितमिति भवति,
विरतु यति विमलगति सुदति ! ॥ २९३ ॥

यथा–

अभिनवसजलजलदविमल,
　　निजजनविहृतसकलशमल[1] ।
कमलसुललितनयनयुगल,
　　जय ! जय ! सुरनुतपदकमल ॥ २६४ ॥

इति विमलगति १३८

[2]अत्रापि प्रस्तारगत्या त्रयोदशाक्षरस्य द्विनवत्युत्तर शतमष्टौ सहस्राणि च ८१९२ भेदा भवन्ति, तेषु कतिचन भेदा समुदाहृता, शेषभेदा सुधीभि प्रस्तार्य समुदाहरणीया इत्यल पल्लवेन ।*

इति त्रयोदशाक्षरम् ।

अथ चतुर्दशाक्षरम्

तत्र–

१३९ सिंहास्य

यस्मिन्निन्द्रे सख्याता राजन्ते युक्ता वर्णा,
　　पादे सूर्याश्वै सख्याका सशोभन्त कर्णा ।
नागानामीशेनैतत् प्रोक्त सिंहास्य कान्ते !
　　भूपालाना चित्तानन्दस्थान धेहि स्वान्ते ॥ २९५ ॥

यथा–

यो दैत्यानामिन्द्र वक्षस्पीठे हस्तस्याग्रै-
　　भिद्यद् ब्रह्माण्ड व्याप्नुद्योव्वैर्ध्यामृदनादुग्रै ।
दत्तालोकान्मुन्मिश्र निर्यद्विद्यु द्वृद्वास्य-
　　स्तूर्णं सोऽस्माक रक्षा कुर्याद्घोर(वीर)सिंहास्य ॥ २९६ ॥

इति सिंहास्य १३९

१४० अथ वसन्ततिलका

हारद्वय स्फुरदुरोजयुत दधाना,
　　हस्ते च गन्धकुसुमोज्ज्वलकङ्कणाढ्यम् ।
पादे तथा सरत्ननूपुरयुग्मयुक्ता,
　　चित्ते वसन्ततिलका किल चावसीति ॥ २९७ ॥

---

१ ख शमल । २ पक्तित्रय नास्ति क प्रतौ ।

★ टिप्पणी– ग्रन्थान्तरेषु समुपलब्धशेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे पद्यवेगणीया ।

यथा–

लोके त्वदीययशसा धवलीकृतेऽस्मिन्,
छायाभय निजशरीरकृत विमुच्य[1] ।
ज्योत्स्नावतीषु रजनीष्वभिसारिकाणा,
सङ्घ प्रियस्य सदन सुखत प्रयाति ॥ २९८ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

पातु न पारयति यत्कथित पयस्त-
द्घ्नो विनाश्य दृढनाशयति स्वकीयान्[2] ।
खण्ड निधाय दधिखण्डमखण्डमेव,
क्षिप्त्वा मुखे निखिलमत्ति मुखे सुतस्ते ॥ २९९ ॥

इति वसन्ततिलका १४०

१४१ अथ चक्रम

कुण्डलकलितदहनमित नगण,
शङ्खसहितमिह विरचय सगणम् ।
कुण्डल[3]नरपतिवरकविकलित,
क्रमखिलकविजनहृदि ललितम् ॥ ३०० ॥

यथा–

कोकिलकलरवसुललितसमये,
शीतलमलयजपवनसुखमये ।
कामविशिखचयविदलितहृदये,
सुन्दरि ! परिहर हृदयमदमये ॥ ३०१ ॥

यथा वा वाणीभूषणे— [द्वितीयाध्याय, पद्य २५८]

सुन्दरि ! नभसि जलदचयरुचिरे,
देहि नयनयुगमतिघनचिकुरे ।
मानमिह न कुरु जलधरसमये,
किं तव भवति हृदयमिदमदय ॥ ३०२ ॥

इति चक्रम १४१

१४२ अथ असम्बाधा

बिभ्राणा कर्णौ कलितललितताटङ्कौ(ङ्का),
वाणं सन्दिग्धा द्विजविरचितशोभाढ्या ।

---

१ क विमुक्त । २ ख दृढमाशयति स्वकीयात् । ३ ख कुण्डलो ।

हस्ताग्रे राजद्विरचितवलयद्वन्द्वा,
स्तुत्या सम्प्रोक्ता वरकविभिरसम्बाधा ॥ ३०३ ॥

यथा

वन्दे गोपाल व्रजजनतरुणीधीर,
रासक्रीडायामभिगतयमुनातीरम् ।
देवाना वन्द्य हृतवरवनिताचीर,
वालै सयुक्त दितिसुतदलने वीरम् ॥ ३०४ ॥

इति असम्बाधा १४२

१४३ अथ अपराजिता

द्विजपरिकलिता करेण विराजिता,
कुचयुगकलिता प्रलम्बितहारिणी ।
भुवननिगदितातिशोभितवर्णिनो,
कृतमुनिविरतिर्जयत्यपराजिता ॥ ३०५ ॥

यदा–

प्रतिरुचिदशनैः सभातमसा हर,
दितिसुतरुधिरैः सुरक्तनखाङ्कुर ।
जलभृदुडुगणौ सटाभिरुपाहरत्[1],
जयति हरितनुर्मृगानपि संहरत्[2] ॥ ३०६ ॥

इति अपराजिता १४३

१४४ अथ प्रहरणकलिका

रचयत नगणद्वयमथ भगण,
लघुगुरुसहित कलयत नगणम ।
प्रहरणकलिका मुनियतिसहिता,
फणिपतिकथिता कविजनमहिता ॥ ३०७ ॥

यथा –

नम मधुमथन जलनिधिशयन,
सुरगणनमित सरसिजनयनम् ।
इति गदनमतिर्भवति हृदि यदा,
भवजलनिधि[त]स्तरति सखि ! सदा ॥ ३०८ ॥

---

१ ख उपाहरत् । २ ख. सहरत् ।

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

व्रजयुवतिभिरित्यभिमतवचसि,
प्रतिपदममृतद्रवमिव विकिरति।
मनसिजविशिखप्रपतनविधुत-
स्वविरहदहनप्रशमनमकलि[1] ॥ ३०९ ॥

इति प्रहरणकलिका १४४

१४५. अथ वासन्ती

कर्णौ कृत्वा कुण्डलसहितौ गन्धं पुष्पं,
हस्ते धृत्वा कङ्कणमथ हारं राजन्तम्।
स्वर्णेनाढ्यं नूपुरमथ धृत्वा राजन्ती,
नागप्रोक्ता राजति कविचित्ते वासन्ती ॥ ३१० ॥

यथा–

वन्दे गोपीमन्मथजनकं कंसारातिं,
भूमेः कार्यार्थे नृषु कृतमिथ्याविख्यातिम्।
रासे वंशीवादननिपुणं कुञ्जे कुञ्जे,
लीलालोलं गोकुलवनारीणां पुञ्जे ॥ ३११ ॥

इति वासन्ती १४५.

१४६. अथ लोला

कर्णे कुण्डलयुक्ता हस्ते स्वर्णसनाथं,
बिभ्राणा वलयाढ्यं हारौ चोज्ज्वलपुष्पौ।
सध्वानं च दधाना दिव्यं नूपुरयुग्मं,
नागोक्ता कविचित्ते कान्ता राजति लोला ॥ ३१२ ।

यथा–

गोपालं कलयेऽहं नित्यं नन्दकिशोरं,
वृन्दारण्यनिवासं गोपीमानसचौरम्[2]।
वंशीवादनसक्तं नव्ये कुञ्जकुटीरे,
नारीभिः कृतरासं कालिन्दीवरतीरे ॥ ३१३ ॥

इति लोला १४६.

---

१ क. र्मलि। २. ख. चोर।

१४७ अथ नान्दीमुखी

द्विजपरिकलिता हस्तयुक् कङ्कणाढ्या,
विरुतविलसितौ नूपुरौ धारयन्ती ।
रसकनकयुतं हारमुच्चैर्दधाना,
स्वरविरतियुता भाति नान्दीमुखीयम् ॥ ३१४ ॥

यथा–

नखगलदसृजा पानतो भीषणास्यः
सुरनृपतिमुखैर्देवसर्घैरुपास्य. ।
भयजनकरवैर्नादयद्दिङ्मुखानि,
प्रकटयतु स व. सिंहवक्त्र. सुखानि ॥ ३१५ ॥

इति नान्दीमुखी १४७,

१४८. अथ वैदर्भी

कर्णे कृत्वा कनकमुललित ताटङ्कं,
सविभ्राणा द्विजमथ वलय हस्ताग्रे ।
दिव्य हारद्वितयमथ दधाना युक्त
वेदैश्छिन्ना जगति विजयते वैदर्भी ॥ ३१६ ॥

यथा–

वन्दे नित्य नरमृगपतिदेह व्यग्र,
दैत्येद्रोर स्थलदलनविधावत्युग्रम् ।
प्रह्लादस्याभिलषितवरद सृक्काग्रे,
सलिहान्त रुधिरविलुलितं जिह्वाग्रम् ॥ ३१७ ॥

इति वैदर्भी १४८.

१४९. अथ इन्दुवदनम्

येहि भगण तदनु धारय जकारं,
हस्तमथ कारय ततोऽपि च नकारम् ।
हारयुगल तदनु देहि चरणान्ते,
नागरतमिन्दुवदन भवति कान्ते ! ॥ ३१८ ॥

यथा–

नौमि वनितावितत्तरासरसयुक्तं,
गोकुलवधूजनमनोहरणसक्तम् ।

देवपतिगर्वहरखण्डनसुदक्ष,
भूमिवलये निहतदैत्यगणलक्षम् ॥ ३१६ ॥

इति इन्दुवदनम् १४९

स्त्रीलिङ्गमन्यत्र* ।

१५० अथ शरभी

कर्णं स्वर्णोज्ज्वलललितताटङ्कयुक्तं,
सविभ्राणा द्विजमयरुतं नूपुराढ्यम् ।
हारं पुष्पं वलययुगलं धारयन्ती,
वेदैश्छिन्ना जयति शरभी पिङ्गलोक्ता ॥ ३२० ॥

यथा–

वन्दे कृष्णं नवजलधरश्यामलाङ्गं,
वृन्दारण्ये व्रजयुवतिभिर्जातसङ्गम् ।
कालिन्दीये सरसपुलिने क्रीडमानं¹,
कालीयाहे प्रथितयशसो धूतमानम् ॥ ३२१ ॥

इति शरभी १५०

१५१ अथ अहिधृति

रचय नयुगलं कुरु ततो भगणं,
लघुगुरुसहितं कुरु तथा जगणम् ।
मुनिविरतियुता फणिनृपस्य कृतिः,
जगति विजयते सुविमलाऽहिधृतिः ॥ ३२२ ॥²

यथा–

सकलतनुभृतां जलमपेयतरं,
विगतवि[ष]मयं रचयितुं कृपया ।
पतति तरुवराच्छिरसि नन्दसुते,
भुवनभरसहा विजयतेऽहिधृतिः ॥ ३२३ ॥*

इति अहिधृतिः १५१.

१५२ अथ विमला

रचय न-भूपतौ गुरु तथा भगणं,
लघुवलयाचितं च विरतौ जगणम् ।

---

१ क सवमानं । २ पूर्णं पद्यं नास्ति क प्रतौ ।
*टिप्पणी—१ वृत्तरत्नाकर' अ० ३, का० ८२

फणिपतिभापिता रविहयैर्विरति-
वैरकविमानसेऽतिविमला जयति ॥ ३२४ ॥

यथा–

व्रजजननागरीदधिहृतावतुला,
तरणिसुतातटे हरितनुर्विमला[1] ।
वरवनितादृशा सुमुकृतैककला,
मम विमले सदा भवतु हृद्यचला ॥ ३२५ ॥

इति विमला १५२

१५३ अथ मल्लिका

कुरु गन्धयुग्मसहितं मृगाधिपतिं,
रचयाशु सन्ततमयो नरावपि सम् ।
इह मल्लिका कलमता विलासवती,
नवपञ्चवर्णयतियुता मुदो[2] जननीम् ॥ ३२६ ॥

यथा–

सखि ! नन्दसूनुरिह मे मनोहरण,
जनताप्रसादसुमुखस्तमोहरण ।
भविता सहायकरणो जनानुगत,
करवै कमत्र शरणं वने सुखत ॥ ३२७ ॥

इति मल्लिका १५३

१५४ अथ मणिगणम

जलधिमितं नगणमिह कलयत,
तदनु च लघुयुगमपि रचयत ।
सकलफणिनृपतिविरचितमिति,
निजहृदि कलयत मणिगणमिति ॥ ३२८ ॥

यथा–

भुजयुगलविलसितफणिवलय,
कृतसकलदितिसुतकुलविलय ।
प्रलयसमयभयजनक सलय[3],
वृषगमनमपि सुगमनुनय ॥ ३२९ ॥

इति मणिगणम १५४

---

१ पद्यस्य पूर्वार्द्धं भाग नास्ति रा. प्रतौ । २ ख मुदा । ३ ख जनकन्मय ।

'अत्रापि प्रस्तारगत्या चतुर्दशाक्षरस्य चतुरशीत्यधिकानि त्रिशतानि षोडश-सहस्राणि च भेदास्तेषु कियन्तो भेदाः प्रदर्शिताः, शेषभेदाः सुधीभिराकरतः स्वमत्या वा प्रस्तार्य समूहनीया इति दिक्'* ।

इति चतुर्दशाक्षरम् ।

अथ पञ्चदशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्-

१५५. लीलाखेलः

यस्मिन् वृत्ते रथ्यध्वैः संख्याता दृश्यन्ते कर्णाः,
पादे पादे तिथ्या सम्प्रोक्ताः संशोभन्ते वर्णाः ।
हारश्चैकोऽन्ते यस्मिन्नागानामीशेन प्रोक्तं,
लोके वृत्तानां सारं लीलाखेलाख्यं तद्वृत्तम् ॥ ३३० ॥

यथा

देवैर्वन्द्यं त्रैलोक्यास्थानं देहं खर्वीकुर्वन्,
दैत्यानामीशं भूम्यां ख्यातः[2] पातालस्थं कुर्वन् ।
स्वाराज्यं देवेशायात्यन्तं स्थैर्याढ्यं संयच्छन्,
मामव्याद् गोविन्दो वैरोच्यानाशी[3]:पद्यं गर्जन् ॥ ३३१ ॥

इति लीलाखेलः १५५.

यथा वा –

'मा कान्ते पक्षस्यान्ते पर्याकाशे देशेस्वाप्सीः', इति ज्योतिषिकाणां कालपरिमाणपरं उदाहरणमिति कण्ठाभरणे*² । लीलाखेलस्य एतस्यैवान्यत्र सारङ्गिका'* इति नामान्तरमुक्तम् ।

१५६. अथ मालिनी

द्विजकरवलयाढ्या नूपुरारावयुक्ता,
श्रवणरचितपुष्पप्रोतताटङ्कयुग्मा ।
वसुरचितविरामा सर्वलोकैकवर्णा,
फणिपनृपतिकान्ता भासते मालिनीयम् ॥ ३३२ ॥

---

१. पंक्तित्रयं नास्ति क. प्रतौ । २. ख. ख्यातः । ३. ख. वैरोचख्यानाशी:

*टिप्पणी—१ ग्रन्थान्तरेषु प्राप्तशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे पर्यालोच्याः ।

*टिप्पणी-२ मा कान्ते ! पक्षस्यान्ते पर्याकाशे देशे स्वाप्सीः,
कान्तं वक्त्रं वृत्तं पूर्णं चन्द्रं मत्वा रात्रौ चेत् ।
क्षुत्क्षामः प्रोद्यच्चेतस्येतो राहुः क्रूरः प्रायात्,
तस्माद्ध्वान्ते हर्म्यस्यान्ते शय्यैकान्ते कर्तव्या ॥
[कण्ठाभरण]

*टिप्पणी-३ प्राकृतपैंगलम्-द्वितीयपरिच्छेद, पद्य १५५ ।

यथा—

अयममृतमरीचिर्दिग्वधूकर्णपूरं
सपदि परिविधातुं कोऽपि कामीव कान्तः ।
सरस इव नभस्तोऽत्यन्तविस्तारयुक्ता-
दुडुगणकुमुदानि प्रोच्चकैर्हञ्चिनोति ॥ ३३३ ॥

यथा वा, पाण्डवचरिते—

भवनमिव ततस्ते बाणजालं प्रकुर्वन्,
गजरथहयपृष्ठे बाहुयुद्धे च दक्षाः ।
विधृतनिशितखड्गाश्चर्मणा भासमाना,
विदधुरथ समाजे मण्डलात् सव्यवामात् ॥ ३३४ ॥

यथा वा, अस्मत्पितामहमहाकविपण्डितश्रीरायभट्टकृते शृङ्गारकल्लोले खण्डकाव्ये—

मन इव रमणीनां रागिणी वारुणीयं,
हृदयमिव युवानस्तस्कराः स्व हरन्ति ।
भवनमिव मदीयं नाथ शून्यो हि देश-
स्तव न गमनमीहे पान्थ कामाभिरामा ॥ ३३५ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

निरवधिदिनमाना य विना गोपवध्व-
स्तमभिकमभिसार्यं वीक्षमाणा ननन्दुः ।
स्मितमधुरमपाङ्गालोकन प्रीतिवल्या.,
कुसुममिव तदीयं वीक्ष्य कृष्णोप्यतुष्यत् ॥ ३३६ ॥

इति मालिनी १२६

१२७ अथ चामरम्

पक्षिराजभूपतिक्रमेण यद् विराजते,
बाणभूमिसख्ययाक्षरं च यत्र भासते ।
नागराजभाषित सदेव चारुचामर,
मानसे विधेहि पाठतोऽपि मोहितामरम् ॥ ३३७ ॥

यथा—

नौमि गोपकामिनीमनोविनोदकारण,
लीलयावधूतकंसराजमत्तवारणम् ।
कालियाहिमस्तकोल्लसन्मणिप्रकाशित,
नन्दनन्दन सदैव योगिचित्तभासितम् ॥ ३३८ ॥

यथा वा, भूषणे[1]*—

रासलास्यगोपकामिनीजनेन खेलता,
पुष्पपुञ्जमञ्जुकुञ्जमध्यगेन दोलता।
तालनृत्यशालिगोपबालिकाविलासिना,
माधवेन जायते सुखाय मन्दहासिना ॥ ३३९ ॥

इति चामरम् १५७.

एतस्यैव ग्रन्थान्तरे तूणकं *[2] इति नामान्तरम्।

१५८. अथ भ्रमरावलिका

चरणे विनिधेहि सकारमिषूपमितं,
कुरु वर्णमपीपुनिशाकरसंप्रमितम्।
फणिनायकपिङ्गलचित्तमुदः कलिका,
सखि ! भाति कवीन्द्रमुखे भ्रमरावलिका ॥ ३४० ॥

यथा–

कलकोकिलकूजितपूजितनू(त्न)वनं,
वनजाक्षिनवीनसरोजवनीपवनम्।
हिमदीधितिकान्तिपयःपरिधौतमिदं,
जगदाशु विलोक्य[1] परित्यज मानमिदम् ॥ ३४१ ॥

यथा वा, भूषणे[3]–

सखि ! सम्प्रति क प्रति मौनमिदं विहितं,
मदनेन धनुः सशरं स्वकरे निहितम्।
मतिशालिनि का वनमालिनि मानकथा,
रतिनायकसायकदुःखमुपैषि[2] वृथा ॥ ३४२ ॥

इति भ्रमरावलिका १५८.

भ्रमरावलीति पिङ्गले[4]*

---

१. ग. जगदाशुचि लोक्य। २. 'मुपैति' वाणीभूषणे।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, प० २६२
२ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तबक, कारिका १३७
३ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य २६६
४ प्राकृतपैङ्गलम्, द्वितीयपरिच्छेद, प० १५४

१५९. अथ मनोहंस

प्रथम विधेहि कर जकारविराजित,
जगण ततो भगणेन कारय भूषितम् ।
विनिधेहि पक्षिपर्ति ततस्तिथिजाक्षर,
कुरु हंसमेणविलोचने मनस परम् ॥ ३४३ ॥

यथा–
तनुजाग्निना सखि ! मानस मम दह्यते,
तनुसन्धिरुण्णगदारवत् परिभिद्यते ।
अधर च शुष्यति वारिमुक्तसुशालिवत्,
कुरु मद्गृह कृपया सदा वनमालिमत् ॥ ३४४ ॥

यथा वा–
नवमञ्जुवञ्जुलगुञ्जकूजितकोकिले,
मधुमत्तचञ्चलचञ्चरीककुलाकुले ।
समयेसिथीरसमीरकम्पितमानसे,
किमु चण्डि मानमनोरथे न विभिद्यसे ॥ ३४५ ॥

इति मनोहंस १५९

१६० अथ शरभम्

जलनिधिकृत्तमिह विरचय नगण ,
चरणविरतिमनुविरचय सगणम् ।
वरफणिपतिविरचितमतिरुचिर ,
शरभमतिलहृदि विलसति सुचिरम् ॥ ३४६ ॥

यथा–
नभसि समुदयति सखि ! हिमकिरण ,
वहति सुलघुलघुमलयजपवनम् ।
त्यजति तिमिरमिदमपि(भि) जननयन ,
द्रुतमनुविरचय मधुरिपुशयनम् ॥ ३४७ ॥

इति शरभम् १६०

इदमेवात्र शशिकला*"इति नामान्तरेण उक्तम् ।
अथ मणिगुणनिकरसृजो द्रदसी, किञ्च —
इदमेव हि यदि वसुयति ८ मणिगुणनिकरास्यमीर्यते हि तदा ।
यदि तु रसे ६ विश्राम व्रजति समाख्या तदा लभते ॥ ३४८ ॥

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी द्वितीयस्तबक, कारिका १३१

अपि च

मणिगुणनिकरोदाहृतिरिह शरभोदाहृतौ ज्ञेया ।
स्रगुदाहरणं ज्ञेयम् लक्षणवाक्ये तु शरभस्य ॥ ३४९ ॥

यथा वा–

नरकरिपुरवतु निखिलसुरगति-
रमितमहिमभरसहजनिवसति [1] ।
अनवधिमणिगुणनिकरपरिचित ,
सरिदधिपतिरिव धृततनुविभव ॥ ३५० ॥

अयि ! सहचरि ! रुचिरतरगुणमयी ,
स्रदिमवसतिरनपगतपरिमला ।
स्रगिव निवसति लसदनुपमरसा ,
सुमुखि ! मुदितदनुजदलनहृदये ॥ ३५१ ॥

इति छन्दोमञ्जर्यामुदाहरणद्वय*[1]यतिभेदेनोक्तम् । प्रकृत तु शरभमेव इति न कश्चिद् विशेष ।

१६१ अथ निशिपालकम्

धेहि भगण तदनु भूपतिमथो कर ,
देहि नगण च रगण कुरु तत परम् ।
नागनृपपिङ्गलसुभाषितमुदीरित ,
वृत्तममल हृदि निधेहि निशिपालकम् ॥ ३५२ ॥

यथा–

गोपतरुणीजनमनोहरणपण्डित,
हस्तयुगधारितसुवेणुपरिमण्डितम् ।
चन्द्रकविराजितविलोलमुकुट हृदा,
नौमि हरिमर्कतनयातटगत सदा ॥ ३५३ ॥

यथा वा, भूषणे[2]*[2]–

चन्द्रमुखि ! जीवमुखि(पि) ! वाति मलयानिले,
याति मम चित्तमिव पाति* मदनानिले ।

---

[1] क सनिखिल सुगति । २ गाइ वाणीभूषणे' ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तवक, कारिका १३१, १३२
२ वाणीभूषणम् द्वितीयाध्याय, पद्य २२६

तापकर-कामशर-शल्यवरकीलितं[1],
मामिह हि पश्य जहि कोपमतिशीलितम्[2] ॥ ३५४ ॥

इति निशिपालकम् १६१.

१६२. अथ विपिनतिलकम्

रचय नगणं तदनु धेहि हस्तं मुदा,
नगणसहितं रगणयुग्ममन्ते सदा ।
रसनवयतिं फणिपभाषितं सुन्दरं
विपिनतिलकं कलय बाणविश्वक्षरम् ॥ ३५५ ॥

यथा–

नरवरपतेरिव नराः शशाङ्कांशवः,
तिमिरनिकरः सपदि चोरवद् गच्छति ।
अयमपि रविः सखि ! हृताधिकारिप्रभः,
कथयति विधोः खगकुलं जयं वदिवत् ॥ ३५६ ॥

यथा वा–

जयति करुणानिधिरशेषसत्तारकः,
कलितललितादिवनितामनोहारकः ।
सकलधरणीपकुलमण्डलीपालकः,
परमपदवीकरणदेवकीबालकः ॥ ३५७ ॥

इति विपिनतिलकम् १६२.

१६३. अथ चन्द्रलेखा

कर्णे ताटङ्कयुग्मं पुष्पाढ्यहारौ दधाना,
बिभ्राणा नूपुरस्य द्वन्द्वं सुराव सुचित्तम् ।
पादान्ते धारयन्ती वीणां सुवर्णाविमुक्ता,
नागोक्ता चन्द्रलेखा सप्ताष्टच्छेदैरमुक्ता ॥ ३५८ ॥

यथा–

नित्यं वन्दे महेशं गौरीशरीरार्द्धयुक्तं,
दग्धानङ्गं पुरारिं वेतालसङ्घैरमुक्तम् ।
बिभ्राणं चन्द्रलेखां नृत्येषु वृत्तिं धुनानं,
गङ्गासञ्जातसङ्गं दृष्ट्या त्रिलोकीं पुनानम् ॥ ३५९ ॥

इति चन्द्रलेखा १६४.

चण्डलेखा इत्यन्यत्र ।

---

१. तापभरकीलितम्, 'वाणीभूषणे' । २. रोषमतितञ्चितम् 'वाणीभूषणे' ।

१६४. अथ चित्रा

कर्णद्वन्द्वं ताटङ्काभ्यां योजितं कारयित्वा,
हारौ बिभ्राणा स्वर्णाढ्यं पुष्पयुक्तं तथैव ।
तिर्य्युक्तैर्वर्णैः संयुक्ता कङ्कणौ धारयन्ती,
शोभां धत्ते चित्रां चित्रा शब्दवन्नूपुराभ्याम् ॥ ३६० ॥

यथा–

कालिन्दीकूले केलीलोलं वधू[1]सङ्घयुक्तं,
वन्दे गोपालं रक्षायां नन्दगोपस्य सक्तम् ।
हस्तद्वन्द्वे धृत्वा श्वासैर्वंशिकां पूरयन्तं,
दैतेयान् हत्वा देवानां संकटं दूरयन्तम् ॥ ३६१ ॥

इति चित्रा १६४.

चित्रमिदमन्यत्र* ।

१६५. अथ केसरम्

कुरु नगणं ततोऽपि च विधेहि भूपतिं,
भगणपयोधरौ तदनु पक्षिणां पतिम् ।
फणिपतिभाषितं तिथिविभाविताक्षरं,
सुकविमनोहरं हृदि निधेहि केसरम् ॥ ३६२ ॥

यथा–

चिरमिह मानसे कलय नन्ददारकं,
वरवनमालिनं दितिसुतापहारकम् ।
व्रजवनितारसोदधिनिमग्नमानसं,
रवितनयातटे कलितपीतवाससम् ॥ ३६३ ॥

इति केसरम् १६५.

१६६. अथ एला

प्रथमं करं रचय जगणमनु कान्ते !
नगणद्वयं तदनु कुरु यगणमन्ते ।
फणिभाषिता शरपरिकलितविरामा,
कृतसंस्तुतिः सकलवरकविभिरैला ॥ ३६४ ॥

---

१. ख. वन्धू ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तबक, कारिका १३६

यथा–

हृदि भावये विमलकमलनयनान्त ,
जनपावन नवजलधररुचिकान्तम् ।
व्रजनायिकाहृदयमधिजनितकाम ,
वनमालिन सकलसुरकुलललामम् ॥ ३६५ ॥

इति एला १६६

१६७ अथ प्रिया

कुरु नगणयुग धेहि त भगण तत ,
प्रतिपदविरतो भासते रगणोऽन्तत ।
मुनिरचितयति[1]र्नागराजफणिप्रिया ,
सकलतनुभृता मानसे लसति प्रिया ॥ ३६६ ॥

इदमेव हि यदि वसुयति= रलिरिति सज्ञा तदाप्नोति ।
लक्षणवाक्ये मुनियतिरुदिता वसुकृतयतिश्च यथा ॥ ३६७ ॥

यथा–

कलय दशमुखारि हृताखिलदानव ,
मुनिजनमखपालमृपा भुवि मानवम् ।
सरसिजनयनान्त शरासनभञ्जक ,
कपिकुलवरराज सदा प्रियसञ्जकम् ॥ ३६८ ॥

इति प्रिया १६७

१६८ अथ उत्सव

पक्षिराज-नगणौ भगण द्वितय तत
कारयाशु पदशेषकृतो रगणो मत ।
उत्सव फणिनागवृत सखि ! भासते ,
पङ्क्तिजाक्षरविरामयुत कविमानसे ॥ ३६९ ॥

यथा–

यभ्रमीति हृदय जलधौ तरणिर्यथा ,
दह्यते सखि ! तनुर्नलिनीव हिमागमे ।
वायुलोलकदलीव तनुर्मम वेपते ,
चन्दन शुचि सरोवदिद परिशुष्यति ॥ ३७० ॥

इति उत्सव १६९

---

१ ख यति ।

१६९. अथ उडुगणम् ।

भुवनविरचितमिह लघुमुपनय ,
तदनु विघुकृतलघुमिह विरचय ।
उडुगणमखिलहृदयकृतसदन—
मृषिकृतविरतिमनुकुरु सुवदन ! ॥ ३७१ ॥

यथा–

दहनगतमलकनकनिभवसन,
कटिधृतविरुतरुचिरवररसन ।
सुरकृतनमन जलनिधिनिवसन,
शमनुविरचय कुसुमनिभहसन ॥ ३७२ ॥

इति उडुगणम् १६९.

[1]*अत्रापि प्रस्तारगत्या पञ्चदशाक्षरस्य द्वात्रिंशत्सहस्राणि सप्तशतानि अष्ट षष्टयुत्तराणि ३२७६८ भेदास्तेपु आद्यन्तसहिताः कियन्तः प्रोक्ताः, शेषभेदा. प्रस्तार्य लक्षणीया इति दिक्[1]* ।

इति पञ्चदशाक्षरम् ।

अथ षोडशाक्षरम्

तत्र–

१७०. राम·

यस्मिन्नष्टौ पादस्थित्या युक्ता. संदृश्यन्ते कर्णाः,
संशोभन्ते पादे पादे शृङ्गारैः सख्याता वर्णाः ।
यस्मिन् सर्वस्मिन् पादे स्याद् वेदैर्वेदैर्यद्विश्रामः,
सर्पाणामीशेन प्रोक्तः सच्छन्दः स्यु·(स्तु) प्रेष्ठो राम. ॥३७३॥

यथा–

इन्द्राद्यैर्देवेन्द्रैर्नित्यं वन्द्यः पायाल्लोकं राम·,
लक्षाणा दातृत्वे दक्षः सर्वेषा क्षत्राणां वामः ।
अङ्गीकृत्यात्यन्तं पित्रा दत्ताभाशा शस्त्र वेगात्,
मातुर्मूर्ध्नि च्छेदे[2] बिभ्रद् यो वै हस्ते कम्प नागात् ॥ ३७४ ॥

इदमेवाऽन्यत्र ब्रह्मरूपकम्[2]*इति नामान्तरं लभते ।

इति रामः १७०.

---

१. पङ्क्तित्रय नास्ति क. प्रतौ । २. ख. मातर्मूर्द्धच्छेदे ।

* टिप्पणी—१ ग्रन्थान्तरेषु पञ्चदशाक्षरवृत्तस्योपलब्धशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः ।

* टिप्पणी—२ प्राकृतपैंगलम् द्वितीयपरिच्छेद, प० १७४

१७१. अथ पञ्चचामरम्

शरेण नूपुरेण यत्क्रमेण भावितासरं,
　　वसुप्रयुक्तभेदभाग् भवेच्च षोडशाक्षरम् ।
फणीन्द्रराजपिङ्गलोक्तमुक्तमत्र भासुरं,
　　विधेहि मानसे सदैव चारु पञ्चचामरम् ॥ ३७५ ॥

यथा–

कठोरठात्कृतिध्वनत्कुठारधारभीषणं,
　　स्वयं कृतप्रतिज्ञया सहस्रबाहुदूषणम् ।
समस्तभूमिदक्षिणे मखे मुनीन्द्रतोषणं,
　　नतो महेन्द्रवासिनं भृगुन्तु[1] वंशभूषणम् ॥ ३७६ ॥

यथा वा, अस्मद्वृद्धप्रपितामह-श्रीरामचन्द्रभट्टमहाकविपण्डितविरचित-दशावतारस्तोत्रे जामदग्न्यवर्णने—

अकुण्ठधार भूमिदार कण्ठपीठलोचन-
　　क्षणध्वनद्ध्वनत्कृतिक्वणत्कुठारभीषण ।
प्रकामवाम जामदग्न्यनाम राम हैहय-
　　क्षयप्रयत्ननिर्दय व्यय भयस्य जृम्भय ॥ ३७७ ॥

इति पञ्चचामरम् १७१.

एतस्यैव अन्यत्र नराचम्'*इति नामान्तरम् ।

१७२. अथ नीलम्

वेद-भकारविराजितमद्भुतवृत्तवरं,
　　भामिनि ! भावय चेतसि कङ्कणशोभि करम् ।
पिङ्गलनागसुभाषितमालि विमोहकरं,
　　नीलमिदं रसभूमिविभावितवर्णधरम् ॥ ३७८ ॥

यथा–

पर्वतधारिणि गोपविहारिणि 'नन्दसुते,
　　सुन्दरि हारिणि'[2] कंसविदारिणि बालयुते ।
पङ्कजमालिनि केलिषु शालिनि मे सुमति-
　　र्वेणुविराविणि भ्रम(भ)रहारिणि जातरति ॥ ३७९ ॥

इति नीलम् १७२.

---

१. ख. भृगुः । '–' २. क. प्रतौ नास्ति ।

*टिप्पणी—१. वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, प० २७३

१७३. अथ चञ्चला

'हारमेरुजक्रमेण यद्विराजते सुकेशि !,
षोडशाक्षरेण यद् विकासितं भवेत् सुवेषि ! ।
पिङ्गलेन भाषितं समस्तनागनायकेन,
तद्धि चञ्चलाभिधं कवीन्द्रमोददायकेन ॥ ३८० ॥

यथा–

आलि ! रासजातलास्यलोलया सुशोभितेन,
गैरिकादिधातुवन्यभूषणानुभूषितेन ।
गोपिकाविमोहिराववंशिकाविनोदितेन,
मन्मनो हृतं व्रजाटवीषु केलिमोदितेन ॥ ३८१ ॥

यथा वा, भूषणे[1]*—

आलि ! याहि मञ्जुकुञ्जगुञ्जितालिलालितेन,
भास्करात्मजाविराजिराजि[2]तीरकाननेन ।
शोभिते स्थले स्थितेन सङ्गता यदूत्तमेन,
माधवेन भाविनी तडिल्लतेव नीरदेन ॥ ३८२ ॥

इति चञ्चला १७३.

एतस्यैवान्यत्र चित्रसङ्गम्*[2]इति नामान्तरम् ।

१७४. अथ मदनललिता

कर्णे कृत्वा कनकरुचिरं ताटङ्कसहितं,
सविभ्राणा द्विजमथ पुनः स्वर्णाढ्यवलया ।
हारौ धृत्वा कुसुमकलितौ हस्तेन रुचिरा,
वेदैः षड्भिर्मदनललिता छिन्ना रसयतिः ॥ ३८३ ॥

यथा–

कालिन्दीये तटभुवि सदा[3] केलीषु ललितं,
राधाचित्तप्रणयसदनं गोपेषु(षीषु) वलितम् ।
सविभ्राणं विरुतरुचिरं वंशं करतले,
ध्यायेन्नित्यं व्रजपतिसुतं चित्तेऽतिविमले ॥ ३८४ ॥

इति मदनललिता १७४.

---

१ ख हारमेरुजक्रमेण सद्विराजते पुरेण, यद्विकासितं भवेत् सुकेशि षोडशाक्षरेण ।
२ ख रम्यतीरकाननेन । ३ ख. तटपरिसरे ।
* टिप्पणी–१ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य २७८
२. छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तबक, कारिका १४८

१७५ अथ वाणिनी

कुरु नगणं विधेहि जगणं ततो भकारं,
　　जगणमथोऽपि रेफयुतमन्तजातहारम् ।
षडधिकपङ्क्तिवर्णकलितं सुवृत्तसारं,
　　कलयत वाणिनीति कविभिः कृतप्रचारम् ॥ ३८५ ॥

यथा–

अनवरतं खराशुतनयाचलज्जलौघं,
　　तटभुवि 'संलुप्ते'*'ऽखिलनृणां विनाशिताघं ।
द्विजजनसाधिताऽनुपमसप्ततन्तुभोक्ता,
　　पशुपजनैर्हरिः सह वनोदनं जघास[1] ॥ ३८६ ॥

इति वाणिनी १७५.

१७६ अथ प्रवरललितम्

यकारं पूर्वस्मिन् रचय मगणं धारयाशु,
　　नकारं हस्तं च प्रथय रगणं धेहि वासु ।
गुरु पादस्यान्ते विरचय फणीन्द्रेण गीतं,
　　सुहास्ये विश्रामं प्रवरललितं नाम वृत्तम् ॥ ३८७ ॥

यथा–

तडिल्लोलैर्मेघैर्दिशि दिशि महाध्वानवद्भि-
　　र्गजानीकाकारैरनवरतमापः सृजद्भिः ।
व्रजं भीतं[2] वीक्ष्य द्रुतमचलराजं कराग्रे,
　　दधद्रक्षां कुर्यात् भवजलनिधावत्युदग्रे ॥ ३८८ ॥

इति प्रवरललितम् १७६

१७७ अथ गरुडरुतम्

द्विजवरमत्र धेहि रगणं नकारं ततः,
　　कुरु रगणं ततोऽपि रगणं पदान्ते मतः ।
षडधिकपङ्क्तिवर्णकलितं समस्ते पदे,
　　गरुडरुतं समस्तफणिराजचित्तास्पदे ॥ ३८९ ॥

---

१ ख विटपितले सुते । २ क घतोदनं भुक्ति । ३ ख छ्द्म ।

*टिप्पणी—१ अत्र पादे नगणमनु जगणोपस्थितिर्युक्ता किन्त्वत्र 'संलुप्ते' इति पाठे यगणो जायते तदयुक्तम् ।

यथा–

मृगगणदाहके वननदीसर शोषके,
ग्रसति तरून् विलोलनिजहेतिजिह्वाशते ।
भयभरखिन्न¹डिम्भवदन निरीक्ष्याशु य,
दवदहन पपौ स दिशतान् मनोवाञ्छितम् ॥ ३६० ॥

इति मदकरतम् १७७

१७८. अथ चकिता

देहि भमिह स कर्णं हारो कुण्डलमबले !,
धारय कुसुम पुष्पद्वन्द्व कामिनि ! तरले ! ।
रूपचलयक पादप्रान्ते स्यादिह चकिता,
षड्सु च विरति काव्यव्यक्ति स्मरले² भविता ॥ ३६१ ॥

यथा–

कामिनि ! सुघने वृन्दारण्ये नन्दय नयन,
भामिनि ! भवने भव्याकारे भावय शयनम् ।
शीतलपवने धन्ये पुण्ये खञ्जननयने,
त्वामिह कलये तल्पेऽनल्पे कुञ्जरगमने ॥ ३६२ ॥

इति चकिता १७८

१७९. अथ गजतुरगविलसितम्

धारय रौहिणेयमथ पतगवरपतिं,
कारय वह्निमेय नगणवरगुरुयतिम ।
षोडशवर्णधारि गजतुरगविलसित,
भामिनि ! भावयेदमपि मुनियतिरचितम ॥ ३६३ ॥

यथा

सुन्दरि ! नन्दनन्दनमिह धरणिवलये,
मानिनि ! मानदानमपि³ न हि न हि कलये ।
भावय भावनीयगुणगणपरिकलित,
चेतसि चिन्तयाशु सखि ! मुनिजनवलितम ॥ ३६४ ॥

इति गजतुरगविलसितम १७९

क्वचिद इदमव ऋषभगजविलसितम्'* इति नामान्तरेणोक्तम् ।

---

१ ख भिन्न । २ ख सरले । ३ ख मानगोचरमुमिह न कलये ।

*टिप्पणी—१ वृत्तरत्नाकर अ० ३, का० ९१, छन्दोमञ्जरी द्वि० स्त० का० १४९

१८० अथ शैलशिखा

धेहि भकारमत्र खगराजमवेहि तत
　　　　कारय न ततोऽपि भगणो भगणेन युत ।
नूपुरमेकसख्यमवधेहि पदान्तगत
　　　　शैलशिखाभिध त्वमवधारय नागकृतम् ।। ३६५ ।।

यथा–

गोपवधूमयूरवनितानवमेघनिभ,
　　　　दानवसङ्घदारणविधावतिसप्रतिभ ।
तुम्वरुनारदादिकमन सरसीषु गज,
　　　　वाञ्छितमातनोतु तव गोपपतेस्तनुज ।। ३६६ ।।

इति शैलशिखा १८०

१८१ अथ ललितम

कारय भ ततोऽपि रगण विधेहि नगण
　　　　पक्षिपतिं विधारय पुनस्तथैव नगणम् ।
कङ्कणमन्तग कुरु समस्तपादविरतौ
　　　　धेहि मन सदैव ललिते फणीश्वरकृतौ ।। ३६७ ।।

अत्रापि सप्तभिर्नवभि प्रायो विरतिर्भवतीति उपदिश्यते ।

यथा–

गोपवधूमुखाम्बुजविकासने दिनपति,
　　　　दानवसङ्घमत्तकरिदारणे मृगपति ।
लोकभयापह सकलवन्द्यपादयुगल,
　　　　श कुरुता ममापि च विलोलनेत्रकमल ।। ३६८ ।।

इति ललितम १८१

१८२ अथ सुकेसरम्

नगण-सगणौ विधेहि जगण तत पर,
　　　　सगण-जगणौ च नूपुरमथोऽनन्तरम ।
फणिनृपतिभाषित रसविधूदिताक्षर,
　　　　कलय हृदये सदा सुखकर सुकेसरम ।। ३९९ ।।

यथा–

नरपतिसमूहकण्ठतटघट्टनोद्भवं
　　　　रुडुगणनिभं स्फुलिङ्गनिकरैर्भयानक ।
विलसति नृपेन्द्रशत्रुगणधूमकेतुवत
　　　　तव रणविधौ स्थित करतले कृपाणक ।। ४०० ।।

इति सुकेसरम १८२

१८३ अथ ललना

प्रथम कलय करतलमात्मना ह्यपथा[1],
ललना नगणयुगलवती जभाकलिताम् ।
फणिराजभणितगुण(रु)विराजितामतुला,
कलयाशु सपदि सुजनमानसे वलिताम्[2] ॥ ४०१ ॥

यथा

विदधातु सकलफलमनारत तनुते,
सनकादिनिखिलमुनिनतो वने वनिते ! ।
व्रजराजतनय इह सदा हृदा कलित,
स चराचरजनतनुमहोदधौ फलित ॥ ४०२ ॥

इति ललना १८३

१८४ अथ गिरिवरधृति

शरपरिमितमिह नगणमनु कुरुत,
विधुविरचितमथ लघुमपि रचयत ।
फणिपतिरिति किल मधुरमनुवदति,
कलयत निजहृदि गिरिवरधृतिरिति ॥ ४०३ ॥

यथा –

विशिखनिचयहतनिखिलरजनिचर !,
निजभुजयुगवलरणविनिहतखर ! ।
विबुधनिहतभय ! दशमुखकुलहर !,
दशरथनृपसुत ! जय ! जय ! रघुवर ! ॥ ४०४ ॥

इति गिरिवरधृति १८४

अचलधृति **इत्यन्यत्र ।

[3]अत्रापि प्रस्तारगत्या षोडशाक्षरस्य पञ्चषष्टिसहस्राणि पञ्चशतानि षट्त्रिंशदुत्तराणि ६५५३६ भेदास्तेषु कियन्तो लक्षिताः शेषभेदाः प्रस्तार्य स्वेच्छया नामानि चारयज्या (विचार्य) लक्षणीया इत्युपदिश्यते ।*

इति षोडशाक्षरम् ।

---

१ ख ह्यथ ताम । २ ख वलितम । ३ पंक्तित्रयं नास्ति क प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी द्वितीयस्तबक, का० १५५

, —२ षोडशाक्षरवृत्तस्योपलब्धशेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे पर्यालोच्या ।

अथ सप्तदशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्–

१८५. लीलाधृष्टम्

वृत्ते यस्मिन्नष्टौ पादे वर्णा सयुक्ता सदृश्यन्ते,
हारश्चैकं प्रान्ते यस्मिन् वर्णा शैलचन्द्रै शोभन्ते ।
सर्वेषा नागाणामीशेनैतत्सम्प्रोक्त येहि स्वान्ते,
भूपालाना चित्तानन्दस्थान लीलाधृष्टाख्य कान्ते ! ॥ ४०५ ॥

यथा–

वारा राशौ सेतु बदध्वा लङ्कायामातङ्कोघ दास्यन्,
नानावर्णं सुग्रीवाद्यं लङ्काया[1] भिन्न दुर्गं कुर्वन् ।
सीताचित्ते प्रेमाधिक्यं लोहं कोलैर्ग्राणीयोत्कीर्णा,
काकुत्स्थ कल्याण कुर्यादि युष्माक ऽव्यादाब्धि तीर्णं ॥ ४०६॥

इति लीलाधृष्टम् १८५

१८६ अथ पृथ्वी

पयोधरविराजिता करसुवर्णवत्कङ्कणा,
सुगन्धकुसुमोज्ज्वला सरसहारसशोभिनी ।
सुरूपयुतकुण्डला कनकरावसुनूपुरा,
वसुप्रथितसस्थितिर्जगति भाति पृथ्वी सदा ॥ ४०७ ॥

यथा–

हरिर्भुजगनायक निजगिरिं भवानीपति,
गजेन्द्रममराधिपो निजमरालमब्जासन ।
द्विजा विबुधकूलिनी जगति जायमाने नृप !,
त्वदीययशसोज्ज्वले किल गवेषयन्त्यातुरा ॥ ४०८ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले–

अनेन नयताऽधुना महदुलूखल शाखिनो,
र्यातियुगमन्तरा ककुभयोरिह क्रामता ।
इतीरयति केचन श्रदघुराशु गोपान्हृदा,
पुरो विहरति स्वके शिशुकदम्बके नापरे ॥ ४०९ ॥

इत्यादि शतशो निदर्शनानि काव्येषु ।

इति पृथ्वी १८६

---

[1] ख लङ्काया ।

१८७ अथ मालावती

द्विजविलसिता पयोधरविराजिता हारिणी,
सरसकरयुक्सुवर्णवलया लसत्कुण्डला ।
विरुतयुतनूपुरा मुनिदिगीशसत्याक्षरा,
भुजङ्गपतिभाषिता जगति भाति मालावती ॥ ४१० ॥

यथा–

वनचरकदम्बकैरपरसिन्धुशोभाधरैं,
करजदशनायुधैर्जलधिनीरमाच्छादयन् ।
रघुपतिरुपागत सखि ! निशाचराधीश्वर,
रणभुवि निहत्य दास्यति तवातुल सम्मदम् ॥ ४११ ॥

इति मालावती १८७

मालाधर इति पिङ्गले[*] नामान्तरम् ।

१८८ अथ शिखरिणी

सुरूप स्वर्णाढ्य श्रवणमधिताटङ्कयुगल,
सदा सविश्राणा द्विजमथ सुपुष्पाढ्यवलयौ ।
सुरूप हस्ताग्र तदनु दधतो राजति रसैं,
शिवैश्छिन्ना नागप्रथितमहिमेय शिखरिणी ॥ ४१२ ॥

यथा–

दिशि स्फारीभूतैं कविनिकरगीतैस्तव रण-
स्तवैर्वत्याचक्रैर्द्विगुणितरय क्षोणितिलक ।
प्रतापो दावाग्निस्तव खरकरस्पर्शकठिनो,
विपक्षक्षोणीन्द्र प्रथितवनमत्र प्रभवति[1] ॥ ४१३ ॥

यथा वा, ममैव पवनदूते खण्डकाव्ये—

यदा कसादीना निधनविषये यादवपुरी,
गत श्रीगोविन्द पितृभवनतोऽक्रूरसहित ।
तदा तस्योन्मीलदविरहदहनज्वालगहने,
पपात श्रीराधाकलिततदसाधारणरति ॥ ४१४ ॥

---

१ ख प्रदति ।

*टिप्पणी—१ प्राकृतपैंगलम्, द्वितीयपरिच्छेद, पद्य १७८

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

विना तत्तद्वस्तु क्वचिदपि च भाण्डानि भगवत्,
प्रसादान्ताऽभूवन् प्रतिभवनमित्यद्भुतमभूत् ।
भयोद्यद्वैलक्ष्याऽवितथवचसस्तच्चरणयो-
र्निपेतुस्ता हस्ताहृतवसनमुक्तामणिगणाः ॥ ४१५ ॥

यथा वा, रूपगोस्वामिकृत-हंसदूतकाव्ये[1]*—

दुकूलं बिभ्राणो दलितहरितालद्युतिहरं,
जपापुष्पश्रेणीरुचिरुचिरपादाम्बुजतलः ।
तमालश्यामाङ्गो दरहसितलीलाञ्चितमुखः,
परानन्दाभोगः स्फुरतु हृदि मे कोऽपि पुरुषः ॥ ४१६ ॥

यथा वा, श्रीशङ्कराचार्यकृत-सौन्दर्यलहरीस्तोत्रे[2]*—

दृशा द्राघीयस्या दरदलितनीलोत्पलरुचा,
दवीयांसं दीनं स्नपय कृपया मामपि शिवे ।
अनेनायं धन्यो भवति न च ते हानिरियता,
वने वा हर्म्ये वा समकरनिपातो हिमकरः ॥ ४१७ ॥[1]

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु शतशो निदर्शनानि द्रष्टव्यानि ।

इति शिखरिणी १८८

१८९ अथ हरिणी

द्विजरसयुता कर्णद्वन्द्वस्फुरद्वरकुण्डला,
कुचतटगतं पुष्पं हारं तथा दधती मुदा ।
विरुतललितं सविभ्राणं[2] पदान्तगनूपुरं,
रसजलनिधिच्छिन्ना नागप्रिया हरिणी मता ॥ ४१८ ॥

यथा-

सपदि कपयः शौर्यविशस्फुरत्करजद्विजाः,
गिरिवरतरून्मृद्नन्तस्तथोत्पथगामिनः ।
अहमहमिका कृत्वा वारांनिधेरतिलङ्घने[3],
तटभुवि गताः संप्रेक्षन्ते मुखानि परस्परम् ॥ ४१९ ॥

१. क. प्रतौ नास्तीदं पद्यम् ।　२. ख. सविभ्राणा ।　३. ख. लघते ।

*टिप्पणी—१ श्रीरूपगोस्वामिकृत-हंसदूतम् प्रथमपद्यम्
२ शंकराचार्यकृत सौन्दर्यलहरी पद्य ४७

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

हसितवदने दृष्ट्वा चेष्टा सुतस्य सविस्मये,
यततुरथ ते गोपापत्यौ तदद्भुतमन्यत ।
तदनु कतिचिद् बाला मात्रे बलेन सहोचिरे,
मृदमनुपद कृष्ण प्राशीदिति प्रतिभाजुष ॥ ४२० ॥

यथा वा, लक्ष्यलक्षणयुक्त तत्रैव—

ग्रहिलहृदयोदञ्चत्तत्तद्गतिप्रतिभाजुषा,
त्रिभुवनपतिप्रत्यासत्तिस्फुरत्पुलकस्पृशाम् ।
शिथिलकबरीबन्धस्रस्तस्रजा हरिणीदृशा,
न समरसत कायप्रायो लघुर्गुरप्यभूत् ॥ ४२१ ॥

श्लेषार्थ ऊहनीय । यथा वा– 'अथ स विषयव्यावृत्तात्मा यथाविधिसूनवे'*।' इत्यादि रघुवंशे महाकाव्यादिसत्कविप्रबन्धेषु च भूमनिदर्शनानि ।

इति हरिणी १८९

१९० अथ मन्दाक्रान्ता

कर्णौ पुष्पद्वितयसहितौ गन्धवद्धस्तयुक्ता,
हार रूप तदनु वलय स्वर्णसञ्जातशोभम् ।
सविश्राणा विरुतललितौ नूपुरौ वा पदान्ते
मन्दाक्रान्ता जयति निगमैश्छेदयुक्ता रसैश्च ॥ ४२२ ॥

यथा–

सिन्धोप्पारे दशमुखपुरी वानरास्तत्र दूता,
पम्पाशम्पाशतयुतचलन्नीलमेघावलीका ।
वास केकाकवलिततटे मादृशामृष्यमूके,
दैवो वाम पुनरयमतो भावि किं किं न जाने ॥ ४२३ ॥

---

*टिप्पणी— १ अथ स विषयव्यावृत्तात्मा यथाविधिसूनवे,
नृपतिककुद दत्वा यूने सितातपवारणम् ।
मुनिवनतरुच्छायां देव्या तया सह शिश्रिये,
गलितवयसामिक्ष्वाकूणामिद हि कुलव्रतम् ॥
[रघुवंश, स० ३, प० ७०]

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

हृत्वा ध्वान्तस्थितमपि वसुप्रक्षिपत् पक्ष्म[राजि-]
स्पन्द विन्दन् व्रजति कुहचित् केश्चनालक्ष्यमाण. ।
छिद्राणि द्राक् कलयति शयाशवयशिक्यस्थभाण्डे[1],
निद्रा भक्त्वा द्रवति जवतस्ताडयत् सुप्तबालात् ।। ४२४ ।। (?)

इति मन्दाक्रान्ता १६०.

१६१ अथ वशपत्रपतितम्

कारय भ ततोऽपि रगण रचय न-भगणौ,
धेहि नकारमेरुवलयान् तदनु सुललितान् ।
व्योमसुधांशुभि कुरु हयै स्तदनु च विरति[2],
चेतसि वशपत्रपतित रचय फणिकृतम् ।। ४२५ ।।

यथा–

जानकि ! नैव चेतसि कृथा रजनिचरमति,
राघवदूततामुपगत कलय हृदि निजे ।
जल्पति मारुताविति तदा जनकतनयया-
दत्त[3] न मुद्रिकाऽपि कलिता जलपिहितदृशा ।। ४२६ ।।

यथा वा–

'सम्प्रति लब्धजन्म शनकै कथमपि लघुनि ।' इति किरातार्जुनीये[1]*।

इति वशपत्रपतितम् १६१

स्त्रीलिङ्गमिति केचित् । वशवदनम् इति शाम्भवे तस्यैव नामान्तरमुक्तम् ।

१६२ अथ नर्दटकम

कुरु नगण तत कलय ज मद भ च ततो,
जगणयुग ततो रचय कारय मेरुगुरू ।
फणिपतिभाषित मुनिविघूदितवर्णधर,
कविजनमोहक हृदि विधारय नर्दटकम् ।। ४२७ ।।

---

१ ख भारो। २ ख विरतिं। ३ ख हन्त।

*टिप्पणी—१ सम्प्रति लब्धजन्म शनकै कथमपि लघुनि,
क्षीणपयस्युपेयुषि भिदा जलधरपटले ।
खण्डितविग्रह बलभिदो धनुरिह विविधा,
पूरयितु भवन्ति विभवशिखरमणिरुच ।।४३।।
[किरातार्जुनीयम् स० ५, प० ४३]

यथा–

श्रनुलवमूर्च्छया क्षपितदेहलता गलता,
नयनजलेन दूषितमुखी[1] तव भूमिसुता ।
रघुवरमुद्रिका हृदि निधाय सुखातिशयै-
र्मुकुलितलोचना क्षणमभूदमृतस्नपिता ॥ ४२८ ॥

यथा वा, श्रीभागवते दशमस्कन्धे वेदस्तुतौ[1]*—

जय ! जय ! जह्यजामजितदोषगृहीत[2]गुणाम् । इत्यादि ।

इति नर्कुटकम् १६२.

अथ कोकिलकम्

मुनिरसवेदैर्विरतिर्यदि कोकिलकं तदेदमेव भवेत् ।
तदुदाहरणं लक्षणवाक्ये ज्ञेयं सुधीभिरिति ॥ ४२९ ॥

यथा वा, छन्दोमञ्जर्याम्[2]*—

लसदरुणेक्षणं मधुरभाषणमोदकरं,
मधुसमयागमे सरसकेलिभिरुल्लसितम् ।
अलिललितद्युतिं रविसुतावनकोकिलकं,
ननु कलयामि तं सखि ! सदा हृदि नन्दसुतम् ॥ ४३० ॥

गणविरचना सैव, विरतिकृत एवात्र भेद इति नामान्तरम् ।

इति कोकिलकम् ।

१६३ अथ हारिणी

कर्णे धृत्वा कनकललितं ताटङ्कमराजितं,
सविभ्राणा द्विजमथ रतस्वर्णाचितौ नूपुरौ ।
पुष्पं हारौ सरसवलयं सधारयन्ती मुदा,
वेदैः षड्भिर्विरचितयतिः शैलोदिता हारिणी ॥ ४३१ ॥

---

१. ख. दूषितमुखी । २. ख गृभीतगुणाम् ।

* टिप्पणी—१ जय जय जह्यजामजितदोषगृभीतगुणां
त्वमसि यदात्मना समवरुद्धसमस्तभगः ।
अगजगदोकसामखिलशक्त्यवबोधक ते
क्वचिदजयात्मना च चरतोऽनुचरेन्निगमः ॥
[भागवत दशमस्कन्ध, अ० ८७, श्लो० १४]

२. छन्दोमञ्जरी, द्वि० स्त० का० १६७ ।

यथा–

बद्ध्वा सिन्धुं नगरमिह मे राम समायात्यय,
　　रोद्धुं [1] श्रुत्वा दशमुख इति प्रीतोऽभवत्तत्क्षणम् ।
बाह्वोः कण्डूं शमयितुमना पश्चान्नरं राघवं,
　　श्रुत्वाऽवज्ञाकलुषितमना लङ्केश्वरोऽभूत्तदा ॥ ४३२ ॥

इति हारिणी १९३

१९४ अथ भाराक्रान्ता

आदौ कुर्यात् मगण-भगणौ ततो नगणो मतः,
　　रेफं दद्यात्तदनुरुचिरं विधेहि करं ततः ।
मेरुं हारं विरचय ततः फणीश्वरभाषिता,
　　भाराक्रान्ता जलनिधिरसैर्विरामयुता मता ॥ ४३३ ॥

यथा–

सिन्धोर्बन्धं रघुवरकृतं निशम्य दशाननो,
　　दध्यौ मूर्द्धनां [2] सपदि बहुधा व्यधाच्च विधूननम् ।
शङ्के च्योतन्मणिकपटतो रघूत्तमरागिणी,
　　सत्यामाख्यां जगति तनुते तदा कमलालया ॥ ४३४ ॥

इति भाराक्रान्ता १९४

१९५ अथ मतङ्गवाहिनी

हारमेरुजक्रमेण जायते यदा विराजिता,
　　शैलभूमिसंख्यकाक्षरैस्तथा भवेद् विकासिता ।
पण्डितावलीविनोदकारिपिङ्गलेन भाषिता,
　　जायते मतङ्गवाहिनी गुणावलीविभूषिता ॥ ४३५ ॥

यथा–

नौम्यहं विदेहजापतिं शरासनस्य 'भञ्जकं,
　　वालिजीवहारिणं विभीषणस्य राज्यसञ्जकम् ।
लक्ष्यवेधने तथा सदा शरासनस्य' [3] धारिणं,
　　रावणद्रुहं कठोरमानुवंशदीप्तिकारणम् ॥ ४३६ ॥

इति मतङ्गवाहिनी १९५

---

१ ख. मोद्धुम् । २ ख मूर्द्धनं । ३, '–' चिह्नगतोंऽश क प्रतौ नास्ति ।

१९६ अथ पद्मकम

रचय नगण स तस्यान्ते धेहि पश्चान्मकार,
तदनु चरणे तस्य द्वन्द्व कारयाशु द्विहारम् ।
समुनिविधुभि पादे छिन्न पिङ्गलेन प्रयुक्त,
कलय हृदये छन्द श्रेष्ठ पद्मक वृत्तसारम् ॥ ४३७ ॥

यथा–

अयमिह[1] पुर पारावार चेतसा गम्यपार,
सपदि सहित पाद सङ्कर्मापणो वीचिहस्तै ।
कपिगणमहासेना चेय पारमुत्प्रेक्षमाणा,
रचय यदिह न्याय शीघ्र वानराणा पते[2] तत् ॥ ४३८ ॥

इति पद्मकम १९६

१९७ अथ दशमुखहरम

जलनिधिपरिमित नगणमिह विरचय,
तदनु च शरपरिमितलघुमपि कलय ।
सकलफणिगणनरपतिरिति हि वदति,
सखि ! कलय निजहृदि दशमुखहरमिति ॥ ४३९ ॥

यथा–

जय ! जय ! रघुवर ! जलधितरणनिपुण !,
दशरथसुत ! विबुधनिकरकथितगुण ! ।
सुरविमतदशवदनकुलकदनकर !
सुरगणनुतचरण ! शमिह मम वितर ॥ ४४० ॥

इति दशमुखहरम् १९७

'अत्रापि प्रस्तारगत्या सप्तदशाक्षरस्य एक लक्ष एकत्रिंशत् सहस्राणि द्विसप्ततिश्च १३१०७२ भेदास्तेषु कियन्त प्रोक्ता, शेषभेदा प्रस्तार्य समुदाहरणीया, इत्यलमतिविस्तरेण'* ।

इति सप्तदशाक्षरम् ।

---

१ ख अयमपि । २ ख पते । ३ पङ्क्तित्रय नास्ति क प्रतौ ।

*टिप्पणी १—सप्तदशाक्षरवृत्तस्यावशिष्टप्रस्तारभेदा पञ्चमपरिशिष्टेऽवलोकनीया ।

अथ अष्टादशाक्षरम्

तत्र—

१९८ अथ लीलाचन्द्र

अश्वै सख्याता यस्मिन् वृत्ते पादे पादे शोभन्ते कर्णा,
पश्चाद् वेदै सख्याता हारा योगैश्चन्द्रैस्सयुक्ता वर्णा ।
लीलाचन्द्राख्य वृत्त प्रोक्त नागानामीशेनैतत् कान्ते !,
रन्ध्राङ्कैर्वर्णै सविच्छिन्न येहि स्वान्ते भास्वन्नेनान्ते ॥ ४४१ ॥

यथा—

हालापानोद्घूर्णन्नेत्रान्तस्तुच्छीकुर्वत्कैलास भासा,
नीलाम्भोजप्रोद्यच्छोभावत् स्कन्ध द्वन्द्वे सराजद्वासा ।
माला वक्ष पीठे बिभ्राणो न्यक्कुर्वन्ती कान्त्यालीन् तूर्णं,
ताम्राङ्कस्सर्वेषा लोकाना कल्याणौघ दद्यात् सम्पूर्णम् ॥४४२॥

इति लीलाचन्द्र १९८

१९९ अथ मञ्जीरा

पूर्वे[१] कर्णत्रित्व कारय पश्चाद्धेहि भकार दिव्य,
हार वह्निप्रोक्त धारय हस्त देहि मकार चान्ते ।
रन्ध्रैर्वर्णैर्विश्राम कुरु पादे नागमहाराजोक्त,
मञ्जीराख्य वृत्त भावय शीघ्र चेतसि कान्ते ! स्वीये ॥ ४४३ ॥

यथा—

सिन्धुर्गम्भीरोऽय राजति गन्तार कपयस्तत्पार,
शैल शैले केकी कूजति वातोऽय मलयाद्रेर्वाति ।
लङ्काया वैदेही तिष्ठति कामोऽय पुरत सज्जास्त्र,
सामग्रीय तावल्लक्ष्मण सर्वं पूर्वकृतस्याधीनम् ॥ ४४४ ॥

यथा वा, भूषणे*—

प्रौढध्वान्ते गर्जद्वारिदधाराधारिणि काले गत्वा,
त्यक्त्वा प्राणानत्र कौलसमाचारानपि हित्वा यान्तो ।
कृत्वा सारङ्गाक्षी साहसमुच्चै केलिनिकुञ्ज शून्य,
दृष्ट्वा प्रागत्राण भावि कथ वा नाथ ! वद प्रेयस्या ॥४४५॥

इति मञ्जीरा १९९

---

१ ख पूणम ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम, द्वितीयाध्याय, पद्य २१४

२००. अथ चर्चरी

कुण्डलं दधती सुरूपसुवर्णरावरसाहितं,
नूपुरं कुचयुग्मसङ्गतदिव्यहारविभूषिता ।
हस्तयुक्तसुरूपकङ्कणभासिता फणिभाषिता,
चर्चरी कविमानसे परिभाति भावुकदायिनी ॥ ४४६ ॥

यथा–

रासकेलिरसोद्धतप्रियगोपवेष! जगत्पते !
दैत्यसूदन ! भोगिमर्द्दन ! देवदेव ! महामते !
कंसनाशन ! वारिजासनवन्द्यपाद ! रमापते !,
चिन्तयामि विभो ! हरे ! तव पादुके त्रिदशैर्नुते ॥ ४४७ ॥

[1]यथा वा, अस्मत्तातचरणानां श्रीनन्दनन्दनाष्टके—

मन्दहासविराजितं मुनिवृन्दवंद्यपदाम्बुजं,
सुन्दराधरमन्दराचलधारि चारु लसद्भुजम् ।
गोपिकाकुचयुग्मकुङ्कुमपङ्करूपितवक्षसं,
नन्दनन्दनमाश्रये मम किं करिष्यति भास्करिः ॥ ४४८ ॥

[2]यथा वा, तेषामेव श्रीसुन्दरीध्यानाष्टके—

कल्पपादपनाटिकावृतदिव्यसौधमहार्णवे,
रत्नसङ्कृतान्तरीपसुनीपराजि विराजते,
चिन्तितार्थविधानदक्षसुरत्नमन्दिरमध्यगां,
मुक्तिपादपवल्लरीमिह सुन्दरीमहमाश्रये ॥ ४४९ ॥

यथा वा, भूषणे[3]*—

कोकिलाकलकूजितं न शृणोषि सम्प्रति सादरं,
मन्यसे तिमिरापहारि सुधाकर न सुधाकरम् ।
दूरमुज्झसि भूषणं विकलासि चन्दनभारते,
कस्य पुण्यफलेन सुन्दरि ! मन्दिरं न सुखायते ॥ ४५० ॥

---

१. २. नन्दनन्दनाष्टक–सुन्दरीध्यानाष्टकश्चेति पद्यद्वयं नास्ति क. प्रतौ ।
३. वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य २६६

यथा वा, मार्कण्डेयमहामुनिविरचितचन्द्रशेखराष्टके—[प्रथम पद्यम्]

रत्नसानुशरासन रजताद्रिशृङ्गनिकेतन,
　　सिञ्जिनीकृतपन्नगेश्वरमच्युतानलसायकम् ।
क्षिप्रदग्धपुरत्रय त्रिदशालयैरभिवन्दित,
　　चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यम ॥४५१॥

यथा वा, शङ्कराचार्यकृत-नवरत्नमालिकास्तोत्रे[1]—

कुन्दसुन्दरमन्दहासविराजिताधरपल्लवा-
　　मिन्दुबिम्बनिभाननामरविन्दचारुविलोचनाम् ।
चन्दनागुरुपङ्करूषिततुङ्गपीनपयोधरा,
　　चन्द्रशेखरवल्लभा प्रणमामि शैलसुतामहम् ॥ ४५२ ॥

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु सहस्रशो निदर्शनानि अनुसन्धेयानि ।

इति चर्चरी २०० इति द्वितीय शतकम् ।

२०१ अथ क्रीडाचन्द्रः

यकार रसेनोदित सर्वपादेषु सखेहि युक्त,
　　तथा खेहि पादे नगाधीशशीताशु[2]सख्यातवर्णम ।
कवीनामधीशेन नागाधिराजेन सभाषित तत्,
　　मुदा क्रीडया शोभित चन्द्रसज्ञ हृदा खेहि[3] वृत्तम् ॥ ४५३ ॥

यथा— मुनीन्द्रा पतन्ति स्म हस्त नृपा कर्णयुग्मे तथाधु,
　　सभाया नियुक्ता दधु कम्पमुच्चैस्तदा स्तम्भमङ्गा ।
सुराणा समूहेन नाश्रावि लोके तथान्योन्यवाच[4]-
　　स्तदा रामसभिन्नबाणासनाढ्यातपूर्णे[5] त्रिलोके ॥ ४५४ ॥

यथा वा, भूषणे[1]—

भ्रमन्ती धनुर्मुक्तनाराचधारानिरुद्धे समस्ते,
　　नभः प्राङ्गणे पक्षिवाय्वो प्रयाते निरन्ते प्रशस्ते ।

---

१. नवरत्नमालिकाया पद्य क प्रतौ नास्ति ।　२ 'शीताशु' क प्रतौ नास्ति ।
३ घोहि ।　४ ख. वाणी ।　५ ख सनाथातपूर्णे ।

टिप्पणी—१ रा प्रा वि प्र ग्र० स० १४२५० इत्य उपरोक्तपद्य नास्ति, किन्त्वस्य स्थाने निम्नोद्धृत पद्य वर्तते ।
'पदान्यासनम्रीकृतक्षोणिचक्र भुटन्मर्मकूर्म
　　भ्रमत्तुङ्गमत्ताद्रिविक्षेपकोटेरवैर च दर्पम् ।
भुजङ्गेशानि दधासवातोच्चलच्चक्रवामाधवेन्द्र,
　　शिवायास्तु चन्द्रेन्दुचूडामणेस्ताण्डवाडम्बर व ॥२६६॥
[वाणीभूषणम्, द्वि अ प २६८]

तथा चण्डगाण्डीवबाणावलीनीचरक्षाविरक्ष[1],
बभूवाङ्गराजो यथा न स्थितोऽसौ विपक्ष स्वपक्ष ॥ ४५५ ॥

इति क्रोडाचन्द्र २०१

२०२ अथ कुसुमितलता

कर्णौ ताटङ्कप्रथितयशसो[1] धारयन्तौ द्विज च,
प्रोद्यदरूपाढ्य कनककलित कङ्कण चादधाना ।
पुण्याक्तौ हारौ तदनु दधतौ रावयन्नूपुरौ च,
छिन्ना बाणार्णै कुसुमितलता स्याद् रसैर्वाजिभिश्च ॥४५६॥

यथा–

घूर्णन्नेत्रान्त हलकलनया[3] भिन्नपातालमूल,
तालाङ्के गाङ्ग क्षिपति रभसान्नागसाङ्क प्रवाहे[4] ।
हर्म्याणा सङ्घ कुरुभिरभितश्चूर्णित घूर्णित च,
क्रीडार्थं बालैरिव विरचिते[5] क्रीडति शैलराजे ॥ ४५७ ॥

यथा वा–

'गौड पिष्टान्न दधि सक्कशार निर्जल मद्यमम्लम् ।' इत्यादि वाग्भटे चिकित्साग्रन्थे ।*

इति कुसुमितलता २०२

२०३ अथ नन्दनम्

रचय नकारयुक्त-जगण विधेहि पश्चाच्च भ,
कुरु जगण ततोऽपि रगण विधेहि रेफ तत ।
शिवरचिता विधेहि विरति तथा हयैर्भासिता,
कविजननन्दन कुरु सखे ! सदा हृदा नन्दनम् ॥ ४५८ ॥

यथा–

तव यशसा त्रिलोकवलये वलक्षतामागते,
बहुलनिशास्वपि प्रकटिताश्चकोरकैश्चञ्चव ।
जगति पय प्रवाहमतिभि सुख मरालैर्वृत,
सपदि गुहा गता हिमधिया मुनीश्वरा दुर्बला ॥ ४५९ ॥

---

१ ख विलसो । २ ख यशसो । ३ ख हलकलनया । ४ ख प्रवाहो । ५ ख विरचित कौतुकात ।

*टिप्पणी—१ ग्राम्यानूपौदकानूप पिष्टितमवल गुप्पशाक तिलान्न,
गौड पिष्टान्न दधि सलवण विज्जल मद्यमम्लम् ।
धानावल्लूर समशनमथो गुर्वसात्म्य दिवा हि
स्वप्न पारात्रौ द्रवयुगन्वान् वर्जयेन्मैथुन च ॥
[वाग्भट—अष्टाङ्गहृदय, अ० १७ श्लो० ४२]

यथा वा, छन्दोमञ्जर्याम्[1]*—

तरणिसुतातरङ्गपवने सलीलमान्दोलित,
　　मधुरिपुपादपङ्कजरज सुपूतपृथ्वीतलम् ।
मुरहरचित्रचेष्टितकलाकलापसस्मारक,
　　क्षितितलनन्दन व्रज सखे ! सुखाय वृन्दावनम् ॥ ४६० ॥

यथा वा, ''प्रहृत धनेश्वरस्य युधि य समेतमायोधनम्' । इत्यादि भट्टिकाव्ये[2]* ।

इति नन्दनम् २०३

२०४ अथ नाराच

रचय न-युगल समस्ते पदे वेदसप्ताकृत,
　　तदनु च कलयाशु पक्षिप्रभु भासमान पदे ।
वसुहिमकिरणप्रयुक्ताक्षरोद्भासमान हृदा,
　　परिकलय फणीन्द्रनागोक्त-नाराचवृत्त मुदा ॥ ४६१ ॥

यथा—

सुरपतिहरितो गलत्कुन्तलच्छायमान मुख,
　　सपदि विरहजेन दु खेन मित्रस्य पाण्डुप्रभम् ।
अनुहरति घनेन सञ्छादित किञ्चिदुद्यत्प्रभ,
　　समुदितवरमण्डलोऽप्य पुर शीतरश्मि प्रिये ! ॥ ४६२ ॥

यथा वा, 'रघुपतिरपि तात वेदो विशुद्धो प्रगृह्य प्रियाम् ।' इत्यादि रघुवंशे[3]* ।

षोडशाक्षरप्रस्तारे नराच , अत्र तु नाराच इत्यनयोर्भेद ।

इति नाराच २०४.

मञ्जुला इत्यन्यत्र ।

---

१ पक्तिरिय नास्ति क प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी, द्वि० स्तबक, का० १७५ या उदाहरणम्

,, २ प्रहृत धनेश्वरस्य युधि य समेतमायो धन,
　　तमहमितो विलोक्य विबुधै कृतोत्तमाऽऽयोधनम् ।
विभवमदेन निह्नुतह्रियाऽतिमात्रसम्पन्नक
　　व्यथयति सत्पथादधिगताऽथवेह सपन्न कम् ॥
　　　　[भट्टिकाव्य, सर्ग १० प० ३७]

,, ३ रघुपतिरपि जातवेदोविशुद्धां प्रगृह्य प्रिया,
　　प्रियसुहृदि विभीषणे सगमय्य श्रिय वैरिण ।
रविसुनसहितेन तेनानुयात स सौमित्रिणा
　　भुजविजितविमानरत्नाधिरूढ प्रतस्थे पुरीम् ॥
　　　　[रघुवंश, स० १३, प० १४]

२०५. अथ चित्रलेखा

कर्णं कृत्वा कनकसुललित कुण्डलप्राप्तशोभं,
सविश्राणा द्विजमथ च कर कङ्कणेन प्रयुक्तम् ।
पुष्पं हारद्वयमथ दधतो राववन्नूपुरौ च,
वेदैरश्वैर्मुनिरचितयतिर्भासते चित्रलेखा ।। ४६३ ।।

यथा–

श्रीमद्राजत्रयमिह गगने त्वत्प्रतापाहितस्य,
छिद्रस्येन्दु. कलयति सुषमा मुद्रणे सीसकस्य ।
ताराशोभा विदधति वियतो हारिसस्य प्रतापं-
स्फोटस्यैषा दिगपि किमु हरे कुङ्कुमैर्भाति कीर्णा ।।४६४।।

इति चित्रलेखा २०५.

२०६. अथ भ्रमरपदम्

कारय भं ततोऽपि रगणमथ नगणयुगल,
धेहि नकारक तदनु च विरचय करतलम् ।
भासितमक्षरैर्गिरिवरहिमकरपरिमितै,
पिङ्गलभाषित भ्रमरपदमिदमतिललितम् ।। ४६५ ।।

यथा–

नीलतम पटाधिगतमिद[1]मुडुगणमखिलं,
मौक्तिकमेप कालनरपतिरतिललिततरम् ।
वासवदिग्गतद्विजपतय इह कलितकर,
यच्छति सोऽपिताननुकलयति निजकरगणं ।। ४६६ ।।

इति भ्रमरपदम् २०६.

२०७. अथ शार्दूलललितम्

आदौ मं सतत विधेहि तदनु ज्ञेय सरसिज,
तत्पश्चाद् विरचय ज कलय स कर्णं तदनुगम् ।
तस्यान्ते गुरु रूपहस्तमतुल जानीहि सरस,
नव्यप्रेमभरालसे सुललिते शार्दूलललितम् ।। ४६७ ।।

---

१ ■ मिम ।

यथा–

श्रीगोविन्दपदारविन्दमनिशं वन्देऽतिसरसं,
मायाजालजटालमाकुलमिदं मत्वाऽतिविरसम् ।
वृन्दारण्यनिकुञ्जसञ्चरणतः सञ्जातसुषमं,
[1]दम्भोल्यंकुशसध्वजं सरसिजप्रोद्भासमसमम् ॥ ४६८ ॥

इति शार्दूलललितम् २०७.

२०८. अथ सुललितम्

कलय नयुगलं पश्चाद्वक्रं तथातिमनोहरं,
तदनु विरचयेः कर्णौ पुष्पान्वितौ भगणं ततः ।
वितनु सुललितं पक्षीन्द्र वा विलासिनीसुन्दरं,
मुनिविरतियुतं वेदैश्छिन्नं हयैश्च विभावितम् ॥ ४६९ ॥

यथा–

त्रिजगति जयिनस्ते ते भावा नवेन्दुकलादयः,
परिणतिमधुराः कामं सर्वे मनोरमतां गताः ।
मम तु तदखिलं शून्यारण्यप्रभं सखि ! जायते,
मुररिपुरहितं तस्माद् भद्रे समाह्वय तं हरिम् ॥ ४७० ॥

इति सुललितम् २०८.

२०९. अथ उपवनकुसुमम्

सलिलनिधिपरिमितं नगणमिह विरचय,
तदनु च रसनिगदितलघुमपि कलय ।
कविजनहितसकलफणिपतिकथितमिह,
हृदि कलय सुललितमुपवनकुसुममिति ॥ ४७१ ॥

यथा–

असितवसनवरललितहलमुशलधर !,
निजतनुरुचिविजितपुरमथनगिरिवर ! ।
द्विविदकपिधरदनकर ! नवरुचिचय !,
जय ! जय ! कुरुनरपतिनगरजनितमय ! ॥ ४७२ ॥

इति उपवनकुसुमम् २०९.

---

१. ख दम्भोल्यंकुशकेतनाब्जमुचिरं सच्छोभमसमम् ।

'अत्रापि प्रस्तारगत्या अष्टादशाक्षरस्य लक्षद्वयं द्वाषष्टिसहस्राणि चतुश्चत्वारिंशदुत्तरं च शतं २६२१४४ भेदास्तेषु कियन्तो भेदाः प्रोक्ताः, शेषभेदास्तूह्याः सुधीभिरिति दिक् ।*'

इति अष्टादशाक्षरम् ।

अथ एकोनविंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्–

२१० अथ नागानन्द

अश्वाना सख्याका यस्मिन् सर्वस्मिन् पादे सदृश्यन्ते कर्णा,
पश्चाद् बाणै सप्रोक्ता हारा युक्ता रन्ध्रैर्भूम्या चोक्ता वर्णा ।
सर्वेषा नागानामीशेनैतत् प्रोक्त नागानन्दाख्य वृत्त,
विश्वेषा यच्छ्रुत्वा समज्जत्यानन्दाना वारा राशौ चित्तम् ॥ ४७३ ॥

यथा–

जैनप्रोक्ताना धर्माणा सर्वेभ्यो लोकेभ्य शिक्षा सदास्यन्,
यज्ञाना हिंसाङ्काना तन्मूलाना वेदाना वा निन्दा कुर्वन् ।
सर्वस्मिस्त्रैलोक्ये भूताना रक्षारूपा धर्मानिर्वाधास्यन्,
कल्याण कुर्यात् सोऽय गोविन्द क्रीडार्थं बौद्धाभिख्या गृह्णन् ॥४७४॥

इति नागानन्द २१०

२११ अथ शार्दूलविक्रीडितम्

कर्णं कुण्डलपुष्पगन्धललित हार च वक्षोरुहे,
हस्त कङ्कणयुग्मसुन्दरतर शब्दोल्लसन्नूपुरौ ।
रूपाढ्या रसना तथैव च दधत्तीक्ष्णाशुविच्छेदित,
श्रीमत्पिङ्गलभाषित विजयते शार्दूलविक्रीडितम् ॥ ४७५ ॥

यथा

ते राजन्नतिचण्ड[2]कीर्तितटिनीडिण्डीरपिण्डाकृति-
र्ब्रह्माण्डातिलसत्करण्डनिहितश्वेताण्डजप्रोज्ज्वलम् ।
तन्वीगण्डविपाण्डुरद्युतिपुरस्फूर्जद्विधोर्मण्डल,
राहोर्मण्डक(ल)खण्डमेतदुदयत्यारण्डलाशामुखे ॥ ४७६ ॥

---

१ पक्तिद्वय नास्ति क प्रतौ ।　२ ख राजते परिपूर्णकीर्ति ।

*टिप्पणी—१ अष्टादशाक्षरवृत्तस्य ग्रन्थान्तरेषूक्तशेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्या ।

यथा वा, ममैव पाण्डवचरिते अर्जुनागमने द्रोणवाक्यम्—

ज्ञान यस्य ममात्मजादपि जनाः शस्त्रास्त्रशिक्षाधिकं,
पार्थः सोऽर्जुनसंज्ञकोऽत्र सकलैः कौतूहलाद् दृश्यताम् ।
श्रुत्वा वाचमिति द्विजस्य कवची गोधाङ्गुलित्राणवान्,
पार्थस्तूणशरासनादिरुचिरस्तत्राजगाम द्रुतम् ॥ ४७७ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

उन्मीलन्मकरध्वजव्रजवधूहस्तावधूताञ्चल-
व्याजोदञ्चितबाहुमूलकनकद्रोणीक्षणादीक्षणे ।
उद्यत्कण्टककैतवस्फुटजनानन्दादिसंस्थामित-
ब्रह्माद्वैतसुखश्चिरं स भगवांश्चिक्रीड तत्कन्दुकैः ॥ ४७८ ॥

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु सहस्रश उदाहरणानि प्रत्युदाहरणत्वेन[1] द्रष्टव्यानि ।

इति शार्दूलविक्रीडितम् २११.

२१२. अथ चन्द्रम्

प्रतिपदमिह कुरु नगणत्रितयमथ कलय,
जगणमिह नगणयुगलं तदनु च विरचय ।
चरणविरतिमनु रुचिरं कुसुममथ वितनु,
सकलफणिनृपतिकृत-चन्द्रमिति शृणु सुतनु ! ॥ ४७९ ॥

यथा –

नवकुलवनजनितमन्दमरुदिह वहति,
किरणमनुकलयति विधुस्त्रिजगति सुमहति ।
सपदि सखि ! मम निजहित वचनमनुकलय,
समनुसर वनगतहरिं तनुमतिसफलय ॥ ४८० ॥

यथा वा, भूषणे[1]*—

मनुपहतकुसुमरसतुल्यमिदमधरदल-
ममृतमयवचनमिदमालि विफलयसि चल ।
यदपि यदुरमणपदमीश मुनिहृदि लुठति,
तदपि तव रतिवलितमेत्य वनतटमटति ॥ ४८१ ॥

इति चन्द्रम् २१२.

चन्द्रमाला इत्यस्यैव नामान्तरं पिङ्गले*[2] ।

---

१. ख. 'प्रायुदाहरणत्वेन' नास्ति ।

टिप्पणी—१. वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य ३००

टिप्पणी—२. प्राकृतपैङ्गलम्, परिच्छेद २, पद्य १६०

२१३. अथ धवलम्

द्विजवरगणमिह रचय जलनिधिपरिमितं,
तदनु कलय सगणमथ चरणविरतिगतम् ।
सकलकविकुलहृदयतलविलुठनकरणं,
फणिपतिभणित-धवलमिह शृणु सुखकरणम्[1] ॥ ४८२ ॥

यथा–

जलमिह कलय सखि ! कनकयुतमिव विमलं,
गगनतलमपि विगतजलधरमतिधवलम् ।
गतवचनरचनमिदमपि शिखिकुलमवलं,
नववपुरिदमव मम कुसुमविशिखतरलम् ॥ ४८३ ॥

यथा वा, भूषणे[1]—

उपगत इह सुरभिसमय इति सुमुखि ! वदे,
निधुवनमधि सह पिब मधु जहि रुषमपदे ।
कमलनयनमनुसर सखि ! तव रभसपरं,
प्रियतमगृहगमनमुचितमनुचितमपरम् ॥ ४८४ ॥

इति धवलम् २१३.

धवला इति पिङ्गले[2]* ।

२१४. अथ शम्भुः

कुरु हस्तं स्वर्णविराजत्कङ्कणपुष्पोद्यद्गन्धंयुक्तं,
श्रवणं ताटङ्कसुरूपप्राप्तरसं हारद्वन्द्वं पश्चात् ।
रसनायुग्मं कनकेनात्यन्तविराजद्वक्राभ्यां प्रान्ते,
नवभूषणैः कथितं नागाचितशम्भ्वाख्यं वृत्तं कान्ते ! ॥४८५॥

यथा–

नवसान्ध्या वह्निजभीत्या पश्चिमसिन्धौ मित्रे संमग्ने,
नलिनीयं पङ्कजनेत्रं मीलयतीवात्यन्तं शोकेन ।
हरितो यस्याः पतगौघानां विरुतैरुच्चैर्नादं संदध्रुः[2],
परभृत्यांश्चाम्बरमुच्चैर्भानुसमूहारक्तं संबभ्रुः ॥ ४८६ ॥

---

१. ख. सुखकरणम् । २. क संदध्रुः ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य ३०२
" २ प्राकृतपैंगलम्, परि० २, पद्य १८२

यथा वा*[1]–

जय ! मायामानवमूर्ते दानववंशध्वंसव्यापारी[1],
वलमाद्यद्रावणहत्याकारण लङ्कालक्ष्मीसंहारी[3] ।
कृतकंसध्वंसन-कर्माशासन गो गोपी-गोपानन्दी[4],
बलिलक्ष्मीनाशन-लीलावामन-दैत्यश्रेणीनिष्कन्दी[5] ॥ ४८७ ॥

इति दम्भः २१४

२१५ अथ मेघविस्फूर्जिता

यकारं संदेहि प्रथममथ मं देहि पश्चान्नकारं,
करं तस्याप्यन्ते रचय रुचिरं रेफयुग्मं ततोऽपि ।
गुरुं तस्याप्यन्ते कलय ललितं षड्रसच्छेदयुक्तं,
कुरु च्छन्दःसारं फणिपकथितं मेघविस्फूर्जिताख्यम् ॥ ४८८ ॥

यथा–

विलोले[6] कल्लोलैस्तरणिदुहितुः क्रीडनं कारयन्तं,
लसद्वंशं कंसप्रभृतिकठिनान् दानवानर्दयन्तम् ।
सुराणां सेन्द्राणां ददतमभयं पीतवस्त्रं दधानं,
सलीलं विन्यासैश्चरणरचितैर्भूमिभागं पुनानम् ॥ ४८९ ॥

यथा वा, कविराक्षसकृतदक्षिणानिलवर्णने–

उदञ्चत्कावेरीलहरिषु परिष्वङ्गरङ्गे लुठन्तः
कुहूकण्ठीकण्ठीरवरवलवत्रासितप्रोषितेभाः ।
अमी चैत्रे मैत्रावरुणितरुणीकेलिकङ्केल्लिमल्ली-
चलद्वल्लीहल्लीसकसुरभयश्चण्डि चञ्चन्ति वाताः ॥४९०॥

इत्यादि ।

इति मेघविस्फूर्जिता २१५

२१६ अथ छाया

गुरुपाढ्यं कर्णे कनकललितं ताटङ्कयुग्मान्वितं,
द्विजं गन्धं स्वर्णं वलययुगलं पुष्पाढ्यहारद्वयम् ।
दधाना पादान्ते लसितविलसत्प्रोद्भासितं नूपुरं,
रसैः षड्भिश्छिन्ना फणिपकथिता छाया सदा राजते ॥४९१॥

---

१ ख व्यापारिन् । २ ख हिंसाकारण । ३ संहारिन् । ४ ख गोपानन्दिन् । ५ ख निष्कन्दिन । ६ ख चपूटो ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य १०४

यथा–

भवच्छेदे दक्ष दितिसुतकुलध्वान्तस्य विध्वसने,
सदार्काभ वक्ष स्थलगतलसद्रत्नांशुभिर्भूषितम् ।
वधूभिर्गोपाना तरणितनयाकुञ्जेषु रासस्पृह,
सदा नन्दादीनाममितसुखद गोपालवेष भजे ॥ ४६२ ॥

इति छाया २१६

२१७ अथ सुरसा

कर्णद्वन्द्व विराजत कुसुमसुललित कुण्डलयुग,
सविश्राणा ततोपि द्विजमथ च कर कङ्कणयुतम् ।
रूपाढ्या दिव्यरावा कुसुमविलसिता नूपुरयुता,
शैलैरश्वैश्च वर्णैर्विरचितविरतिर्भाति सुरसा ॥ ४६३ ॥

यथा–

गोपाल केलिलोल व्रजजनतरुणी-रासरसिक,
कालिन्दीये निकुञ्जे पशुपसुतगणैर्वेष्टिततनुम ।
वशीरावेण गोपीसुललितमनसा मोहनपर,
कसादीनामराति व्रजपतितनम नौमि हृदये ॥ ४६४ ॥

इति सुरसा २१७

२१८ अथ फुल्लदाम

कर्णौ स्वर्णाढ्यौ कुसुमरसमयौ रूपरावान्वितौ चेद्,
पुष्पोद्यद्रूपौ कनकविरचित नूपुर पुष्पशोभम् ।
हारौ रावाढ्यौ विलसदमलगौ कङ्कणेनातिरम्यौ,
शश्वल्लोकाना सुकथितमतुल फुल्लदाम प्रसिद्धम् ॥ ४६५ ॥

यथा–

दीव्यद् देवाना परमधनकर कामपूर जनाना,
शश्वद्भक्ताना परिकलितकलाकौशल कामिनीनाम् ।
दिव्यानन्दाना परम[1]निलयन वेदगम्य पुराण,
पुण्यारण्यानां गहनमहिमम नौमि मूर्द्ध्ना नितान्तम् ॥४६६॥

इति फुल्लदाम २१८

---

१. 'दिव्यान दानां परम' इति नास्ति क प्रतौ ।

२१९. अथ मृदुलकुसुमम्

रचय नगणमिह रसपरिमित[1]मनुकलय,
शिशिरकिरणरचित कुसुमगणनमपि कुरु ।
सकलभुजगनरपतिकथितमिदमतिशय-
सुललितमृदुलकुसुममिति हृदि परिकलय ॥ ४९७ ॥

यथा-

अयि ! सहचरि ! निरुपममृदुलकुसुमरचित-
मनुकलय सरसमलयजकणलुलितमिति ।
वरविपिनगततरुवरतलकलितशयन-
मनुसर सरसिजनयनमनुपमगुणमिह ॥ ४९८ ॥

इति मृदुलकुसुमम् २१९

[2]अत्रापि प्रस्तारगत्या एकोनविंशत्यक्षरस्य लक्षपञ्चकं चतुर्विंशतिसहस्राणि अष्टाशीत्युत्तरं शतद्वयं ५२४२८८ भेदास्तेषु कतिपयभेदाः प्रोक्ताः, शेषभेदाः सुधीभिः प्रस्तार्य उदाहरणीयाः, इत्युपदिश्यते[2] * ।

इत्यूनविंशत्यक्षरम् ।

अथ विंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्-

२२० योगानन्द

यस्मिन् वृत्ते दिक्संख्याता संलग्ना शोभन्तेऽत्यन्तं पूर्णाः कर्णा-
स्तद्वल्लीलालोले पादप्रान्ते विख्याता व्याप्यन्ते नव्या वर्णाः ।
श्रीमन्नागाधीशप्रोक्तं विद्वत्सारं हारोदारं भेहि स्वान्ते,
तद्वद्वृत्तं योगानन्दं सर्वानन्दस्थानं धैर्याधानं कान्ते ! ॥४९९॥

यथा-

वन्देऽहं तं रम्यं गम्यं शान्तं सर्वाध्यक्षं देवं दीप्तं धीरं,
नाथं नव्याम्भोदप्रख्यं कामं श्रव्यं रामं मित्रं सेव्यं वीरम् ।
सर्वाधारं भव्याकारं दक्षं पालं यशोदाना पालं बालं,
आनन्दानां कन्दं विद्यासिन्धुं सेवे येन क्षिप्तं मायाजालम् ॥५००॥

इति योगानन्द २२०

---

१. ख. परिगत् । २ पंक्तित्रय नास्ति क प्रतौ ।
*टिप्पणी—१. एष्यशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे विलोकनीया. ।

२२१ अथ गीतिका

कुरु हस्तसंगिसुशङ्खकङ्कणरूपरावसमन्वितं,
वरपक्षिराजविराजितं नवगन्धयुग्मविभूषितम् ।
कुरु वल्लकीरवधारिणं रसमुग्धसुन्दररूपिणो-
रवयुक्तनूपुरमत्र धेहि विधेहि भामिनि ! गीतिकाम् ॥ ५०१ ॥

यथा—

अयि ! मुञ्च मानमवेहि दानमुपैहि कुञ्जगतं हरिं,
नवकञ्जचारुविलोचनं भयमोचनं भवसन्तरिम् ।
कुरुषे विलम्बमकारणं सखि ! साधयाशु मनोरथं,
ननु खिद्यसेऽतिभृशं वृथैव जनुर्विधारयसे कथम् ॥ ५०२ ॥

यथा वा—

अलमीश-पावक-पाकशासन-वारिजासनसेवया,
गमितं जनुर्जनकात्मजापतिरप्यसेव्यत नो मया ।
करुणापयोनिधिरेक एव[1] सरोजदामविलोचनं,
स परं करिष्यति दुःखलेप[2]मशेषदुर्गतिमोचनः ॥ ५०३ ॥

'अथ सालतालतमालवञ्जुलकोविदारमनोरमा' इत्यादि । शिष्टो कार्ये च प्रत्युदाहरण[3]मिति ।

इति गीतिका २२१

२२२ अथ गण्डका*

हारपुष्पसुन्दरं विधेहि तन्मनोहरं मनोहरेण,
नागराजकुञ्जरेण भावितं च रेण यत्पयोधरेण ।
अन्तगेन चामरेण राजितं विराजितं च काहलेन,
गण्डकेति यस्य नाम धारितं सुपण्डितेन पिङ्गलेन ॥ ५०४ ॥

यथा—

देव! देव! वासुदेव! ते पदाम्बुजद्वयं विभावयेम,
नाम पुष्पदाम[4]धामतेजसा सदा हृदा विधारयेम ।
तावदेव सारवस्तु नान्यदस्ति किञ्चनात्र धारितेन,
वाजिराजिकुञ्जरादिसाधनेन तेन किं विभावितेन ॥ ५०५ ॥

---

१ ख एक । २ ख दुःखनाश । ३. ख तदुदाहरणम् । ४. ख पुष्पदान ।

*टिप्पणी— १ वृत्तस्यास्य निर्दिष्टलक्षणकारिका परिस्फुटा नैवास्ति किन्तु ग्रन्थकर्तुर्यदभीष्टं तदुदाहरणेनैव परिज्ञायते—'यच्छन्दसि हारपुष्पयो (ऽ।) नववारमनुक्रमेण योजनं तदनु चामर-काहलयो (ऽ।)-न्यसनं भवेत्तद् गण्डकावृत्तं स्यादिति ।

यथा वा, भूषणे[१]* प्रत्युदाहरणम्—

दृष्टमस्ति वासुदेव विश्वमेतदेव शेष[वक्त्र]क तु[१],
वाजिरत्नभृत्यदारसूनुगेहवित्तमादिवन्नव तु ।
त्वत्पदाब्जभक्तिरस्तु चित्तसीम्नि वस्तुतस्तु सर्वदैव,
शेषकाललुप्तकालदूतभीतिनाशनीह हन्त सैव ॥ ५०६ ॥

क्वचिदियमेव चित्तवृत्तम् इति । केवल वृत्तमात्रमन्यत्र[२]* ।

इति गण्डका २२२.

२२३. अथ शोभा

यकार प्रागस्ते तदनु च मगण कथ्यते यत्र वाले[१],
ततोऽपि स्यात् पश्चाद् यदि नगणयुग स्यात्तकारद्वय च ।
ततश्चान्ते हारद्वयमुपरितन कारयाशु प्रकाम,
रसैरश्वैश्छिन्ना मुनिविरतिगता भासते काऽपि शोभा ॥५०७॥

यथा–

रमाकान्त वन्दे त्रिभुवनशरण शुद्धभावैकगम्य,
विरञ्चे स्रष्टार विजितघनरुचि वेदवाचावगम्यम् ।
शिव लोकाध्यक्ष समरविजयिन कुन्दवृन्दाभदन्त(वदात),
महन्नार्चीरूप विधृतगिरिवर हार्दकञ्जे वसन्तम् ॥ ५०८ ॥

इति शोभा २२३

२२४ अथ सुवदना

आदौ मो यत्र बाले[१] तदनु च रगणो जङ्घासुघटित.,
पश्चाद्यो नकारस्तदनु च यगणस्तातेन रचित ।
कार्यौ तत पादवैदेो तदनु लघुगुरू ज्ञेया सुवदना,
नागाधीशेन नुन्ना नगमितचरणा नव्या सुमदना ॥ ५०९ ॥

यथा–

श्रीमन्नारायण त नमत बुधजना ससारशरण,
सर्वाध्यक्ष यनन्त निजहृदि मदय गोपीविहरणम् ।
कल्याणाना निधान कलिमलदलन वाचामविषय,
क्षीराब्धौ शाममान दमितदितिसुत वेदान्तविषयम् ॥ ५१० ॥

---

१. शेववक्त्रभाजि 'वाणीभूषणे' ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम् द्वि० प०, पद्य ३०८

२ छन्दोमञ्जरी, द्वि० स्तबक, का० २०९ एव वृत्तरत्नाकर, प० ३, का १०१

यथा वा, हलायुधभट्टविरचितछन्दोवृत्तौ[1]*—

या पीनाङ्गोरुतुङ्ग[1]स्तनजघनघनाभोगालसगति-
यंस्या कर्णावतंसोत्पलरुचिजयिनी दीर्घे च नयने ।
सीमा सीमन्तिनीना[2] मतिलडहतया या च त्रिभुवने,
सम्प्राप्ता साम्प्रतं मे नयनपथमसौ दैवात् सुवदना ॥ ५११ ॥

इति सुवदना २२४.

२२५. अथ प्लवङ्गभङ्गमङ्गलम्

यदा लघुर्गुरु निवेश्यते तदा प्लवङ्गभङ्गमङ्गलं,
जरौ जरौ जरौ रसप्रयुक्तमुच्यते लगौ सुमङ्गलम् ।
कवीन्द्रपिङ्गलोदितं सुशङ्खहारभूषितं मनोहरं,
प्रमाणिका-पदद्वयेन पूर्यते च यच्च पञ्चचामरम् ॥ ५१२ ॥

यथा-

नवीनमेघसुन्दरं भजेम भूपुरन्दरं विभुं वरं,
प्रकामधामभासुरं दधानमद्भुताम्बरं[3] दयापरम् ।
विलासिनीभुजान्तरानिरुद्धमुग्धविग्रहं स्मरातुरं,
चराचरादिजीवजातपातकापहं जगद्धुरन्धरम् ॥ ५१३ ॥

इति प्लवङ्गभङ्गमङ्गलम् २२५

२२६. अथ शशाङ्कचलितम्

कर्णं पयोधरकरौ यदा च भवतो विलासललिते,
श्रेयस्ततः सुतनु ! ज सुहस्तकलितः शशाङ्कचलिते ।
ततोऽपि चेद् भवति ज सुपाणिघटितो वसौ च विरति-
स्ततो रसैरपि यतिः कलावति भवेत् पुनः रसयतिः ॥५१४॥

यथा-

कृष्णं प्रणौमि सततं बलेन सहितं सदा शुभरतं,
कल्याणकारिचरितं सुरैरभिनुतं प्रमोदभणितम्[4] ।
कंसादिदर्पदलनं च कलाकुतुकिनं विलासभवनं,
संसारपारकरणं परोदयकरं सरोजनयनम् ॥ ५१५ ॥

इति शशाङ्कचलितम् २२६

---

१. या पीनो गाढतुङ्ग- हलायुधे । २. श्यामा सीमन्तिनीनां 'हलायुधे' । ३. स. प्रदभुतं वरम् । ४ स भरितम् ।

*टिप्पणी—१ अध्याय ७, कारिकाया २३ उदाहरणम् ।

२२७ अथ भद्रकम

वेदसुसम्मितमादिगुरु कुरु जोहल कमल प्रिये[1],
अन्तगत कुरु पुष्पसुकङ्कणराजित विजितक्रिये ।
रन्ध्ररसैरपि बाणविभेदितविंशक कुरु वर्णक,
कामकलारसरासयुते निजमानसे कुरु भद्रकम् ॥ ५१६ ॥

यथा–

चेतसि पादयुग नवपल्लवकोमल किल भावये,
मञ्जुलकुञ्जगत सरसीरुहलोचन ननु चिन्तये ।
आनय नन्दसुत सखि! मानय मेदुर रजनीमुख,
कुञ्चितकेशममु परिशीलय कामुक कुरु मे सुखम् ॥ ५१७ ॥

इति भद्रकम् २२७

२२८ अथ अनवधिगुणगणम

रसपरिमितमिति सरसनगणमिति[1] विरचय
विकचकमलमुखि! लघुयुगमनुमतमनुनय ।
सुतनु! सुदति! यदि निगदसि बहुविधमनवधि
गुणगणमनुसर नखलघुमितमनुलवमयि! ॥ ५१८ ॥

यथा–

अनुपमगुणगणमनुसर मुरहरमभिनव-
मभिमतमनुमत[2]मतिशयमनुनयपरमव ।
सफपटयदुवरकरधृतगिरिवरपरमयि
कुरु मम सुवचनमफलय सखि न हि न हि मयि ॥ ५१९ ॥

इति अनवधिगुणगणम २२८

[3]अत्रापि प्रस्तारगत्या विंशत्यक्षरस्य दशलक्षमष्टचत्वारिंशत्सहस्राणि षट्-सप्तत्युत्तराणि पञ्चशतानि च १०४८५७६ भेदा भवन्ति, तेषु चाद्यन्तसहिता विस्तरभीत्या कियन्तो भेदा लक्षिता, शेषभेदा सुबुद्धिभि प्रस्तार्य सूचनीया इति दिक् ।'*

इति विंशाक्षरम् ।

---

१ ख मिह । २ ग मनुगत । ३ पंक्तिचतुष्टय नास्ति ग प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ अन्यभेदा पञ्चमपरिशिष्टे समालोचनीया ।

अथ एकविंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

२२९ अथ ब्रह्मानन्द

यस्मिन् वृत्ते पङ्क्ति रयाता शोभन्तेऽत्यन्त कर्णा प्रान्ते चैकोहार,
नागाधीशप्रोक्तोऽपार सारोद्धारो ब्रह्मानन्दो वृत्ताना सार ।
विश्रामश्च प्रायो यस्मिन् वेध श्रोत्रै शैलेन्द्रै शस्त्रैर्वा स्यात् प्रान्ते,
विंशत्या वर्णैरेकाग्रै सयुक्तैर्लीलालोले सोऽय ज्ञेय कान्ते ! ॥५२०॥

यथा–

सर्वं कालव्यालग्रस्त मत्वा स्त्रीपु व्यासङ्ग हित्वा कृत्वा धैर्यं,
कालीन्दीये कुञ्जे कुञ्जे भ्राम्यद्भृङ्गे सगीते भ्रातुर्मुक्त्वा कौर्यम् ।
श्रीगोविन्द वृन्दारण्ये मेघश्याम गायन्त वेणुक्वाणैर्मन्द,
ब्रह्मानन्द प्राप्याजस्र ध्यात्वा चेत साफल्य धेहि स्वान्तेऽमन्दम् ॥५२१

इति ब्रह्मानन्द २२९

२३० अथ स्रग्धरा

आदौ मो यन वाले ! तदनु च रगण स्यात् प्रसिद्धस्तु यस्या,
पश्चाद् भ चापि न च त्रिगुणितमपि य धेहि कान्ते ! विचित्रम् ।
शैलेन्द्रै सूर्यवाहैरपि च मुनिगणैर्दृश्यते चेद् विराम,
कामव्यासक्तचित्ते सुदति ! निगदिता स्रग्धरा सा प्रसिद्धा ॥ ५२२ ॥

यथा, ममैव पाण्डवचरिते—

तुष्टेनाथ द्विजेन त्रिदशपतिसुतस्तत्र दत्ताभ्यनुज्ञ,
कर्णोपि प्राप्तमानस्सदसि कुरुपतेर्द्वन्द्वयुद्धार्थमागात् ।
जम्भाराति स्वसूनोरुपरि जलधरैस्सव्यधादातपत्र,
चण्डांशुश्चापि कर्णोपरिनिजकिरणानाततानातिशीतात् ॥५२३॥

यथा वा, मत्पितु खड्गवर्णने—

सङ्ग्रामारण्यचारी विकटभटभुजस्तम्भभूभृद्विहारी,
शत्रुक्षोणीशचेतोमृगनिकरपरानन्दविक्षोभकारी ।
माद्यन्मातङ्गकुम्भस्थलगलदमलस्थूलमुक्ताप्रहारी,
स्फारीभूताङ्गधारी जगति विजयते खड्गपञ्चाननस्ते ॥ ५२४ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

केशिद्वेपिप्रसूश्च क्वचिदथ समये सद्मदासीषु कार्य-
व्यग्रासु प्रग्रहान्तग्रहणचलभुजाकुण्डलोद्ग्रीवसूनु ।
पुत्रस्नेहस्नुतोरुस्तनमनणुरणत्कङ्कणक्वाणमुद्यत्-
कम्पस्विद्यत्कपोल दधिकचविगलद्दामबन्ध ममन्थ ॥५२५॥

इति स्रग्धरा २३०.

२३१ अथ मञ्जरी*

कङ्कण कुरु मनोहर तदनु सुन्दर रचय तुम्बुर,
सुन्दरी कलय सुन्दरी तदनु पक्षिणामपि पति तत ।
भावमातनु तत पर सुतनु ! पक्षिण च कुरु सङ्कुल,
भावमेव कुरु मञ्जरी [तदनु] जोहल विरचयातत ॥५२६॥
रगणनगणक्रमेण च सप्तगणा भान्ति यत्र सरचिता ।
नव-रस-रसयतिसहिता वदन्ति तज्ज्ञास्तु मञ्जरीमिति ताम् ॥ ५२७ ॥

यथा–

हारनूपुरकिरीटकुण्डलविराजिता वरमनोहर,
सुन्दराधरविराजिवेणुरवपूरिताखिलदिगन्तरम् ।
नन्दनन्दनमनङ्गवर्द्धनगुणाकर परमसुन्दर,
चिन्तयामि निजमानसे रुचिरगोपगोधनधुरन्धरम् ॥ ५२८ ॥

यथा वा, श्रीशङ्कराचार्याणा नवरत्नमालिकायाम्—

दाडिमीकुसुममञ्जरीनिकरसुन्दरे मदनमन्दिरे,
यामिनीरमणखण्डमण्डितशिखण्डके तरलकुण्डे (कुण्डले) ।
पाशमङ्कुशमुदञ्चित दधति कोमले कमललोचने !
तावके वपुषि सन्तत जननि ! मामक भवतु मानसम् ॥५२९॥

इति मञ्जरी २३१

२३२ अथ नरेन्द्र*

कुण्डलवज्ररज्जुमुनिगणयुतहस्तविराजितशोभ,
पाणिविराजिशङ्खयुगवलयित-कङ्कणधामरलोभ ।
वामविशोभयोगवरविरतिगचन्द्रविलोचनवर्ण,
पन्नगराजपिङ्गल इति गदति राजति वृत्तनरेन्द्र ॥ ५३० ॥

---

*टिप्पणी—१ मञ्जरीवृत्तस्य लक्षणोदाहरणप्रत्युदाहरणानि नैव सन्ति क प्रतौ ।

मानिनि ! मानकारणमिह[1] जहिहि नन्दय त सखि ! कृष्ण,
चिन्तय चिन्तनीयपदमनुमतमाकलयाशु सतृष्णम् ।
जीवय जीवजातमुपगतमपि मा कुरु मानसभङ्ग,
केवलमेव तेन सह सहचरि ! सन्तनु तत्तनुसङ्गम ॥ ५३१ ॥

यथा वा–

पङ्कजकोषपानपरमधुकरगीतमनोज्ञतडाग,
पञ्चमनादवादपर[2]परभृतकाननसत्परभाग ।
वल्लभविप्रयुक्तकुलवरतनुजीवनदानदुरन्त,
किं करवाणि वक्षि[3] मम सहचरि ! सन्निधिमेति वसन्त । ५३२।

इति नरेन्द्र २३२

२३३ अथ सरसी

सहचरि ! नो यदा भवति सा कथिता सरसी कवीश्वरै-
र्यदि तु जभौ जजौ च भवतोपि जरौ समनन्तर परै ।
इह विरती यदा शरविलोचनजे भवतो मुनीश्वरै,
शिशिरकरैस्सदा भवति लोचनतो गणनापदाक्षरै ॥ ५३३ ॥

यथा–

नमत सदा जना प्रणतकल्पतरु जगदीश्वर हरिं,
प्रबलहृदन्धकारतरणिं भवसागरपारसन्तरिम् ।
सकलसुरासुरादिजनसेवितपादसरोरुह पर,
जलरुहशङ्खचक्रकमनीयगदाधरसुन्दराम्बरम् ॥ ५३४ ॥

यथा वा–

'तुरगशताकुलस्य परित परमेकतुरङ्गजन्मन ।' इत्यादि माघकाव्ये[1*] ।

इति सरसी २३३

सुरतरुरिति ग्रन्थान्तरे । सिद्धकम्[2*] इति क्वचित् ।

---

१ क मानकारिणिमिह । २ ख पञ्चमनादगानपर । ३ ख वक्षि

*टिप्पणी—१ तुरगशताकुलस्य परित परमेकतुरङ्गजन्मन,
प्रमथितभूभृत प्रतिपथ मथितस्य भृश महीभृता ।
परिचलतो बलानुजबलस्य पुर सतत धृतश्रिय
श्चिरविगतश्रियो जलनिधेश्च तदाभवदन्तर महत् ॥ ८२ ॥
[शिशुपालवधम्–स० ३, प० ८२]
२ वृत्तरत्नाकर, नारायणीटीकायाम्–अ ३, का १०४

२३४. अथ रुचिरा

कुरु नगण ततो रचय भूमिपतिं दहन च सुन्दर,
तदनु विधेहि ज त्रिगुणित ललित विहग तत परम् ।
मुनिमुनिभिर्भवेद्विरतिरप्यतुला सुकला मनोहरा,
सुकविवरैः परा निगदिता रुचिरा परमार्थतो वरा ॥ ५३५ ॥

यथा–

नयनमनोहर परमसौख्यकर सखि ! नन्दनन्दन,
कनकनिभांशुक निजगतीतिलक मुरलीविनोदनम् ।
भुवनमहोदय घनरुचि रुचिर कलये सदोन्नत[1],
सुरकुलपालक श्रुतिनुत सदय दयित श्रियः पतिम् ॥ ५३६ ॥

इति रुचिरा २३४

२३५ अथ निरुपमतिलकम्

सुतनु ! सुदति ! सरसमुनिमितनगणमिह रचय,
शिशिरकरजनयनमितसुपदमपि परिकलय ।
कनककटकवलयकलितकरकमलमुपनय,
फणिपतिभणितमिह निरुपमतिलकमिति कथय ॥ ५३७ ॥

यथा–

जय ! जय ! निरुपम ! दिशि दिशि विलसितगुणनिकर !,
करधृतगिरिवर ! विगणितगुणगणवरसुकर !।
कनकवसनकटकमुकुटवलित ! मिलिनललन !,
विजितमदन ! दलितशकट ! सबलदितिजदलन ! ॥ ५३८ ॥

इति निरुपमतिलकम् २३५

अत्रापि प्रस्तारगत्या एकविंशत्यक्षरस्य नवलक्ष सप्तनवतिसहस्राणि द्विसमधिकपञ्चाशदुत्तर शत २०९७१५२ भेदा भवन्ति, तेषु भेदमात्र प्रोक्त, शेषभेदा सुधीभि. स्वबुद्धया प्रस्तार्य सूचनीया इति दिक् ।[1]

इति एकविंशाक्षरम् ।

---

१ ग सदोन्नत। २ पद्यमिदं नास्ति ग प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ एकविंशत्यक्षरस्य [illegible]

अथ द्वाविंशत्यक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

२३६ विद्यानन्द

यस्मिन् वृत्ते रुद्रप्रोक्ता कुन्तीपुत्रा नेत्रैर्नेत्रैर्वर्णा पादप्रान्ते,
षड्भि कर्णैर्विश्राम स्यात् तद्वद् यस्मिन् रम्यं पाण्डो पुत्रे स्यात् तस्यान्ते ।
श्रीमन्नागाधीशेनोक्त सार वृत्त श्रव्य भव्य नव्य काव्य कान्ते !,
बाले ! लीलालोले ! मुग्धे ! विद्यानन्द दिव्यानन्द सम्यग धेहि स्वान्ते ॥५३९॥

यथा–

काशीक्षेत्रे गङ्गातीरे चञ्चन्नीरे विश्वेशाघ्रिद्वन्द्व सम्यग् ध्यात्वा,
कृत्वा तत्तन्मात्रायुक्तप्राणायाम शोच्य नश्यत्तत्सङ्ग मुक्त्वा ।
मायाजाल सर्व विश्व मत्वा चित्ते रम्य हर्म्यं पुत्रा किञ्चिन्नैत-
च्छ्स्वरकामक्रोधक्रौर्याक्रान्त श्रान्त प्रान्ते नाह देह सोऽह तत्सत् ॥५४०॥

इति विद्यानन्द २३६

२३७ अथ हंसी

यस्यामष्टौ पूर्वं हारास्तदनु च दिनपतिमित वरवर्णा,
दण्डाकारा कान्ते ! चञ्चतकरयुगविलसितवलयविलोले ।
तद्वद्दीर्घावन्त्यौ वर्णौ *यतिरिह विलसति वसुभुवनार्णे ,
सा विज्ञेया हंसी बाले ! प्रभवति यदि किल नयनयुगार्णा* ॥५४१॥

यथा–

प्रौढध्वान्ते प्रावृट्काल क्षितितलविलसिततरलितकन्दे,
कालिन्दीये कुञ्जे कुञ्जे त्वदभिसरणकृत सरभसवेषा ।
राधात्यन्त बाधायुक्ता भ्रमरति मनसिजविशिखविलूना,
वन्यस्रग्भिर्विरचितभूषस्त्वमपि च विहरसि सरसकदम्बे** ॥ ५४२ ॥

यथा वा–

श्रीकृष्णेन क्रीडन्तीना क्वचिदपि वनभुवि मनसिजभाजा,
१ गोपालीना चन्द्रज्योत्स्नाविशदरजनिगुरुजनितरतीनाम् ।
घर्मभ्रश्यत्पत्रालीनामुपचितरभसविमलतनुभासा,
१रासक्रीडायासध्वंसी मुदमुपनयति१ मलयगिरिवात ॥ ५४३ ॥

इति हंसी २३७

**विह नगतोऽय पाठो नास्ति क प्रतौ । १ १ क रासक्रीडायापासध्वसमुदमुपनयमिद ।

*टिप्पणी—१ पादोऽय सर्वथाऽशुद्ध वर्णद्वयवर्द्धनाद्दीर्घद्वयरहितत्वाच्च । प्रतोऽस्मिन् पादे यदि विरचित पदस्थाने सृष्टा पदयोजना स्यात्तद्दोषपरिहारसभव ।

२३८ अथ मदिरा

आदिगुरुं कुरु सप्तगण सखि ! पिङ्गलभाषितमन्तगुरु,
पङ्क्तिविराजि-यति च तत कुरु सूर्यविभाऽसियति च तत ।
चिन्तय चेतसि वृत्तमिद मदिरेति च नाम यत प्रथित,
सप्तभकारगुरूपहित बहुभि कविभिर्बहुधा कथितम् ॥ ५४४ ॥

यथा–

मा कुरु मानिनि ! मानमये वनमालिनि सन्तति[1]शालिनि हे,
पाणितलेन कपोलतल न विमुञ्चति सम्प्रति कि मनुपे ।
यौवनमेतदकारणक न हि किञ्चिदतोऽपि फल तनुपे,
कुञ्जगत परिशीलय त परिलम्बमिद सखि ! कि कुरुपे ॥ ५४५ ॥

इति मदिरा २३८

इयमेव अस्माभिर्मात्राप्रस्तारे पूर्वखण्डे सवयाप्रकरणे मदिराभिसन्धाय सवया इत्युक्ता, सा तत एवावधारणीया ।

२३९ अथ मन्द्रकम्

कारय भ ततोपि रगण ततो नरनरास्ततश्च न गुरु,
दिग्रविभिर्भवेच्च विरतिर्विलोचनयुगैरपीन्दुवदने ! ।
कल्पय पादमत्र रुचिर कवीन्द्रवरपिङ्गलेन कथित,
मन्द्रकवृत्तमेतदबले ! सुभाषितमहोदधे सुमथितम् ॥ ५४६ ॥

यथा–

दिव्यसुगीतिभि सकृदपि स्तुवन्ति भवये(भुवि ये) भवन्तमभय,
भक्तिभरावनम्रशिरस कृताञ्जलिपुटा निराकृतभवम् ।
ते परमीश्वरस्य पदवीमवाप्य सुखमाप्नुवन्ति विपुल,
मर्त्यभुव स्पृशन्ति न पुनर्मनोहरसुताङ्गनापरिवृता ॥ ५४७ ॥

इति मन्द्रकम् २३९

२४०. अथ शिखरम्

मन्द्रकमेव हि वृत्त यदि दशरसयुगविरति भवेत ।
शिखर तदत्र भाते ! कथित कविपिङ्गलेन तदा ॥ ५४८ ॥

---

१ ख सन्ततिशालिनी ।

यथा–

कृष्णपदारविन्दयुगल नमन्ति ननु ये जना सुकृतिन,
संसृतिसागर सुविपुल तरन्ति मुदितास्त एव कृतिन ।
दिव्यधुनीतरङ्गललिते तटे घृतकुटा स्मरन्ति परम,
धाम निरन्तर मनसि तज्जराकवलित जनुर्न चरमम् ॥ ५४९ ॥

इति शिखरम् २४०

मन्द्रकस्य गणा एव अत्रापि यतिकृत एव पर भेद ।

२४१ अथ अच्युतम्

सलयुग-निगमनगणमिह[1]* कुरु पक्षि-पाणिमभाजित,
तदनु च रचय कमलमुखि ! सखि ! पुष्पहारविराजितम् ।
निगमशिशिरकरविरचितयतियोगबद्ध विभावित,
कविवरफणिपतिसुभणितमिति[1] मानसे कलयाच्युतम् ॥ ५५० ॥

यथा–

सघनतिमिरभरभरितविपिनमात्मनैव विभावित,
न खलु सहचरि ! वितनु विदलितमाश्रयामि सुजीवितम् ।
कनकनिभवसनमरुणनयनमानयाशु मनोहर,
मसृणमणिगणखचिततनुमपि हारयामि तमोहरम् ॥ ५५१ ॥

इति अच्युतम् २४१

२४२ अथ मदालसम्

कर्णं जकार रसयुग्म विधेहि सखि ! कर्णं तत कुरु रस,
हार नकारमथ कर्णं नरेन्द्रमिह हस्त विधेहि च तत ।
सूर्याश्वसप्तयति कुर्याद् यथाभिरुचि पश्चाद् वसौ च विरति[2],
नेत्रद्वयन कुरु पादान्तवर्णमिति वृत्त मदालसमिदम् ॥ ५५२ ॥

यथा–

शम्भो ! जय प्रणमदम्भोजनामविधिदम्भोलिपाणितरणे-
रम्भोरुगाढपरिरम्भोपभोगदिवि रम्भोपगीतसततम् ।
स्तम्भोदयप्रणतजम्भोपघाति[3]शिशुदम्भोपकल्पिततनो !,
रम्भोदरप्रतिमशम्भो! जयामलविदम्भोधि[4]वर्द्धनविधो ! ॥ ५५३ ॥

---

१ क सुभाषितमिति । २ ख विरति । ३. ख जम्भो ■ घाति । ४ ख चिदम्भोधि ।

*टिप्पणी—१ सलयुगनिगमनगणमिह' इह – अच्युतवृत्ते लघुद्वयसहितच तुर्नगणमर्थात् चतुर्दशलघ्वक्षरमत्र 'कुरु' रचयेत्यथ ।

यथा वा—

मन्दाकिनीपुलिनमन्दारदामशतवृन्दारकाञ्चितविभो[1]!
नारायणप्रखरनाराचविद्धपुरनाराधिदुष्कृतवता ।
गङ्गाचलाचलतरङ्गावलीमुकुटरङ्गावनीमतिपटो[2]!
गौरीपरिग्रहणगौरीकृतार्द्ध तव गौरांदृग्गौ श्रुतिगता ॥५५४॥

यथा वा, अस्मद्वृद्धप्रपितामहकविपण्डितमुख्यश्रीमद्रामचन्द्रभट्टकृतनारायणाष्टके-

कुन्दातिभासि शरदिन्दावखण्डरुचि वृन्दावनव्रजवधू-
वृन्दागमच्छलनमन्दावहासकृतनिन्दार्थवादकथनम् ।
वन्दारुबिम्बदरविन्दामनक्षुभितवृन्दारकेश्वरकृत-
च्छन्दानुवृत्तिमिह नन्दात्मजं भुवनकन्दाकृतिं हृदि भजे ॥ ५५५ ॥

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु शतशः प्रत्युदाहरणानि[3] ।

इति भवालसम् २४२.

२४३. अथ तरुवरम्

सहचरि ! रविहयपरिमित सुनगणमिह विरचय,
तदनु शिशिरकरपरिमित कुसुममिह परिकलय ।
कविवरसकलभुजगपतिनिगदितमिदमनुसर,
नवरससुघटित-नरवरसुपठित-तरुवरमिति ॥ ५५६ ॥

यथा—

प्रणतमुनिगण ! करधृतगिरिवर ! सदवनपर !,
त्रिभुवननिरुपम ! नरवरविलसित ! सकपटवर ! ।
दमितदितिजकुल ! कलितसकलबल ! सततमदय !,
सरभसविदलितकरिवर ! जय ! जय ! निगमनिलय ! ॥ ५५७ ॥

अत्र प्रायोऽष्टाष्टरसैर्विरतिरित्युपदेशः ।

इति तरुवरम् २४३.

अत्रापि प्रस्तारगत्या द्वाविंशत्यक्षरस्य एकचत्वारिंशल्लक्षाणि चतुर्नवति-सहस्राणि चतुरुत्तर शतत्रयं ४१९४३०४ भेदा, तेषु भेदाष्टकमुक्तम् । शेषभेदास्तु शास्त्ररीत्या प्रस्तार्य प्रतिभावद्भिरुदाहर्त्तव्याः । इति दिङ्मात्रमुपदिश्यते[1*] ।

इति द्वाविंशत्यक्षरम् ।

---

१. ख विभो । २ख मतिपटो । ३ ख. तदुदाहरणम् ।

*टिप्पणी—१. सर्वाः शेषभेदा द्रष्टव्या पञ्चमपरिशिष्टे ।

अथ त्रयोविंशाक्षरम्

तत्र पूर्वम्—

२४४ दिव्यानन्द

कुन्तीपुत्रा यस्मिन् वृत्ते दिक्संख्याता सेका शोभन्ते प्रान्ते चैको हार,
रौद्रैर्नेत्रैर्यस्मिन् सर्वैर्वर्णैर्वा सोऽय दिव्यानन्दश्छन्दोग्रन्थे सार ।
विश्राम स्यात षड्भि कर्णैर्यस्मिंस्तद्वत् सार्द्धे [1] पाण्डो पुत्रैर्वा स्यात्तस्यान्ते,
बाले ! लीलालोले ! कामक्रीडासक्ते ! पूर्वोक्त दिव्य वृत्त धेहि स्वान्ते ॥५५८॥

यथा–

वन्दे देव सर्वाधार विश्वाध्यक्ष लक्ष्मीनाथ त क्षीराब्धौ तिष्ठन्त,
यो हस्तीन्द्र भक्त ग्राहग्रस्त मत्वा हित्वाप्त सर्व स्त्रीवर्ग भासन्तम् ।
आरूढ सौपर्णे पृष्ठेऽनास्तीर्णेऽपि प्राप्तश्चक्री वेगादेवोच्चै. क्रीडत्,
व्यापाद्याम् नक्र [1] मध्ये वक्त्र सग्रस्त दन्तीन्द्र ससाराम्मुक्त कुर्वन् ॥५५९॥

इति दिव्यानन्द २४४

२४५ [१]. अथ सुन्दरिका

करयुक्तसुपुष्पद्वयललिता ताटङ्कमनोहरहारधरा,
द्विजकर्णविराजत्पदयुगला गण्डेन सुमण्डितकुण्डलका ।
यदि सप्तविभिन्ना शरविरति शर्वैरपि चेद्विहतिर्विहिता,
किल सुन्दरिका सा फणिभणिता नेत्राग्निकला कविराजहिता ॥५६०॥

यथा–

सखि ! पङ्कजनेत्र मुरहरण विज्ञ कमनीयकलाललित,
वरमौक्तिकहार सुखकरण रम्य रमणीवलये वलितम् ।
तरुणीजनचित्त वरतरुण भव्य भवभीतिविनाशकर,
घनकुञ्चितकेश मुनिशरण नित्य कलयेऽखिलदैत्यहरम् ॥ ५६० ॥

इति सुन्दरिका २४५[१]

२४५[२] अथ पद्मावतिका

सुन्दरिकैव हि बाले ! यदि मुनिरसदशविरामिणी भवति ।
विज्ञापयन्ति तज्ज्ञा· पद्मावतिकेति नयनदहनकमलाम् ॥ ५६२ ॥

यथा–

सखि ! नन्दकुमार तनुजितमार कुण्डलमण्डितगण्डयुग,
हतकसनरेश रचितसुवेश कुञ्चितकेशमशेषसुगम् ।

---

१ ख शेषे । १ ख नक्र ।

इयमेवास्माभिः पूर्वखण्डे मल्लिका सवया इत्युक्ता। सा तत एवावधारणीया।

२४९. अथ मत्ताक्रीडम्

यस्मिन्नष्टौ पूर्वं हारास्तदनु च मनुमित लघुमिह रचयेत्[1],
पादप्रान्ते चैकं हारं विकचकमलमुखि ! विरचय नियतम्।
मत्ताक्रीडं वृत्तं बाले ! वसुतिथियतिकृतरतिसुखनिवहं,
कुन्तीपुत्र वेदैरुक्तं निगमनगणमपि विरचय सगणम्॥ ५७२॥

यथा–

नव्ये कालिन्दीये कुञ्जे सुरभिसमयमधुमधुरसुखरसं,
रासोल्लासक्रीडारङ्गे युवतिसुभगभुजरचितवरवदाम्[2]।
सान्द्रानन्द[3] मेघश्यामं मुरलिमधुर[4]रवविमुषितहरिणं,
वृन्दारण्ये दीव्यत्पुण्ये स्मरत परममिह हरिमनवरतम्॥ ५७३॥

इति मत्ताक्रीडम् २४९.

२५०. अथ कनकवलयम्

सुतनु ! सुदति ! मुनिमितमिह सुनगणमिति ह विरचय,
तदनु विकचकमलमुखि ! सखि ! खलु लघुयुगमुपनय।
दहननयनमितलघुमिह पदगतमपि परिकलय,
कनकवलयमिति कथयति भुजगपतिरिति तदवय[5]॥ ५७४॥

यथा–

कनकवलयरचितमुकुट !*विधृतलकुट ! निकटवस !,
शमितशकट ! कनकसुपट ! दलितदितिजसुभटदल !।
कमलनयन* ! विजितमदन ! युवतिवलयरचितलय !,
तरलवसन ! विहितभजन ! धरणिधरण ! जय ! विजय !॥ ५७५॥

इति कनकवलयम् २५०

[1] अत्रापि प्रस्तारगत्या त्रयोविंशत्यक्षरस्य त्र्यशीतिलक्षाणि अष्टाशीतिसहस्राणि अष्टोत्तराणि षट्शतानि च ८३८८६०८ भेदा भवन्ति, तेषु अष्टौ भेदाः प्रोक्ताः, शेषभेदाः प्रस्तार्य गणयतिवर्णनामसहितास्समुदाहरणीया इति दिगुपदिश्यते[*]।

इति त्रयोविंशत्यक्षरम्।

---

१. ग. रचये। २. घ वरवदाम्। ३. क सान्द्रानन्द। ४ ख मधुरमधुर। ५. ग घ तदव। ६. पङ्क्तिरियं नास्ति क प्रतौ। *–* चिह्नान्तर्गतोऽयं पाठः क प्रतौ नास्ति।

*टिप्पणी—१ त्रयोविंशत्यक्षरस्य प्रस्तारभेदेषु सप्तदशभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः।

अथ चतुर्विंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्–　　　　　　२५१ रामानन्द

आदित्यैः सख्याता यस्मिन् वृत्ते दिव्ये श्रीनागाख्याते शोभन्तेऽन्यन्त वर्णा,
षड्भिः वर्णैर्द्वित्वं प्राप्तैर्यैर्विश्राम स्यात् सत्तत्त्वैस्साख्यं ख्यातास्तद्वद्वर्णाः।
कामक्रीडाकूतस्फीतं प्राप्तानन्दे भव्याकारे चन्द्राराध्ये नव्ये कान्ते !,
वेदैर्नैत्रैर्यस्मिन् पादे हारा सपत्कन्द रामानन्द वृत्त धेहि स्वान्ते ॥ ५७६ ॥

यथा–

रासोल्लासे गोपस्त्रीभिर्वृन्दारण्ये कालिन्दीये कुञ्जे कुञ्जे गुञ्जद्भृङ्गे,
दिव्यामोदे पुष्पाकीर्णे धृत्वा वशी मन्द मन्द दिव्यैस्तानैः सङ्गायन्तम् ।
कामक्रीडाकूतस्फीत तासामङ्गेऽनङ्ग साङ्ग कुर्वन्तत काम शान्त,
सर्वानन्द तेजोरूप विश्वाध्यक्ष वन्दे देव भासन्त प्रात सायान्तम ॥५७७॥

इति रामानन्द २५१

२५२ अथ दुर्मिलका

विनिधाय कर सखि ! पाणितल कुरु रत्नमनोहरबाहुयुग,
सगण च तत कुरु पाणितल सखि ! रत्नविराजितपादयुतम् ।
यदि योगरसैरपि पङ्क्तिविराजित-तत्त्वविभासितवर्णधरा,
भवतीह तदा किल दुर्मिलका सखि ! नेत्रविभावसुभासिकला ॥५७८॥

यथा–

गिरिराजसुताकमनीयमनङ्गविभङ्गकर नृकपालधर,
परिधूतगजाजिनवाससमुद्धतनृत्यकर शशिखण्डवरम् ।
गरलानलभूषित दीनदयालमदभ्रमदोद्धतनीलगल,
प्रणमामि विलोलजटातटगुम्फितशेषकलानिधिमालतलम् ॥ ५७९ ॥

यथा वा, भूषणे*[1]–

कति सन्ति न गोपकुले ललिता स्मरतापहृतादच विहाय च ता,
रतिकेलिकलारसलालसमानसमागतमुज्झितमानरसम् ।
वनमालिनमालि नमस्य नमस्य नमस्य मुदस्य चिरस्य वृथा,
भविता परितापवती भवती युवती जनससदि हासकथा ॥ ५८० ॥

इति दुर्मिलका २५२

---

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वि० प्र० पद्य ३१८

यमुनातटकुञ्जे सतिमिरपुञ्जे कारितरासविलासपरं,
मुखनिर्जितचन्द्रं विगलिततन्द्रं चिन्तय चेतसि चित्तहरम् ॥ ५६३ ॥

इति पद्मावतिका २४५[२].

२४६. अथ अद्रितनया

सहचरि ! चेन्नजौ भजगणौ भजौ च भवतस्ततो भलगुरू,
शिवविरतिस्तथैव विरतिः प्रभाकरभवा भवेच्च नियता[1] ।
प्रतिपदमत्र वह्निनयनाक्षरैर्गणय पादमिन्दुवदने !,
जगति जया प्रकाशितनया जनैः किल विभाविताऽद्रितनया ॥ ५६४ ॥

प्रकारान्तरेणापि लक्षणं यथा—

सुदति ! विधेहि नं तदनु जं ततोऽपि भगणं ततश्च जगणं,
तदनु च देहि भं तदनु जं ततोऽपि भगणं ततो लघुगुरू ।
कुरु विरतिं शिवे दिनकरे यतिं सुरुचिरां विभावितनयां,
दहनविलोचनाक्षरपदां विधेहि सुभगे[2] ! मुदाऽद्रितनयाम् ॥ ५६५ ॥

यथा–

नयनमनोरम विकसित पलाशकुसुमं विलोक्य सरसं,
विकचसरोरुहां च सरसीं विभाव्य सुभृशं मनोऽतिविरसम् ।
गगनतलं च चन्द्रकिरणैः कर्णैरिव[3] विभावसोस्सुपिहितं,
सहचरि ! जीवनं न कलये विना सहचरं विधेहि विहितम् ॥ ५६६ ॥

यथा वा–

'विलुलितपुष्परेणुकपिशप्रशान्तकलिकापलाशकुसुमम् ॥' इत्यादि भट्टिकाव्ये[1]*

इति अद्रितनया २४६.

अश्वललितमिदमन्यत्र[2]*, तथाहि—

---

१. ख. नियमा । २. ख. सुभग । ३. ख. करणैरिव ।

*टिप्पणी—१ 'विलुलितपुष्परेणुकपिश प्रशान्तकलिका-पलाशकुसुमं,
कुसुमनिपातविचित्रवसुधं सशब्दनिपतद् द्रुमोत्कशकुनम् ।
शकुननिनादनादिककुब्विलोलविपलायमानहरिणं,
हरिणविलोचनाधिवसतिं बभञ्ज पवनात्मजो रिपुवनम् ॥
[भट्टिकाव्य, स० ८, प. १३१]

२ वृत्तरत्नाकर—नारायणीटीका अ० ३, का० १०६ ।

पवनविधूतवीचिचपलं विलोकयति जीवितं तनुभृतां,
न पुनरहीयमानमनिशं जरावनितया वशीकृतमिदम् ।
सपदि निपीडनव्यतिकरं यमादिव नराधिपान्नरपशु,
परवनितामवेक्ष्य कुरुते तथापि हतबुद्धिरदवललितम् ॥ ५६७ ॥

इति प्रत्युदाहरणम्[1] ।

[2]अत्रापि गणयतिवर्णविन्यासस्तु पूर्ववदेव, नाममात्रे भेदः, फलतो न कश्चिद् विशेषः ।[2]

२४७ अथ मालती

अत्रैव सप्तभगणानन्तरं गुरुद्वयदानेन मालतीवृत्तं भवति । लक्षणं च यथा–

इयमेव सप्तभगणादनन्तरं भवति मालतीवृत्तम् ।
यदि गुरुयुगलोपहिता पिङ्गलनागस्तदाख्याति ॥ ५६८ ॥

यथा –

चन्द्रकचारुचमत्कृतिचञ्चलमौलिविलुम्पितचन्द्रकशोभं,
वन्यनवीनविभूषणभूषितनन्दसुतं वनिताधरलोभम् ।
धेनुकदानवदारणदक्ष-दयानिधि दुर्गमवेदरहस्यं,
नौमि हरिं दितिजावलिमालितभूमिभरापनुदं[3] सुयशस्यम् ॥ ५६९ ॥

इति मालती २४७

इयमेव अस्माभिः पूर्वखण्डे मालती सवया इत्युक्ता । [सा तत एवावलोकनीया] ० किञ्च—

२४८ अथ मल्लिका

सप्तजगणादनन्तरमपि चेल्लघुगुरुनिवेशनं भवति ।
जल्पति पिङ्गलनागः सुकविस्तन्मल्लिकावृत्तम् ॥ ५७० ॥

यथा–

धुनोति मनो मम चम्पककाननकल्पितकेलिरयं पवनः,
कथामपि नैव करोमि तथापि वृथा कदनं कुरुते मदनः ।
कलानिधिरेष बलादयि मुञ्चति वह्निकलापमलीकहिमं[4],
विधेहि तथा मतिमेति यथा सविधेन पथा व्रजभूमहिमं[5] ॥ ५७१ ॥

इति मल्लिका २४८

---

१ ख उदाहरणम् । २–२ चिह्नगतोऽयमंशो नास्ति क प्रतौ । ३ ख भरापनुदे ।
४ ख हितं । ५ ख व्रजभूमहितं ।

तत्त्वैरात्मा यस्मिन् वृत्ते वर्णे रयाला [1] छन्दोविद्भि सद्भि ससेव्य सर्वानन्द,
सोऽय नागाधीशेनोक्तो वृत्ताध्यक्ष ससाध्य पुम्भिश्चित्ते काम कामानन्द ।५६०।

यथा–

वन्यै पीतै पुष्पैर्माला सङ्ग्रथ्नत [2] श्रीमद्वृन्दारण्ये गोपीवृन्दे [3] खेलन्त,
मायूरै पत्रैर्दिव्य छत्र कुर्वन्त वृक्षाणा शाखा धृत्वा हिन्दोले दोलन्तम् ।
वशीमोष्ठप्रान्ते कृत्वा सगायन्त तासा तन्नाम्नान्युक्त्वा गोपीराह्वायन्त,
दक्ष पाद वामे धृत्वा सतिष्ठन्त काल्येवार्क्षे [4] मूले वन्दे कृष्ण [5] भासन्तम्।।५६१।।

इति कामानन्द २५७

२५८ अथ क्रौञ्चपदा

धारय भ म धारय स भ निगमनगणमिह विरचय रुचिर,
सञ्चितहारा पञ्चविरामा शरवसुमुनियुतसुरचितविरति ।
क्रौञ्चपदा स्यात् काञ्चनवर्णे गतिवशसुविजितमदगजगमने,
तत्त्वविभेदैर्वर्णविरामा बहुविधगतिरपि भवति च गणने ।। ५६२ ।।

यथा

या तरलाक्षी कुञ्चितकेशी मदकलकरिवरगमनविलसिता,
फुल्लसरोजश्रेणिकटाक्षा मधुमदसुमुदितसरभसगमना ।
स्थूलनितम्बा पीनकुचाढ्या वहुविधसुखयुतसुरतसुनिपुणा,
सा परिणेया सौख्यकरा स्त्री वहुविधनिधुवनसुखमभिलपता ।। ५६३ ।।

यथा वा, हलायुधे [1]*

या कपिलाक्षी पिङ्गलकेशी कलिरुचिरनुदिनमनुनयकठिना,
दीर्घतराभि स्थूलशिराभि परिवृतवपुरतिशयकुटिलगति ।
आयतजङ्घा निम्नकपोला लघुतरकुचयुगपरिचितहृदया,
सा परिहार्या क्रौञ्चपदा स्त्री ध्रुवमिह निरवधिसुखमभिलपता ।। ५६४ ।।
इति प्रत्युदाहरणम ।

इति क्रौञ्चपदा २५८

२५९ अथ मल्ली

सगणाष्टकगुरुघटिता शरपक्षकवर्णविलसिता या स्यात ।
तामिह पिङ्गलनाग कथयति मल्लीमिति स्फुटत ।। ५६५ ।।

---

१ ख स्यात । २ क सङ्ग्रोम्मन्त । ३ ख गोपीवृन्दं । ४ ख त तिष्ठन्त सरकादम्बे । ५ क कृष्णे ।

*टिप्पणी—१ छद शास्त्र हलायुधीयटीकाया अ० ७, कारिकाया ३० उदाहरणम् ।

यथा–

गिरिराजसुताकमनीयमनङ्गविभङ्गकर गलमस्तकमाल,
परिधूतगजाजिनवाससमुद्धतनृत्यकर विगृहीतकपालम् ।
गरलानलभूपित-दीनदयालमदभ्रमदोद्धतदानवकाल,
प्रणमामि विलोलजटातटगुम्फितशेषकलानिधिलालितभालम् ॥ ५९६ ॥

इति मल्ली २५९.

इयमेव मात्रावृत्ते मल्लीसवया इत्युक्ता ।

२६० अथ मणिगणम्

सुतनु ! सुदति ! वसुमितनगणमिह विधुसुमुखि ! सुविरचय,
तदनु विकचकमलसदृशमुखि ! सुरभिकुसुममपि कलय ।
गतिवशविदलितमदकलकरिवरगमन इह सुरमणि,
मणिगणमिति फणिपतिरपि कथयति विमलमतिरविरणि[1] ॥ ५९७ ॥

यथा–

निगमविदित सततमुदित परमपुरुपसुकृतसुललित[2],
सकलमनुजकलुपदहन तरलयुवतिवचनविचलित ।
विकटगहनदहनकवल पिहितनयन मिलितसखिवल !
कलितविविधविबुधसुखचय जय जय दलितदितिजदल ॥ ५९८ ॥

इति मणिगणम् २६०

[3]अत्रापि प्रस्तारगत्या पञ्चविंशत्यक्षरस्य कोटित्रय पञ्चत्रिंशल्लक्षाणि चतुःपञ्चसहस्राणि द्वात्रिंशदुत्तराणि चतुःशतानि च ३३५५४४३२ भेदास्तेषु दिगुपदर्शनार्थं भेदचतुष्टयमुक्त वृत्तान्तराणि च प्रस्तार्य सुधीभिरूह्यानीति शिवम्*[3] ।

इति पञ्चविंशत्यक्षरम् ।

अथ षड्विंशाक्षरम्

तत्र प्रथम सर्वगुरुम्–

२६१ श्रीगोविन्दानन्द

यस्मिन् वृत्ते दिक्सख्याता कर्णा रामै. सपन्ना शोभन्तेऽत्यन्त वामैर्भव्याकारा,
विश्राम. स्यात् पड्भि कर्णै पश्चादन्ते कुन्तीपुत्रैर्मौनैस्तेषा लोके ख्याताहाराः ।
सर्वेपा नागानामीशेनाय प्रोक्त. सर्वान्त्य प्रस्तारः पड्विंशत्याहारैस्तारै.
सोऽय श्रीगोविन्दानन्दश्छन्दस्सारः सर्वाधार कार्यश्चित्तेऽसारैश्छन्दस्कारै.
॥५९९॥

१. क विलमतिरतितरणि । २. ख. सुफलित । ३. पक्ति चतुष्टय नास्ति क प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ पञ्चविंशत्यक्षरवृत्तस्योपलब्धशेपभेदा पञ्चमपरिशिष्टे लोकनीया ।

२५३. अथ किरीटम्

पादयुगं कुरु नूपुरराजितमत्र करं वररत्नमनोहर-
पत्रयुगं कुसुमद्वयराजितकुण्डलगण्डयुगं समुपाहर ।
पण्डितमण्डलनिबाहृतमानसमर्पितगञ्जनमौक्तिकमालय,
पिङ्गलपन्नगराजनिवेदितवृत्तकिरीटमिदं परिभावय ॥ ५८१ ॥

यथा–

मल्लिलते मलिनासि किमित्यलिना रहिता भवती बत यद्यपि,
सा पुनरेति शरद्रजनी तव या तनुते धवलानि जगन्त्यपि ।
षट्पदकोटिविघट्टितकुड्मल[1]कोटिविनिर्गतसौरभसम्पदि,
न त्वयि कोऽपि विचारयति सादरमन्तरमुत्तरनागरसंसदि ॥ ५८२ ॥

इति किरीटम् २५३.

२५४. अथ तन्वी

धारय भ त सुचरितभरितं न युग स सखि ! सुमहितवृत्ते,
धेहि भयुग्म नगणयुगाहित धारय सुन्दरि ! यगणमिहान्ते ।
भूतमुनीनैर्यतिरिह फणिना द्वादशभिश्च सुकविजनवित्ता,
सत्यविरामा भुजगविरचिता राजति चेतसि परमिति तन्वी ॥ ५८३ ॥

यथा–

मा कुरु मान शृणु मम वचन कुञ्जगत भज सहचरि ! कृष्णं,
कारितराग कलमिलपनित गोपवधूजनयुवतिसतृष्णम् ।
कोकिलरावैर्मधुकरविरुतै[2] स्फोटितकर्णयुगलपरिखिन्ना,
दाहमुपेता मलयजसलिलैरसम्प्रतिदेहजदारभरभिन्ना ॥ ५८४ ॥

यथा वा, छन्दोवृत्तौ *द्वादशाक्षरविरतिः—

चन्द्रमुखी सुन्दरघनजघना कुन्दसमानशिखरदशनाग्रा,
निष्कलवीणा श्रुतिसुखवचना त्रस्तकुरङ्गतरलनयनान्ता ।
निर्भरपीनोन्नतकुचकलशा मत्तगजेन्द्रस्खलितगतिभावा,
निर्भरलीला निधुवनविषये मुञ्जनरेन्द्र ! भवतु तव तन्वी ॥ ५८५ ॥
इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति तन्वी २५४.

---

१. ख कुड्मल । २. क मधुकरविरति ।

*टिप्पणी—१ छन्दःशास्त्र-हलायुधीयटीका अ० ७, कारिकायाः २९ उदाहरणम् ।

२५५. अथ माधवी

तत्त्वाक्षरकृतवृत्तं यदि वसुभिर्नायकैर्घटितम् ।
तत्सखि ! पिङ्गलभणितं कथितं त्विह माधवीवृत्तम् ॥ ५८६ ॥

यथा–

विलोलविलोचनकोणविलोकितमोहितगोपवधूजनचित्तः,
मयूरकलापविकल्पितमौलिरपारकलानिधिबालचरित्रः ।
करोति मनो मम विह्वलमिन्दुनिभस्मितसुन्दरकुन्दसुदन्तः,
सखीमिति कापि जगाद हरेरनुरागवशेन विभावितमन्तः ॥ ५८७ ॥

इति माधवी २५५.

इदमेवास्माभिः पूर्वखण्डे माधवी सवया इत्युक्ता ।

२५६. अथ तरलनयनम्

वसुमितलघुमिह सहचरि ! विकचकमलमुखि ! विरचय,
तदनु घटय सखि ! रसदशलघुमपि तरलनयन इह ।
सकलचरणमिति वसुमितसुनगणमनु कुरु सुरमणि,
फणिमणिरिह विभुरनुवदति सुरुचिरमिति परिकलय ॥ ५८८ ॥

यथा–

कुसुमनिकरपरिकलितमधुरवनविहरणसुनिपुण,
सरभसविदलितकरिवरनरवरदलितदितिजगण ।
करधृतगिरिवर विलसितमणिगण मुनिमलमुरहर,
फणिपतिविगणितगुणगण जय जय जय सदवनपर ॥ ५८९ ॥

इति तरलनयनम् २५६.

[1]अत्रापि प्रस्तारगत्या चतुर्विंशत्यक्षरस्य एकाकोटिः सप्तषष्टिलक्षाणि सप्तसप्ततिसहस्राणि षोडशोत्तरं शतद्वयं च १६७७७२१६ भेदास्तेषु भेदषट्कमुदाहृतं, शेषभेदाः प्रस्तार्य सुधीभिरुदाहरणीया, इति दिक् ।

इति चतुर्विंशत्यक्षरम् ।

अथ पञ्चविंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

२५७. कामानन्दः

यस्मिन् वृत्ते सावित्राः कौन्तेयाः कान्ताः यत्नादप्रान्ते कान्ते ! चैको मुक्ताहारः,
विश्रामः स्यात् षड्भिः कर्णैर्भव्याकारैः सार्द्धस्तैरेव स्यात् सोऽयं वृत्तानां सारः ।

१. पंक्तित्रयं नास्ति क. प्रतौ ।

*टिप्पणी —१ चतुर्विंशत्यक्षरवृत्तस्य लभ्यशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे पर्यवेक्षणीयाः ।

यथा–

श्रीगोविन्दं सर्वानन्दश्चित्ते ध्येयं वित्तं मित्रं स्वाराज्यं स्त्रीवर्गं सर्वो हेयं,
वृन्दारण्ये गुञ्जद्भृङ्गे पुष्पैः कीर्णे श्रीलक्ष्मीनाथं श्रीगोपीकान्तं शश्वद्गेयं ।
द्वारे द्वारे व्यर्थं संसारे रे रे रे भ्राम भ्राम कामं किं कुर्यास्त्वं क्षामं चेतः,
मायाजालं सर्वं चैतत् पश्यच्छ्रावन्भ्राम्यस्तानायोनौ पूर्वं क्षिप्तोऽसि त्वं भ्रान्त
॥ ६०० ॥

इति श्रीगोविन्दानन्दः २६१

२६२ अथ भुजङ्गविजृम्भितम्

आदौ यस्मिन् वृत्ते काले[1] मगणयुग-ततननगणा रसौ च लगौ ततो-[2]
वस्वीशाश्वच्छेदोपेतं चपलतरहरिणनयने विधेहि सुखेन वै ।
पादप्रान्तं यस्मिन् वृत्ते रसनरनयनविलसितं मनोहरणं प्रिये !,
नागाधीशेनोक्तं प्रोक्तं[3] विबुधहृदयसुखजनकं भुजङ्गविजृम्भितम् ॥ ६०१ ॥

यथा–

ध्यानैकाग्रालम्बादृष्टिप्कमलमुखि ! लुलितमलकं करे स्थितमाननं,
चिन्तासक्ता शून्या बुद्धिस्त्वरितगतिपतितरशनातनुस्तनुता गता ।
पाण्डुच्छायक्षामं वक्त्रं मदजनितं रहसि सरसा[4] करोषि न सकथा,
को नामायं रम्यो व्याधिस्तव सुमुखि ! कथय किमिदं न खल्वसि नातुरा[5]
॥ ६०२ ॥

यथा वा, हलायुधे[1]*–

यैः सन्नद्धानेकानीकैर्नरतुरगकरिपरिवृतैः समं तव शात्रव,
युद्धश्रद्धालुब्धात्मान[6]स्त्वदभिमुखमथ गतभियः पतन्ति धृतायुधाः ।
तेऽद्य त्वा दृष्ट्वा संग्रामे तुडिगनृपकृपणमनसः पतन्ति दिगन्तरं
किं वा सोढुं शक्यं तैस्तैर्बहुभिरपि सविषविषमं भुजङ्गविजृम्भितम् ॥ ६०३ ॥

इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति भुजङ्गविजृम्भितम् २६२

२६३ अथ अपवाहः

आदौ मं तदनु च कुरु सहचरि ! रसपरिमितमिह नगणं गण्यं,
हस्तं सविरचय सखि ! विकचकमलमुखि ! तदनु च रुचिरं कर्णं ।
विश्रामं सुतनु ! सुदति ! नवरसरसशरपरिमितं इह बोभूयात्
नागो जल्पति फणिपतिरतिशयमिति रतिकृतिधृतिरपवाहः स्यात् ॥ ६०४ ॥

---

१ ख वाले । २ ख तनो । ३ ख पत्ता । ४ ख सारसा । ५ ख चातुरा । ६ ख लब्धात्मानः ।

*टिप्पणी—१ छन्दःशास्त्रहलायुधटीकायां अ० ७ कारिकायां ३१ उदाहरणम् ।

यथा–

श्रीकृष्ण भवभयहरमभिमतफलकरणनिपुणतरमाराध्य,
लक्ष्मीश दलितदितिजमवजितपरमवनतमुनिवरससाध्यम् ।
सर्वज्ञ गरुडगमनमहिपतिकृतरुचिरशयनमनघ नव्य,
त वन्दे कनकवसनतनुरुचिजितजलदपटलमजित दिव्यम् ॥ ६०५ ॥

यथा वा, हलायुधे[1]—

श्रीकण्ठ त्रिपुरदहनममृतकिरणशकलकलितशिरस रुद्र,
भूतेश हतमुनिभयमखिलभुवनमितचरणयुगमीशानम् ।
सर्वज्ञ वृषभगमनमहिपतिकृतवलयरुचिरकरमाराध्य,
त वन्दे भवभयनुदमभिमतफलवितरणगुरुमुमया युक्तम् ॥ ६०६ ॥

इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति प्रवाह २६३

२६४ अथ मागधी

अत्रैव वसुभगणानन्तर गुरुद्वयदानेन मागधीवृत्त भवति । तल्लक्षण यथा—

भगणाष्टकगुरुयुगला रसयुगवर्णा रसाग्निराशिकला ।
पन्नगपिङ्गलसपिता विज्ञेया मागधी सुधिया ॥ ६०७ ॥

यथा –

माधव विद्युदिय गगने तव सतनुते नवकाञ्चनरञ्जितवस्त्र,
नीरदवृत्तमिद गगनेऽपि च भावयति प्रसभ तव देहमहास्त्रम् ।
इन्द्रशरासनजालमिद तव वक्षसि भावयत[1] वनमालतिमाला,
मानय मे वचन कुरु सम्प्रति सुन्दर चेतसि भावयतामिह बालाम ॥६०८॥

इति मागधी २६४

इयमेव च द्वात्रिंशत्कलका मागधी सवया इत्युक्ता पूर्वखण्डे । अत्र तु गुरुद्वयमधिकमिति षड्त्रिंशत्कलेति, ततो भेद । वर्णप्रस्तारत्वाच्च षड्विंशत्यक्षरनियम । *अतएव च जातिवृत्तसाकर्येण छन्द सन्दर्भवैचित्रीमावहतीति सर्वत्र रहस्य चाकसीति छन्द शास्त्रेषु ।*

---

१ ख सतनुते । * *चिह्नगतोऽय पाठ क प्रतौ नास्ति ।

*टिप्पणी—१ छन्द शास्त्रहलायुधटीकायां अ० ७, कारिकाया ३२ उदाहरणम् ।

अथान्त्य सर्वलघु—

२६५ अथ कमलदलम्

सहचरि ! विकचकमलमुखि ! वसुमितसुनगणमिह विरचय,
तदनु सकलपदविशदसुरभिकुसुमयुगमपि परिकलय ।
रसयुगपरिमितपदगतलघुमनुकलय कमलदलमिति,
तदिह मनसि कुरु सुरुचिरगुणवति ! कथयति फणिपतिरपि ॥ ६०६ ॥

यथा–

कलुषशमन ! गरुडगमन ! कनकवसन ! कुसुमहसन ! [जय,
ललितमुकुट ! दलितशकट[2] कलितलकुट ! रचितकपट ! जय ।
कमलनयन !][1] जलधिशयन ! धरणिधरण ! मरणहरण ! जय,
सदयहृदय ! पठितसुनय ! विदितविनय ! रचितसमय ! जय ॥ ६१० ॥

इति कमलदलम् २६५.

अत्रापि प्रस्तारगत्या रसलोचनवर्णस्य कोटिषट्कं एकसप्ततिलक्षाणि वसुसहस्राणि षट्पञ्चाशदुत्तराणि अष्टौ शतानि च भेदाः ६७१०८८६४ तेषु भेदपञ्चकमभिहितं, शेषभेदाः प्रस्तार्य गुरूपदेशात् स्वेच्छया नामानि प्रकल्प्य सूचनीया इति सर्वमवदातमिति ।'

इति षड्विंशत्यक्षरम् ।

उक्तग्रन्थमुपसंहरति[4]—

लक्ष्यलक्षणसंयुक्तं मया छन्दोऽत्र कीर्तितम् ।
अप्युदाहरणत्वेन क्वचित् प्राचामुदाहृतम् ॥ ६११ ॥
सुजातिप्रतिभायुक्तं सालङ्कारं स्फुरद्गुणम् ।
कुर्वन्तु सुधियः कण्ठे वृत्तमौक्तिकमुत्तमम् ॥ ६१२ ॥
सर्वगुर्वादिलघ्वन्तप्रस्तारस्त्वतिदुष्करः ।
इति विज्ञाय वाद्यन्तभेदकल्पनमीरितम् ॥ ६१३ ॥
पञ्चषष्ट्यधिकं नेत्रशतकं समुदीरितम् ।
त्यक्त्वा लक्षणमिश्राणि[3] वर्णवृत्तमिति स्फुटम् ॥ ६१४ ॥
यथामति यथाप्रज्ञमवधार्य मनीषिभिः ।
शोधनीयं प्रयत्नेन बद्धः सन्तोऽयमञ्जलिः ॥ ६१५ ॥

---

१ [-] कोष्ठगतोंऽश क प्रतौ नास्ति ।

२ पङ्क्तिचतुष्टयं नास्ति क प्रतौ । ३ ख नास्ति पाठः । ४ ख वृत्तानि ।

*टिप्पणी—१ सम्यग्भेदा पञ्चमपरिशिष्टे पर्यालोच्या ।

अत्र चैकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधिप्रस्तारपिण्डसंख्या—

रसलोचनसप्ताश्वचन्द्रदृग्वेदवह्निभिः ।
आत्मना योजितैर्वामगत्या ज्ञेया मनीषिभिः ॥ ६१६ ॥

इत्यस्मत्पितृचरणप्रदीपित 'पिङ्गलप्रदीपभाष्य'* निर्दिष्टदिशा 'त्रयोदश कोटयो द्विचत्वारिंशल्लक्षाणि सप्तदशसहस्राणि षड्विंशत्युत्तराणि सप्तशतानि च १३४२१७७२६ समस्तप्रस्तारस्य ।

षड्विंशतिःसप्तशतानि चैव तथा सहस्राण्यपि सप्तपंक्तिः ।
लक्षाणि दृग्वेदसुसम्मितानि कोटयस्तथा रामनिशाकरैः स्युः ॥६१७॥

इति मदुपदिष्टपूर्वखण्डोक्तपिण्डसंख्या च सिंहावलोकनशालिभिरनुसन्धातव्या इति सर्वमनवद्यम् ।

इति श्रीलक्ष्मीनाथभट्टात्मज-कविशेखरचन्द्रशेखरभट्टविरचिते
[1]श्रीवृत्तमौक्तिके एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षर-
प्रस्तारेष्वाद्यन्तभेदसहितवृत्तनिरूपण-
प्रकरणं प्रथमम् ।

---

१ ख. वृत्तमौक्तिके पिङ्गलवार्त्तिके एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरान्तप्रस्तारे ।

*टिप्पणी—१ लक्ष्मीनाथभट्टकृतायां प्राकृतपैङ्गलवृत्तौ २११ पद्यस्य टीकायाम् ।

द्वितीयं प्रकीर्णक-प्रकरणम्

अथ प्रस्तारोत्तीर्णानि कतिचिद् वृत्तानि वर्णनियमरहितान्यभिधीयन्ते। तत्र प्राचीनानां संग्रहकारिका—

१-४. अथ भुजङ्गविजृम्भितस्य चत्वारो भेदाः

वेदैः पिपीडिका स्यान्नवभिः करभश्चतुर्दशभिः।
पणवमिदं तु शरैश्चेन्माला इह मध्यगैर्लघुभिरधिकैः॥ १॥

इति भुजङ्गविजृम्भितभेदनिरूपणम् १-४.*[1]

---

*टिप्पणी—१ ग्रन्थकारेण द्वितीयखण्डस्य द्वादशप्रकरणे विज्ञापितमिदं यदस्य द्वितीयखण्डस्य द्वितीयप्रकरणे पिपीलिका-पिपीलिकाकरभ-पिपीलिकापणव-पिपीलिकामालाच्छन्दांसि लक्षणोदाहरणसहितानि निरूपितानि'। परमत्र चतुर्वृत्तानां लक्षणोदाहरणानि क्वचिदपि नैव दृश्यन्ते, केवलं त्वत्र प्राचीनसंग्रहकारिकैव समुपलभ्यते। कारिकायाः पूर्वापरप्रसङ्गरहितत्वात् लक्षणान्यपि न प्रस्फुटीभवन्ति। अतः कलिकालसर्वज्ञहेमचन्द्राचार्यप्रणीतच्छन्दोनुशासनादेषां चतुर्वृत्तानां लक्षणोदाहरणान्यत्र प्रस्तूयन्ते। वृत्तान्येतानि सन्ति षड्विंशत्यक्षरात्मक-भुजङ्गविजृम्भितस्यैव भेदरूपाणि।

"मातभौजभ्राः पिपीलिका र्णैः ॥३८५॥

[व्या०] मश्च तगणो नगणचतुष्टयं जभराः। अर्णैरिति अष्टभिः पञ्चदशभिश्च यतिः। यथा—

निष्प्रत्यूहं पुण्यां लक्ष्मीमविरतमभिलषसि यदि रमयितुं गुणं च यदीच्छसि,
स्थातुं न्यायोन्मीलद्बुद्धे लघुभिरपि सह बहुभिरिह कुरु मा विरोधपदं तदा।
विस्फूर्जत्स्थूलस्फारश्रीकाञ्चलितसकलमृगकुलमजगरं भुजङ्गममुन्मदं,
सङ्घातं कृत्वा पश्यैताः क्षपितवपुषमनवधिरचितरुजा घ्नन्ति पिपीलिकाः ॥३८५॥
एवं मौ वरस. पञ्च दश-पञ्चदशलघुवृद्धिक्रमेण करभः ॥३९॥ पणवः ॥४०॥
माला ॥४१॥—॥३८६॥

[व्या०] एवमेव पिपीलिका चतुर्भ्यो नगणेभ्यः परतः पञ्चभिः, दशभिः, पञ्चदशभिश्च लघुभिर्वृद्धा शेषगणेषु तथैव स्थितेषु क्रमेण करभादयो भवन्ति। तेऽत्र पञ्चभिर्वृद्धा पिपीलिकाकरभः। यथा—

५, अथ द्वितीयत्रिभङ्गी

प्रथमत इह कुरु सहचरि ! दश-परममपि च भ
कुरु शेषे गुरुयुग्म हस्तसुयुक्त,
पुनरपि गुरुयुग-लघुयुग-गुरुयुगमपि कुरु,
जल्पति नाग कृतराग पीतविभाग ।
श्रुतिपदमिह सखि ! सममिति विरचय शुभदति[1]
वेदद्गुक्ता विरतौ मात्रा कुरु युक्ता,
वसुरसशशिमितकलमिह कलय सकलपद—
मङ्गदभङ्गी सुखरङ्गी सज्जनसङ्गी ॥ २ ॥

---

१ ल वरतनु ।

*टि०—कण्ठस्येव दासी श्यामापरभृतयुवतिरपि
मधुपरिचयकलविरुतिनिसर्गकलध्वने,
भ्रूवल्लीभङ्गे छेकाया हरिणनयनमचतुर-
मतिललिततनु करभोरु ते सदृश दृश ॥ ३८६ ॥

दशभिर्बुद्धापिपीलिकापणव । यथा—

इन्दोऽमन्द कुन्दच्छाय शरदमलघनतुहिनविकच-
कुमुदमनहरहसितसित शशाङ्ककरोज्ज्वल,
तार पारावारापार स्थलजलगगनतलसकल-
भुवनपथधवलनपरिचित प्रसाधितदिङ्मुख ।
लोकालोकच्छेद गत्वा दृढकठिनविकटदिग-
वधितटघटनविघलनचलयितो विशुद्धयशश्चय
प्रोत्तुङ्ग श्वेतप्राकारो ध्वनितगुणपणव तव जयति
नृपवर नवललितवसतेजगत्त्रितयश्रिय ॥३८७॥

पञ्चदशभिर्बुद्धा पिपीलिकामाला । यथा—

उत्फुल्लाम्भोजाक्ष्यास्तस्या कुसुमशरसुभग तव विरहदव
इह हि जयिनि समुपचरणविषये व्यधायि सखीजनै,
अङ्गे वास कर्पूराम्भस्तिमितशुचितुहिनकिरणकरपरि-
भवचतुरधवलिमकुचतटयुगे सुमौक्तिकदाम च ।
रम्भागुल्म लीलागार मलयजरसकलितवसुधामभिनव-
विकचकुमुदवनदलसमुदयैश्च तल्पककल्पना,
नव्या मौलौ मल्लीमाला तदिदमखिलमपि दवहुतवहरुहि-
परिचितमहिम विरचयति मुहु प्रदाहमहाज्वरम् ॥ ३८८ ॥'
[छन्दोनुशासनम् द्वि० अ०]

द्विकलघुदशकस्यान्ते भगण-यगुग-सगण-गुरुयुगलम् ।
लघुयुगलं गुरुयुगलं यदि घटित स्यात् त्रिभङ्गिकावृत्तम् ॥ ३ ॥

यथा

स जयति हर इह वलयितविषधर तिलकितसुन्दरचन्द्रः
परमानन्दः सुखकन्दः ।
वृषभगमन डमरुधरण नयनदहन अनितातनुभङ्गः
कृतरङ्गः सज्जनसङ्गः ।
जयति च हरिरिह करधृतगिरिवर विनिहतकंसनरेशः
परमेशः कुञ्चितकेशः ।
गरुडगमन कलुषशमनचरणशरणजनमानसहंसः
सुवतंसः पालितवंशः ॥ ४ ॥

इति द्वितीयत्रिभङ्गी ५.

६. अथ शालूरम्

कर्णद्विजवरगणमिह रसपरिमितमतिसुरुचिरमनुकलय करं,
शालूरममलमिति विकचकमलमुखि ! सखि ! सहचरि ! परिकलय वरम् ।
नेत्रानलकलमिदमतिशयसहृदय विशदहृदय सुखरसजनकम् ।
नागाधिपकथितमखिलविबुधजनमथितमगणितगुणगणकनकम् ॥ ५ ॥

यथा–

गोपीजनवलयित - मुनिगणसुमहितमुपचितदितिसुतमदहरणं,
व्यर्थीकृतजलधर-करधृतगिरिवर-गतभय-निजजनसुखकरणम् ।
वृन्दावनविहरण - परपदवितरण - विहितविविधरसरभसपरं,
पीताम्बरधरमरणचरणकरमनुसर सखि ! सरसिजनयनवरम् ॥ ६ ॥

इति शालूरम् ६.

इति प्रकीर्णकं वृत्तमुक्तं सद्वृत्तमौक्तिके ।
प्रस्तारगत्या वृत्तानि शेषाण्यूह्यानि पण्डितैः ॥ ७ ॥

इति प्रकीर्णक–प्रकरणं द्वितीयम् ।

———

तृतीयं दण्डक-प्रकरणम्

अथ दण्डका

तत्र यत्र पादे द्वौ नगणौ रगणाश्च सप्त भवन्ति स दण्डको नाम षड्-विंशत्यक्षरपादस्य वृत्तस्यानन्तर 'दण्डको नौ र' [।।७।३३।।][1]* इति सूत्रकार पाठात् सप्तविंशत्यक्षरत्वमेव युक्त दण्डकस्य । प्रथम तावदेकाक्षरश्रयादिवृत्ताना मेकैकाक्षरवृद्धया प्रस्तारप्रवृत्तिरत ऊर्ध्वं पुनरेकैकरेफवृद्धया प्रस्तार । तल्लक्षण यथा—

१ अथ चण्डवृष्टिप्रपात

नगणयुगलादनन्तरमपि यदि रगणा भवन्ति सप्तैव ।
दण्डक एव निगदितश्चण्डकवृष्टिप्रपात इति ।। १ ।।

यथा–

इह हि भवति दण्डकारण्यदेशे स्थिति पुण्यभाजा मुनीना मनोहारिणी,
त्रिदशविजयिवीर्यदृप्यद्दशग्रीवलक्ष्मीविरामेण रामेण ससेविते ।
जनकयजनभूमिसम्भूतसीमन्तिनीसीमसीतापदस्पर्शपूताश्रमे,
भुवननमितदिव्यपम्पाभिधानाम्बिकातीर्थयात्रागतानेकसिद्धाकुले ।। २ ।।

इति चण्डवृष्टिप्रपात १

२ अथ प्रचितक

'शेष प्रचितक' [७।३६][2]** इति सूत्रकारोक्तदिशा [चण्डवृष्टिप्रपातादूर्ध्वं अधिकैकरेफदानेन प्रस्तारे कृते दण्डक प्रचितक इति सज्ञा लभते । लक्षण, यथा–

यदि ह न-द्वयानन्तरमपि रेफा स्युर्वसुप्रमिता ।
प्रचितक इति तत्सज्ञा कथिता श्रीनागराजेन ।। ३ ।।

यथा–

प्रथमकथितदण्डक][1] चण्डवृष्टिप्रपाताभिधानो मुने पिङ्गलाचार्यनाम्नो मत,
प्रचितक इतितत्पर[2] दण्डकानामिय जातिरेकैकरेफाभिवृद्धचा यथेष्ट भवेत ।
स्वरुचिरचितसज्ञया तद्विशेषैरशेषै पुन काव्यमन्येपि कुर्वन्तु वागीश्वरा,
भवति यदि समानसख्याक्षरैस्तत्र पादव्यवस्था ततो दण्डक पूज्यतेऽसौ जनै ।। ४ ।।

इति प्रचितक ३.

१ [–] कोष्ठकान्तर्गतोऽशो नास्ति क प्रतौ । २ 'प्रचित इति तत पर' इति हलायुधे ।
*टिप्पणी—१ छन्द शास्त्र ।
२ छन्द शास्त्र हलायुधटीका ।

३ अथ अर्णादयः

पितृचरणैरिह कथिताः प्रतिचरणविवृद्धिरेफा ये ।
दण्डकभेदाः पिङ्गलदीपे[1] *ऽप्यर्णादयः स्फुटतः ॥ ५ ॥
तत एव हि ते विबुधैः विज्ञेया रेफवृद्धितः प्राज्ञैः ।
प्रस्तार्यं ते विधेया इत्युपदेशः कृतोऽस्माभिः ॥ ६ ॥

अत्रापि समानसंख्याक्षर एव पादो भवतीति ध्येयम् । तत्रार्णो यथा—

जय जय जगदीश विष्णो हरे राम दामोदर श्रीनिवासाच्युतानन्त नारायण,
त्रिदशगणगुरो मुरारे [मुकुन्दासुरारे][1] हृषीकेश पीताम्बर श्रीपते माधव ।
गरुडगमन कृष्ण वैकुण्ठ गोविन्द विश्वम्भरोपेन्द्र चक्रायुधाधोक्षज श्रीनिधे,
बलिदमन नृसिंह शौरे भवाम्भोधिघोरार्णसि त्व निमज्जन्त[2]मभ्युद्धरोपेत्य माम् ७

इत्युदाहरणम्[3]

इत्यर्णादयो दण्डकाः ३.

४ अथ सर्वतोभद्रः

रसपरिमितलघुकान्ते यदि यगणा स्युर्नियमिताः ।
दण्डक एष निगदितः पिङ्गलनागेन सर्वतोभद्रः ॥ ८ ॥

यथा–

जय जय यदुकुलाम्भोधिचन्द्र प्रभो वासुदेवाच्युतानन्तविष्णो मुरारे,
प्रबलदितिजकुलोद्दामदन्तावलस्तोमविद्रावणे केसरीन्द्रासुरारे ।
प्रणतजनपरितापोग्रदावानलच्छेदमेघोधनारायण श्रीनिवास,
चरणनख[ज]सुधांशुच्छटोन्मेषनि शेषिताशेषविश्वान्धकारप्रकाश ॥९॥

एतस्यैव अन्यत्र प्रचितक इति नामान्तरम् ।

इति सर्वतोभद्रः ४.

---

१. [–] कोष्ठगतोंऽशो नास्ति क. प्रतौ । २. ध्वरतमज्जन्त । ३. क. इति प्रत्युदाहरणम् ।

*टिप्पणी–१. "अथार्णादयः–प्रतिचरणविवृद्धिरेफाः स्युरर्णार्णवव्यालजीमूतलीलाकरोद्दाम-
[illegible]

५. अथ अशोककुसुममञ्जरी

रगण-जगण-क्रमेण हि रन्ध्रगणा यत्र लघ्वन्ताः ।
पिङ्गलनागनिगदिता ज्ञेया साऽशोककुसुममञ्जरिका ॥ १० ॥

यथा–

राधिके विलोकयाद्य केलिकाननं पिकावलीविरावराजितं मनोरमं च,
सुन्दराङ्गि चारुचम्पकस्रगावली-विराजिते विलोलहारमण्डितेऽपरं च ।[1]
मद्वचः[1] शृणुष्व ते हितं च वच्मि हे सखि प्रमोदकारणं मनोविनोदनं च,
फुल्लनागकेसरादिपुष्परेणुभूषितं भजाद्य नन्दनन्दनं मनोहरं च ॥ ११ ॥

इति अशोककुसुममञ्जरी ५.

६. अथ कुसुमस्तबकः

सखि ! यत्र रन्ध्र-सगणाः श्रुतिपदघटिता विराजन्ते ।
कुसुमस्तवकं दण्डकमाह तदा तं तु पिङ्गलो नागः ॥ १२ ॥

यथा–

सखि ! नन्दसुतं कमनीयकलाकलितं करुणावरुणालयमीशहरिं,
रजनीशमुखं भवभीतिहरं नवनीतकरं भवसागरपारतरिम् ।
चपलारुचिरांशुकवल्लिधरं कमलावलिमालितमालि तमालरुचिं,
भवमोचन-पङ्कजलोचनरोचनरोचितभालमहं शरणं कलये ॥ १३ ॥

इति कुसुमस्तबकः ६.

७. अथ मत्तमातङ्गः

यत्र स्वेच्छा घटिता भवन्ति विहगाः[2] सरोजाक्षि ! ।
पिङ्गलभुजगाधिपतिः कथयति तं मत्तमातङ्गम् ॥ १४ ॥

यथा–

यामुने सैकते रासखेलागतं गोपिकामण्डलीमध्यगं वेणुवाद्येतरं,
मञ्जुगुञ्जावतंसं जगन्मोहनं चारुहासश्रिया सञ्चितं कुन्तलैरञ्चितम् ।
दिव्यकेलीकलोल्लाससम्भावितं दासवृन्दापदुन्मूलकं कामनापूरकं,
कल्पवृक्षस्य मूले स्थितं चन्द्रिकोत्तसहाराञ्चित चेतसा कृष्णचन्द्रं भजे ॥१५॥

इति मत्तमातङ्गः ७.

---

१. ख. द्वितीयचरणं क. प्रतौ नास्ति । २. क. मे वच. । ३. ख. विगहगा ।

८. अथ अनङ्गशेखरः

जगण-रगण-क्रमेण च रन्ध्रगणा यत्र लघ्वन्ताः(गुर्वन्ताः) ।
फणिपतिपिङ्गलभणिताः[1] स ज्ञेयोऽनङ्गशेखरः कविभिः ॥ १६ ॥

यथा–

विलोलचारुकुण्डलः स्फुरत्सुगण्डमण्डलः सुलोलमौलिकुन्तल स्मरोल्लसत्,
नवीनमेघमण्डलीवपुर्विभासिताम्बरप्रभातडिल्लमाश्रितः स्मितं दधत् ।
मयूरचारुचन्द्रिकाचयप्रपञ्चचुम्बितोल्लसत्किरीटमण्डितः समुच्छ्वसन्,
विलासिनीभुजावलीनिरुद्धवाहुमण्डलः करोतु वः कृतार्थतां जनानवन्[2] ॥१७॥

इति अनङ्गशेखरः ८.

इति दण्डकाः

एवमन्येपि नकारद्वयानन्तरमनियतैस्तकारैः दण्डकाः प्रबन्धेषु दृश्यन्ते । तेऽस्माभिरपि यतत्वादेवोपेक्षिताः ग्रन्थविस्तरभयाच्चेह न लक्षिता, इत्युपरम्यते[*] ।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके[तृतीय]दण्डकप्रकरणम् ।

———

चतुर्थं अर्द्धसम-प्रकरणम्

अथ अर्द्धसमवृत्तानि लक्ष्यन्ते—

चतुष्पद भवेत् पद्य द्विधा तच्च प्रकीर्तितम् ।
जातिवृत्तप्रभेदेन छन्द [शास्त्रविशारदैं ॥ १ ॥
मात्राकृता भवेज्जातिवृंत्त वर्णकृत मतम् ।
तच्चापि त्रिविध प्रोक्त समार्द्धं][1] समक तथा ॥ २ ॥
विषम चेति तस्यापि लक्ष्यते लक्षण त्विह ।
चतुष्पदी समा यस्य तत्सम परिकीर्तितम् ॥ ३ ॥
यस्य स्यात् प्रथम पादस्तृतीयेन समस्तथा ।
द्वितीयस्तु चतुर्थेन भवत्यर्द्धं सम हि तत् ॥ ४ ॥
यस्य पादचतुष्क स्याद् भिन्न लक्षणभेदत ।
तदाहुर्विषम वृत्त छन्द शास्त्रविशारदा ॥ ५ ॥
सम तत्र मया प्रोक्तमथार्द्धसममुच्यते ।
यथा श्रीनागराजेन भाषित सूत्रवृत्तिभि ॥ ६ ॥

तत्र प्रथम—

१. पुष्पिताग्रा

यदि रसलघुरेफतो यकारो, विषमपदे परिभाति पन्नगोक्ता[2] ।
सम इह चरणे च नो जजौ रो, गुरुरपि चेज्जयतीह पुष्पिताग्रा ॥ ७ ॥

यथा–

सहचरि ! कथयामि ते रहस्य, न खलु कदाचन तद्गृह व्रजेथा[3] ।
इह विषमविषमा गिर सखीना, सकपटचाटुतरा पुरस्सरन्ति ॥ ८ ॥

यथा वा–

प्रसरति पुरत सरोजमाला, तदनु मदान्धमधुव्रतस्य पङ्क्ति ।
तदनु धृतशरासनो मनोभू[4]स्तव हरिणाक्षि विलोकन तु पश्चात् ॥ ९ ॥

इति वा–

दिशि दिशि परिहासगूढगर्भा, पिशुनगिरो गुरुगञ्जन च तादृक् ।
सहचरि ! हरये निवेदनीय, भवदनुरोधवशादय विपाक ॥ १० ॥

---

१ कोष्ठगोंऽश क. प्रतौ नास्ति । २ क पन्नगोक्त । ३ ख. व्रजेयाम् । ४ क मनोहर ।

अथ च—

इह खलु विषमः पुरा कृतानां, विलसति जन्तुषु कर्मणां विपाकः ।
क्व जनकतनया क्व रामजाया, क्व च रजनीचरसङ्गमापवादः ॥ ११ ॥

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु शतशः प्रत्युदाहरणानि[1] ।

इति पुष्पिताग्रा १.

२ अथ उपचित्रम्

विषमे यदि सौ सलगा प्रिये ! भौ च समे भगगाः सरसाश्चेत् ।
फणिना भणितं गणितं गणैर्वृत्तमिदं कथितं ह्युपचित्रम् ॥ १२ ॥

यथा—

नवनीतकरं करुणाकरं, कालियगञ्जनमञ्जनवर्णम् ।
भवमोचन पङ्कजलोचनं, चिन्तय चेतसि हे सखि ! कृष्णम् ॥ १३ ॥

इति उपचित्रम् २

३ अथ वेगवती

विषमे यदि सायदानिर्गौ, भत्रितयं समके गुरुयुग्मम् ।
कविना फणिना भणितेव, वेदय चेतसि वेगवतीयम् ॥ १४ ॥

यथा—

सखि ! नन्दसुतं कमनीयं, यादववंशधुरन्धरमीशम् ।
सनकादिमुनीन्द्रविचिन्त्यं, कुञ्जगतं परिशीलय कृष्णम् ॥ १५ ॥

इति वेगवती ३

४ अथ हरिणप्लुता

विषमे यदि सौ सगणो लगौ, सखि ! समे नगणौ भभरा स्मृता ।
कविना फणिना परिजल्पिता, सुमुखि ! सा गदिता हरिणप्लुता ॥ १६ ॥

यथा—

नवनीरदवृत्तमनोहर[2], कनकपीतपटद्युतिसुन्दर ।
भलिके तिलकीकृतचन्दन-स्तव तनोतु मुदं मधुसूदन ॥ १७ ॥

इति हरिणप्लुता ४

५ अथ अपरवक्त्रम्

विषम इह पदं तु नौ रलौ, गुरुरपि चेद् घटितः सुमध्यमे ।
सम इह चरणे नजौ जरौ, तदपरवक्त्रमिदं भवेत्प्रिये ॥ १८ ॥

---

१ ख प्रत्युदाहरणानि । २ ख वृन्दमनोहर ।

यथा—

स्फुटमधुरवचः प्रपञ्चनैः, कलितमिदं हृदयं सदैव ते ।
अलमलमधुना तवाननं, न खलु कदापि विलोकयाम्यहम् ॥ १६ ॥

यथा वा, हर्षचरिते [प्रथमोच्छ्वासे]—

तरलयसि दृशं किमुत्सुका-मविरतवासविलासलालसे[1] ।
अवतर कलहंसि वापिकां, पुनरपि यास्यसि पङ्कजालयम् ॥ २० ॥

इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति मञ्जरवक्त्रम् ५.

६. अथ सुन्दरी

विषमे यदि सौ लगौ लगौ, समके स्भौ रलगा भवन्ति चेत् ।
घनपीनपयोधरे ! तदा, कथिता नागनृपेण सुन्दरी ॥ २१ ॥

यथा–

अयि मानिनि ! मानकारणं, ननु तस्मिन्न विलोकयाम्यहम् ।
कुरु सम्प्रति मे वचोऽमृतं, प्रियगेहं व्रज किं विडम्बनैः ॥ २२ ॥

यथा वा–

अथ तस्य विवाहकौतुकं, ललितं बिभ्रत एव पार्थिवः ।
वसुधामपि हस्तगामिनी-मकरोदिन्दुमतीमिवापराम् ॥ २३ ॥*[1]

इति रघुवंशादिमहाकाव्येषु शतशः प्रत्युदाहरणानि[2] ।

इति सुन्दरी ६.

७. अथ भद्रविराट्

यस्मिन् विषमे तजौ रगौ चेद्, मः सो जः समके गुरू भवेताम् ।
तद्वै कथितं कवीन्द्रवर्यै–स्तज्ज्ञं भद्रविराडिति प्रसिद्धम् ॥ २४ ॥

यथा–

यद्वेणुविरावमोहितास्ता, गोप्यः स्वं वसनं च न स्मरेयुः[3] ।
द्वार्येव[4] निवारिता जनोघै-र्ध्यातव्ये कृतनिश्चया बभूवुः ॥ २५ ॥

इति भद्रविराट् ७

---

१. मकलुषमानसवासलालिते 'हर्षचरिते' । २. ख. समुदाहरणानि । ३. ख. स्मरन्ति ४. क. द्वार्येव ।

* टिप्पणी—१ रघुवंश, स० ८, पद्य १

८ अथ केतुमती

विषमे सजौ सखि ! सगौ चेद्, भ समके रनौ गुरुयुगाभ्याम् ।
मिलितौ यदैव भवतस्तौ, केतुमतीति सा भवति वृत्तम् ॥ २६ ॥

यथा–

यमुनाविहारकलनाभि , कालियमौलिरत्ननटनाभि ।
विदितो जनेन परमेश , केवलभक्तितस्तु भुवनेश ॥ २७ ॥

इति केतुमती ८.

९ अथ वाङ्मती

यद्ययुग्मयोः रजौ रजौ कृतौ च, जरौ जरौ च युग्मयोर्गसंगतौ वा ।
हारशङ्खकक्रमैरयुग्मतश्च, समानयोर्विपर्ययेण वाङ्मतीयम् ॥ २८ ॥

यथा–

काञ्चनाभ-वाससोपलक्षितश्च, मयूरचन्द्रिकाचयैर्विराजितश्च ।
नन्दनन्दन पुनातु सन्ततं च, मनोविनोदन प्रकामभासुरश्च ॥ २९ ॥

अत्र समयोः पादयोः पादान्तगुरुत्वमवधेयम् ।

इति वाङ्मती ९.

१० अथ षट्पदावली

वाङ्मत्येव हि सुकले, विपरीता भवति चेद् बाले ! ।
कथयति पिङ्गलनागस्ताभेता षट्पदावली रुचिराम् ॥ ३० ॥

ऊह्यमुदाहरणम् ।

इति षट्पदावली १०.

इत्यर्द्धसमवृत्तानि कथितान्यत्र कानिचित् ।
सुधीभिरूह्यान्यानि प्रस्तार्य स्वमनीषया ॥ ३१ ॥

इति श्रीवृत्तमौक्तिके [चतुर्थं] अर्द्धसमप्रकरणम् ।



पञ्चमं विषमवृत्त-प्रकरणम्

अथ विषमवृत्तानि

भिन्नचिह्नचतुष्पादमुद्दिष्टं विषमं मया ।
अथेदानीं तदेवात्र सोदाहरणमुच्यते ॥ १ ॥

तत्र प्रथमम्—

१ उद्गता

सजसा लघु प्रथमतस्तु, नसजगुरुकाणि युग्मतः ।
स्युस्तदनु भनभा गयुता, सजसा जगौ चरमतरपदोद्गता ॥ २ ॥

यथा—

विललास गोपरमणीषु, तरणितनयातटे हरिः ।
वंशमधरदले कलयन्, वनिताजनेन निभृतं निरीक्षितः ॥ ३ ॥

इति उद्गता १.

अथोद्गताभेदः

सजसा लघु प्रथमतस्तु, नसजगुरुकाणि युग्मतः ।
स्युस्तदनु भनलजा गयुता, सजसा जगौ च खलु तुर्यतो भवेत् ॥ ४ ॥

तृतीयचरणे वा स्याद् भेदः समुपलभ्यते । ततो भारवि माघावौ उद्गते-यमुदीरिता । यथा—

अथ वासवस्य वचनेन, रुचिरवदनस्त्रिलोचनम् ।
क्लान्तिरहितमभिराधयितुं, विधिवत्तपांसि विदधे धनञ्जयः ॥ ५ ॥*[1]

यथा वा, माघे*[2]

तव धर्मराज इति नाम, सदसि यदपष्ठु पठ्यते ।
भौमदिनमभिदधत्यथवा, भृशमप्रशस्तमपि मङ्गलं जनाः ॥ ६ ॥

इति उद्गताभेदः १.

२. अथ सौरभम्

प्रथमं द्वितीयमथ तुर्य-मिह समामुशन्ति पण्डिताः ।
सौरभं यदि तृतीयपदे, विहगो नभो गुरुरपीह दृश्यते ॥ ७ ॥

---

*टिप्पणी—१ किरातार्जुनीयम्, स० १२, पद्य १ ।
,, २ शिशुपालवधम्, स० १५, पद्य १७ ।

यथा–

यमुनातटे विहरतीह, सरसविपिने मनोहरे ।
रासकेलिरभसेन सदा, व्रजसुन्दरीजनमनोहरो हरि ॥ ८ ॥

इति सौरभम् २

३ अथ ललितम्

न-युगं च हस्तयुगलं च, सुमुखि[1] चरणे तृतीयके ।
भवति सुकविविदितं ललितं, कथितं तदेव भुवने मनोहरम् ॥ ९ ॥

यथा–

व्रजसुन्दरीसहचरेण[1], मुदितहृदयेन गीयते ।
सुललितमधुरतरं हरिणा, करुणाकरेण सततं मुरारिणा ॥ १० ॥

इति ललितम् ३

४ अथ भाव

षट्संख्याता हारा, पादेषु त्रिष्वेवम् ।
अन्ते कान्तं यस्मिन्, स-त्रय-ग-द्वितयं[2] वद भावम् ॥ ११ ॥

यथा–

राधामाधायैना, चित्ते बाधा त्यक्त्वा ।
कल्पान्ते य क्रीडेत्, तं किल चेतसि भावय नित्यम् ॥ १२ ॥

इति भाव ४

५ अथ वक्त्रम्

कदाचिदर्द्धसमकं, वक्त्रं च विषमं भवेत् ।
द्वयोस्तयोरुपान्तेषु, वृत्तं तदधुनोच्यते ॥ १३ ॥

तत्र वक्त्रम्–

युग्म्याः वक्त्रं मगौ स्यातां, सागराद् य[3]स्त्वनुष्टुभि ।
स्यात सर्वगणैरेतत्, प्रसिद्धं तद्धलायुधे ॥ १४ ॥

यथा–

मुखाम्भोजं सदा स्मेरं, नेत्रं नीलोत्पलं फुल्लम् ।
गोपिकानां मुरारातेश्चेतोभृङ्गं जहारोच्चै ॥ १५ ॥

इति वक्त्रम् ५

---

१. ख समुदयेन । २ क. सत्रयगद्वितयम । ३ चतुर्थाक्षरादनन्तरं यगणो देय इत्यर्थं ।

६ अथ पथ्यावक्त्रम्

अपि च–

युजोश्चतुर्थतो येन (जेन), पथ्यावक्त्रं प्रकीर्तितम् ।
[एवमन्येऽपि भेदास्तु, विज्ञेया गणभेदतः ॥ १६ ॥]*

यथा–

रासकेलिसतृष्णस्य, कृष्णस्य मधुवासरे ।
आसीद् गोपमृगाक्षीणा, पथ्यावक्त्रं मधुश्रुति. ॥ १७ ॥

इति पथ्यावक्त्रम् ६.

एवमन्यान्यपि गणविभेदात् ज्ञेयानि वक्त्रवृत्तानि ।

अथवा–

पञ्चम लघु सर्वत्र सप्तम द्विचतुर्थयो ।
गुरुषष्ठ तु पादाना शेषेष्वनियमो मतः ॥ १८ ॥
अत. श्रीकालिदासश्च स्वप्रबन्धे समुज्जगौ ।
तथान्येऽपि कवीन्द्राश्च स्वनिबन्धे ववन्धिरे ॥ १९ ॥

यथा–

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये ।
जगत. पितरौ वन्दे, पार्वतीपरमेश्वरौ ॥ २० ॥*१

किञ्च–

प्रयोगे प्रायिक प्राहु. केप्येतद् वक्त्रलक्षणम् ।
लोकेऽनुष्टुबिति ख्यातिस्तस्याष्टाक्षरता कृता ॥ २१ ॥
तथा नानापुराणेषु नानागणविभेदत. ।
वृत्तमष्टाक्षर वक्त्र, विषमाख्या प्रयाति हि ॥ २२ ॥
एव तु विषम वृत्त दिङ्मात्रमिह कीर्तितम् ।
शेषमाकरतो ज्ञेय, सुधीभिर्भावनापरै· ॥ २३ ॥
पदचतुरूर्ध्व व वृत्त मात्रासमकमेव च ।
उपस्थितप्रचुपित-मथान्यदपि वृत्तकम् ॥ २४ ॥
हलायुधे प्रसिद्धत्वादत्र [नात्युप] योगित ।
तदग्रन्थगौरवभीत्या च मयका न प्रपञ्चितम्*२ ॥ २५ ॥

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्तिके द्वितीये वृत्तपरिच्छेदे
विषमवृत्तप्रकरण पञ्चमम् ।

[–] कोष्ठवर्त्यंशो नास्ति क प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ रघुवश, स० १, प० १

*टिप्पणी—२ पदचतुरूर्ध्वादिवृत्ताना लक्षणानि श्रीहलायुधरचित-छन्द सूत्रटीकानुसारेण सक्षेपेणोद्ध्रियन्ते—

पदचतुरूर्ध्वम्—प्रथमचरणे अष्टौ वर्णा द्वितीयचरणे द्वादशाक्षरवर्णा, तृतीयचरणे षोडश वर्णा, चतुर्थचरणे च विंशतिवर्णा भवति। अस्मिन् वृत्ते गुरुलघुनियमो नास्ति।

आपीड — [प्र च] लघु ६, गुरु २। [द्वि च] लघु १०, गुरु २।
[तृ च] लघु १४, गुरु २। [च च] लघु १८, गुरु २।

प्रत्यापीड — [प्र च] गुरु २, लघु ६। [द्वि च] गुरु २, लघु १०।
[तृ च] गुरु २, लघु १४। [च च] गुरु २, लघु १८।

प्रत्यापीड — [प्र च] ग २, ल ४, ग २। [द्वि च] ग २ ल ८, ग २।
[तृ च] ग २ ल १२ ग २। [च च] ग २, ल १६, ग २।

मञ्जरी— [प्र च] १२ वर्णा। [द्वि च] ८ वर्णा।
[तृ च] १६ वर्णा। [च च] २० वर्णा।

लवली— [प्र च] १६ वर्णा। [द्वि च] १२ वर्णा।
[तृ च] ८ वर्णा। [च च] २० वर्णा।

अमृतधारा – [प्र च] २० वर्णा। [द्वि च] १६ वर्णा।
[तृ च] १२ वर्णा। [च च] ८ वर्णा।

उपस्थितप्रचुपितम्— [प्र च] म स ज भ ग ग। [द्वि च] स न ज र ग
[तृ च] न न स [च च] न न न ज य

वर्द्धमानम— [प्र च.] म स ज भ ग ग [द्वि च] स न ज र ग
[तृ च] न न स न न स [च च] न न न ज य

शुद्धविराटवृषभ— [प्र च] म स ज भ ग ग [द्वि च.] स न ज र ग
[तृ च] त ज र [च च] न न न ज य



षष्ठं वैतालीय-प्रकरणम्

१. अथ वैतालीयम्

विषमे रससख्यकाः कलाः, समकेऽष्टौ न कलाः पृथक्कृताः ।
न समात्र पराश्रया कला, वैतालीयेऽन्त्ये र-दण्ड-गाः ॥ १ ॥
विषमे रसमात्रा स्युः समे चाष्टौ कलास्तथा ।
वैतालीयं भवेद् वृत्त[1] तयोरन्ते रलौ गुरुः ॥ २ ॥

यथा–

तव तन्वि ! कटाक्षवीक्षितैः, प्रचरद्भिः श्रवणान्तगोचरैः ।
विशिखैरिव तीक्ष्णकोटिभिः, प्रहृतः प्राणिति दुष्करं नरः ॥ ३ ॥

अस्य च भूयांसि सप्रपञ्चमुदाहरणप्रत्युदाहरणानि पिङ्गलवृत्तौ सन्ति, तानि तत एवावधेयानि । [नैषधकाव्ये च द्वितीये सर्गे सन्ति तानि तत एवावधेयानि][2]

इति वैतालीयम् १.

२. अथ औपच्छन्दसकम्

तत्रैवान्तेऽधिके गुरौ स्या-दौपच्छन्दसकं कवीन्द्रहृद्यम् ।
फणिभाषितमुत्तमं रसालं, पठनीयं कविपण्डितैरुदारैः ॥ ४ ॥

यथा–

परमर्मनिरीक्षणानुरक्तं, स्वयमत्यन्तनिगूढचित्तवृत्तिम् ।
अनवस्थितमर्थलुब्धमाराद्, विपरीतं विजहीहि मित्रमेवम् ॥ ५ ॥

इति औपच्छन्दसकं वैतालीयम् २.

३. अथ आपातलिका

आपातलिका कथितेयं, भाद् गुरुकावथ पूर्ववदन्यत् ॥ ६ ॥

यथा–

पिङ्गलकेशी कपिलाक्षी, वाचा या विकटोन्नतदन्ती ।
आपातलिका पुनरेषा, नृपतिकुलेऽपि न भाग्यमुपैति ॥ ७ ॥

इति आपातलिका ३.

४. अथ नलिनम्

विषमपदैः स्यान्नलिनाख्यम् ॥ ८ ॥

---

१. क. वृत्ते । २. कोष्ठगतोंशो: नास्ति क. प्रतौ ।

[व्या०] विषमैरेव चतुर्भिरापातलिकापदैर्नलिनाख्य वैतालीयमित्यर्थः ।
यथा–

कुञ्चितकेशी नलिनाक्षी, स्थूलनितम्बा रुचिकान्ता ।
पद्ममृदुहस्ता रुचिरोष्ठी, गोष्ठीरसिका परिणेया ॥ ९ ॥

इति नलिनाख्य वैतालीयम्

५. अथापर नलिनम्

समचरणैरपि चान्यदुदीते ॥ १० ॥

[व्या०] समैरेव चतुर्भिरापातलिकापादैरपर नलिन भवतीत्यर्थः ।
यथा–

पङ्कजलोचनमम्बुददेह, बालविनोद-सुनन्दितगेहम् ।
पद्मजशम्भुकृतस्तुतिमीश, चिन्तय कृष्णमपारमनीयम् ॥ ११ ॥

इति अपर नलिनाख्य वैतालीयम् ५

६ अथ दक्षिणान्तिका वैतालीयम्

द्वितीयलस्यान्त्ययोगत , पदेषु सा स्याद् दक्षिणान्तिका ॥ १२ ॥

[व्या०] द्वितीयलघोरन्त्येन-तृतीयेन योगतश्चतुर्षु पादेषु यत्र सा दक्षिणान्तिका इत्यर्थः।
अतएव शुद्धवैतालीयस्य विषमपदैर्दक्षिणान्तिका, समपदैरुत्तरान्तिका इति शम्भुरप्याह ।
यथा–

ववौ मरुद्दक्षिणान्तिको, वियोगिनीप्राणहारक ।
प्रकम्पिताशोकचम्पको, वसन्तजोऽनङ्गबोधक ॥ १३ ॥

यथा वा, ममप्रत्युदाहरणम्[1]—

नमोऽस्तु ते रुक्मिणीपते, जगत्पते श्रीपते हरे ।
भवाम्बुधेस्तारयाशु मा, विधेहि सन्मतिं शुभाम् ॥ १४ ॥

इति दक्षिणान्तिका वैतालीयम् ६

■ अथ उत्तरान्तिका वैतालीयम

शुद्धवैतालीयस्य समपदैरुत्तरान्तिका ॥ १५ ।
यथा–

सहसा सादितकसभूपतिं, धृतगोवर्द्धनशैलमुद्धुरम् ।
यमुनाकुञ्जविहारिणं हरिं, यदुवीर कलयाम्यहर्निशम् ॥ १६ ॥

इति उत्तरान्तिका वैतालीयम् ७

८ अथ प्राच्यवृत्ति

तुर्यस्य तु शेषयोगत , प्राच्यवृत्तिरिह युग्मपादयो ॥ १७ ॥

---

१. स ममे(वो)दाहरणम् ।

[व्या०] [चतुर्मलकारस्य शधम–पञ्चमेन योगत प्राच्यवृत्तिर्नाम वैतालीय युग्मपादयो – समपादयोरित्यय ।][1]

यथा– हलायुधे—*१

विपुलार्थसुवाचकाक्षरा, कस्य नाम न हरन्ति मानसम् ।
रसभावविशेषपेशला प्राच्यवृत्ति कविकाव्यसम्पद ॥ १८ ॥

यथा वा, सुल्हणे—

स्वगुणैरनुरञ्जितप्रज, प्राच्यवृत्तिपरिपालने रत ।
रणभूमिषु भीमविक्रमो, विन्ध्यवर्मनृपतिर्जयत्यसौ ॥ १९ ॥

यथा वा, मम[1] प्रत्युदाहरणम्–

कति सन्ति न गोपबालका, कामकेलिकलनासुकोविदा ।
अयि माधव ! एव केवल, चेतना ननु[2] परिक्षिणोति मे ॥ २० ॥

इति प्राच्यवृत्तिर्नाम वैतालीयम् ८

९ अथ उदीच्यवृत्तिर्वैतालीयम्

उदीच्यवृत्तिस्त्वयुग्मयो, भवति तृतीयस्याद्ययोगत ॥ २१ ॥

[व्या०] अयुग्मयो–प्रथमतृतीययो पादयो तृतीयस्य लघोराद्येन–द्वितीयेन योगादुदीच्यवृत्तिर्नाम वैतालीयम् । यथा–

यथा– हलायुधे*२

अवाचकमनूर्जिताक्षर, श्रुतिदुष्ट श्रुतिकष्टमक्रमम् ।
प्रसादरहित च नेष्यते, कविभि काव्यमुदीच्यवृत्तिभि ॥ २२ ॥

यथा वा, ममापि उदाहरणम—

अवञ्चकमनिन्दित पर, परमेश परमार्थपेशलम् ।
अनाकलितवैभव विभु, जगता वन्द्यमनारत भजे ॥ २३ ॥

इति उदीच्यवृत्तिर्वैतालीयम् ९

१० अथ प्रवृत्तक वैतालीयम्

प्रवृत्तक पद्भिरेतयो ॥ २४ ॥

[व्या०] उदीच्यवृत्ति-प्राच्यवृत्त्योर्युगपत्प्रवृत्तयो पदै प्रवृत्तक, युक्पादे पञ्चमन पूर्व सयुज्यते अयुक्पादे तृतीयेन पूर्वमित्यर्थ ।

---

१ [–]कोष्ठगतांशस्य स्थाने 'समयोरित्यर्थ' इत्यश एवास्ति क प्रतौ ।

१ ख ममैवोदाहरणम् । २ ख न तु ।

*टिप्पणी—१ छन्द शास्त्र हलायुधटीका अ० ४ का० ३७ उदाहरणम्
२ ,,　　,　　,,　　,　३८　　,

यथा, हलायुधे*[1]—

जयो भरतवंशस्य[1], श्रूयतां श्रुतमनोरसायनम्।
पवित्रमधिकं शुभोदयं, व्यासवक्त्रकथितं प्रवृत्तकम्॥ २५॥

यथा वा, मम प्रत्युदाहरणम्—

हरिं भजत रे जनाः परं, श्रूयतां परमधर्ममुत्तमम्।
न कालः इह कालयत्यसौ, सर्वधस्मरघनाघनद्युतिः[2]॥ २६॥

इति प्रवृत्तकं वैतालीयम् १०

११ अथ अपरान्तिका

अस्य युग्मरचिताऽपरान्तिका॥ २७॥

[व्या०] अस्य-प्रवृत्तकस्य समवक्त्रता-समपादलक्षणयुक्तैश्चतुर्भिः पादैः रचिताऽपरान्तिका।

यथा, हलायुधे*[2]—

स्थिरविलासनतमौक्तिपेशला[3], [कमलकोमला][4]ङ्गी मृगेक्षणा।
हरति कस्य हृदयं न कामिनं, सुरतकेलिकुशलाऽपरान्तिका॥ २८॥

यथा वा, सुल्हणे—

तुङ्गपीवरघनस्तनालसा, चारुकुण्डलवती मृगेक्षणा।
पूर्णचन्द्रवदनाऽपरान्तिका, चित्तमुन्मदयतीयमङ्गना॥ २९॥

यथा वा मम प्रत्युदाहरणम्—

चारुकुण्डलयुगेन मण्डितो, बर्हिबर्हकृतमौलिशेखरः।
ब्रूत भोः पनसपिप्पलादयो, नन्दसूनुरिह नावलोकितः॥ ३०॥

इति अपरान्तिका ११

१२ अथ चारुहासिनी

अयुक्कृता चारुहासिनी॥ ३१॥

[व्या०] प्रवृत्तकस्यैव विषमपादलक्षणयुक्तैश्चतुर्भिः पादैर्विरचिता चारुहासिनी नाम वैतालीयम्। किं तल्लक्षणम्? चतुर्दशमात्रत्वं तृतीयेन च द्वितीययोगः।

---

१ इदं भरतभूभृताम्। २ ख द्युतिः। ३ काव्यो 'हलायुधे'। ४. कोष्ठगतोंऽशो नास्ति क प्रतौ।

*टिप्पणी—१ छन्दःशास्त्रहलायुधटीका अ० ४, का ३९ उदाहरणम्।
२ „ „ „ „ „ ४१ उदाहरणम्।

यथा, हलायुध' प्राह*१—

मनाक्प्रसृतदन्तदीधिति, स्मरोल्लसितगण्डमण्डला ।
कटाक्षललिता च कामिनी, मनो हरति चारुहासिनी ॥ ३२ ॥

यथा वा, वृत्तरत्नाकरटीकाया सुल्हणः प्रोवाच—

न कस्य चेत समन्मथ, करोति सा सुन्दराकृति ।
विचित्रवाक्योक्तिपण्डिता, विलासिनी चारुहासिनी ॥ ३३ ॥

यथा वा, मम प्रत्युदाहरणम्—

सुवृत्तमुक्तावलीधर, प्रतप्तचामीकराम्बरम् ।
मयूरपिच्छैर्विराजित, नमाम्यह नन्दनन्दनम् ॥ ३४ ॥

इति चारुहासिनी वैतालीयकम् १२

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वैतालीयप्रकरण षष्ठम् ।



*टिप्पणी—१ छन्द शास्त्रहलायुधटीकाया अ० ४, कारिकाया ४० उदाहरणम्

सप्तमं यतिनिरूपण—प्रकरणम्

अथाभिधीयते चात्र यतिर्विच्छेदसञ्ज्ञिता ।
विरामधृतिविश्रामावसानपदरूपिणी ॥ १ ॥
समुद्रेन्द्रियभूतेन्द्ररसपक्षदिगादय ।
साकाङ्क्षत्वादिमे शब्दा यत्या सम्बन्धमाश्रिता ॥ २ ॥
तस्यास्तु लक्षण सम्यगुच्यते वृत्तमौक्तिके ।
आलोच्य मूलशास्त्राणि सोदाहरणमञ्जसा ॥ ३ ॥
यति सर्वत्र पादान्ते श्लोकस्यार्द्धे विशेषत ।
समुद्रादिपदान्ते च व्यक्ताव्यक्तविभक्तिके ॥ ४ ॥
क्वचित्तु पदमध्येऽपि समुद्रादौ तथैव च ।
अत्र पूर्वापरौ भागौ न स्यातामेकवर्णकौ ॥ ५ ॥
पूर्वान्तवत् स्वर सन्धौ क्वचिदेव परादिवत् ।
द्रष्टव्यो यतिचिन्तायां यणादेश परादिवत् ॥ ६ ॥
नित्य प्राक्पदसम्बन्धाश्चादय प्राक्पदान्तवत् ।
परेण नित्यसम्बन्धा प्रादयश्च परादिवत् ॥ ७ ॥

'यति सर्वत्रपादान्त' इत्यादि कारिकाचतुष्टय यथास्थान व्याकरिष्याम । तत्र-यति सर्वत्र सर्ववृत्तेषु श्लोकेषु, पादान्त एव भवति । यथा—

[विशुद्धज्ञानदेहाय, शिवाय गुरवे नम । इत्यादि ।
तस्यैव प्रत्युदाहरण यथा][1]—

नमस्तस्मै महादेवाय शशाङ्कार्द्धमौलये । इति ।

श्लोकस्यार्द्धे विशेषत' इत्यत्र सन्धिकार्याभाव, स्पष्टविभक्तिकत्व च विशेषतो यत्र भवति । तद्यथा—

नमस्यामि सदोद्भूतमिन्धनीभूतमन्मथम् ।
ईश्वराख्य पर ज्योतिरज्ञानतिमिरापहम् ॥

अत्रेश्वरमित्यस्य मकारेण सयोगो न कर्त्तव्य । समासे तस्यैव प्रत्युदाहरण । यथा—

सुरासुरशिरोरत्नस्फुरत्किरणमञ्जरी-
पिञ्जरीकृतपादाब्जद्वन्द्व वन्दामहे शिवम ॥ इति ।

'समुद्रादिपदान्ते च व्यक्ताव्यक्तविभक्तिके ।' तत्र व्यक्तव्यक्तविभक्तिक समासान्तभूत मव्यक्तविभक्तिकम् । यथा—

1 [ ] क प्रतौ नास्ति कोष्ठगोऽश ।

यक्षश्चक्रे जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु । इत्यादि

व्यक्ताव्यक्तविभक्तिक इति । यतिः सर्वत्रपादान्ते इत्यनेन सम्बध्यते ।

यथा–

वशीकृतजगत्कालं कण्ठेकालं नमाम्यहम् ।
महाकाल कलाशेषं शशिलेखाशिखामणिम् ॥

अपि च–

नमस्तुङ्गशिरश्चुम्बिचन्द्रचामरचारवे ।
त्रैलोक्यनगरारम्भमूलस्तम्भाय शम्भवे ॥

क्वचित्तु पदमध्येऽपि समुद्रादौ यतिर्भवेत् ।
यदि पूर्वापरौ भागौ न स्यातामेकवर्णकौ ॥ ५ ॥

इति । चतुरक्षरा यतिर्भवति । यथा–

पर्याप्त तप्तचामीकरकटकतटे श्लिष्टशीतेतरांशौ ।

इत्यादि । यथा वा–

उन्मीलन्नीलपङ्केरुहरुचिररुचो देवदेवस्य विष्णोः ।

इत्यादि । तथा–

कूजत्कोयष्टिकोलाहलमुखरभुवः प्रान्तकूलान्तदेशाः । ·

इत्यादि । तथा–

वैरिञ्चानां[1] तथोच्चारितरुचिरऋचां चाननानां चतुर्णाम् ।

इत्यादि ।

समुद्रादौ इति किम् ? पादमध्येऽपि यतिः । पदान्ते तु माऽभूत् । तद्यथा–

प्रणमत भवबन्धक्लेशनाशाय नारा-
यणचरणसरोजद्वन्द्वमानन्दहेतुम् ।

इत्यादि ।

पूर्वोत्तरभागयोरेकाराक्षरत्वे तु पदमध्ये यतिर्दुष्यति ।

यथा–

एतस्या गण्डमण्डल-ममलं गाहते चन्द्रकक्षाम्[2] ।

इत्यादि । यथा–

एतस्या राजति मुखमिद पूर्णचन्द्रप्रकाशम् ।

इत्यादि । तथा–

सुरासुरशिरोनिघृष्टचरणारविन्दः शिवः ।

इत्यादि

---

१. क. वैराञ्चिना । २. ख. गाहतेन्द्रकक्षाम् । -

पूर्वान्तवत् स्वरः सन्धौ क्वचिदेव परादिवत् । अस्यायमर्थः—योऽय पूर्वपरयोरेकादेशः स्वरः सन्धौ विधीयते । स क्वचित् पूर्वस्यान्तवद् भवति, क्वचित् परस्यादिवद् भवति । तथा च पाणिनि. स्मरति–'अन्तादिवच्च' [पा०सू० ६।१।८५] इति । तत्र पूर्वान्तवद्भावे यथा स्यात् । यथा–

स्यादस्थानोपगतयमुनासङ्गमे चाभिरामा[1] ।

इत्यादि । तथा–

जम्भारातीभकुम्भोद्भवमिव दधत. सान्द्रसिन्दूररेणुम् ।

इत्यादि । तथा -

दिक्कालाद्यनवच्छिन्नानन्तचिन्मात्रमूर्त्तये ।
स्वानुभूत्येकमानाय नम. शान्ताय तेजसे ॥

इत्यादि ।

परादिवद्भावे यथा–

स्कन्ध विन्ध्याद्रिमूर्द्धा निकषति [महियस्याहितोऽसूनहार्षीत् ।

इत्यादि । तथा–

शूल शूल तु गाढ प्रहर हर हृषीकेश][2] केशोऽपि वक्त्र—
श्चक्रेणाऽकारि किं ते ।

इत्यादि ।

अत्र हि स्वरूपस्य परादिवद्भावे व्यञ्जनमपि तदभक्तत्वात् तदादिवद् भवति ।
'यदि पूर्वापरौ भागौ न स्यातामेकवर्णकौ' इत्यन्तादिवद्भावे विधावपि सम्बध्यते । तेन–

अस्या वक्त्राब्जमवजितपूर्णेन्दुशोभ विभाति ।

इत्येवंविधा यति[र्न]भवति । यथा वा स्वरः सन्धौ–

राकाचन्द्रादधिकमबलावक्त्रचन्द्र विभाति ।

तथा शेषेऽपि, यथा–

रामातरुणिमोद्दामानङ्गरङ्गप्रसङ्गिनी ।

इत्यादि[3] ऊह्यम् । 'यणादेश परादिवत्' भवतीति शेष । यथा—

विततजलतुषारास्वादशुभ्रांशुपूर्णा-
स्वविरलपदमाला श्यामलामुल्लिखन्तः ।

इत्यादि ।

'नित्यं प्राक्पदसम्बन्धाश्चादयः प्राक्पदान्तवत् ।' तेभ्य पूर्वा यतिर्न कर्त्तव्या इत्यर्थ ।

---

१ ख. चाभिरामा । २. कोष्ठगतोंऽश ख. प्रतौ नास्ति । ३ ख. इत्याद्यन्त्यवद् ।

यथा

स्वादु स्वच्छं सलिलमपि च प्रीतये कस्य न स्यात् ।

इत्यादि ।

नित्य प्राक्पदसम्बन्धा इति किम् ? अन्येषां पूर्वपदान्तवद्भावो माऽभूत् । तद्यथा–

मन्दायन्ते न खलु सुहृदामभ्युपेतार्थकृत्या ।

इत्यादि ।

'परेण नित्यसम्बन्ध प्रादयश्च परादिवत् ।' तेभ्यः परा यतिर्न भवतीत्यर्थः । तद्यथा–

दुःखं मे प्रक्षिपति हृदये दुस्सहस्तद्वियोगः ।

इत्यादि ।

'परेण नित्यसम्बन्धाः' इत्यादि किम् ? कर्मप्रवचनीयसंज्ञकेभ्यः प्रादिभ्य परापि यतिर्यथा स्यादिति । तच्च यथा–

प्रियं प्रति स्फुरत्पादे मन्दायन्ते न खल्विति ।

श्रेयांसि बहुविघ्नानि भवन्ति महतामपि ।

इत्यादि ।

अथ तु चादीनां प्रादीनां चैकाक्षराणामनेकाक्षराणां वा पादान्ते यतावादिवद्भाव इष्यते, न तु अनेकाक्षराणां पादमध्ये यतौ । तत्र हि पदमध्येऽपि च चामीकरादिष्विव यतेरभ्यनुज्ञातत्वात् । तत्र चादीनां यथा–

प्रत्यादेशादपि च मधुनो विस्मृतभ्रूविलासम् ।

इत्यादि ।

प्रादीनामपि, यथा–

दूरारूढं प्रमोदं हसितमिव तथा दृष्टमारात् सखीभिः ।

इत्यादि ।

एवं माधुर्यसंपत्तिनिमित्तं यतिबन्धनम्[1] ।
न विना यतिसौन्दर्यं काव्यं भव्यतरं भवेत् ॥ ८ ॥
भरतादिमुनीन्द्रैरप्येवमेवाभिधीयते ।
तथाऽन्येऽपि कवीन्द्रास्तु यतिं बध्नन्त्यनुत्तमाम् ॥ ९ ॥

अन्यैरप्युक्तम्—

एवं यथा यथोद्वेगः सुधिया नोपजायते ।
तथा तथा मधुरतानिमित्तं यतिरिष्यते ॥ १० ॥

इति । किञ्च—

पिङ्गले जयदेवस्य संस्कृते यतिमिच्छतः ।
श्वेतमाण्डव्य[2]मुख्यैस्तु मुनिभिर्नानुमन्यते ॥ ११ ॥

---

१ ख यतिसम्बन्धनम् । २ ख श्वेतमाण्डव्य

तेन संस्कृते यतिरक्षायां गुण । यतिभङ्गेन दोषोऽपीति तेषामाशय ।

अतएव मुरारिः*[1]—

याच्ञादैत्यपराचि यस्य कलहायन्ते मियस्त्व वृणु,
त्व वृणित्यभितो मुखानि स दशग्रीव. कथ वर्ण्यताम् ।।

इत्यादि ।

जयदेवोऽपि*[2]–

भाव शृङ्गाररसारस्वतमयजयदेवस्य विष्वग् वचासि ।

इति । एवमन्येऽपि–

कोष्ठीकृत्य जगद्धन कति वराटीभिर्मुद यास्यति ।

इत्यादि, महाकवीनां स्वरसाविति दिक् । अपि च—

[3]यतिभङ्गो नामधातुभागभेदे भवेद् यथा ।
पुनातु नरकारिस्चक्रभूषितकराम्बुज ।। १२ ।।

दिविषद्वृन्दवन्द्य वन्दे गोविन्दपदद्वयम् ।
स्वरसन्धौ तु न श्रीशोऽस्तु भूत्यै भवतो यथा ।। १३ ।।

न स्याद्विभक्तिभेदे भात्येष राजेति कुत्रचित् ।
क्वचित्तु स्याद् यथा देवाय नमश्चन्द्रमौलये ।। १४ ।।

चादयो न प्रयोक्तव्या विच्छेदात् परतो यथा ।
नम कृष्णाय देवाय च दानवविनाशिने ।। १५ ।।

---

*टिप्पणी—१ 'सतुष्टे तिसृणा पुरामपि रिपौ कण्डूलदोर्मण्डली-
क्रीडाकृत्तपुन प्ररूढशिरसो वीरस्य लिप्सोर्वरम् ।
याच्ञादैत्यपराञ्चि यस्य कलहायन्ते मियस्त्व वृणु,
त्वा वृणित्यभितो मुखानि स दशग्रीव॰ कथ वर्ण्यताम् ।।
[मुरारिकृत मनर्घराघवम् अक-३, प० ४१]

२ 'साध्वी माध्वीकचिन्ता न भवति भवत शर्करे कर्कशासि,
द्राक्षे द्रक्ष्यन्ति के त्वाममृतमृतमसि क्षीरनीर रसस्ते ।
माकन्द क्रन्द कान्ताधर धर न तुलां गच्छ यच्छन्ति भाव,
यावच्छृङ्गारसार शुभमिव जयदेवस्य वैदग्ध्यवाच ।।
[जयदेवकृत-गीतगोविन्द—स० १२, प० १२]

३ देवेश्वरकृत-कविकल्पलताया शब्दस्तबकच्छन्दोऽभ्यासप्रकरणे ।

एकस्वरोपसर्गेण विच्छेदः श्रुतिसौख्यहृत्[1]।
यथा पिनाकपाणिं प्रणमामि स्मरशासनम् ॥ १६ ॥

इत्यादि, कविकल्पलतायां वाग्भटनन्दनेन देवेश्वरेणाभ्यधायि।
छन्दोमञ्जर्यां[*1] तु–

यतिर्जिह्वेष्टविश्रामस्थानं कविभिरुच्यते।
सा विच्छेदविरामाद्यैः पदैर्वाच्या निजेच्छया ॥ १७ ॥

इति सामान्यलक्षणमुक्तम्। किञ्च–

क्वचिच्छन्दस्यास्ते यतिरभिहिता पूर्वकृतिभिः,
पदान्ते सा शोभां व्रजति पदमध्ये त्यजति च।
पुनस्तत्रैवासौ स्वरविहितसन्धिः श्रयति तां,
यथा कृष्णः पुष्णात्वतुलमहिमा मां करुणया ॥ १८ ॥

इति छन्दोगोविन्दे[2] गङ्गादासेनाप्युक्तमित्युपरम्यते। इति सर्वमङ्गलम्।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्तिके द्वितीयपरिच्छेदे
यतिनिरूपण-प्रकरणं सप्तमम्।

---

१. क. ख. सौख्यकृत।

*टिप्पणी—१. छन्दोमञ्जरी, प्रथमस्तबक, प० १२, १३।

२. 'गोविन्दे' इत्यस्य स्थाने 'मञ्जर्यां' इति पाठ एव समीचीनोऽस्ति गङ्गादास-कर्तृत्वात्।

अष्टमं गद्यनिरूपण—प्रकरणम्

अथ गद्यानि

वाङ्मय द्विविध प्रोक्त पद्य गद्यमिति क्रमात् ।
तत्र पद्य पुरा प्रोक्त गद्य सम्प्रति गद्यते ॥ १ ॥
असवर्णं सवर्णं च गद्य तत्रासवर्णकम् ।
त्रिविध कथित तच्च कवीन्द्रैर्गद्यवेदिभि ॥ २ ॥
चूर्णकोत्कलिकाप्रायवृत्तगन्धिप्रभेदत ।

तत्र–

अकठोराक्षर स्वल्पसमास चूर्णक विदु ॥ ३ ॥
तद्धि वैदर्भरीतिस्थ गद्य हृद्यतर भवेत् ।
आविद्ध ललित मुग्धमिति तच्चूर्णक त्रिधा ॥ ४ ॥

तत्र–

दीर्घवृत्ति-कठोरार्णमाविद्ध परिकीर्तितम् ।
स्वल्पवृत्त कठोरार्णं ललित कीर्त्यते बुधै ॥ ५ ॥
मुग्ध मृद्वक्षर प्रोक्तमवृत्त्यस्त्यल्पवृत्ति वा ।
भवेदुत्कलिकाप्राय दीर्घवृत्त्युत्कटाक्षरम् ॥ ६ ॥
वृत्यक[1]देशसम्बद्ध वृत्तगन्धि पुन स्मृतम् ।
अथात्र क्रमतश्चैषामुदाहरणमुच्यते ॥ ७ ॥

तत्र प्रथम यथा–

१ शुद्धचूर्णकम्

स हि खलु त्रयाणामेव जगता गति परमपुरुष पुरुषोत्तमो दृप्तसमस्तदैत्य-दानवभरेण भङ्गुराङ्गीमिमामवनिमवलोक्य करुणरसामृतपरिपूर्णार्द्रहृदयस्तथा भुवो भारमवतारयितु रामकृष्णस्वरूपेण यदुकुलेऽवततार । य प्रसङ्गेनापि स्मृतोऽभ्यर्चित प्रणतो वा गृहीतनामा पु स ससारसागरपारमवलोकयति ।

इति शुद्धचूर्णकम् १

१[१] अथ आविद्ध चूर्णकम्

यथा–

दलदलि[2]सहकारमञ्जरीविगलन्मकरन्दबिन्दुसन्दोहसन्दानितमन्दानिलवीज्य-मानदशदिगाभोगसुरभिसमय समुपाजगाम । इत्यादि ।

इति आविद्ध चूर्णकम् १[१]

---

१ ख वृत्तैकदेश । २ ख दरदलित ।

१[२]. अथ ललित चूर्णकम्

यथा–

सदाभिराम नाभिजितकाम रामणीयकधाम माधुर्यसौन्दर्यशौर्यादिगुणग्रामाभिराम भक्तजनपरिपूरितकाम सकललोकविश्रामधाम वामदेवाभिनन्द्यपौरुष राम जय जय ।

इत्यादि ।

इति ललित चूर्णकम् १[२]

मुग्धमपि द्विविधम् । अवृत्ति-अत्यल्पवृत्ति चेति । तत्र—

१[३]. अवृत्तिमुग्ध चूर्णकम्

यथा–

यत्र च नायिकानां नयनैः कमलमयमिव, वदनैः परिपूर्णचन्द्रमण्डलमयमिव, हस्तैः मृणालमयमिव, जघनैः[1] कदलीस्तम्भमयमिव विराजित भवनकुलम् ।

इत्यादि ।

इत्यवृत्तिमुग्ध चूर्णकम् १[३].

१[४]. अथ अत्यल्पवृत्तिमुग्ध चूर्णकम्

यथा–

कमलमिव चन्द्रबिम्बमिव मुखं, मृणालमिव कामपाशमिव भुजयुगलं, मीनवृन्दमिव खञ्जरीटयुगमिव नीलोत्पलमिव एणनयनमिव नयनयुगलं, कोकयुग्ममिव सिन्दूरसमूहकमिव पुष्पगुच्छमिव कनककलशयुगलमिव वक्षोजयुगलम् ।

इत्यादि ।

इत्यल्पवृत्तिमुग्ध चूर्णकमिदम् १[४].

२. अथोत्कलिकाप्रायम्

यथा–

सङ्ग्रामसीमकण्डूलदोर्दण्डकुण्डलितकोदण्ड[2]निर्गलितकाण्डप्रचण्डाघातखण्डितारातिवृन्दनरपतिसीमन्तिनीनयनारविन्दाविरलविगलदम्बुनिकरकीर्णसप्तार्णवान्तर्भ्रमत्कमनीयकीर्तिहंस, त्रिजगत्कामिनीकर्णावतंसानन्तसामन्तसन्तानशिरोमुकुटरत्नरागद्विगुणिताङ्घ्रिनखमयूखानवरतक्लधौतदानसम्मानसन्तोषिताशेषयाचकचयविकीर्णवाक्पीयूषप्रयाणकालकोलाहलसमुच्छल[3]त्पाथोधिपाथःप्लाविताशेषभुवनमण्डल, भयङ्करभेरीभाङ्कारसम्मर्दसम्भ्रान्तखण्डलातिचपलचलच्चारुचतुरचतुरङ्गचमूचक्रचङ्क्रमणभरभङ्गुरितफणिपतिफणानिकायविश्वविख्यातनिजान्ववायप्रखरतरतुरगखुरपुटोद्भूतधूलीधारान्धकाराकुलितचक्राङ्गनासमूहनीतिनिरस्तसमस्तप्रत्यूहव्यूहप्रतिनृपतिविलासिनीताटङ्कापसारणसावधानचतुर्दशविद्या-

१ क. चरणैः २. ख कोदण्डि । ३. समुल्लसत् ।

निधानदानपथातीतमुरद्रुमकथासमारम्भरम्भादिविवनारीगणोद्गीयमानकमनीय - कीर्त्तिभरभरणीयजनप्रवृद्धकृपापाराचारवारणेन्द्रसमानसारसादितारातियुवतिवचो-वर्णदत्तकर्णकर्णवलिदीयमानोपमानमानवतीनानापमानोदनविशारदशारदेन्दुकुला-वदातकीर्त्तिप्रीणिताशेषजनहृदयानुरूपसमरसीमव्यापादितारातिवर्गचक्रवर्त्तिमहा - महोग्रप्रतापमार्त्तण्डसमरविजयी महाराजाधिराजः समाज्ञापयत्यशेषसामन्तगणान्। इत्यादि।

यथा वा—

प्रणिपातप्रवणप्रधानाशेषसुरासुरादिवृन्दसौन्दर्यप्रकटकिरीटकोटिनिविष्टस्पष्ट-मणिमयूखच्छटाच्छुरितचरणनखचक्रविक्रमोद्दामवामपादाङ्गुष्ठनखरशिखरखण्डित-ब्रह्माण्डभाण्डविवरनिस्सरत्क्षरदमृतकरप्रकरभास्वरसुरवाहिनीप्रवाहपवित्रीकृत - विष्टपत्रयकैटभारे क्रूरतरसंसारापारसागरनानाप्रकारावर्त्तविवर्त्तमानविग्रहं मामनु-गृहाण। इत्यादि।

इत्युत्कलिकाप्रायं गद्यम् २.

३. अथ वृत्तगन्धि गद्यम्।

यथा—

समरकण्डूलनिविडभुजदण्डमण्डलीकृतकोदण्डसिञ्जिनीटङ्कारोज्जागरितवैरि-नागरजनसंस्तुतानेकविरदावलीविराजमानमानोन्नतमहाराजाधिराज जय जय। इत्यादि।

यथा वा, मालतीमाधवे[1]*—

गतोऽहमवलोकितालिलितकौतुक[1] कामदेवायतनम्। इत्यादि।

यथा वा, कादम्बर्याम्—

पातालतालुतलवासिषु दानवेषु। इत्यादि।

हरहुङ्कारजितमन्मथो गुह इवाप्रतिहतशक्तिः। इत्यादि।

यथा वा—

जय जय जनार्दन सुकृतिजनमनस्तडागविकस्वरचरणपद्म पद्मनयन पद्मिनी-विनोदराजहंसभास्वरयशःपटलपूरितभुवनमुहर हरकमलासनादिवृन्दारकवृन्दवन्द-नीयपादारविन्द द्वन्द्वनिर्मुक्त[2] योगीन्द्रहृदयमन्दिराविष्कृतनिरञ्जनज्योतिःस्वरूप नीरूप विश्वरूप स्वर्नाथनाथ जगन्नाथ मामनवधिदुःखव्याकुलं रक्ष रक्ष।

इति वृत्तगन्धिगद्यम् ३

---

१. क. आनतकौतुकः। २ ख. द्वन्द्व द्वन्द्वनिर्मुक्त।

*टिप्पणी—१ मालतीमाधवम्, प्रथमाङ्के विंशतिपद्यानन्तरं गद्यभागः।

ग्रन्थान्तरे तु प्रकारान्तरेण चतुर्विधमेव गद्यं तल्लक्षणमुपलक्षितं विचक्षणैः ।

यथा–

वृत्तबन्धोज्झितं गद्यं मुक्तकं वृत्तगन्धि च ।
भवेदुत्कलिकाप्रायं कुलकं च चतुर्विधम् ॥ ८ ॥

तत्र–

आद्यं समासरहितं वृत्तभागयुतं परम् ।
अन्यं दीर्घसमासाढ्यं तुर्यं चाल्पसमासकम् ॥ ९ ॥

तत्र मुक्तकं, यथा—

गुरुर्वचसि[1] पृथुरुरसि । इत्यादि ।

वृत्तगन्धि—'समरकण्डूल' इत्यादिनैवोदाहृतम् ।

उत्कलिकाप्रायं तु—व्यपगतघनपटलममलजलनिधिसदृशमम्बरतलं विलोकयते अञ्जन-चूर्णपुञ्जश्यामलं शार्वरं तमस्त्यायत । इत्यादि ।

यथा वा, प्राकृते चापि—

अणिसविसुमरणि[2] सिदसरविदलिदसमरपरिगदपवरपरबलहृणिदमअगलहल-हलिदसअलजलणिहिसरिससमत्तुसमूहसखुहिअवैरिणअरणाअरीणिवह जअ महाराअ चक्कवट्टि करुणाअरा । इत्यादि ।

कुलकम्, यथा–

गुणरत्नसागर जगदेकनागर कामिनीमदनजनचित्तरञ्जन करुणापरायणनारा-यणचरणस्मरणसमासादितपुरुषार्थचतुष्टयप्रार्थनीयगुणगण शरणागतरक्षणविच-क्षण जय जय । इत्यादि ।

इति श्रीकविशेखरचन्द्रशेखरविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके
गद्यनिरूपणमष्टमं प्रकरणम् ॥८॥

---

१. ख. गुरुवञ्चसि । २. ख- सुमरणिं ।

नवमं विरुदावली-प्रकरणम्

[प्रथमं कलिकाप्रकरणम्]

अथ विरुदावली

अथाऽत्र विरुदावल्याः सोदाहरणमुच्यते ।
लक्षणं लक्षिताशेष-विशेषपरिकल्पनम् ॥ १ ॥

तत्र–

गद्य-पद्यमयी राजस्तुतिर्विरुदमुच्यते ।
तदावली समाख्याता कविभिर्विरुदावली ॥ २ ॥

किञ्च–

कलिकाभिस्तु कलिता विरुदावलिका मता ।
सवर्णा कलिका प्रोक्ता विरुदाढ्या मनोहरा ॥ ३ ॥

तत्र च

द्वादशार्द्धकलाः कार्याः चतुःषष्टिकलावधि ।
तद्भेदाश्चात्र कथ्यन्ते लक्ष्यलक्षणसंयुताः ॥ ४ ॥
द्विगा रादिश्च मादिश्च नादिर्गलादिरेव च ।
मिश्रा मध्या द्विभङ्गी च त्रिभङ्गी कलिका नव ॥ ५ ॥

तत्र–

१. द्विगाकलिका

चतुर्भिस्तुरगै. निर्जैर्द्विगा मैत्री हयद्वये ।

यथा–

जय जय वीर ! क्षितिपति हीर !

इत्यादि । एव चरणचतुष्टयं बोद्धव्यमत्र । ग्रन्थविस्तरभयादस्मिन् प्रकरणे सर्वत्र पादमात्र-मुदाह्रियते ।

इति द्विगाकलिका १.

२. अथ रादिकलिका

वेदैः पञ्चकलैः कार्या मैत्र्यर्द्धे रादिका कला ॥ ६ ॥

यथा –

कामिनीकलितसुख यामिनीरमणमुख ।

इत्यादि ।

इति रादिकलिका २.

३. अथ मादिकलिका

अष्टभिः षट्कलैर्मादिर्मध्यर्द्धे विरतिर्मता ।

यथा–

भूमीमानो प्रभवसि भुवने बहुलारम्भः
सततसदा नोन्नता बहुमानोज्वलतरदम्भः ।

इत्यादि ।

इति मादिकलिका ३.

४. अथ नादिकलिका

सानुप्रासस्तु नो नादिः—

यथा–

दलितशकट कलितलकुट
ललितमुकुट रचितकपट ।

इत्यादि ।

इति नादिकलिका ४.

५. अथ गलादिकलिका

—गाद्या गलादिरुच्यते ॥ ७ ॥

यथा–

वीरवर हीररद
चीरहर तीरचर ।

इत्यादि

इति गलादिकलिका ५.

६. अथ मिश्राकलिका

तिलतन्दुलवन्मिश्राः—

गलयोस्तिलतन्दुलवद्विन्यासो मिश्रा. । यथा–

क्षीरनीरविवेकधीर सङ्गरवीर
गोपिकाचीरहर हरे जय जय ।

इति मिश्राकलिका ६.

७. अथ मध्याकलिका

—मध्या कलिकयोर्यदि ।

मध्ये गद्यं कलावापि गद्ययो रसपद्ययोः[1] ॥ ८ ॥

[व्या०] अस्यार्थः—मध्याकलिका तावत् द्विभेदा, तथा चाद्यन्ते च कलिका तयोः कलिकयोर्मध्ये यदि गद्यं भवतीत्येको भेदः।१। तथा असवर्णयोर्मैत्रीरहितयोर्गद्ययोर्मध्ये या कला-कलिका भवतीत्यपरो भेदः।२। इत्येवं द्विभेदा मध्याकलिका भवति। ऊह्यमुदाहरणम्।

इति मध्याकलिका ७.

८. अथ द्विभङ्गी कलिका

द्वितुर्यौ मधुरश्लिष्टौ षड्गा सान्ताश्चतुर्गुरुः।
अत्र भङ्गात्तयोर्मैत्री षड्भङ्गा स्यात् द्विभङ्गिका ॥ ९ ॥

यथा—

रङ्गरक्त सङ्गसक्त
चण्डचक्र दण्डशक्र
चन्द्रमुद्र सान्द्रभद्र
विष्णो जिष्णो !

इत्यादि।

इति द्विभङ्गी कलिका ८.

९. अथ त्रिभङ्गी कलिका

तत्र—

त्रिभिर्भङ्गैस्त्रिभङ्गी स्यान्नवधा सा तु कथ्यते।
विदग्ध-तुरगौ पद्म-हरिणप्लुत-नर्तका ॥ १० ॥
भुजग-त्रिगते सार्द्धं वरतन्वा द्विपादिका।
युग्मार्णभङ्गी व्यावृत्तौ तनौ भौ मिश्रितौ ततः ॥ ११ ॥

तत्र—

९[१] विदग्ध-त्रिभङ्गी कलिका

विदग्धे—

यथा—

सदीपितशर-मन्दीकृतपर-नन्दीश्वरपद-भावन-पावन।

इत्यादि।

इति विदग्धत्रिभङ्गी कलिका ९ [१].

९[२] अथ तुरगत्रिभङ्गी कलिका

—तुरगे तद्वत् तमला. शेषगो गुरु.।

---

१. क. ख. रसवर्णयोः।

३ अथ मादिकलिका

अष्टभि षट्कलैर्मादिर्मैर्व्यर्द्धे विरतिर्मता ।

यथा–

भूमीभानो प्रभवसि भुवने बहुलारम्भ
सत्तत्तदा नोन्नता बहुमानोज्वलतरदम्भ ।

इत्यादि ।

इति मादिकलिका ३.

४ अथ नादिकलिका

सानुप्रासस्तु नो नादि —

यथा–

दलितशकट कलितलकुट
ललितमुकुट रचितकपट ।

इत्यादि ।

इति नादिकलिका ४

५ अथ गलादिकलिका

—गाद्या गलादिरुच्यते ॥ ७ ॥

यथा–

वीरवर हीररद
धीरहर तीरचर ।

इत्यादि

इति गलादिकलिका ५.

६ अथ मिश्राकलिका

तिलतन्दुलवन्मिश्रा.—

गणयोस्तिलतन्दुलवद्विन्यासो मिश्रा । यथा–

क्षीरनीरविवेकधीर सङ्गरवीर
गोपिकाचीरहर हरे जय जय ।

इति मिश्राकलिका ६

७ अथ मध्याकलिका

—मध्या कलिकयोर्यदि ।

मध्ये गद्य कलावापि गद्ययो रसपद्ययोः[1] ॥ ८ ॥

[व्या०] अस्यार्थः—मध्याकलिका तावत् द्विभेदा, तथा चाद्यन्ते च कलिका तयोः कलिकयोर्मध्ये यदि गद्य भवतीत्येको भेद ।१। तथा असवर्णयोर्मैत्रीरहितयोर्गद्ययोर्मध्ये वा कला-कलिका भवतीत्यपरो भेद ।२। इत्येव द्विभेदा मध्याकलिका भवति । ऊह्यामुदाहरणम् ।

इति मध्याकलिका ७

८ अथ द्विभङ्गी कलिका

द्वितुर्यौ मधुरश्लिष्टौ पङ्गा लान्ताश्चतुर्गुरु ।
अत्र भङ्गात्तयोर्मैत्री पद्भङ्गा स्यात् द्विभङ्गिका ॥ ९ ॥

यथा—

रङ्गरक सङ्गसक
चण्डचक्र दण्डशक्र
चन्द्रमुद्र सान्द्रभद्र
विष्णो जिष्णो !

इत्यादि ।

इति द्विभङ्गी कलिका ८

९, अथ त्रिभङ्गी कलिका

तत्र—

त्रिभिर्भङ्गैस्त्रिभङ्गी स्यान्नवधा सा तु कथ्यते ।
विदग्ध-तुरगौ पद्य हरिणप्लुत नर्तकी ॥ १० ॥
भुजग-त्रिगले सार्द्धं वरतन्वा द्विपादिका ।
युग्मार्णभङ्गी न्यावृत्ती तनौ भौ मिश्रितौ तत ॥ ११ ॥

तत्र—

९[१] विदग्ध-त्रिभङ्गी कलिका

विदग्धे—

यथा—

सदीपितशर मन्दीकृतपर-नन्दीश्वरपद भावन-पावन ।

इत्यादि ।

इति विदग्धत्रिभङ्गी कलिका ९ [१].

९[२] अथ तुरगत्रिभङ्गी कलिका

—तुरगे तद्वत् तभला शेषगो गुरु ।

---

१ क ख रसवनयो ।

यथा–

चण्डीपतिप्रवण-पण्डीकृतप्रबल-खण्डीकृताहितविभो ।

इत्यादि ।

इति तुरगत्रिभङ्गी कलिका ६[२].

६[३]. अथ पद्मत्रिभङ्गी कलिका

त्रिभङ्गीभिः पदैः पद्मत्रिभङ्गी—

यथा–पद्मावतीत्रिभङ्गीदण्डकलावयोऽत्र स्पष्टाः पूर्वखण्डे समुदाहृतास्तास्तत एव द्रष्टव्याः ।*[1]

इति पद्मत्रिभङ्गी कलिका [६]३.

६[४]. अथ हरिणप्लुतत्रिभङ्गी कलिका

—हरिणप्लुते ॥ १२ ॥

षष्ठभङ्गा त्रिरावृत्ता नयभा[1]मिश्रितौ च भौ ।

यथा–

अतिनत-देवाराधित बहुविधसेवासाधित
सुरतरुरेवासि प्रिय-दायक ायक !

इत्यादि ।

इति हरिणप्लुतत्रिभङ्गी कलिका ६[४].

६[५]. अथ नर्तकत्रिभङ्गी कलिका

हरिणो नजलान्तश्चेन्नर्तकः—

[व्या०] हरिणप्लुत एव नयमानन्तरं यदि नगण-जगण-लघ्वन्तो भवेत् तदा नर्तको भवतीति शेषः । यथा–

मनसिजरूपाराधित बहुबलभूपाबाधित
बहुतरयूपासञ्जक निजकुलरञ्जक ।

इत्यादि ।

इति नर्तकत्रिभङ्गी कलिका ६[५].

६[६]. अथ भुजङ्गत्रिभङ्गी कलिका

—भुजगे पुनः ॥ १३ ॥

त्र्यावृत्ता भभला लान्ता युग्मे तुर्ये च भङ्गिनः ।
क्वचित्तुर्ये न भङ्गः स्यान् मिश्रितौ भगणौ ततः ॥ १४ ॥

---

१. क. नयना ।

*१टिप्पणी—३१, ३७, ४२, पृष्ठे द्रष्टव्याः ।

यथा–

दम्भारम्भामितबल जम्भालम्भाधिकबल
जम्भासम्भावितरण-मण्डित पण्डित ।

यत्रचित्तुर्ये न भङ्गः, इति समुदाह्रियते । यथा–

जम्भारातिप्रतिबल-दम्भाबाधानतदल
सम्भारासादनचण-दारणकारण ।

इति भुजगत्रिभङ्गी कलिका ६[६].

६[७]. अथ त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

तृतीये वृतभङ्गा त्रिर्मनना भौ च वल्गिता ।
स्यावृत्तास्तनभा भोऽन्ते ललितात्रिगता द्वये ॥ १५ ॥

[§ १०] अस्यार्थः— त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका तावद् द्विविधा, यत्र मनभाः–मगण-नगण-भगणास्त्रयो गणास्त्रिवारमयं भवन्ति, अन्ते भौ–भगणद्वयं, तृतीये च वर्णे भङ्गः सा वल्गिताभिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका । यस्यां च स्यावृत्तास्तनभाः–सगण-तगण-भगणास्त्रयो गणा भवन्ति, एतस्यान्ते भो–भगण एक एव भवति । परन्तु द्वये–द्वितीये वर्णे भङ्गः सा ललिताभिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका इति द्वैविध्यम् । क्रमेण यथा–

६[७-१]. अथ वल्गिता त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

बाणाली-हतरिपुगण तालाली-तत-शरवण
मालाली-वृततनुवर-दायक नायक !

इत्यादि ।

इति वल्गिताभिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

[६[७-२]. अथ ललिताभिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

नाकाधिपसमनायक पाकाधिकसुखदायक
राकाधिपमुखसायक सुन्दर !

इति ललिताभिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका
एवं त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका द्विविधोदाहृता ६[७] *]

६[८]. अथ वरतनुत्रिभङ्गी कलिका

षष्ठभङ्गा वरतनुस्त्यावृत्ता नयना लघु ।
भौ च—

यथा–

अविकलताराधिपमुख अधिगतनारायणसुख
बहुविधपारायणपर पण्डित मण्डित !

---

*[-] कोष्ठगतोंश क. प्रतौ नास्ति ।

इत्यादि । किञ्च–

—भङ्गान्तसंयुक्ता छविरेषैव कथ्यते ॥ १६ ॥

यथा–

चतुरिमचञ्चद्गुणगण विवलदुदञ्चद्रणचण
मधुरिमचन्द्रस्तवकित कुङ्कुमभूषित ।

इत्यादि ।

इति द्विविधा वरतनुत्रिभङ्गी कलिका ९[८].

९[९]. अथ द्विपादिका युग्मभङ्गा कलिका

द्विपादिका च कलिका षड्विधा परिकीर्तिता ।
द्व्यावृत्ता सा तु विज्ञेया छन्दःशास्त्रविशारदैः ॥ १७ ॥

तत्र–

मुग्धा प्रगल्भा मध्या च शिथिला मधुरा तथा ।
तरुणी चेत्यमी भेदा द्विपदाया उदीरिताः ॥ १८ ॥

तत्र–

९[९–१]. मुग्धा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

मतला मतलाश्चैव युग्मभङ्गा भयुग्मकम् ।
मुग्धा स्यात्—

यथा–

दण्डादेशाकम्पित चण्डाधीशालम्बित
वन्दन नन्दन !

इत्यादि ।

इति मुग्धा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ९[९–१].

९[९–२]. अथ प्रगल्भा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

—भद्वये कर्णौ चेत् प्रगल्भा तदा मता ॥ १९ ॥

[व्या०] भद्वये– भगणद्वयस्थाने प्रावेशरूपेण चेत् कर्णौ भवतस्तदा मुग्धैव प्रगल्भा मता इत्यर्थः । यथा–

देवाधीशाराधक सेवादेशासाधक
भूमीभानो

इत्यादि ।

इति प्रगल्भा-द्विपादिका-द्विभङ्गी कलिका ९[९-२].

६[६–३]. अथ मध्या द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

उक्ता मभौ समौ मध्या भौ नलौ वा भनौ जलौ ।
ननसा लद्वय वापि शेषे वा नजना लघू ॥ २० ॥

[व्या०] अस्यार्थः — मध्यायास्तावत् चत्वारो भेदा लक्ष्यन्ते । यथा—मभौ-मगण-भगणौ, अथ च समौ-सगण-मगणौ, ततो भौ-भगणद्वयं यत्र भवति, एतादृशी मध्या उक्ता—कथिता इत्यर्थः । इति प्रथमो भेदः ।

यथा–

नित्यं नृत्यं कलयति काली केलीमञ्चति-चञ्चति ।

इत्यादि ।

इति मध्यायाः प्रथमो भेदः ।१।

अथ मध्याया द्वितीयो भेदः

[व्या०] 'नलौ वा भनौ जलौ' इति । यत्र नलौ–नगणलघू, अथ च भनौ–भगणनगणौ, ततश्च जलौ —जगणलघू भवतः । इति द्वितीयो भेदः ।

यथा–

रणभुवि मञ्चति रणभुवि चञ्चति ।

इत्यादि ।

इति मध्याया द्वितीयो भेदः ।२।

अथ मध्याया तृतीयो भेदः

[व्या०] 'ननसा लद्वय वापि' इति । ननसा –नगण-नगण सगणाः, अथ च लघुद्वय भवति यत्र स तृतीयो भेदः । यथा—

अतिशयमधिरणमञ्चति ।

इत्यादि ।

इति मध्यायाः तृतीयो भेदः ।३।

अथ मध्यायाश्चतुर्थो भेदः

[व्या०] 'शेषे वा नजना लघू' इति । शेषे–चतुर्थे भेदे नजना–नगण-जगण-नगणाः, अथ च लघू–लघुद्वय यत्र भवति स चतुर्थो भेदः । यथा–

अतिशयमञ्चति रणभुवि ।

इत्यादि ।

इति मध्यायाश्चतुर्थो भेदः ।४।

एव मध्याया असकीर्णाश्चत्वारो भेदाः सलक्षणाः समुदाहृत्य प्रदर्शिता. ।

इति मध्या द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[६–३].

६[६–४]. अथ शिथिला द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

मुग्धाया भद्वये विप्रो यदि सा शिथिला मता ।

[व्या०] मुग्धाया –प्रथमोक्ताया भद्वये–भगणद्वयस्थाने प्रादेशन्यायेन यदि विप्र–चतुर्लघ्वात्मको गणो भवति तदा सा शिथिला,मता भवतीत्यर्थं ।

यथा–

केलीरङ्गारञ्जित–नारीसङ्गासञ्जित मनसिज ।

इत्यादि ।

इति शिथिला द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[६–४].

६[६–५] अथ मधुरा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

द्वधावृत्ता मभला लान्ता भद्वयं मधुरा मता ॥ २१ ॥

[व्या०] अत्रत्य द्वधावृत्तत्व पूर्वत्र सर्वत्र सबद्धम् । तथा च मभला.–मगण-भगणलघवश्चेत् द्वधावृत्ता सन्तो लान्ता–लघ्वन्ता भवन्ति । अथ च भद्वय–भगणद्वयं भवति तदा मधुरा मता–सम्मता भवतीत्यर्थः । यथा–

तारादाराधिकमुख–पारावाराशयसुख–दायक नायक ।

इत्यादि ।

इति मधुरा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[६–५].

६[६–६] अथ तरुणी द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

मधुरा भद्वये कर्णौ तरुणी समनन्तरम् ।

[व्या०] उक्ताया –मधुराया मभगणभगणलान्ताया. भद्वये–भगणद्वयस्थाने पूर्वोक्तन्यायेन यदि कर्णौ भवतस्तदा तरुणी भवति ।

ताराहारानतमुख आरादारागतसुख-पाता-दाता ।

इत्यादि ।

इति तरुणी द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[६–६].

इति द्विपादिका कलिका युग्मभङ्गिनो भेदा प्रोक्ता इति शेषः ।

इति विरुदावल्यामवान्तर-द्विभङ्गी-त्रिभङ्गी-कलिकाप्रकरण प्रथमम् ।

[विरुदावल्या द्वितीय चण्डवृत्त प्रकरणम्]

अथाभिधीयते चण्डवृत्त विरुदमुत्तमम ।
शुद्धादिभेदसहित कलिका-कल्पनान्वितम् ॥ १ ॥

[व्या०] आदिपदेन सकीर्णा गभितमिश्रिता गृह्यन्ते ताश्च यथास्थानमुदाहरिष्याम । अथ महाकलिकारूप चण्डवृत्तम, तच्च द्विविध–सलक्षण साधारणभेदेन ।

तत्र–

उक्तलक्षणसम्पूर्ण सलक्षणमुदीरितम् ।
अन्यत् साधारण प्रोक्त चण्डवृत्त द्विधा बुधै ॥ २ ॥

अथ परिभाषा

तत्र–

मधुर श्लिष्ट-सश्लिष्ट शिथिल ह्लादिभेदत ।
सयोगा पञ्चह्रस्वाच्च दीर्घाच्च दशधा मता ॥ ३ ॥
अनुस्वारविसर्गौ तु न दीर्घव्यवधायकौ ।
स्वस्ववर्गान्त्यसयुक्ता मधुरा इतरे पुन ॥ ४ ॥
श्लिष्टा सरेफशिरस सश्लिष्टास्त्वन्ययोगिन ।
यमाश्रयुक्ता इत्युक्ता शिथिला ह्लादिनस्त्वमी ॥ ५ ॥
हृशेखरा साम्यमत्र नणयो खपयोस्तथा ।
जययोर्ऋध्वयोरह [1] सच्चयो [2] सशयोरपि ॥ ६ ॥
ह्लप्ययो [3] र्भ्वध्वयोश्चैव क्षच्छयोरिस्सवर्णयो ।
शपयो स्सच्छयोश्चैव क्षख्ययोरपि वणयो ॥७॥
श्लिष्टसश्लिष्टयोरुक्तौ सग्राह्या मधुरेतरा ।
इत्येषा परिभाषाऽत्र राजते वृत्तमौक्तिके ॥ ८ ॥

इति परिभाषा

अथ चण्डवृत्तस्य महाकलिकारूपस्य व्यापकस्य व्याप्यव्यापकभावेन पुरुषोत्तमादि–कुसुमा त चतुस्त्रिशति ३४ प्रभेदा भवन्ति । तेषा चोद्दशक्रमोऽनुक्रमणिकाप्रकरणे स्फुटतर वक्ष्यमाणत्वान्नेह प्रपञ्च्यते ।

---

१ ख जययो वबयोरह । २ ख सच्चयो । ३ क त्यथयो ।

तत्र प्रथमम्–

१ पुरुषोत्तमश्चण्डवृत्तम्

एवं सर्वत्र–

श्लिष्टौ तुर्याष्टमौ दीर्घौ त्रि-षष्ठौ सगणौ च भ ।
पुरुषोत्तमचण्ड स्यात्—

[व्या०] अस्यार्थ —यत्र चतुर्थाष्टमौ वर्णौ श्लिष्टौ-सरेफशिरस्कौ च, तृतीय षष्ठौ च दीर्घौ भवत । तत्र गणनियममाह—'सगणौ' इति । सगणौ भवत । ततश्च भ–भगणो भवति तत् पुरुषोत्तमाख्यं महाकलिकाख्य चण्डवृत्त भवति । नवाक्षरमिद वृत्तम् । अस्मिन् प्रकरणे सर्वत्र विरामद्वयमेव भवतीत्युपदिश्यते । यथा–

दितिजार्द्दन जातप्रभ ।

इत्यादि ।

इति पुरुषोत्तमश्चण्डवृत्तम् १

२ अथ तिलक चण्डवृत्तम्

—सादौ नौ शेषगौ च नौ ॥ ९ ॥
मधुरो दशमो वर्णस्तिलकम्—

[व्या०] अयमर्थ — यत्र सादौ–सगणस्यादिभूतौ नौ–नगणौ यत्र च सगणस्य शेषगौ–शेषे च वर्तमानौ नगणावेव भवत । मध्यभूतस्य सगणस्याद्यन्तयोर्नगणौ भवत इति फलितोऽर्थ । किञ्च—दशमो वर्णो मधुर–स्ववर्गान्त्यसयुक्त परसवर्णो भवति । तत्तिलक नाम चण्डवृत्तस्यावान्तरो भेद इति । पञ्चदशाक्षरमिद पदम् । यथा–

विषमविशिखगणगञ्जितपरबल ।

इत्यादि । यथा वा–

भ्रमलकमलरुचिखण्डनपटुपद
नटनपटिमहृतकुण्डलिपतिमद
नवकुवलयकुलसुन्दररुचिभर
घनतडिदुपमितबन्धुरपटधर
तरणिदुहितृतटमञ्जुलनटवर
नयननटनजितखञ्जनपरिकर
भुजतटगतहरिचन्दनपरिमल
पशुपयुवतिगणनन्दन वरकल
नवमदमधुरदृगञ्चलविलसित
मुखपरिमलभरसञ्चलदलिवृत

शरदुपमितशशिमण्डलवरमुख
कनकमकरमयकुण्डलकृतसुख
युवतिहृदयशुकपञ्जरनिभ(ज)भुज
परिहितविचकिलमञ्जर(ञ्जुल)शिरसिज
सुतनुवदनविधुचुम्बनपटुतर
दनुजनिविडमदडुम्बनरणखर
घोर !

रणति हरे¹ तव वेणौ नार्यो दनुजाश्च कम्पिता खिन्ना ।
वनमनपेक्षितदयिता करवालान्प्रोज्झ्य धावन्ति ।

कुङ्कुमपुण्ड्रक गुम्फितपुण्ड्रक-
सकुलकङ्कण कण्ठगरङ्गण
देव !

सारङ्गाक्षीलोचनभृङ्गावलिपानचारुभृङ्गार ।
त्वां मङ्गलभृङ्गार भृङ्गाराधीश्वर स्तौमि ।

विरुदमिद तिलकम् २.

३. अथ अच्युत चण्डवृत्तम्

—वाऽच्युत पुन ।

[व्या०] अत्राप शब्दार्थश्चकार । तेन अच्युताख्य चण्डवृत्तमुच्यत इत्युक्त भवति । लक्षण गणनियमपूर्वकमाह—

नयौ चेत् पञ्चमो दीर्घ षष्ठ श्लिष्टपरो नजौ ॥ १० ॥
सर्वशेषे—

[व्या०] अस्यार्थ —यत्र नयौ–नगणयगणौ चेद् भवत , किञ्च पञ्चमो वर्णो यत्र दीर्घो भवति, षष्ठो वर्ण श्लिष्टपर–श्लिष्ट पर स सप्तमो यस्य स तादृशो भवति । एव चत्वारोऽष्टौ वा पादा यथेष्ट भवन्ति । सर्वशेषे नजौ–नगण जगणौ भवत सोऽच्युताख्यश्चण्डवृत्तस्यावान्तरो भेद इति । चतुर्विंशत्यक्षरमिद पदम् । यथा—

प्रसरदुदार-द्युतिभरतार-प्रगुणितहार-स्थिरपरिवार ।

इत्यादि । शेषेषु—

कृतरणरग ! इत्यादि ।

यथा वा—

जय जय वीर स्मररसधीर द्विजजितहीर प्रतिभटवीर
स्फुरदुप(रु)हार-प्रियपरिवारच्छुरितविहार-स्थिरमणिहार

---

१. क. हते ।

प्रकटितरास स्तवकितहास स्फुटपटवास-स्फुरितविलास
ध्वनदलिजाल-स्तुतवनमाल व्रजकुलपाल प्रणयविशाल
प्रविलसदस-भ्रमदवतस क्वणदुरुवश-स्वनहृतहस
प्रशमितदाव प्रणयिषु तावद्विलसितभाव स्तनितविराव
स्तनघनरागश्रितपरभाग क्षतहरियाग त्वरितधृताग
कृतरससग[1]
वीर !

स्थितिनियतिमतीते धीरताहारिगीते,
प्रियजनपरिवीते कुङ्कुमालेपपीते ।
कलितनवकुटीरे काञ्च्युदञ्चत्कटीरे,
स्फुरतु रसगभीरे गोष्ठवीरे रतिर्नः ॥

अम्बाविनिहितचुम्बामलतर-
बिम्बाधरमुखलम्बालक जय !
देव !

दृष्ट्वा ते पदनखकोटिकान्तिपूरं,
पूर्णानामपि शशिना शतैर्दुरापम् ।
निर्विण्णो मुरहर मुक्तरूपदर्पः,
कन्दर्पः स्फुटमशरीरतामयासीत् ॥

इति अच्युत चण्डवृत्तम् ३

४ अथ वर्द्धितकचण्डवृत्तम्

—यदि श्लिष्टा, द्वि-नव-द्वादशा अपि ।
वर्द्धितो भनजा जोलः—

[व्या०] एतदुक्त भवति, यदि द्वि नव द्वादश अपि वर्णा श्लिष्टा –सरेफशिरस्काश्चेत्– स्युस्तदा वर्द्धित इति नाम चण्डवृत्त भवतीति । तत्र च गणनियममाह—भनजा –भगण-नगणजगणा, अथ च जो–जगण, ततो ल –लघुरित्यर्थ । त्रयोदशाक्षरमिद पदं स्वेच्छया यत्र विनिवेशित भवति तद् वर्द्धिताख्य चण्डवृत्तम् । यथा–

दुर्जयपरबलगर्जनवर्जित ।

इत्यादि ।

यथा वा, श्रीगोविन्दविरुदावल्याम्—

ब्रह्मा ब्रह्माण्डभाण्डे सरसिजनयन स्रष्टुमाक्रीडनानि,
स्थाणुर्भक्तु च खेलाखुरलितमतिना तानि येन न्ययोजि ।

---

१. गोवि० कृतरससङ्ग नास्ति ।

हादृक्क्रीडाण्डकोटीवृतजलकुडवा यस्य वैकुण्ठकुल्या,
कर्त्तव्या तस्य का ते स्तुतिरिह कृतिभिः प्रोज्य लीलायितानि ॥

अपि च–

निविडतरतुरापाडन्तरीणोष्मसंपद्[१]-
विघटनपटुखेलाडम्बरोर्मिच्छटस्य।
सगरिमगिरिराजच्छत्रदण्डायितश्री-
र्जगदिदमघशत्रोः सव्यबाहू[२]र्धिनोतु ॥

अभ्रमुपतिमदमर्द्दिपदक्रम
विभ्रमपरिमललुप्तसुहृच्छ्रम
दुष्टदनुजदलदर्पविमर्द्दन
तुष्टहृदयसुरपक्षविवर्द्धन
दर्प्पकविलसितसर्गनिरर्गल
सर्पतुलितभुजकर्णगकुण्डल[३]
निर्मलमलयजचर्चितविग्रह
नर्म्मलसितपरिवर्जितविग्रह[४]
दुष्करकृतिभरलक्षणविस्मित-
पुष्करभवभयमर्द्दनसुस्मित
वत्सलहलधरतर्क्कितलक्षण
मत्सरविरहितवत्ससुहृद्गण
गर्जितविजयिविशुद्धतरस्वर-
तर्जितखलगण दुर्जनमत्सर
धीर !

तव मुरलीध्वनिरमरीकामाम्बुधिवृद्धिशुभ्रांशु।
अचटुलगोकुलकुलजाधैर्याम्बुधिपानकुम्भजो जयति।

धृतगोवर्द्धन सुरभीवर्द्धन
पशुपालप्रिय रचितोपक्रिय
वीर !

भुजङ्गरिपुचन्द्रकस्फुरदखण्डचूडाङ्कुरे,
निरङ्कुशदृगञ्चलभ्रमिनिबद्धभृङ्गभ्रमे।

---

१. गोवि सम्पद्। २. गोवि. सव्यबाहु। ३. गोवि. कुड्मल। ४. गोवि. नर्मल-सितकृतसर्वविनिग्रह।

पतङ्गदुहितुस्तटीवनकुटीरकेलिप्रिये,
परिस्फुरतु मे मुहुस्त्वयि मुकुन्द शुद्धा रतिः ।

इति विरुदमिद वर्द्धित ४.

५ अथ रणश्चण्डवृत्तम्

—त्रि पञ्च-नव-सप्तमा ॥ ११ ॥
आदिरेकादशश्चैव श्लिष्टा जो रो जरौ लघु ।
सर्वशेषे रणाख्ये स्यात्—

[व्या०] इदमत्राकूतम । यत्र त्रि-पञ्च-नव-सप्तमा वर्णा, आदिरेकादशश्चेति च षड्वर्णा श्लिष्टा भवन्ति । तत्र गणनियममाह—'जो रो जरौ लघु' जो—जगण रो—रगण भवतीति शेष । अथ च जरौ—जगणरगणौ एव भवत, तत सर्वशेषे पदे चैको लघुर्भवति । तत् रणाख्य सविरुद महाकलिकारूपचण्डवृत्त भवति । द्वादशाक्षरमिद पदम् । चतुर्दशाक्षर चान्त्य पद भवति । विरामद्वयेपि एकैकस्याधिक्यस्य लघोर्दानादित्याशय[1] । पदविन्यासस्तु स्वेच्छया भवतीत्युपदेश । तथा चान्त्यपदे विरामद्वयेपि लघुदानाज्जभला—जगण-भगणौ लघवो भवन्तीति वा[2] । यथा—

प्रगल्भविक्रम प्रसर्प्पिसत्क्रम ।

इत्यादि ।

प्रपन्नवर्द्धनक प्रसन्नगर्द्धनक ।

इत्युत्तरम्[3] ।

एतस्य चान्यत्र समग्र इति नामान्तरम । तथोदाहृतमपि श्रीरूपस्वामिभि श्रीगोविन्द-विरुदावल्याम् । यथा—

अनिष्टखण्डन[4] स्वभक्तमण्डन
प्रयुक्तचन्दन प्रपन्ननन्दन
प्रसन्नचञ्चल स्फुरद्दृगञ्चल
श्रुतिप्रलम्बक-भ्रमत्कदम्बक
प्रविष्टकन्दरप्रकृष्टसुन्दर-
स्थविष्ठसुन्दरक-प्रसर्पबन्धुरक[5]
देव !

वृन्दारकतरुवीते वृन्दावनमण्डले वीर ।
नन्दितवान्धववृन्द सुन्दरवृन्दारिका रमय ।

---

१ ख लघ्वोर्दानादित्याशय । २ ख च । ३ ख. इत्यन्तम् । ४. गोवि परिष्ट-खडन । ५ गोवि, स्थविष्ठसिन्धुरप्रसर्पबन्धुर ।

खलिनीडुम्बक मुरलीचुम्बक
जननीवन्दक - पशुपीनन्दक,
वीर ।

अनुदिनमनुरक्तः पद्मिनीचक्रवाले,
नवपरिमलमाद्यच्चञ्चरीकानुकर्षी ।
कलितमधुरपद्यः कोऽपि गम्भीरवेदी,
जयति मिहिरकन्याकूलवन्याकरीन्द्रः ।

इति सविरुद समग्रोदाहरणम् ।

इति रणश्चण्डवृत्तम् ५.

६. अथ वीरश्चण्डवृत्तम्

—मभौ नौ वीरचण्डके ॥ १२ ॥

आद्यवर्णात्तु चत्वारो वर्णाः स्युर्मधुरेतराः ।

[व्या०] अस्यार्थः —यत्र मभौ–मगणभगणौ, अथ च नौ–नगणौ भवतः । किञ्च, आद्यवर्णात्–प्रथमाक्षरात् चत्वारो वर्णाः मधुरेतरा – केवल श्लिष्टा एवेत्यर्थः । तत् वीरचण्डकाख्य चण्डवृत्त भवति । इदमपि द्वादशाक्षरमेव पदम् । अत्रापि पदविन्यासः पूर्ववदेव । बाहुल्येन द्वादशपदमिद भवति, तथा वृष्टत्वादिति । यथा–

युद्धक्रुद्धप्रतिभटजयपर ।

इत्यादि ।

एतस्यैव अन्यत्र वीरभद्र इति नामान्तरम् । यथा–

उद्यद्विद्युद्द्युतिपरिचितपट
सर्प्यत्सर्प्यस्फुरदुरुभुजतट
स्वस्थस्वस्थत्रिदशयुवतिनुत
रक्षद्दक्षप्रियसुहृदनुसृत
मुग्धस्निग्धव्रजजनकृतसुख
नव्यश्रव्यस्वरविलसितमुख
हस्तन्यस्तस्फुटसरसिजवर
सज्जद्गर्ज्जत्खलवृषमदहर
युद्धक्रुद्धप्रतिभटलयकर
वर्णस्वर्णप्रतिमतिलकधर
रुप्यत्तुष्यद्युवतिषु कृतरस
भक्तव्यक्तप्रणय मनसि वस
वीर !

प्रचुरपरमहंसैः काममाचम्यमाने,
प्रणतमकरचक्रैः शश्वदाक्रान्तकुक्षौ ।
अघहर जगदण्डाहिण्डिहिन्दोलहासे,
स्फुरतु तव गभीरे केलिसिन्धौ रतिर्नः ।
उद्गीर्णतारुण्य विस्तीर्णकारुण्य
गुञ्जालतापिञ्छपुञ्जाढ्यतापिञ्छ ।
धीर !

उचितः पशुपत्यलंक्रियायै नितरां नन्दितरोहिणीयशोदः ।
तव गोकुलकेलिसिन्धुजन्मा जगदुद्दीपयति स्म कीर्तिचन्द्रः ।

सविरुदं वीरभद्रोदाहरणमिदम् ।

इति वीरचण्डवृत्तम् ।६।

७. अथ शाकचण्डवृत्तम्

भौ रो लः पञ्चमः श्लिष्टो दीर्घौ नवम-सप्तमौ ॥ १३ ॥
द्वितीयो मधुरः शाके—

[व्या०] अयमर्थः—शाके-शाकाख्ये चण्डवृत्ते प्रथमं भौ-भगणौ, अथ च रो-रगणः, ततो लो-लघुः । किञ्च-पञ्चमो वर्णः श्लिष्टः-संयुक्तो भवति, नवमसप्तमौ दीर्घौ भवतः, द्वितीयो मधुरः-परसवर्णो वर्णो यत्र भवतीत्यर्थः । तत् शाकनामकं चण्डवृत्तं भवति । दशाक्षरं पदं, विन्यासः पूर्ववत् । यथा–

सञ्चितचक्र-भुजाभिराम ।

इत्यादि ।

इति शाकचण्डवृत्तम् । ७ ।

८ अथ मातङ्गखेलित चण्डवृत्तम्

—ह्यथ मातङ्गखेलितम् ।
श्लिष्टौ वा मधुरौ बाणदशमौ रौ यलौ यदि ॥ १४ ॥
बाणे भङ्गश्च[1] मैत्री च प्रथमाष्टमषष्ठकाः ।
तृतीयश्चात्र दीर्घाः स्यु—

[व्या०] इदमत्रानुसन्धेयम्—अथ मातङ्गखेलित-मातङ्गखेलिताभिधानं चण्डवृत्तं लक्ष्यत इति शेषः । अत्र चार्थे वाकारः । तथा च यत्र 'बाणदशमौ' बाण-पञ्चम दशमश्चेति द्वौ वर्णौ श्लिष्टौ मधुरौ-परसवर्णौ च भवतः । तथा रौ-रगणौ, अथ च यलौ-यगणलघू यदि

१. क. बाणेभंङ्गश्च ।

भवतस्तथा वाणे–पञ्चमे भङ्गश्च–मैत्री च यदि भवति, तथा प्रथमाष्टमषष्ठकाः वर्णा-स्तृतीयश्च वर्णश्चेच्चत्वारोऽत्र वर्णा दीर्घाः स्युस्तदा मातङ्गखेलिताभिधानं चण्डवृत्तं भवति। दशाक्षरं पदमिदम्। अत्र पदविन्यासः स्वेच्छया विधेयः। यथा–

साधितानन्तसारसामन्त।

इत्यादि। यथा वा–

नाथ हे नन्द-गेहिनीशन्द
पूतनापिण्डपातने चण्ड
दानवे दण्डकारकाखण्ड-
सारपौगण्डलीलयोद्दण्ड
गोकुलालिन्दगूढ गोविन्द
पूरितामन्द-राधिकानन्द
वेतसीकुञ्ज-माधुरीपुञ्ज
लोकनारम्भजातसंरम्भ-
दीपितानङ्गकेलिभायङ्ग-
गोपसारङ्ग-लोचनारङ्ग-
कारिमातङ्गखेलितासङ्ग-
सौहृदाशङ्कयोपितामङ्क-
पालिकालम्ब चारुरोलम्ब-
मालिकाकण्ठ कौतुकाकुण्ठ
पाटलीकुन्दमाधवीवृन्द-
सेवितोत्तुङ्गशेखरोत्सङ्ग
मां सदा हन्त पालयानन्त
वीर !

स्फुरदिन्दीवरसुन्दर सान्द्रतरानन्दकन्दलीकन्द।
धां तव पदारविन्दे नन्दय मन्येन गोविन्द ॥

कुन्ददशन मन्दहसन[1]
बद्धरसन रुक्मवसन[2]
देव !

प्रपन्नजनतातमःक्षपणशारदेन्दुप्रभा-
व्रजाम्बुजविलोचना स्मरसमृद्धिसिद्धौषधिः।

विडम्बितसुधाम्बुधिप्रबलमाधुरीडम्बरा,
विभर्त्तु तव माधव स्मितकदम्बकान्तिर्मुदम् ।
इति श्रीगोविन्दविरुदावल्यां मातङ्गखेलितप्रत्युदाहरणम् ।

सविरुदमिदं मातङ्गखेलितम् ।८।

९. अथ उत्पलं चण्डवृत्तम्

—भद्वयं चोत्पलं मतम् ॥ १५ ॥
श्लिष्टौ द्विपञ्चमौ—

[व्या०] प्रथमपर्थः—भद्वय-भगणयोर्द्वयं, भगणचतुष्टयमित्यर्थः । लक्ष्ये तथा दर्शनादेवं व्याख्यातम् । किञ्च-तस्मिन्नेव भगणद्वये द्विपञ्चमौ-द्वितीयपञ्चमौ वर्णौ श्लिष्टौ-सरेफशिरस्कौ च भवतो यत्र तद् उत्पलनामकं चण्डवृत्तं भवतीत्यर्थः । षडक्षरं भगणद्वयपक्षे, भगणचतुष्टयपक्षे तु द्वादशाक्षरमेव पदम् । पदविन्यासस्तु पूर्ववदेव । यथा–

सर्वजनप्रिय
सर्वसमक्रिय

इत्यादि । यथा वा, श्रीगोविन्दविरुदावल्याम्—

नर्त्तितबर्करं-चक्र्तकर्कर-
वृद्धमरुद्भर-तर्द्दन निर्भर-
दुष्टविमर्द्दन शिष्टविवर्द्धन
सर्वविलक्षण मित्रकृतक्षण
सद्भुजलक्षित-पर्वतरक्षित-
निष्ठुरगर्ज्जन-खिन्नसुहृज्जन
रुष्टदिवस्पति-गर्वसमुन्नति-
तर्जनविभ्रम निर्गलितभ्रम-
शक्रकृतस्तव विस्फुरदुत्सव
वीर !

बुद्धीनां परिमोहनः किल ह्रियामुच्चाटनः स्तम्भनो
दर्भोदग्रधियां[1] मनःकरटिनां वश्यत्वनिष्पादनः ।
कालिन्दीकलहंस हन्त वपुषामाकर्षणः सुभ्रुवां,
जीयाद् वैणवपञ्चमध्वनिमयो मन्त्राधिराजस्तव ।

---

१. गोवि. दर्भोदग्रभियाम् ।

काननारब्ध काकलीशब्द-
पाटवाकृष्ट-गोपिकादृष्ट
चातुरीजुष्ट-राधिकातुष्ट
कामिनीलक्ष-मोदने दक्ष
भामिनीपक्ष[1] मामवु रक्ष,
देव ।

प्रजर्जरपतिव्रताहृदयवज्रभेदोद्धुरा,
कठोरतरमानिनी[2]-निकरमानमर्मच्छिद[3] ।
अनङ्गधनुरुद्धतप्रचलभिल्लिचापच्युता,
क्रियासुरघविद्विपस्तव मुद कटाक्षेपव ।

अविरुदमिदमुत्पलम् ।९।

१०. अथ गुणरतिखण्डवृत्तम्

—सो नो, लश्च दीर्घं तृतीयकम् ।
गुणरत्याख्य—

[व्या०] अस्यार्थः —यत्र स –सगण नो–नगण ततो लश्च–लघुर्भवति । अत्र चतुर्दशाक्षर-पदविन्यासस्य अन्यत्रापि दृष्टत्वात् सनलानामावृत्तिरवगन्तव्या, तेन प्रकृतोदूषणिका सिद्धि-र्भवति । किञ्च, तृतीयक–तार्तीयमक्षर दीर्घं भवति । तद् गुणरत्याख्य खण्डवृत्त भवति । चतुर्दशाक्षर पदम । पदविन्यास पूर्ववदेव । यथा–

विदिताखिलसुख
सुख(द)भाधिकमुख ।

इत्यादि । यथा वा–

प्रकटीकृतगुण शकटीविघटन
निकटीकृतनवलकुटीवर वन-
पटलीतटचर नटलोल मधुर
सुरभीकृतवन सुरभीहितकर
मुरलीविलसित-खुरलीहृतजग-
दरुणाधर नव-तरुणायतभुज[4]
वरुणालयसमकरुणापरिमल
कलभायितबल शलभायितखल

१ गोवि भाविनीपक्ष । २ गोवि कठोरधरर्मणिनी । ३ गोवि मर्मच्छिद ।
४ गोवि करुणायतभुज ।

धवलाधृतिधर[1] गवलाश्रितकर
सरसीकृतनर सरसीरुहधर
कलशीलितमुख कलशीदधिहर
ललितारतिकर ललितावलिपर
धीर !

हरिणीनयनावृत प्रभो करिणीवल्लभकेलिविभ्रम ।
तुलसीप्रिय दानवाङ्गनाकुलसीमन्तहर प्रसीद मे ।।

चन्दनचर्चित गन्धसमर्चित
गण्डविवर्त्तन-कुण्डलनर्त्तन
सन्दलदुज्ज्वल कुन्दलसद्गल
वञ्जुलकुन्तल[2] मञ्जुलकज्जल
सुन्दरविग्रह नन्दलसद्ग्रह
धीर !

रतिमनुबध्य गृहेभ्यः कर्षति राधां वनाय या निपुणा ।
सा जयति निसृष्टार्था[3] वरवंशजकाकली दूती ।

सचिरुदा गुणरतिरियम् ।१०।

११. अथ कल्पद्रुमश्चण्डवृत्तम्

तत्र–

—अन्त्यान्त्यो नवमः श्लिष्टपूर्वगः ।। १६ ।।

कल्पद्रुमे तजौ यश्च श्लिष्टाः षट्-त्रि-नव-द्विकाः ।

[व्या०] कोऽर्थः ? उच्यते—यत्र कल्पद्रुमे चण्डवृत्ते अन्त्यो–यगणः तस्यान्त्यो नवमो वर्णः श्लिष्टपूर्वगः–श्लिष्टो वर्णः पूर्वगो यस्य स तादृशो भवति । तत्र च गणनियममाह—तजौ–तगणजगणौ, अथ च यश्च–यगणोऽपि भवति । एवं गणत्रयं यत्र भवति तदेतत् कल्पद्रुमाख्यं चण्डवृत्तं भवति । नवाक्षरमिदं पदम् । पदविन्यासोऽपि पूर्ववत् । किञ्च–षट्त्रिनवद्विकाः–षष्ठतृतीयनवमद्वितीयका वर्णाः श्लिष्टा भवन्ति । यत्र च नवमश्लेषादेव द्वितीये पदे प्रथमवर्णस्य गुरुत्वं भवतीति भावः ।

यथा–

उद्रिक्ततरस्थितगर्वं
प्रव्यक्तपरिस्थितसर्वं ।[4]

---

१. गोवि. हर । २. गोवि. कुड्मल । ३. गोवि. निसृष्टार्था तव । ४. ख. प्रव्यक्तपरिस्थितशर्वं ।

एवं पदान्तरमपि वोद्धव्यम् ।

इति कल्पद्रुम ।११।

१२ अथ कन्दलश्चण्डवृत्तम्

कन्दले पञ्चम. श्लिष्टो द्वितीये मधुरोऽनु मौ ॥ १७ ॥

[व्या०] कन्दले–कन्दलाख्ये चण्डवृत्ते पञ्चमो वर्ण श्लिष्टो भवति । द्वितीयो वर्णो मधुर –परसवर्णो भवति । तत्र गणनैयत्यमाह––अत्रास्मिन् मौ–भगणौ एव ततः । षडक्षरमेव पदम् । तत्कन्दलाभिधान चण्डवृत्त भवतीति । यथा–

पण्डितवर्द्धन ।

इत्यादि ।

इति कन्दलः ।१२।

१३. अथ अपराजितश्चण्डवृत्तम्

षडष्टदशमा दीर्घा द्वितीयो मधुरो यदि ।
अपराजितमेतत्तु भसजाश्च गुरुर्लघु ॥ १८ ॥

[व्या०] एतदुक्त भवति । यत्र षडष्टदशमा –षष्ठाष्टमदशमाः वर्णा दीर्घा भवन्ति । द्वितीयो वर्णो यदि मधुर –परसवर्णो भवति । यदि च भसजा –भगणसगणजगणा भवन्ति । अथ च गुरुस्ततो लघुश्चेद् भवति । तदेतत् अपराजिताख्य चण्डवृत्त भवति । एकादशाक्षर पदम् । यथा–

गञ्जितपरवीर धीर हीर ।

इत्यादि ।

इति अपराजितम् ।१३।

१४ अथ नर्त्तनश्चण्डवृत्तम्

चतु सप्तमकौ श्लिष्टौ सौ रो लौ यदि नर्त्तनम् ।
अष्टमो मधुर –

[व्या०] अस्यार्थ ––यदि चतु सप्तमकौ वर्णौ श्लिष्टौ भवत•, अष्टमो वर्णो मधुर –परसवर्णो भवति । किञ्च, यदि सौ–सगणौ स्याताम् । अथ च रो–रगण , ततो लौ–लघुद्वय स्यात् तदा नर्त्तन–नर्त्तनाख्य चण्डवृत्त भवति । इदमप्येकादशाक्षर पदम् । यथा–

भुवनत्रयशत्रुम्रमर्द्दय ।

इत्यादि ।

इति नर्त्तनम् ।१४।

१५. अथ तरलसमस्तश्चण्डवृत्तम्

—श्लिष्ट-सश्लिष्टमधुरा यदि ॥ १९ ॥

षट्त्रिपञ्चमका जो मः सगणो लघुयुग्मकम्।
तरत्समस्तमित्याहुः—

[व्या०] एवमुक्तं भवति । यदि षट्त्रिपञ्चमका–षष्ठतृतीयपञ्चमा वर्णाः श्लिष्ट-संश्लिष्ट-मधुरा: स्युः । तत्र गणनियममाह—जो–जगणः, मो–मगणः, सगणः गुर्वन्तश्चतुष्कलो गणस्ततो लघुयुग्मक–लघुयुगलं च यदि भवति तदा तरत्समस्तमिति नामकं चण्डवृत्तमाहुश्छान्दसिकाः । एकादशाक्षरमेव पदम् । यथा–

निरस्तचण्डद्वेषिधराधर

इत्यादि ।

इति तरत्समस्तम् ।१५।

१६. अथ वेष्टनञ्चण्डवृत्तम्

—दीर्घौ षट्पञ्चमौ यदि ।। २० ।।
वेष्टने सप्तमः श्लिष्टो नयौ लघुचतुष्टयम् ।

[व्या०] अयमर्थः—वेष्टने–वेष्टनाख्ये चण्डवृत्तप्रभेदे यदि षट्पञ्चमौ–षष्ठपञ्चमकौ वर्णौ दीर्घौ स्याताम् । सप्तमश्च वर्णः श्लिष्टो भवेत् । गणनियममाह—नयौ–नगणयगणौ स्तः, ततो लघुचतुष्टयं यत्र भवति । दशाक्षरं च पदं भवति । तत् वेष्टनाभिधानं चण्डवृत्तं भवतीति । यथा–

मलयजसाराञ्चितहर ।

इत्यादि ।

इति वेष्टनम् ।१६।

१७. अथ अस्खलितञ्चण्डवृत्तम्

तरौ भलावस्खलिते त्र्यष्टपञ्चमसप्तमाः ।। २१ ।।
संश्लिष्टा दीर्घ आद्यः स्यात्—

[व्या०] कोऽर्थः ? उच्यते—अस्खलिते–अस्खलिताभिधाने चण्डवृत्ते यदि तरौ–तगणरगणौ स्याताम् । अथ च भलौ–भगणलघू स्तः । किञ्च, त्र्यष्टपञ्चमसप्तमाः–तृतीयाष्टमपञ्चमसप्तमा वर्णाश्चेत् संश्लिष्टाः अन्त्ययोगिनः स्युः । आद्यः–प्रथमो वर्णश्चेद् दीर्घः स्यात् तदा अस्खलिताभिधानं चण्डवृत्तं भवति । दशाक्षरमेव पदं भवति । यथा–

आबद्धशुद्धयुद्धप्रणय ।

इत्यादि ।

इति अस्खलितम् ।१७।

१८. अथ पल्लवितञ्चण्डवृत्तम्

—दीर्घौ चेत्तुर्यपञ्चमौ ।
शिथिलो मधुरो वाऽत्र द्वितीयो भतनद्विजाः ।। २२ ।।
एतत् पल्लवितम्—

कुन्तललुठदुरुरङ्ग
कुङ्कुमरुचिलसदम्बर
लङ्गिमपरिमलडम्बर
नन्दमवनवरमङ्गल-
[मञ्जुलघुसृणसुपिङ्गल
हिङ्गुलरुचिपदपङ्कज
सञ्चितयुवतिसदङ्गज][1]
सन्ततमृगपदपङ्किल
सतनु मयि कुशलङ्किल
वीर ।

गिरितटीकुमटीकुलपिङ्गले खलतृणावलिसञ्ज्वलदिङ्गले ।
प्रखरसङ्गरासन्धुतिमिङ्गिले मम रतिर्वलता व्रजमङ्गले ।
जय चारुदाम ललनाभिराम
जगतीललाम रुचिहारिवाम[2]
वीर ।

उन्दितहृदयेन्दुमणिः पूर्णकल कुवलयोल्लासी ।
परित शार्वरमथनो विलसति वृन्दाटवीचन्द्र ।

इति तुरग ।२०।

एते महाकलिकारूपस्य चण्डवृत्तस्य विंशति शुद्धा प्रभेदा ।

अथ सङ्कीर्णा

तत्र–

२१. पङ्केरुह चण्डवृत्तम्

पङ्केरुह नयौ पष्ठे भङ्गो मैत्री च दृश्यते ।। २४ ।।
सा चेत् कवर्गरचिता यथा लाभमनुक्रमात् ।
तथैव षष्ठो मधुर स्वरभेदेऽपि तद्भिदा ।। २५ ।।

[व्या०] एतस्यार्थं —यत्र नयौ–नगणयगणौ भवत । तथा षष्ठे वर्णे भगो मैत्री च दृश्यते । किञ्च, सा मैत्री चेत् कवर्गेण यथालाभमनुक्रमात रचिता स्यात । तथा षष्ठो वर्णो मधुर–परसवर्णो यदि स्यात तदा पङ्केरुह नाम चण्डवृत्त भवति । किञ्च, स्वरभेदेपि–इकारादिस्वर-भेदेपि सति तद्भिदा पङ्केरुहभेदो भवतीति बोद्धव्यम । षडक्षरमेव पदम । पदविन्यासोपि पूर्व वदिति बोद्धव्यम् ।

---

१ [-] कोष्ठगतोंश नास्ति क प्रतौ । २ गोवि रुचिहृतवाम ।

चान्तिमे पदे लः-एको लघुरधिको देय इत्यर्थः, तेनान्त्य पदं त्रयोदशाक्षरं भवति । तच्च, जरजभलान्तमित्युपदिश्यते । पदविन्यासस्तु स्वेच्छया विधेयः । यथा–

अनङ्गवर्जन प्रसङ्गसज्जन ।

इत्यादि ।

अनङ्गमङ्गल प्रसङ्गसञ्जनक ।

इत्यन्तम् ।

अत्र च मधुरलतीयस्थावेव विरुद्धावल्यन्तर-समपाद् भिन्नमिदं समग्रमिति ।

इति समग्रम् ।१६।

२०. अथ तुरग[1]श्चण्डवृत्तम्

—भनौ जलौ ॥ २३ ॥

मधुरौ[2] युग्मनवमौ चेच्चण्डतुरगाह्वयम् ।

[व्या०] अयमर्थः—यत्र भनौ–भगण नगणौ भवतः, ततो जलौ–जगणलघू स्याताम् । किञ्च, युग्मनवमौ वर्णौ चेत् मधुरौ–परसवर्णौ स्तस्तदा तुरगाह्वयचण्डवृत्तं भवतीत्यर्थः । दशाक्षर पदमिदम् । पदविन्यासः पूर्ववत् । यथा–

पण्डितगुणगणमण्डित ।

यथा वा–

सँव्वल[3] विचकिलकुण्डल
मण्डितवरतनुमण्डल
कुण्डलिपतिकृतसङ्गर
दण्डित[4] भुवनभयङ्कर
शङ्करकमलजवन्दित
किङ्करनुतिलवनन्दित[5]
गञ्जितसमदपुरन्दर
चञ्चलदमनधुरन्धर
बन्धुरगतिजितसिन्धुर
चन्दनसुरभितकन्धर
सुन्दरभुजलसदङ्गद[6]
सन्ततसखिगणरङ्गद
झङ्कृतिकरमणिकङ्कण

---

१. गोवि. तुरंग । २. क. मधुर । ३. गोवि सबल । ४. गोवि खण्डित ।
५. क. किङ्करतुलितमनन्दित । ६. क. भुजमलवङ्गद ।

वर्णिकारकृतकर्णिकाद्युति वर्णिकापदनियुक्तगैरिका ।
मेचका मनसि मे चकास्तु ते मेचकाभरण भारिणी[1] तनु ।

मदनरसङ्गत सङ्गतपरिमल
युवतिविलम्बित लम्बितकचभर
कुसुमविटङ्कित टङ्कितगिरिवर
मधुरसञ्चित सञ्चितनरवर[2]
वीर !

भ्रूमण्डलताण्डवितप्रसूनकोदण्डचित्रकोदण्ड ।
हृतपुण्डरीकगर्भं मण्डय मे[3] पुण्डरीकाक्ष ।

सविरुद सितरञ्जमिदम् ।२२।

२३ अथ पाण्डुत्पलञ्चण्डवृत्तम्

जय जय दण्ड-
प्रिय कचखण्ड-
ग्रथितशिखण्ड-
स्रज शशिखण्ड-
स्फुरणसपिण्ड-
स्मितवृतगण्ड
प्रणयकरण्ड
द्विजपतितुण्ड
स्मररसकुण्ड
क्षतफणिमुण्ड
प्रकटविघण्ड-
स्थितजगदण्ड
क्वणदणुघण्ट
स्फुटरणघण्ट
स्फुरदुरुशुण्डा-
कृतिभुजदण्डा-
हृतगरुचण्डा-
सुरगण षण्डा-

१. गोवि मालिनी। २. गोवि पङ्क्तिरियं नास्ति। ३. गोवि- मम।

[व्या०] एतेषां सितकञ्जादिभेदानाम्, शेषं स्पष्टम् । तत्र–

२२. सितकञ्जचण्डवृत्तम्

जय कचचञ्चद्-
द्युतिसमुदञ्च-
न्मधुरिमपञ्च-
स्तवकितपिञ्छ-
स्फुरित विरिञ्च-
स्तुत गिरिगञ्ज[1]-
व्रजपरिगुञ्ज-
न्मधुकरपुञ्ज-
द्रुतमृदुशिञ्ज
द्विपदहृगञ्ज
व्रततिषु खञ्ज-
व्रवरजसञ्ज[2]-
न्मरुदतिपिञ्ज
प्रवलित[3]मुञ्जा-
नलहर गुञ्जा-
प्रिय गिरिकुञ्जा-
श्रित रतिसञ्जा-
गर नवकञ्जा-
मलकर भञ्जा-
निलहर मञ्जी-
रजरवपञ्ज ,-
परिमलसञ्जी-
वितनवपञ्चा-
शुगशरसञ्चा-
रणजितपञ्चा-
ननमद धीर ।

१. गोवि. गिरिकु[?]   २. गोवि. रसमञ्ज- ।   ३. गोवि. प्रवणित ।

कृपय सपङ्के

किल मयि धीर !

उत्तुङ्गोदयशृङ्गसङ्गमजुषा विभ्रत्पतङ्गत्विषा,
वासस्तुङ्ग[1]मनङ्गसङ्गरकलाशौटीर्यपारङ्गत ।
स्वान्त रिङ्गदपाङ्गभङ्गिभिरलं गोपाङ्गनानां किल[2],
भूयास्त्वं पशुपालपुङ्गव दृशोरभ्यङ्ग रङ्गाय मे ॥

विलसदलिकगतकुङ्कुमपरिमल
कटितटधृतमणिकिङ्किणिवरकल
नवजलधरकुललङ्घिमरुचिभर
मसृणमुरलिकलभङ्गिमधुरतर
धीर !

अवतसितमञ्जुमञ्जरे तरुणीनेत्रचकोरपञ्जरे ।
नवकुङ्कुमपुञ्जपिञ्जरे रतिरास्तां मम गोपकुञ्जरे ।

पङ्केरुह सविरुदमिदम् । २१ ।

अथ सितकञ्जादयश्चण्डवृत्तस्य चत्वारो भेदा लक्ष्यन्ते । तत्र—

एतावेव गणौ यत्र भङ्गो मैत्री च पूर्ववत् ।
क्रमेण चादिवर्गैस्तु रचिता साऽपि पूर्ववत् ॥ २६ ॥

[व्या०] अस्यार्थः —यत्र एतौ—नगणयगणौ एव—पूर्वोक्तौ गणौ भवत । किञ्च, भङ्गो मैत्री च पूर्ववत्, षष्ठाक्षर एव भवतीत्यर्थः । एतच्च षष्ठवर्णस्य मधुरत्वमपि लक्षयतीति बोद्धव्यम् । पूर्ववद् इत्यनेनैवोपस्थापितत्वात । किञ्च, साऽपि मैत्री आदि-चतुर्भिर्वर्गैः पूर्ववत् यथार्थं रचिता चेद् भवति । अपि शब्दात स्वरान्तरेणाभेदेऽपि सति तदा तत्तद्भेदो भवतीत्यपि बोद्धव्यम् । षडक्षरमेव पदम् । पदविन्यासोऽपि पूर्ववदेवेति च ॥२६॥

तद्भेदचतुष्टयमाह सार्द्धेन श्लोकेन—

सितकञ्ज तथा पाण्डूत्पलमिन्दीवरं तथा ।
अरुणाम्भोरुहञ्चेति ज्ञेयं भेदचतुष्टयम् ॥ २७ ॥
विरुदेन समं चापि चण्डवृत्तस्य पण्डितैः ।

[व्या०] सितकञ्ज, पाण्डूत्पल, इन्दीवर, अरुणाम्भोरुहं इति सविरुदचण्डवृत्तस्य भेदचतुष्टय पण्डितैः—अधीतच्छन्दःशास्त्रनिपुणमतिभिर्ज्ञेयमित्युदाहरणम् ।

उदाहरणमेतेषां क्रमेणैवोच्यते यथा ॥ २८ ॥

---

1. गोवि स्तुत्य । 2 गोवि मिलत् ।

जनितवितण्डा-
जितबल भण्डी-
रदयित खण्डी-
कृतनवडिण्डी-
;
गण कलकुण्डी[1]-
कृतकलकण्ठी-
कुल मणिकण्ठी-
स्फुरितसुकण्ठी-
प्रिय वरकण्ठी-
रवरण वीर !

दण्डी कुण्डलिभोगकाण्डनिभयोरुद्दण्डदोर्दण्डयोः,
श्लिष्टश्चण्डिमडम्बरेण निविडश्रीखण्डपुण्ड्रोज्ज्वलः ।
निर्द्धूतोद्यचण्डरश्मिघटया तुण्डश्रिया मामकं
कामं मण्डय पुण्डरीकनयन त्वं हन्त हृन्मण्डलम् ।
कन्दर्पकोदण्ड-दर्पश्रियोद्दण्ड-
दृग्भङ्गिकाण्डीर संजुष्टभाण्डीर
धीर !
त्वमुपेन्द्र कलिन्दनन्दिनी-तटवृन्दावनगन्धसिन्धुर ।
जय सुन्दरकान्तिकन्दलैः स्फुरदिन्दीवरवृन्दबन्धुभिः ।
सविरुदं पाण्डूत्पलमिदम् ।२३।

२४. अथ इन्दीवरम्

जय जय हन्त
द्विप दभिहन्त-
मंधुरिमसन्त-
पितजगदन्त-
मृदुल वसन्त-
प्रिय सितदन्त-
[स्फुरितदिगन्त
प्रसरदुदन्त][2]

---
१. गोवि. कुण्ठी । २. पंक्तिद्वयं नास्ति क. प्रतौ ।

प्रभवदनन्त-
प्रियसख सन्त-
स्त्वयि रतिमन्त.
स्वमुदहरन्त]¹
प्रभुवर नन्दा-
त्मज गुणकन्दा-
सितनवकन्दा-
कृतिधर² कुन्दा-
मलरद तुन्दा-
त्तभुवन वृन्दा-
वनभवगन्धा-
स्पदमकरन्दा-
न्वितनवमन्दा-
रकुसुमवृन्दा-
र्चितकच वन्दा-
रुनिखिलवृन्दा³-
रकवरवन्दी-
डित विधुसन्दी-
पितलसदिन्दी-
वरपरिनिन्दी-
क्षणयुग नन्दी-
श्वरपतिनन्दी-
हित जय वीर !

स्मितरुचिमकरन्दस्यन्दि वक्त्रारविन्द,
तव पुरुपरहसान्विष्ट गन्ध मुकुन्द ।
विरचित⁴पशुपालीनेत्रसारङ्गरङ्ग,
मम हृदयतडागे सङ्गमङ्गीकरोतु ।
अम्बरगतसुरविनतिविलम्बित
तुम्बरुपरिमविमुरलिकरम्बित

[–] १. पवितचतुष्टय नास्ति क. प्रतौ । २. गोवि. घृतिधर । ३. ख. पंक्तिरियं नास्ति । ४. गोवि. परिचित ।

शम्बरमुखमृगनिकरकुटुम्बित
सभ्रमवलयितयुवतिविचुम्बित
धीर !

अम्बुजकुटुम्बदुहितुः कदम्बसम्बाधबन्धुरे पुलिने ।
पीताम्बर कुरु केलिं त्वं वीर ! नितम्बिनीघटया ।।

सविरुदमिदमिन्दीवरम् ।२४।

२५. अथ अरुणाम्भोरुहञ्चण्डवृत्तम्

जय रससम्पद्-विरचितझम्प
स्मरकृतकम्प-प्रियजनशम्प
प्रवणितकम्प-स्फुरदनुकम्प
द्युतिजितशम्प-स्फुटनवचम्प-
श्रितकचगुम्फ श्रुतिपरिलम्ब-
स्फुरितकदम्ब स्तुतमुख डिम्भ-
प्रिय रविबिम्बो-दयपरिजृम्भो-
न्मुखलसदम्भो-रुहमुख लम्बो-
द्भटभुज लम्बो-दरवरकुम्भो-
पमकुचबिम्बो-ष्ठयुवतिचुम्बो-
द्भट परिरम्भोत्सुक कुरु शं भो-
स्तडिदवलम्बो-र्जितमिलदम्भो-
धरसुविडम्बो-द्धुर नतशम्भो
रपिजितदम्भो[1]-लिगरिमसम्भा-
वितभुजजृम्भा[2]-हितमद लम्पा-
कमनसि सम्पादय मयि त पा-
किममनुकम्पालवमिह धीर !

दिव्ये दण्डधरस्वसुस्तटभवे फुल्लाटवीमण्डले,
वल्लीमण्डपभाजि लब्धमदिरस्तम्बेरमाडम्बरः ।
कुर्वन्नञ्जनपुञ्जगञ्जनमति श्यामाङ्गकान्तिश्रिया,
लीलापाङ्गतरङ्गितेन तरसा मा हन्त सन्तर्पय ।

१. गोवि. परिजितदम्भो । २. ख. तुम्भा; गोवि. जम्भा ।

अम्बुजकिरणविडम्बक खञ्जनपरिचलदम्बक
चुम्बितयुवतिकदम्बक कुन्तललुठितकदम्बक
वीर !

प्रेमोद्वेल्लितवल्गुभिर्वलयितस्त्वं वल्लवीभिर्विभो !
रागोल्लापितवल्लकीविततिभिः कल्याणवल्लीभुवि ।
सोल्लुण्ठं मुरलीकलापरिमलं[1] मल्लारमुल्लासयन्,
वाल्येनोल्लसिते दृशौ मम तडिल्लीलाभिरुत्फुल्लय ।

सविरुदमिदमरुणाम्भोरुहम् ।२४।

एते कादिपञ्चवर्गोत्थापिताः पञ्चचण्डवृत्तस्य महाकलिकारूपस्य सङ्कीर्णाः प्रभेदाः ।

अथ गर्भिताः

तत्र प्रभेदाः—

२६. फुल्लाम्बुजश्चण्डवृत्तम्

षष्ठे भङ्गश्च मैत्री च नयावेव गणौ यदि ।
अन्तस्थस्य तृतीयेन यदि मैत्रीकृता भवेत् ॥ २९ ॥

स्वरोपस्थापिता श्लिष्टा रमणीयतरा क्वचित् ।
फुल्लाम्बुज तदुद्दिष्टं चण्डवृत्तं सुपण्डितैः ॥ ३० ॥

[व्या०] कोऽर्थः ? उच्यते—यदि नयावेव—नगणयगणावेव गणौ स्तः । षष्ठे वर्णे भङ्गो मैत्री च यदि अन्तस्थस्य यवर्गस्य तृतीयेन लकारेण कृता भवेत् । सापि क्वचित् स्वरोपस्थापिता श्लिष्टा च स्यात् । तदा एतद्देशावृत्तमिदं नामतः फुल्लाम्बुज इति प्रसिद्धं सुपण्डितैश्चण्डवृत्तमुद्दिष्टं—कथितमित्यर्थः । यथा—

व्रजपृथुवल्ली[2]-परिसरवल्ली-
वनभुवि तल्लीगणभृति मल्ली-
मनसिजमल्ली-जितशिवमल्ली-
कुमुदमतल्लीजुषि गत झिल्ली-
परिषदि हल्ली-सकसुखमिल्ली[3]-
रत परिफुल्ली-कृतचलचिल्ली-

१. गोवि- कलाभिरमनं । २. गोवि. पल्ली । ३. गोवि. मल्ली ।

जितरतिमल्लीमद भर सल्ली-
ललितक कल्या-तनुशततुल्या-
हवरसकुल्या-चटुतिलखल्या-
प्रमथन कल्याणचरित धीर ।

गोपी सम्भृतचापल-चापलताचित्रया भ्रुवा भ्रमयन् ।
विलस यशोदावत्सल वत्सलसद्धेनुसवीत ।

**वल्लवललनालीलावलयित
पल्लवरचना मल्लीविलसित
वल्लभकलनाखेलासमुदित
सल्लवघटना नीलालकवृत ।

तव चरणाम्बुजमनिश विभावये नन्दगोपाल ।
गोपालनाय वृन्दावनभुवि यद् रेणुरञ्जिता धरणी ।*

सविरुद फुल्लाम्बुजमिदम् ।२६।

---

१ * *टिप्पणी—सङ्केतान्तर्गतांशस्य स्थाने निम्नांशो वर्त्तते गोविन्दविरुदावल्याम । परञ्च वृत्तमौक्तिककृता चायमश पल्लवितञ्चण्डवृत्तस्य शिथिलद्वितीयवर्णोदाहरणरूपेण स्वीकृत, स च २३३ पृष्ठेऽवलोकनीया विद्वद्भि ।

वल्लवलीलासमुदयसमुचित
पल्लवरागाधरपुटविलसित
वल्लभगोपीप्रवणित मुनिगण
दुर्लभकेलीभरमधुरिमकण
मल्लविहारादमृततरुणिमधर
फुल्लमृगाक्षीपरिवृतपरिसर
चिल्लिविलासार्पितमनसिजमद
मल्लिकलापामलपरिमलपद
रल्लकराजीहरसुमधुरकल
हल्लकमालापरिवृतकचकुल
वीर ।

वल्लवललनावल्ली करपल्लवशीलितस्कन्धम् ।
उल्लसित परिफुल्ल भजाम्यह कृष्णकङ्केल्लिम् ॥

२७. अथ सम्पत्कचण्डवृत्तम्

द्वितीयो मधुरो यत्र श्लिष्टः क्वापि भवेद् यदि ।
भगौ परस्परं चैतौ स्वेच्छातः पदकल्पनम् ॥ ३१ ॥
सम्पत्कं चण्डवृत्तं स्यात्—

[व्या०] श्लोकार्थ —'यत्र द्वितीयो वर्णो मधुर–परसवर्णो भवेत्। क्वापि–कुत्रचित् यदि श्लिष्टोऽपि स्यात्।' तत्र गणनियममाह—भगौ–भगणनगणौ गणौ भवेताम्। परस्परं चैतत् पदम्। किञ्च, परस्परं स्वेच्छातो यत्र भवति स्वैतत्सम्पत्कं नाम चण्डवृत्तं स्यात्। यथा—

चञ्चलचरण[1]-सुन्दरनयन
मन्दरनयन वल्लवचरण
पल्लवचरण मङ्गलगुण-
सिङ्गलमगुण चन्दनवचन
नन्दनवचन गञ्जितशकट
खञ्जितशकट-खचितमनुज
पचितमनुज रक्षितधवल
लक्षितधवल पन्नगदलन
सन्नगदलन बन्धुरवलन
सिन्धुरवलन[3] कल्पितमदन[4]-
जल्पितमदन[5] मञ्जुलमुकुट
वञ्जुलमुकुट-रञ्जितशरभ
गञ्जितशरभ-मण्डलवलित
कुण्डलवलित-नन्दितलपन
नन्दितलपन-वन्यकसुमन
धन्यककुसुम[6]-नर्मकचरण[7]-
दर्भकशरण तर्णकवलित
वर्णकललित श्री वरवलय
डम्बर मलय
देव

१-१. ख. प्रतौ नास्ति पाठः। २. गोवि. सचलवरणचञ्चलकरणसुन्दरनयन। ३. क. पवन। ४. गोवि. मदन। ५. गोवि. सदन। ६. गोवि. धन्यककुसुम। ७. गोवि. विरण।

दानवघटालवित्रे धातुविचित्रे जगच्चित्रे ।
हृदयानन्दचरित्रे रतिरास्तां वल्लवीमित्रे ।
रिङ्गदुरुभृङ्ग-तुङ्गगिरिशृङ्ग-
शृङ्गरुतभङ्ग-सङ्गधृवरङ्ग
वीर !

त्वमत्र चण्डासुरमण्डलीनां रण्डावशिष्टानि गृहाणि कृत्वा ।
पूर्णान्यकार्षीर्व्रजसुन्दरीभिर्वृन्दाटवीपुण्ड्रकमण्डपानि ॥

सविरुदं चम्पकमिदम् ।२७।

२८. अथ वञ्जुलञ्चण्डवृत्तम्

—वञ्जुलं नजला यदि ।
पञ्चमो मधुरस्तत्र पद मुनिमित मतम् ॥ ३२ ॥

[व्या०] अयमर्थः—यदि नजलाः–नगणजगणलघवः स्युः । किञ्च, तत्र पदे पञ्चमो वर्णो मधुरः–परसवर्णो भवति । पदमपि मुनिभिः–सप्तभिर्वर्णैर्मितं–परिमितं यत्र तत् वञ्जुलं–वञ्जुलाख्यमतिमञ्जुलं चण्डवृत्तं मतं–सम्मतमित्यर्थः । पदकल्पनं तु पूर्ववत् । यथा–

जय जय सुन्दर-विहसित मन्दर-
विजितपुरन्दर निजगिरिकन्दर-
रतिरसधान्धर मणियुतकन्धर
गुणमणिमन्दिर हृदि वलदिन्दिर
गतिजितसिन्धुर परिजनबन्धुर
पशुपतिनन्दन तिलकितचन्दन
विधिकृतवन्दन पृथुहरिचन्दन-
परिवृतनन्दन[1]-मधुरिमनिन्दन[2]-
मधुवन वन्दित-कुसुमसुगन्धित-
वनवररञ्जित रतिरभसञ्जित[3]
शिखिदलकुण्डल-सहकृतमण्डिल
नवसिततण्डुल-जयिरदमण्डल
रतिरणपण्डित वरतनुभण्डित
नखपदमण्डित दशनविखण्डित
धीर !

---

१. पंक्तिरियं नास्ति ख. प्रतौ । २. क. मधुरिमनन्दन- । ३. गोवि. रतिभरसञ्जित ।

निनिन्द निजमिन्दिरा वपुरवेक्ष्य यासा श्रिय,
मिचार्य गुणचातुरीमचलजा च लज्जा गता ।
लसत्पशुपनन्दिनीततिभिराभिरानन्दित,
भवन्तमतिसुन्दर व्रजकुलेन्द्र वन्दामहे ।

रसपरिपाटी स्फुटतरुवाटी
मनसिजधाटी प्रियनतशाटी[1]-
हर जय वीर ।

सम्भ्रान्तै सपङ्क्पातमभितो वेदैर्मुदा वन्दिता,
सीमन्तोपरि गौरवादुपनिपद्देवीभिरप्यर्पिता ।
श्रामम्र प्रणयेन च प्रणयतो तुष्टामना[2] विक्रतो[3],
मूर्द्धा ते मुरलीरतिर्मुररिपो शर्माणि निर्मातु न ।

शविरुद धञ्जुलमिदम् ।२८।

२६. अथ कुन्दच्चण्डवृत्तम्

द्वितीयषष्ठौ मधुरौ श्लिष्टौ वा क्वापि तौ यदि ।
स्यातां भजौ तदा कुन्दम्—

[व्या०] एतदुक्त भवति । यदि द्वितीयषष्ठौ वर्णौ मधुरौ—परसवर्णौ क्वापि पदे श्लिष्टौ वा, तौ वर्णौ स्याताम् । अथ च भजौ—भगणजगणौ भवत, तदा कुन्द इति नाम चण्डवृत्त भवति । षडक्षरमिद पदम् । पदविन्यासस्तु पूर्ववत् । यथा—

नन्दकुलचन्द्र लुप्तभवतन्द्र
कुन्दजयिदन्त दुष्टकुलहन्त
रिष्टसुवसन्त मिष्टसदुदन्त
सदलितमल्लि-कन्दलितवल्लि-
गुञ्जदलिपुञ्ज-मञ्जुतरकुञ्ज-
लब्धरतिरङ्ग हृद्यजनसङ्ग-
शर्मलसदङ्ग हर्षकृदनङ्ग
मत्तपरपुष्ट-रम्यकलघुष्ट
गन्धभरजुष्ट पुष्पवनतुष्ट
कृतखलक्ष[4] युद्धनयदक्ष

---

१. गोवि- प्रियनवशाटी- । २. गोवि हृष्टात्मना । ३. गोवि. मिष्टुता । ४. गोवि यक्ष ।

वल्गुकचपक्ष-[वद्धशिखिपक्ष] [1]
पिष्टनततृष्ण तिष्ठ हृदि कृष्ण
चीर !
तव कृष्ण केलिमुरली हितमहित च स्फुट विमोहयति ।
एत्र सुधोर्मिसुहृदा विषविषमेणापर ध्वनिना ।
सन्नीतदैतेयनिस्तार कल्याणकारुण्यविस्तार
पुष्पेषुकोदण्डटङ्कार-विस्फारमञ्जरीभङ्कार
धीर !
रङ्गस्थले ताण्डवमण्डनेन [2] निरस्य मल्लोत्तमपुण्डरीकान् ।
कसद्विप चण्डमखण्डयद यो हृत्पुण्डरीके स हरिस्तवास्तु ।

सविरुद कुन्दमिदम् ।२६।

३०. अथ बकुलभासुरचण्डवृत्तम्

—अथो [3] बकुलभासुरम् ।। ३३ ।।

चतुर्भिस्तुरगं निर्जं पद यत्रातिसुन्दरम् ।
रसेन्दुमात्र सोल्लाल—

[व्या०] अस्यार्थ —अथ–कुन्दानन्तर बकुलभासुर इति नामक चण्डवृत्त कथ्यत इति शेष । यत्र चतुर्भि –चतु सख्याकै निर्जे –जगणविरहितै चतुर्विधैस्तुरगै –चतुष्कलै द्विजगण-कर्ण भगण-[4] सगणैरेवातिसुन्दर–अतिरमणीय रसेन्दुमात्र–षोडशमात्र पद भवति । तच्च पद उत्सर्गसिद्ध षोडश विशकावधिबाणाधिक विधेयमित्युपदेश । किञ्च, सोल्लाल–उल्ललनमेव उल्लाल परावर्त्तन तेन सहित शृङ्खलाबद्धन्यायेन घटितमित्यर्थ । तदीदृश बकुलभासुर चण्डवृत्त सविरुद भवतीति वाक्यार्थ । यथा–

जय जय वशीवाद्यविशारद
शारदसरसीरुहपरिभावक-
भावकलितलोचनसञ्चारण
चारणसिद्धवधूधृतिहारक
हारकलापरुचाश्रितकुण्डल [5]
कुण्डलसित [6] गोवर्द्धनभूषित
भूषितभूषणविच्छन [7] विग्रह
विग्रहखण्डितखलवृषभासुर

---

१ [-] क ख नास्ति पाठ । २ गोवि मण्डलेन । ३ ख अथ । ४ ख तगणसगणै- । ५ गोवि रुचाञ्चितकुण्डल । ६ गोवि कुण्डलसद् । ७ गोवि चिद्घन- ।

भासुरकुटिलकचार्पितचन्द्रक
चन्द्रकदम्ब[1]रुचाभ्यधिकानन
काननकुञ्जगृहस्मरसङ्गर
सङ्गरसोद्धुरबाहुभुजङ्गम
जङ्गमनवतापिञ्छनगोपम
गोपमनीषितसिद्धिषु दक्षिण
दक्षिणपाणिगदण्डसभाजित
भाजितकोटिशशाङ्कविरोचन
रोचनया कृतचारुविशेषक
शेषकमलभवसनकसनन्दन-
नन्दनगुण मा नन्दय सुन्दर
[2]सुन्दर मामव भीतिविनाशन[2]
वीर !

भवत प्रतापतरणावुदेतुमिह लोहितायति स्फीते।
दनुजान्धकारनिकराः शरण भेजुर्गुहाकुहरम् ॥

पुलिनधृतरङ्ग-युवतिकृतसङ्ग
मदनरसभङ्ग-गरिमलसदङ्ग
धीर !

पशुषु कृपा तव दृष्ट्वा दुष्ट[3]महारिष्टवत्सकेशिमुखा । ।
दर्पं विमुच्य भीता पशुभाव भेजिरे दनुजा ॥

सविरुद बकुलभासुरमिदम् ।३०।

३१. अथ बकुलमङ्गलचण्डवृत्तम्

—अन्तो वकुलमङ्गलम् ॥ ३४ ॥

चतुर्भिर्भगणैरेव हृद्यैर्यत्र पद भवेत् ।
रसेन्दुकलक तत्र तृतीये शृङ्खलास्थिता ॥ ३५ ॥

[व्या०] कोऽयं ? उच्यते। अन्त —बकुलभासुरानन्तर बकुलमङ्गल—बकुलमङ्गलाख्य चण्डवृत्तमुच्यत इति शेष ॥३४॥

यत्र चतुर्भि —चतु सख्याकै येवलैरादिगुरुकै —भगणैरेव हृद्यं —चतुष्कलं रसेन्दुकलक—षोडशमात्र पद भवेत् । किञ्च, तत्र—तस्मिन्पदे तृतीये अर्थात् तृतीये भगणे शृङ्खलास्थिता चेद्—

१ गोवि चन्द्रकताप- । २-२. गोवि. पक्तिरिय नास्ति । ३ गोवि. नून ।

भवति, तदा बकुलमङ्गलाभिधानं चण्डवृत्तं सविरुदं भवतीति वाक्यार्थः । पदविन्यासोपदेशस्तु पूर्ववदेव । षोडशमात्रत्वमुभयत्र समानं । परं तु चतुर्थभगणघटनमध्यशृङ्खलायन्धनमात्रमेव बकुलभासुराद् भेदं बोधयतीत्यवधेयं सुधीभिरिति शिवम् ॥३५॥

यथा–

त्वं जय केशव केशवलस्तुत
वीर्यविलक्षण लक्षणबोधित
केलिषु नागर नागरणोद्धत
गोकुलनन्दन नन्दनतिव्रत-
सान्द्रमुदर्पक दर्पकमोहन
हे सुषमानवमानवतीगण-
माननिरासक रासकलाश्रित
सस्तनगौरवगौरवधूवृत[1]
कुब्जशतोषित तोषितयौवत
रूपभराधिकराधिकयाचित
भीरुविलम्बित लम्बितशेखर
केलिकलालस[2]लालसलोचन
शेषमदारणदारुणदानव-
मुक्तिदलोकन लोकनमस्कृत-
गोपसभावक भावकशर्मद
हन्त कृपालय पालय मामपि
देव ![3]

पलायन[4] फेनिलवक्त्रता च बन्धं च भीतिं च मृतिं च कृत्वा ।
पवर्गदातापि शिखण्डमौले त्व शात्रवाणामपवर्गदोऽसि ॥

प्रणयभरित - मधुरचरित
भजनसहित - पशुपमहित
देव !

अनुभूय विक्रम ते युधि लब्धाः कादिशीकत्वम् ।
हित्वा[5] किल जगदण्ड प्रपलायाचक्रिरे दनुजाः ।

सविरुदं बकुलमङ्गलमिदम् ।३१।

---

१ क कृत । २ गोवि. केलिकुलालस- । ३. गोवि. वीर । ४. गोवि. पराभवं ।
५. गोवि. भित्वा ।

३२ अथ मञ्जर्यां कोरकश्चण्डवृत्तम्

मञ्जरी चात्र पूर्वं श्लोको लेखस्तदनन्तरम् ।
कोरकाख्यं चण्डवृत्तं पदसंख्यानखैर्यदि ।। ३६ ।।

[ध्या०] प्रत्यार्थं —अभिधीयत इत्यर्थं । प्रथमतो मञ्जरी ततः कलिका भवतीति लौकिकानां प्रसिद्धेः । तत्र चतुर्भिः भगणैः शुद्धैराद्यन्तयमकाङ्कितं कोरकाख्यं चण्डवृत्तं । यदि पदस्य आद्यन्तयोर्यमकाङ्कितं –यमकेन अङ्कितं यमकैरिति यावत्, शुद्धं –शृङ्खलारहितैश्चतुर्भिः भगणैः –आदिगुरुकैर्गणैः पदम् । अथ च पदसंख्या यदि नखैः –विंशत्या भवति, तदा कोरकाख्यं चण्डवृत्तं भवति । शृङ्खलाराहित्यमेवात्र पूर्वस्मादू भेद गमयतीति ।।३६।।

तत्र प्रथमं मञ्जरी, यथा–

नवशिखिशिखण्डशिखरा[1] प्रसूनकोदण्डचित्रशस्त्रीव ।
क्षोभयति कृष्ण वेणी श्रेणीरेणीदृशां भवतः ।।

कोरकम्, यथा–

मानवतीमदहारिविलोचन
दानवसञ्चयघूकविरोचन
डिण्डिमवादिसुरालिसभाजित
चण्डिमशालिभुजार्गलराजित
दीक्षितयौवतचित्तविलोभन
वीक्षित सुस्मितमार्दवशोभन
पर्वतसम्भृति[2] निर्घृतपीवर-
गर्वतम परिमुग्धशचीवर[3]
रञ्जितमञ्जुपरिस्फुरदम्बर
गञ्जितकेशिपराक्रमडम्बर
कोमलताङ्कितवागवतारक
सोमललाममहोत्सवकारक
हसरयस्तुतिशंसितवंशक
कंसवधूश्रुतिनुन्नवतंसक
रङ्गतरङ्गितचारुदृगञ्चल
सङ्गतपञ्चशरोदयचञ्चल
लुञ्चितगोपसुतागणशाटक
सञ्चितरङ्गमहोत्सवनाटक
तारय मामुरुसंसृतिशातन

१ क शिखण्डिशिखरा । २ गोवि० पर्वतसभृति- । ३ ख शचीवर ।

धारय लोचनमत्र सनातन
धीर !

तुरगदनुसुताङ्गग्रावभेदे दधानः,
कुलिशघटितटङ्कोद्दण्डविस्फूर्जितानि ।
तदुरुविकटदंष्ट्रोन्मु(मृ)ष्टकेयूरमुद्रः,
प्रथयतु पटुता वः केशवो वामबाहुः ।
माधव विस्फुर दानवनिष्ठुर
यौवतरञ्जित सौरभसञ्जित
वीर !

पलितकरणी दशा प्रभो मुहुरन्धकरणी च मा गता ।
सुभगकरणी कृपा शुभैर्न तवाढ्यंकरणी च मय्यभूत् ॥

सविरुद: कोरकोऽयम् ।३२।

३३. अथ गुच्छककण्डवृत्तम्

नसौ जनौ जलौ क्रमात् प्रयोजितौ बुधा यदा ।
तदा तु चण्डवृत्तकं विभावयन्तु गुच्छकम् ॥ ३७ ॥

[व्या०] अयमर्थ:—हे बुधा ! यदा नसौ-नगणसगणौ, अथ च जनौ-जगणनगणौ, ततश्च जलौ-जगणलघू क्रमात्-प्रतिपदं प्रयोजितौ भवतः, तदा तु गुच्छकं नाम चण्डवृत्तं विभावयन्तु-कुर्वन्तु । अत्रोभयत्र स्वार्थे कः ॥३७॥ किञ्च-

षोडशार्णं पदं चात्र पदान्यपि च षोडश ।
सानुप्रासानि यमकैरङ्कितानि च गुच्छके ॥ ३८ ॥

[व्या०] सुगमम् । यथा-

जय जलदमण्डलीद्युतिनिवहसुन्दर
स्फुरदमलकौमुदीमृदुहसितबन्धुर
व्रजहरिणलोचनावदनशशिचुम्बक
प्रचलतर[1]खञ्जनद्युतिविलसदम्बक
स्मरसमरचातुरीनिचयवरपण्डित
प्रणययुतराधिकापटिमभरमण्डित
क्वणदतुलवंशिका[2]हृतपशुपयौवत
स्थिरसमरमाधुरीकुलरमितदैवत

१ गोवि प्रचुरतर- । २. क- वंशिका ।

ग्रथितशिखिचन्द्रकस्फुटकुटिलकुन्तल
श्रवणतट[1]सञ्चरन्मणिमकरकुण्डल
प्रथित तव[2] ताण्डवप्रकटगतिमण्डल
द्विजकिरणधोरणीविजितसिततण्डुल
स्फुरित तव दाडिमीकुसुमयुतकर्णक[3]
छदनवरकाकलीहृतचटुलतर्णक
[4]प्रकटमिह मामके हृदि वससि माधव
स्फुरसि ननु संततं सकलदिशि मामव[4]
धीर !

पुनागस्तवकनिबद्धकेशजूटः,
कोटीरीकृतवरकेकिपक्षपूटः ।
पायान्मां मरकतमेदुरः स तन्वा,
कालिन्दीतटविपिनप्रसूनधन्वा ।[5]
गर्गप्रिय जय भर्गस्तुत रस
सर्गस्थिरनिज-वर्गप्रवणित
धीर !

दनुजवधूवैधव्यव्रतदीक्षाशिक्षणाचार्यः ।
स जयति विदूरपाती मुकुन्द तव शृङ्गनिर्घोषः ।

सविरुदं गुच्छाख्यं चण्डवृत्तम् ।३३।

३४. अथ कुसुमञ्चण्डवृत्तम्

चतुर्भिर्नगणैर्यत्र पदं यमकितं भवेत् ।
अनन्तनेत्रप्रमित कुसुम तत्प्रकीर्तितम् ॥ ३६ ॥

[व्या०] अनन्तं–शून्यं नेत्रं–द्वयं ताभ्यां प्रमितं–गणितं पदं यत्र तत्, विंशतिपदमित्यर्थः । शेषं सुगमम् ॥३६॥

यथा–

कुसुमनिकरनिचितचिकुर[6]
नखरविजितमणिजमुकुर
सुभटपटिमरमितमथुर
विकटसमरलटनचतुर

१. गोवि. श्रवणतट- । २. गोवि. प्रथितनव- । ३. गोवि. स्फुरितवरदाडिमीकुसुमयुग-कर्णकः । ४-४. गोवि. पंक्तिद्वयं नास्ति । ५. क. नत्वा । ६. गोवि. रचितचिकुर ।

समदभुजगदमनचरण
निखिलपशुपनिचयशरण[1]
[2]अमलकमलविशदचरण
सकलदनुजविलयकरण[2]
मुदितमदिरमधुरनयन
शिखरिकुहररचितशयन
रमितपशुपयुवतिपटल
मदनकलहघटनचटुल
विषमदनुजनिवहमथन
भुवनरसदविशदकथन
कुमुदमृदुलविलसदमल-
हसितमधुरवदनकमल
मधुपसदृशविचलदलक
मसृणघुसृणकलिततिलक
निभृतमुपितमथितकलश
सततमजित मनसि विलस
धीर !

सखि! चातकजीवातुर्माधव सुरकेकिमण्डलोल्लासि ।
तव दैत्यहंसभयद श्रृङ्गाम्बुदगर्जितं जयति ॥

पुरुषोत्तम वीरव्रत यमुनाद्भुततीरस्थित
मुरलिध्वनिपूरक्रिय सुरभीव्रजनादप्रिय !
वीर !

जगतीसभावलम्बः स तव जयत्यम्बुजाक्ष दोःस्तम्भः ।
रभसाद्बिभेद दनुजान् प्रतापनृहरिर्यतोऽभ्युदितः ॥

सविरुदं कुसुममिदम् ।३४।

एते महाकलिकारूपस्य चण्डवृत्तस्य नवभिर्मताः[3] प्रभेदाः । इत्येवं चतुस्त्रिंशतिः ३४ प्रभेदाः ।

[4]इति श्रीवृत्तमौक्तिके विरुदावल्यां महाकलिकारूप-पुरुषोत्तमादिकुसुमान्तं[4] सविरुदमवान्तरं चण्डवृत्तप्रकरणं द्वितीयम् ।२।

---

१. क. चरण । २-२. गोवि- पंक्तिद्वयं नास्ति । ३. ख. नवगर्भिताः । ४-४. पंक्तिरियं नास्ति क. प्रतौ ।

[विरुदावल्या तृतीय त्रिभङ्गी-कलिकाप्रकरणम्]

१. अथ दण्डकत्रिभङ्गी कलिका

अथ त्रिभङ्गीकलिकासु दण्डकत्रिभङ्गीकलिकागर्भित तद्गतैव[1] लक्ष्यते। तद्भङ्गाना[2] बाहुल्यादेवास्या कलिकाया दण्डकत्रिभङ्गीति सज्ञा।

अथाऽस्या लक्षण सम्यक् सोदाहरणमुच्यते।
भङ्गबाहुल्यतश्चास्या सज्ञाप्यान्वर्थिका[3] भवेत् ॥१॥

यथा–

नगणयुगलादनन्तरमिह चेद् रगणा भवन्ति रन्ध्रमिता।
विरुदावल्या कलिका कथितेय दण्डकत्रिभङ्गीति ॥ २ ॥

[व्या०] रन्ध्राणि–नव कथिता इत्यत्र सविस्त्यध्याहार। भङ्गबहुत्वाच्चास्या दण्डकत्रिभङ्गी सज्ञेति फलितोऽर्थ। अत्र च पदरचनाया पदविन्यास स्वेच्छया भवतीति सिंहावलोकनरीत्यावगन्तव्यम्। यथा–

चित्र मुरारे सुरवैरिपक्ष-
स्त्वया समन्तादनुबद्धयुद्ध।
अमित्रमुच्चैरविभिद्य भेद,
मित्रत्य कुर्वन्नमित[4] प्रयाति ॥

श्रितमघजलधेर्वहित्र चरित्र सुचित्र विचित्र
फणित्र समित्र पवित्र लवित्र रुजाम्।
जगदपरिमितप्रतिष्ठ पटिष्ठ बलिष्ठ गरिष्ठ
[5]अदिष्ठ सुनिष्ठ लघिष्ठ दविष्ठ[5] धियाम्।
निखिलविलसितेऽभिराम सराम मुदा मञ्जुदाम-
श्रभाम ललाम धृतामन्दधाम नये।
मधुमथनहरे मुरारे पुरारेरपारे ससारे
विहारे सुरारेरुदारे च दारे प्रभुम्।
स्फुरितमिनसुतातरङ्गे विहङ्गेशरङ्गेण गङ्गे-
ऽप्टभङ्गे भुजङ्गेन्द्रसङ्गे सदङ्गन भो।

---

१. ख अन्तर्गतैव। २ क. तद्भानां। ३. ख. सज्ञाप्यार्थिको। ४. गोवि कुर्वन्नमृत। ५-५. गोवि. वरिष्ठ अदिष्ठ सुनिष्ठ दविष्ठ।

शिखरिवरदरीनिशान्तं प्रयान्तं सकान्तं विभान्तं
नितान्तं च कान्तं प्रशान्तं कृतान्तं द्विषाम् ।
दनुजहर भजाम्यनन्तं सुदन्तं नुदन्तं दृगन्तं
हसन्तं 'भजन्तं चरन्तं' भवन्त सदा ।
वीर !

पीत्वा बिन्दुकणं मुकुन्द भवतः सौन्दर्यसिन्धोः सकृत्-
कन्दर्पस्य वशं गता विमुमुहुः के वा न साध्वीगणाः ।
दूरे राज्यमयन्त्रितस्मितकला भ्रूवल्लरीताण्डव-
क्रीडापाङ्गतरङ्गितप्रभृतयः कुर्वन्तु ते विभ्रमाः ॥

चारुतट - रासनट
गोपभट पीतपट
पद्मकर दैत्यहर
कुञ्जचर वीरवर
नर्ममय कृष्ण जय
नाथ !

संसाराम्भसि दुस्तरोर्मिगहने गम्भीरतापत्रयी-
कुम्भीरेण गृहीतमुग्रगतिना[2] क्रोशन्तमन्तर्भयात् ।
दीप्रेणाद्य सुदर्शनेन विबुधबलाग्निच्छिदाकारिणा,
चिन्तासन्ततिरुद्धमुद्धर हरे मच्चित्तदन्तीश्वरम् ।

इति सविरुदा दण्डकत्रिभङ्गी कलिका ।१।

२. अथ सम्पूर्णा विदग्धत्रिभङ्गी कलिका

अथापरा सम्पूर्णा विदग्धत्रिभङ्गी कलिका लक्ष्यते । यथा–

युग्मे भङ्गस्तनौ त्र्युक्तौ भौ चान्ते यत्र मिश्रितौ ।
वसुसख्यं परे ह्यत्र[3] पदे सा स्यात् त्रिभङ्गिका ॥ ३ ॥
विदग्धपूर्वा सम्पूर्णा कलिकाऽतिमनोहरा ।
आद्यान्ताशी.पद्ययुक्ता—

[व्या०] एतद् युक्तं भवति । यत्र पदे–यस्यां कलिकायां वा युग्मे–द्वितीयाक्षरे भङ्गो भवति । तथा तनौ–तगणनगणौ स्तः । तौ च त्र्युक्तौ–वारत्रययुक्तौ चेत् । अन्ते–तत्र अयान्ते[4] मिश्रितौ–

१. गोवि. वसन्तं भजन्तं । २. गोवि. मतिना । ३. ख. भवेद् यत्र । ४. ख तनत्रयान्ते ।

सलग्नौ भो-भगणौ च यदि स्त । यत्र चैवविध यमुसत्य पद भवेत्, सा विदग्धपूर्वा–विदाध-शब्दपूर्वा सम्पूर्णा प्रथमलक्षितलक्षणविलक्षणा अतिमनोहरा विदग्धत्रिभङ्गीकलिका स्यात् इत्यन्वय । अष्टपदत्वमेव पूर्वोक्तताया सकाशात् वैलक्षण्यं स्फुटमेव लक्षयति । एतदेव चास्या सम्पूर्णत्वमिति । किञ्च, आद्यन्तयो कलिकाया इति शेष, आशी पद्ययुक्ता–आशी पद्याभ्या युक्ता आशीर्वादयुक्तपद्याभ्यां सयुक्ता इत्यर्थ । आद्यन्तपदसाहित्यं च तत्कलिकायुक्तेषु पूर्वोक्तेषु सर्वेषु चण्डवृत्तेषु ज्ञेय सुधीभिरित्युपदेशरहस्य, अग्रेऽपि तथैव वक्ष्यमाणत्वादिति । इयमेव च खण्डावलीति व्यपदिश्यते, तथा चाग्रे तथैव सक्षयिष्यमाणत्वादिति । यथा–

उद्वेलत्कुलजाभिमानविकचाम्भोजालिशुभ्राशव[1]
केलीकोपकषायिताखिलललनामानाद्रिदम्भोलय ।
कन्दर्पज्वरपीडितव्रजवधूसन्दोहजीवातवो,
जीयासुर्भवतश्चिर यदुपते स्वच्छा कटाक्षच्छटा ॥[2]

चण्डीप्रियनत चण्डीकृतवलरण्डीकृतखलवल्लभ वल्लव
पट्टाम्बरधर भट्टारक वककुट्टाक ललितपण्डितमण्डित
नन्दीश्वरपति-नन्दीहितभर सदीपितरससागर नागर
अङ्गीकृतनवसङ्गीतक वर-भङ्गीलवहृतजङ्गमलङ्गिम
गोत्राहितकर गोत्राहितदय गोत्राधिपधृतिशोभनलोभन
वन्यास्थितबहुकन्यापटहर धन्याशयमणिचोर मनोरम
शम्पारुचिपट सम्पालितभव-कम्पाकुलजन फुल्ल समुल्लस
उर्वीप्रियकर खर्वीकृतखल दर्वीकरपतिगर्वितपर्वत
वीर !

पिष्ट्वा सङ्ग्रामपट्टे पटलमकुटिले[3] दैत्यगोकण्टकाना,
क्रीडालोठीविघट्टे स्फुटमरतिकर नैष्ठिकीचारकाणाम्[4] ।
वृन्दारण्य चकाराखिलजगदगदङ्कारकारुण्यकारो[5],
य सञ्चारोचित व सुखयतु स पटु कुञ्जपट्टाधिराज ।

पिच्छलसदघननीलकेश
चन्दनचर्चितचारुवेश
खण्डितदुर्जनभूरिमाय,
मण्डितनिर्मलहारिकाय ।
धीर !

---

१ क शुभ्राशव । २ गोवि पद्य नास्ति । ३ क पटलमकुलिते । ४ गोवि चारकाणाम् । ५ गोवि कारुण्यधार ।

गीर्वाण स्फुटमखिल विवर्द्धयन्त,
निर्वाण दनुजघटासु सघटय्य ।
कुर्वाण व्रजनिलय निरन्तरोद्यत्-
पर्वाण मुरमथन स्तुवे भवन्तम् ॥

द्वितीया सम्पूर्णा सविरुदा विदग्धत्रिभङ्गी कलिका ।२।

एते चण्डवृत्तस्य गर्भितान्तर्गताः प्रभेदा ।

अथ मिश्रिताः

तत्र–

१. मिश्रकलिका

—मिश्रिता चाथ कथ्यते ॥ ४ ॥
आद्यन्ताशी पद्ययुक्ता गद्याभ्या चापि सयुता ।
मध्यत कलिका कार्या सदण्डैर्भनजैर्गणै ॥ ५ ॥
विरुदेनान्विता चापि रमणीयतरा मता ।
षट्पदा सापि विज्ञेया छन्द शास्त्रविशारदै ॥ ६ ॥

[व्या०] अस्यार्थ —अथ–विदग्धत्रिभङ्गीकलिकानन्तर मिश्रिता मिश्रकलिका कथ्यते–उच्यत इत्यर्थ । ता विशिनष्टि—कलिकाया आद्यन्तयोराशी पद्याभ्या युक्ता, तथा आद्यन्तयोरेव गद्याभ्या च सयुता मध्यतस्तयोरित्यर्थ, कलिका कार्या । कलिका विशिनष्टि सदण्डै -दण्डो लघु[1] तत्सहितै भनजै –भगणनगणजगणैरन्विता सयुक्ता इत्यर्थ ॥४ ५॥

तथा विरुदेन चाप्यन्विता । अतएवातिरमणीयतरा मता–सम्मता । साऽपि च छन्द-शास्त्रविशारदै षट्पदा विज्ञेया इत्युपदिश्यत इति वाक्यार्थ । विरुदसाहित्य च विदग्ध-त्रिभङ्गीकलिकालक्षणकारिकायामप्यवधेय सुधीभिरिति शिवम् ॥६॥

अत्र चादौ आशी पद्य, ततो गद्य, ततश्च षट्पदीकलिका, तदनन्तरमपि गद्य, ततो विरुद, अनन्तरमपि गद्यमेव । ततोऽपि विरुद धीर सम्बोधनोपलक्षित, सर्वान्ते आशी पद्यम्, इति क्रमेणोक्तलक्षणोपलक्षिता मिश्रा कलिका कार्या, इति फलितोऽर्थ ।

यथा–

उदञ्चदतिमञ्जुलस्मितसुधोर्मिलीलास्पद,
तरङ्गितवराङ्गनास्फुरदनङ्गरङ्गाम्बुधि ।
दृगिन्दुमणिमण्डलीसलिलनिर्झरस्यन्दनो,
मुकुन्द मुखचन्द्रमास्तव तनोतु शर्मातुलम् ।[2]

---

१. ख लघ्व । २. गोवि तनोति शर्माणि न ।

दुष्टदुर्दम[१]रिष्टकण्ठीरवकण्ठविखण्डनसेलदष्टापद नवीनाष्टापदविस्पर्द्धिपदाम्वरपरीत गरिष्ठगण्डशैलसपिण्डवक्ष पट्ट पाटव—

दण्डितचटुलभुजङ्गम
कन्दुकविलसितलङ्घिम
भण्डिल[१]विचकिल[२]मण्डित
सङ्गरविहरणपण्डित
दन्तुरदनुजविडम्बक
कुण्ठितकुटिलकदम्बक ।

खचिताखण्डलोपलविराजदण्डजराजमणिम[य][३]कुण्डलमण्डितमञ्जुलगण्डस्थलविशङ्कटमाण्डीरतटीताण्डवकलारञ्जितसुहृन्मण्डल

नन्दविचुम्बित-कुन्दनिभस्मित
गन्धकरम्बित शन्दविवेष्टित
तुन्दपरिस्फुर-दण्डकडम्बर ।

[४]दुर्जनभोजेन्द्रकण्टककण्ठकन्दोद्धरणो[४]द्दामकुद्दाल विनम्रविपद्दारुणध्वान्तविद्रावणमार्तण्डोपमकृपाकटाक्ष शारदचन्द्र[५]मरीचिमाधुर्यविडम्बितुण्डमण्डल

लोष्ठीकृतमणि कोष्ठीकुलमु[नि-
गोष्ठीश्वर मधुरोष्ठीप्रिय पर-
मेष्ठी][६]डित परमेष्ठीकृतनर
धीर ।

उपहितपशुपालीनेत्रसारङ्गतुष्टि,
प्रसरदमृतधाराधोरणीधौतविश्वा ।
पिहितरविसुधांशु प्रांशुतापिञ्छरम्या,
रमयतु वकहन्तु[७] कान्तिकादम्बिनी व ।

इति मिश्रकलिका ।२।

अथ चण्डवृत्तस्य मिश्रित प्रभेद । एवमन्येपि ।

इति विरुदावल्या चण्डवृत्तमेव दण्डकत्रिभङ्ग्याद्यवान्तर-
त्रिभङ्गीकलिका प्रकरण तृतीयम् ।३।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके सलक्षण चण्डवृत्तप्रकरण समाप्तम् ।१।

---

१. ख तण्डिल । २ क. विचक्ति । ३ गोवि मणिम[य]नास्ति । ४ गोवि दुर्जनभोजेन्द्रकटककदम्बोद्धरणो । ५. गोवि. शारदाचण्ड- । ६ [-] कोष्ठगतोंशो नास्ति क प्रतौ । ७ क. ख. वहकतु ।

[विरुदावल्यां साधारणमत चण्डवृत्त चतुर्थप्रकरणम्]

अथ साधारणं चण्डवृत्तम्

तत्र–

स्वेच्छया तु कलान्यासः साधारणमिद मतम् ।
न च सप्तदशादूर्ध्वं न वर्णत्रितयादधः ॥ १ ॥
क्रियते यैर्गणैराद्यान्तैरेव सकलाः कलाः ।
प्रस्वादिवर्णसयोगेप्यत्र वर्णस्य लाघवम् ॥ २ ॥

[व्या०] अस्यार्थः—स्वेच्छया इत्यादि सुगमम् । तत्राक्षरनियममाह—न चेति । न च सप्तदशावर्णादूर्ध्वं न वा वर्णत्रितयादधः कला कार्या इति शेषः । किञ्च नियमान्तरमाह—क्रियत इति । आद्यात्– [illegible] त् यैरेव गणैः कलाप्रारम्भः क्रियते तैरेव सकला अपेक्षिताः कला. कर्त्तव्या इति शेषः । अपि च 'प्रस्वादीति' प्रस्वेति प्रादिशब्देन-ह्र-प्र स्कु-स्मि-स्म-म्वेत्यादीना सयुक्तानां वर्णाना सयोगेपि सति अत्र छन्द.शास्त्रे तत्प्रकरणस्थले वा पूर्वपूर्ववर्णस्य लाघवं–लघुत्वं अवगन्तव्यमित्युत्सर्गः ।

तत्र अक्षरे, यथा–

अङ्गण रिङ्गण ।

इत्यादि । संयुक्ते, यथा–

प्रणयप्रवण ।

इत्यादि । एव गणान्तरेपि बोद्धव्यम् ।

चतुर्वर्णे सर्वलघौ यथा–

विधुमुख कृतमुख ।

इत्यादि । एव प्रस्तारान्तरेपि सर्वलघ्वादिस्थले स्वेच्छातः कलान्यासोद्रष्टव्यः ।

मात्रावृत्ते, यथा–

चतुष्कलद्वयेनापि कला जगणवर्जिताः ।

[व्या०] कर्त्तव्या इति शेषः । यथा—

तारापतिमुख सारायितमुख ।

इत्यादि ।

प्रस्तारद्वितयेप्येव कलान्यासः स्वतः स्मृतः ॥३॥

[व्या०] स्वत.–स्वेच्छातो भवतीति स्मृत इत्यर्थः ॥३॥

साधारणमतं चेतद् दिङ्मात्रमिह दर्शितम् ।
विशेपस्तत्र तत्रापि नोक्तो विस्तारशङ्कया ॥ ४ ॥

[व्या०] तत्र तत्रापीति–तत्तत्प्रस्तारेपु इत्यर्थः ॥४॥

, इति विरुदावल्यामवान्तरं साधारणमतं चण्डवृत्त-प्रकरण चतुर्थम् ॥४॥

१ अथ साप्तविभक्तिकी कलिका

स्तुतिर्विधीयते विष्णो सप्तभिस्तु विभक्तिभि ।
यत्र सा कलिका सद्भिर्ज्ञेया साप्तविभक्तिकी ॥ १ ॥
अथोच्यते विभक्तीना लक्षण कविसम्मतम् ।
तत्तद्‌गणोपनिहित यथाशास्त्रमतिस्फुटम् ॥ २ ॥
भसौ तु घटितौ यत्र प्रथमा सा प्रकीर्तिता ।
नयाभ्या तु द्वितीया स्यात् तृतीया ननसा लघु ॥ ३ ॥
त्रिभिस्तैस्तु चतुर्थी स्यात् यत्र यौ पञ्चमी तु सा ।
ताभ्या तु षष्ठी विज्ञेया यत्र सौ सप्तमी तु सा ॥ ४ ॥
विहाय प्रथमा ज्ञेया सर्वा साधारणे मते ।
स्थितास्तु गणसाम्येन स्वेच्छयैव यत [1] कला ॥ ५ ॥
उदाहरणमेतासा क्रमतो वृत्तमौक्तिके ।
कथ्यते कविसन्तोषहेतवे* हरिकीर्तने ॥ ६ ॥

[व्या०] सुलभार्थास्तु कारिका इति न व्याख्यायन्ते । क्रमेणोदाहरणानि, यथा-

य स्थिरकरुण स्तर्जितवरुण ।
तर्पितजनक सम्मदजनक ॥ १ ॥
प्रणतविमाय जगुरनपायम् ।
घनरुचिकाय सुकृतिजना यम ॥ २ ॥
सुजनकलितकथनेन प्रबलदनुजमथनेन ।
प्रणयिषु रतमभयेन प्रकटरतिषु किल येन ॥ ३ ॥

यस्मै परिध्वस्तदुष्टाय चक्रु स्पृहा माल्यदुष्टाय [2] ।
दिव्या स्त्रिय केलितुष्टाय कन्दर्परङ्गण पुष्टाय ॥ ४ ॥

धृतोत्साहपूराद द्युतिक्षिप्तसूरात ।
यतोऽरिर्विदूराद भय प्राप शूरात् ॥ ५ ॥
यस्योज्ज्वलाङ्गस्य सञ्चार्यपाङ्गस्य ।
वेणुर्ललामस्य हस्तेऽभिरामस्य ॥ ६ ॥
स्मितविस्फुरित ऽजनि यत्र हित ।
रतिरुल्लसित सदृशा ललिते ॥ ७ ॥

इति सप्तविभक्तय ।*

- . चिह्नान्तर्गतोयमशो नास्ति ख प्रतौ । १ ख यता । २ गोवि जुष्टाय ।

*अथ सम्बुद्धि

तनौ [तु] घटितौ यत्र तत्सम्बोधनमीरितम् ।
एव सम्बोधनान्तेय विभक्ति सप्तकीर्त्तिता ॥ ७ ॥

यथा–

स त्व जय ! जय ! दुष्टप्रतिभय !
भक्तस्थिलदय[1] ! लुप्तव्रजभय ! ॥ ८ ॥

वीर !

मित्रकुलोदित नर्मसुमोदित
रञ्जितराधिक शर्म्मभराधिक ।

विरुदमिदम्—

धीर !

हृसोत्तमाभिलषिता सेवकचक्रेषु दर्शितोत्सेका ।
मुरजयिन कल्याणी करुणाकल्लोलिनी जयति ।

इति साप्तविभक्तिकी कलिका ।१।

२ अक्ष अक्षमयी कलिका

अकारादि-क्षकारान्त-मातृकारूपधारिणी ।
विष्णो स्तुतिपरा सेय, कलिकाऽक्षमयी मता ॥ ८ ॥
अत्र स्युस्तु*रगा सर्वे गणा जगणवर्जिताः ।
मातृकावर्णघटिता क्रमात् भगवत स्तुतौ ॥ ६ ॥

[व्या०] अस्यार्थं — अत्राक्षमयी भगवत स्तुतौ सर्वे तुरगा –चतुष्कला कर्ण द्विजगण भगण-सगणा, जगणवर्जिता गणा क्रमात् मातृकावर्णेषु यथायम घटिताश्चेत स्युस्तदा पूर्वोक्तविशेषण-विशिष्टा सेय अक्षमयी कलिका मता–सम्मता इति पूर्वश्लोकेन अन्वय । मात्रावृत्ते तु 'चतुष्कल-द्वयेनापि कलाजगणवर्जिता' इत्यत्रैव उक्तत्वात् अक्षमयीमात्रावृत्तमेवेति सूचितम समुल्लसयाम । सर्वत्र च मात्रावृत्तेष्वेव जगणस्य हेयत्वेन निर्देशाच्च । यथा–

मधुरेश ! माधुरीमय माधव मुरलीमतल्लिकामुग्ध ।
मम मदनमोहन मुदा मर्दय मनसो महामोहम् ॥

अच्युत जय जय आर्त्तकृपामय ।
इन्द्रमखार्दन ईतिविशातन ॥ १ ॥
उज्ज्वलविभ्रम ऊर्जितविक्रम ।
ऋद्धिधुरोद्धुर[2] ऋभुदयापर ॥ २ ॥

१. गोवि भक्तस्थिरदय । २. गोवि धुरोद्धर । *-*चिह्नगतोंऽशो नास्ति स प्रतौ ।

लृदिवकृपेक्षित लृवदलक्षित ।
एधितवल्लव ऐन्दवकुलभव ॥ ३ ॥
ओज:स्फूर्जित औग्र्यविवर्जित ।
अंसविशङ्कट अष्टापदपट ॥ ४ ॥

इति षोडशस्वरादयः ।

अथ कादयः पञ्चवर्गाः

कङ्कणयुतकर खण्डितखलवर[1] ।
गतिजितकुञ्जर घनघुसृणाकर[2] ॥ ५ ॥
हृतमुरलीरत चलचिल्लीलत ।
छलितसतीशत जलजोद्भवनत[3] ॥ ६ ॥
झषवरकुण्डल ञोड्डूषितदल ।
टङ्कितभूधर ठसमाननवर[4] ॥ ७ ॥
डमरघटाहर ढक्कितकरतल ।
णखरघृताचल तरलविलोचन ॥ ८ ॥
थूत्कृतखञ्जन दनुजविमर्द्दन ।
धवलावर्द्धन नन्दसुखास्पद ॥ ९ ॥
पङ्कजसमपद फणिनुतिमोदित ।
बन्धुविनोदित भङ्गुरितालक ॥ १० ॥
मञ्जुलमालक—

इति कादिपञ्चवर्गाः ।

अथ यादयः

—यष्टिलसद्भुज
रम्यमुखाम्बुज ललितविशारद ॥ ११ ॥
वल्लवरङ्गद शर्मदचेष्टित ।
षट्पदवेष्टित सरसीरुहधर ॥ १२ ॥
हलधरसोदर क्षणदगुणोत्कर ॥ १३ ॥

इति यादयः ।

वीर ।

---

१. क. खलपर । २. गोवि. घनघुसृणाम्बर । ३. गोवि. जलजोद्भवनुत । ४. गोवि. ठनिभाननवर ।

कर्णे कल्पितकर्णिकः कलिकया कामायितः कान्तिभिः,
कान्तानां किलकिञ्चितं किसलयं कीलालधिः कीर्त्तिभिः ।
कुर्वन् कूर्दनकानि केशरितया कैशोरवान् कोटिशः,
कोपीकौकुलकंसकुष्टकृतिकः[1] कृष्णः क्रियात् कांक्षितम् ।
सौरीतटचर गौरीव्रतपर-
गौरीपटहर चौरीकृतकर ।
धीर !
प्रेमोरुहट्टहिण्डक कक्खटसुभटेन्द्रकण्ठकुट्टाक ।
कुरु कौंकुमपट्टाम्बर भट्टारक ताण्डवं हृदि[2] मे ॥

इति प्रसमयी कलिका ।२।

३. अथ सर्वलघुककलिका

अथ सर्वलघुकं कलिकाद्वयं युगपदेव लक्ष्यते । तत्र–

नगणैर्पञ्चभिर्यत्र लघ्वन्तैर्वापि तैः पुनः ।
क्रमेण पञ्चदशभिर्वर्णैः षोडशभिस्तथा ॥ १० ॥
प्रस्तारद्वयमन्त्यं स्याल्लघुभिः सकलाक्षरैः ।
तत्सर्वलघुकं प्रोक्तं कलिकाद्वयमुत्तमम् ॥ ११ ॥

[व्या०] अस्यायमर्थः—यत्र पञ्चभिः–पञ्चसंख्याकैर्नगणैः–त्रिलघुकैर्गणैः पदं यत्र, वा–पुनः लघ्वन्तैर्वापि तैरेव पञ्चभिर्नगणैः–क्रमेण पञ्चदशभिर्वर्णैः षोडशभिर्वा पदं भवति । वा शब्देन सप्तदशाक्षरमपि पदं कर्त्तव्यम् । एतदूर्ध्वं तु न कर्त्तव्यमेवेत्युपदेशः । न च सप्तदशा-दूर्ध्वमित्यत्रैव निषेधस्य उक्तत्वात् । स्वेच्छया कलाभ्यासस्तु सप्तदशवर्णपर्यन्तमेव साधारण-मते चमत्कारकारी नैतदूर्ध्वमिति, प्रस्तारद्वयेपि सर्वलघुभिस्समस्तैर्वर्णैर्यदन्त्यं प्रस्तारद्वयं भवति तत् सर्वलघुकमुत्तमं कलिकाद्वयं भवतीत्यर्थः ।

तत्र पञ्चदशाक्षरी सर्वलघुका कलिका यथा–

गोपस्त्रीविद्युदालीवलयितवपुषं नन्दगोपादिकेकि-
व्यूहानन्दैकहेतुं दनुजशतभयोद्दामदावाग्निशान्तम् ।
ईषद्धास्याम्बुधारावितरणभृतसद्बन्धुचेतस्तडागं,
चित्तं श्रीकृष्ण मेऽद्य श्रय शरणमहो दुःसहाहोपशान्त्यै[3] ।
चरणचलनहतजठरशकटक[4]
रजकदलन मदागतपरकटक

---

[1] गोवि. कोपीकोकुरवंसकष्टकृतिकः । [2] क. हृदि । [3] गोवि. पूर्णपद्यं नास्ति ।
[4] गोवि. चरठ शकटक ।

नटनघटनलसदगवरकटक
सकनकमरक्तमयनवकटक ॥ १ ॥

इति पञ्चदशाक्षरी सर्वलघुका कलिका ।

अथ षोडशाक्षरी सर्वलघुका कलिका

कपटरुदितनटदकठिनपदतट-
विघटितदधिघट निबिडितसुशकट
रुचितुलितपुरटपटलरुचिरपट-
घटितविपुलकट[1] कुटिलचिकुरघट ।
रविदुहितृनिकटलुठदजठरजट-[2]
विटपनिचितवटतटपटुतरनट-
निजविलसितहठविघटितसुविकट-
चटुलदनुजभट[3] जय युवतिपु शठ ।
धीर !

स्फुटनाटयकडम्बदण्डित-प्रढिमोड्डामर[4]दुष्टकुण्डली ।
जय गोष्ठकुटुम्बसवृतस्त्वमिडाडिम्बकदम्बडुम्बक ॥

रशनमुखर सुखरनखर
दशनशिखर-विजितशिखर ।
वीर !

विवृतविविधबाधे भ्रान्तिवेगादगाधे,
धवलित[5]भवपूरे मज्जतो मेऽविदूरे ।
अशरणगणबन्धो हा[6] कृपाकौमुदीन्दो,
सकृदकृतविलम्ब देहि हस्तावलम्बम् ॥

नामानि प्रणयेन ते सुकृतिना तन्वन्ति तुण्डोत्सव,
धामानि प्रथयन्ति हन्त जलदश्यामानि नेत्राञ्जनम् ।
सामानि श्रुतिशष्कुली मुरलिकाजातान्यलकुर्वते,
कामा निर्वृतचेतसामिह विभो ! नाशापि न शोभते ॥

इति षोडशाक्षरी सर्वलघुका कलिका ।३।

---

१. गोवि विपुलघट । २. गोवि. जरठजट । ३ गोवि. चटुलदनुजघट । ४. क. घटितोडामर । ५. गोवि बलवति । ६. गोवि. हे ।

अथ सर्वासु कलिकासु स्थिताना विरुदाना युगपदेव लक्षणमुच्यते—

वसुषट्पङ्क्तिरविभिर्मनुभिश्चापि सर्वत. ।
कलिकासु कवि कुर्याद् विरुदाना तु कल्पनम् ॥ १२ ॥

[व्या०] अस्यार्थ —सर्वासु कलिकासु वस्वादिभि पञ्चभि सख्यासकेतैश्चकारोक्तैरपि कविर्विरुदाना कल्पन कुर्यात । तथा हि–कस्याश्चित् कलिकायामष्टकलिक विरुद, कस्याश्चित् षट्कलिक विरुद, अपरस्या दशकलिक विरुद, अन्यस्याञ्च द्वादशकलिक विरुद, कस्याश्चित् कलिकाया चतुर्दशकलिक विरुदम् । कुत्रापि चकारोपदिष्ट च विरुदत्रितयमिति क्रमेण सर्वत्र विरुदकल्पन कविना कार्यमित्युपदिश्यते ॥१२॥

किञ्च–

धीर-वीरादिसवृद्धया कलिका विरुदादिकम् ।
देव-भूपतितत्तुल्यवर्णनेषु प्रयोजयेत् ॥ १३ ॥
सस्कृतप्राकृतश्रव्यै शौर्यवीर्यदयादिभि ।
कीर्तिप्रतापप्राधान्यै कुर्वीत कलिकादिकम् ॥ १४ ॥

[व्या०] सुगमम् ॥१३, १४॥

अपि च–

गुणालङ्कारसहित सरस रीतिसयुतम् ।
मैत्र्यानुप्राससच्छब्दाडम्बर[1] जीवित द्वयो ॥ १५ ॥

[व्या०] द्वयो –कलिकाविरुदयोरित्यर्थ ॥१५॥

कलिकाश्लोकविरुदत्रिक त्रिशत्त्रिकावधि ।
पञ्चत्रिकोर्ध्वं विरुदावली कविभिरिष्यते ॥ १६ ॥

[व्या०] अस्यार्थ —अस्या कारिकाया सम्पूर्णा विरुदावलीं लक्षयति—विरुदावली तावत् कलिकाश्लोकविरुदैस्त्रिभि सम्पद्यते । तत्र कलिकाश्लोकविरुदमिति त्रिक, पञ्चत्रिकोर्ध्व–पञ्चत्रिक, पञ्चदश तदूर्ध्वं एतदारभ्य इत्यर्थ । कियदवधीत्यपेक्षायामुच्यते—त्रिशत्त्रिकावधि–अर्धस्त्रिशावधिश्चेत् क्रियते तदा अखण्डा विरुदावली भवति । एतादृशी विरुदावली कविभिरिष्यते वक्तुं यत्यत इत्यर्थ । यथा श्रुतव्याख्याने तु महती विरुदावली स्यात् । तथा च पञ्चदशादारभ्य त्रिशत्त्रिकं नवतिसम्पद्यते, तत्पर्यन्त सति महती विरुदावली भवतीति । तकोचातथा व्याख्यातमस्माभिरिति सर्वं समञ्जसम् ॥१६॥

क्वचित्तु कलिकास्थाने केवल गद्यमिष्यते ।
पदमाद्यन्तयोराशी. प्रधान सुमनोहरम् ॥ १७ ॥
त्रिचतुःपञ्चकलिका श्लोकास्तावन्त एव हि ।

---

१. ल. दुबाडम्बरं ।

[व्या०] इति, सार्द्धेन श्लोकेन विरुदावलीलक्षणे कस्यचिन्मतं उपन्यस्यति। क्वचित्तु–कस्मादिचत् कलिकायां-कलिकास्थाने गद्यमेवोभयत्र केवलं सविरुदं वा भवतीतीष्यते। किञ्च, आद्यन्तयो–कलिकाविरुदयो, आशी प्रधान–आशीर्वादोपलक्षितं पद्यमतिसुमनोहरं भवतीति च[1] ॥१७॥

[व्या०] कियन्त्य कलिका, कियन्तश्च श्लोका कार्या इत्यपेक्षायामुच्यते त्रिचतु-पञ्चकलिका स्वेच्छया कर्त्तव्या। श्लोका अपि तावन्त एव हि स्वेच्छयैव विधेया इत्युपदेश[2]।

एतत् सर्वं यथास्थानमस्माभि समुदाहृतम् ॥ १८ ॥

[व्या०] सुगमम् ॥१८॥

विरुदावलीपाठफलमुपदिशति—

रम्यया विरुदावल्या प्रोक्तलक्षणयुक्तया।
स्तूयमान प्रमुदित श्रीगोविन्द[3] प्रसीदति ॥ १९ ॥

श्री[4]

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके विरुदावली-
प्रकरणं नवमम् ॥९॥



१. ख 'च' नास्ति। २. ख इत्युपेक्षायामुच्यते। ३. गोवि. वासुदेव। ४ ख. 'श्री' नास्ति।

दशमं खण्डावली-प्रकरणम्

अथ खण्डावली

आशीःपद्यं यदाद्यन्तयोः[1] स्यात् खण्डावली त्वसौ ।
विनैव विरुदं नानागणभेदैरनेकधा ॥ १ ॥

तत्र-

१. अथ तामरसं खण्डावली

पदे चेद् रगणः सौ च लघुद्वयनिवेशनम् ।
तदा तामरसं नाम साधारणमते भवेत् ॥ २ ॥

[व्या०] अनयोः कारिकयोरयमर्थः । यदा कलिकाया आद्यन्तयोः विरुद विनैव आशीः-पद्यं भवति तदा नानागणभेदैरनेकधा असौ खण्डावली स्यादित्यन्वयः । किञ्च, तत्र पदे चेत् रगणो भवति, अथ च सौ-सगणौ भवतः, ततो लघुद्वयनिवेशनं-लघुद्वयस्थापनं चेत्-स्यात्तदा साधारणमते स्वेच्छाकलाविन्यासलक्षणे तामरस इति नाम खण्डावली भवतीति वाक्यार्थः । १-२॥

यथा-

कलक्वणितवंशिकाविकलनागरीसागरी-
भवद्विपमघायकद्विगुणवृद्धिशुभ्रद्युति ।
पतङ्गतनयातटी-वनतटी-भवद्विग्रहं,
नवीनघनमण्डलीरुचिरमाविरास्तां महः ॥
देव !

जय वंशीरवोल्लास ! जय वृन्दावनप्रिय ! ।
जय कृष्ण ! कृपाशील ! जय लीलासुधाम्बुधे ! ॥
वीर !

छन्दसामपि दुर्गमसन्तत-
मिन्दुबिम्बसमानशुभानन !
मन्दहासविकस्वरसुन्दर !
कुन्दकोरकदन्तरुचिद्विज !

---

[1] ख. पदाद्यन्तयोः ।

सुन्दरीजनमोहनमन्मथ
चन्दनद्रवरञ्ज्यदुर.स्थल
नन्दनालयशीलितसद्गुण-
वृन्द कच्छपरूपसमुद्धृत-
मन्दराचलवाहभुजार्गल-
कन्दलीकृतसारसमर्थ पु-
रन्दरेण चिरं परिवेपितः[1]
नन्दिनायसमञ्चितदिव्यक-[2]
लिन्दशैलसुताजलजन्यर-
विन्दकाननकोपकदम्बमि-
लिन्दशावक निर्जरनायक
वृन्दया सह कल्पितकौतुक
दन्दशूकफणावलिगञ्जन
चन्द्रिकोज्ज्वलनिर्गलितामृत-
विन्दुदुर्दिनसूनृतसार मु-
कुन्ददेव कृपाल[3]दशि (दृशि) त्वयि
किं दुरापमिहास्ति ममेश्वर
किं दयावरुणालय दुर्जन-
निन्दयापि जगत्त्रयवल्लभ !
कन्दनीलिमदेहमह कुरु-
विन्दखण्डजपाकुसुमस्फुरद्
इन्द्रगोपकबन्धुरिताधर
चन्द्रकाद्भुतपिञ्छशिरस्तद-
रिन्दम त्वमतिं दयसे यदि
विन्दते सुखमेन[4]जनस्तव
वन्दिवद्गुणगानकर ध्रुव-
मिन्दयन् विदितो गरुडध्वज
नन्दयन्विजयासनयानय
नन्दगोपकुमार जयीभव ।
देव !

१. ख. परिवेवितः । २. ख. दिव्यक । ३. ख. कृपालु । ४. ख. मेव ।

जय नीपावलीवास जय वेणुसुधाप्रिय ।
जय वल्लभसौभाग्य जय ब्रह्मरसायन ।
धीर !
पशुपललनावल्लीवृन्दै श्रित करपल्लवै-
विपुलपुलकश्रेणि[1]स्फीतस्फुरत्कुसुमोद्गम ।
तपनतनयातीरे तीरे तमालतरुप्रभ,
कलयतु मम क्षेम कश्चित्तव कमलेक्षणम्[2] ॥१॥

इति तामरस नाम खण्डावली ।१।

२. अथ मञ्जरी खण्डावली

नरेन्द्रवर्जिता यत्र रचिता स्युस्तुरङ्गमा ।
आद्यन्तपदसयुक्ता मञ्जरी सा निगद्यते ॥ ३ ॥

[व्या०] अस्यार्थ —यत्र–यस्या मञ्जर्यां नरेन्द्रेण–जगणेन वर्जिता –रहिता तुरङ्गमा चतुर्विधाश्चतुष्कला रचिता यदि स्यु । किञ्च, आद्यन्तयो पदाभ्या सयुक्ता चेद् भवति तदा सा मञ्जरीति नाम्ना प्रसिद्धा खण्डावली निगद्यते छान्दसिकैरिति शेष ॥३॥

यथा–

पिशङ्गसिचयाञ्चित चटुलनैचिकीचारक[3],
चमत्कृतदृगञ्चलैश्चलुकिता[4]बलानिश्चयम् ।
ज्वलद्रुचिरचन्द्रिकाभरणचुम्बिचूडाञ्चल,
तमालदलमेचक सुचिरमाविरास्ता मह ॥
देव !
जय लीलासुधासिन्धो ! जय शीलादिमन्दिरम्[5] ।
जय राधैकसौहार्द जय कन्दर्पविभ्रम ॥
वीर !
जय जय जम्भारि भुजस्तम्भा-
कलिताहम्भा-वाहितजम्भा-[6]
मुदवष्टम्भा-पहसररम्भा-[7]
श्रय निर्दम्भा-सादितरम्भा-
लघुकुचकुम्भा दरपरिरम्भा-
निधुवनपुम्भा-वप्रारम्भा-

---

१. ख. श्रेणी । २. ख. कमलेक्षण । ३. ख. चारक । ४. ख. चुलुकिता । ५. ख मन्दिर । ६. वाहितजृम्भा । ७ ख पहसरभा ।

धिकुसुमसम्भा वनविश्रम्भा-
भापणसम्भारैरिह सम्भा-
वय न सम्भावितमुज्जृम्भा-
म्बुजसदृशाम्भापणमघुरम्भा-
रत्यालम्भा-म्यायतनम्भा-
कमुख सम्भालयत [1] किम्भा-
लाक्षरसम्भावनया देव !

कुमारपत्रपिञ्छेन विराजत्कुन्तलश्रियम् ।
सुकुमारमहं वन्दे नन्दगोपकुमारकम् ॥

धीर !

नित्य यन्मधुमन्थरा मधुकरायन्ते सुधास्वादिन-
स्तन्माधुर्यधुरीणतापरिणते प्राय परीक्षाविधिम् ।
कर्तुं स्वाघ्रिसरोरुह करपुटे कृत्वा मुहु सलिहन्,
दोला-दोलनदोलिताखिलतनु पायाद् यशोदार्भक ॥

इति मञ्जरी खण्डावली ।२।

इत्थ खण्डावलीना तु भेदा सन्ति सहस्रश ।
साकल्येन मया नोक्ता ग्रन्थविस्तरशङ्कया ॥४॥

सुकुमारमतीना च मार्गदर्शनतो भवेत् ।
विज्ञानमिति मत्वैव मया मार्ग प्रदर्शित ॥५॥

सहस्रेण मुखेनैतद् वक्तु शेपोऽपि न क्षम ।
कथमेकमुखेनाहमशेप वाङ्मय ब्रुवे ॥६॥

श्री

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके खण्डावलीप्रकरण दशमम ।१०।

श्री

---

१. ख वत्मुकं सम्भालय ।

एकादशं दोष-प्रकरणम्

अथ दोषाः

अथैतयोर्निरूप्यन्ते दोषाः कविसुखावहाः ।
यान्विदित्वैव सुकविः काव्यं कर्तुमिहार्हति ॥१॥

[व्या०] अथेति । विरुदावली-खण्डावली-कथनानन्तरमेतयोः—विरुदावली-खण्डावली-भेदयोर्दोषाः निरूप्यन्ते । शेषं सुगमम् ॥१॥

तान् आह–

अमैत्री निरनुप्रासो दौर्बल्यं च कलाहृतिः ।
असाम्प्रत हतौचित्यं विपरीतयुतं पुनः ॥ २ ॥
विश्रृङ्खलं स्खलत्तालं नवदोषान्न वेत्ति यः ।
कुर्य्याच्चैतत् तमोलोके उलूकोऽसौ भवेन्नरः ॥ ३ ॥

[व्या०] अस्यार्थः— अमैत्री–अक्षरमैत्रीराहित्यं । निरनुप्रासः–अनुप्रासाऽभावः । दौर्बल्यं–स्वल्पवर्णता इति निगदेनैव व्याख्यातं । कलाहृतिः–अन्यपदे पूर्ववर्णस्थानेऽन्यवर्णपाठः । यथा–

कमलवदन सुविमलजल ।
रञ्जितरण सञ्जितगुण ।

अयुक्तवर्णनं–हतौचित्यं । स्पष्टमुदाहरणम् । श्लिष्टवर्णस्थाने मधुरवर्णस्थितिः, मधुरस्थाने वा श्लिष्टस्थापनं, विपरीतयुतं । विश्रृङ्खलं–न्यूनाधिकश्लिष्टादिवर्णानां ग्रथनम् । स्खलत्तालं–यतिभ्रष्टं लक्षणानुसाराद् ऊह्यानि उदाहरणानि । इत्येतावन्नवदोषान् यः कविः न वेत्ति–न जानाति अविद्वांश्च यदि एतत्–पूर्वोक्तं विरुदावली–खण्डावलीलक्षणं यो नरः–कविः काव्य कुर्यात् तदा तमोलोके–गाढान्धकाराज्ञानलक्षणे लोके असौ उलूको–दिवान्धःपक्षी भवेदित्यर्थः । तस्माद् दोषज्ञाने महान् गुणः, तद्वैपरीत्ये महदनिष्टं इत्यन्वयव्यतिरेकसिद्धोऽयमर्थः । इति सर्वं निर्मलं मङ्गलम् ।

लक्ष्मीनाथतनूजेन चन्द्रशेखरसूरिणा ।
छन्द.शास्त्रे विरचितं वार्तिक वृत्तमौक्तिकम् ॥

इति दोषनिरूपण-प्रकरणमेकादशम् ॥११॥

द्वादशं अनुक्रमणी – प्रकरणम्

प्रथमखण्डानुक्रमणी

रविकर-पशुपति-पिङ्गल-शम्भुग्रन्थान् विलोक्य निर्बन्धान् ।
सद्वृत्तमौक्तिकमिदं चक्रे श्रीचन्द्रशेखरः सुकविः ॥१॥

अथाऽभिधीयते चाऽत्राऽनुक्रमो वृत्तमौक्तिके ।
अत्र खण्डद्वयं प्रोक्तं मात्रा-वर्णात्मकं पृथक् ॥ २ ॥

तत्र मात्रावृत्तखण्डे प्रथमेऽनुक्रमः स्फुटम् ।
प्रोच्यते यत्र विज्ञाते समूहालम्बनात्मकम् ॥ ३ ॥

ज्ञानं भवेदखण्डस्य[1] खण्डस्य[2] छन्दसोऽपि च ।
मङ्गलाचरण पूर्वं ततो गुरुलघुस्थितिः ॥ ४ ॥

तयोरुदाहृति पश्चात् तद् विकल्पस्य कल्पनम् ।
काव्यलक्षणवैलक्ष्ये अनिष्टफलवेदनम् ॥ ५ ॥

गणव्यवस्थामात्राणां प्रस्तारद्वयलक्षणम् ।
मात्रागणानां नामानि कथितानि ततः स्फुटम् ॥ ६ ॥

वर्णवृत्तगणानां च लक्षणं स्यात् ततः परम् ।
तद्देवता च तन्मैत्री तत्फलं चाप्यनुक्रमात् ॥ ७ ॥

मात्रोद्दिष्ट च तत्पश्चात्तन्नष्टस्याथ कीर्तनम् ।
वर्णोद्दिष्ट ततो ज्ञेयं वर्णनष्टमतः परम् ॥ ८ ॥

वर्णमेरुश्च तत्पश्चात् तत्पताका प्रकीर्त्तिता ।
मात्रामेरुश्च तत्पश्चात् तत्पताका प्रकीर्तिता ॥ ९ ॥

ततो वृत्तद्वयस्यस्य गुरोर्ज्ञानं लघोरपि ।
वर्णस्य मर्कटी पश्चात् मात्रायाश्चापि मर्कटी ॥ १० ॥

तयोः फलं च कथितं षट्प्रकारं समासतः ।
ततस्त्वेकाक्षरादेश्च षड्विंशत्यक्षरावधेः ॥ ११ ॥

प्रस्तारस्यापि संख्याऽत्र पिण्डीभूता प्रकीर्त्तिता ।
ततो गाथादिभेदानां कलासंख्या प्रकीर्त्तिता ॥ १२ ॥

---

१. ख. भवेदखण्डलस्य । २. ख. 'खण्डस्य' नास्ति ।

गाथोदाहरणं पश्चात् सप्रभेदं सलक्षणम् ।
विगाथा च तथा ज्ञेया ततो गाहू प्रकीर्तिता ॥ १३ ॥

अथोद्गाथा गाहिनी च सिंहिनी च ततः परम् ।
स्कन्धकं चापि कथितं सप्रभेदं सलक्षणम् ॥ १४ ॥

इति गाथाप्रकरणं प्रथमं वृत्तमौक्तिके ।
द्वितीयं षट्पदस्याथ द्विपथा तत्र संस्थिता ॥ १५ ॥

सलक्षणा सप्रभेदा रसिका स्यात् ततः परम् ।
अथ रोला समाख्याता गन्धाणा स्यात् ततः परम् ॥ १६ ॥

चौपैया च ततः प्रोक्ता ततो घत्ता प्रकीर्तिता ।
घत्तानन्दमतः काव्यं सोल्लालं सप्रभेदकम् ॥ १७ ॥

षट्पदं च ततः प्रोक्तं सप्रभेदमतः परम् ।
काव्यषट्पदयोश्चापि दोषाः सम्यङ् निरूपिताः ॥ १८ ॥

प्राकृते संस्कृते चापि दोषाः कविसुखावहाः ।
द्वितीयं षट्पदस्यैतत् प्रोक्तं प्रकरण त्विह ॥ १९ ॥

अथ रड्डाप्रकरणं तृतीयं परिकीर्त्यते ।
तत्र पज्झटिकाछन्दोऽडिल्लाछन्दस्ततः परम् ॥ २० ॥

ततस्तु पादाकुलकं चौबोला - छन्द एव च ।
रड्डाछन्दस्ततः प्रोक्तं भेदाः सप्तैव चास्य तु ॥ २१ ॥

रड्डाप्रकरणं चैव तृतीयमिह कीर्त्तितम् ।
पद्मावतीप्रकरणं चतुर्थमथ कथ्यते ॥ २२ ॥

तत्र पद्मावती पूर्वं ततः कुण्डलिका भवेत् ।
गगनाङ्गं ततः प्रोक्तं द्विपदी च ततः परम् ॥ २३ ॥

ततस्तु झुल्लणा-छन्दः खञ्जा-छन्दस्ततः परम् ।
शिखाछन्दस्ततश्च स्यात् मालाछन्दस्ततो भवेत् ॥ २४ ॥

ततस्तु चुलिमाला स्यात् सोरठा तदनन्तरम् ।
हाकलीमधुभारश्चाऽऽभीरश्च स्यादनन्तरम् ॥ २५ ॥

अथ दण्डकला प्रोक्ता ततः कामकला भवेत् ।
दधिरास्य ततश्छन्दो दीपकश्च ततः स्मृतम् ॥ २६ ॥

सिंहावलोकितं छन्दस्ततश्च स्यात् प्लवङ्गमः ।
अथ लीलावतीछन्दो हरिगीत ततः स्मृतम् ॥ २७ ॥

हरिगीतं[1] ततः प्रोक्तं मनोहरमतः परम् ।
हरिगीता ततः प्रोक्ता यतिभेदेन या स्थिता ॥ २८ ॥
अथ त्रिभङ्गी छन्दः स्यात् ततो दुर्मिलका भवेत् ।
हीरच्छन्दस्ततः प्रोक्तमथो जनहरं मतम् ॥ २९ ॥
ततः स्मरगृहं छन्दो मरहट्टा ततः स्मृता ।
पद्मावतीप्रकरणं चतुर्थमिह कीर्त्तितम् ॥ ३० ॥
सवैयाख्य प्रकरण पञ्चमं परिकीर्त्यते ।
तत्र पूर्वं सवैयाख्यं छन्दः स्यादतिसुन्दरम् ॥ ३१ ॥
भेदास्तस्यापि कथिता रससंख्या मनोहराः ।
ततो घनाक्षरं वृत्तमतिसुन्दरमीरितम् ॥ ३२ ॥
पञ्चमं तु प्रकरणं सवैयाख्यमिहोदितम् ।
अथो गलितकाख्यं तु षष्ठं प्रकरणं भवेत् ॥ ३३ ॥
पूर्वं गलितकं तत्र ततो विगलितं मतम् ।
अथ सङ्कलित ज्ञेयमतः सुन्दर-पूर्वकम् ॥ ३४ ॥
भूषणोपपद तच्च मुखपूर्वं ततः स्मृतम् ।
विलम्बितागलितक समपूर्वं ततो मतम् ॥ ३५ ॥
द्वितीय समपूर्वं चापर सङ्कलित ततः ।
अथापर गलितकं लम्बितापूर्वक भवेत् ॥ ३६ ॥
विक्षिप्तिकागलितक ललितापूर्वक ततः ।
ततो विषमितापूर्वं मालागलितक ततः ॥ ३७ ॥
मुग्धमालागलितकमथोद्गलितक भवेत् ।
षष्ठ गलितकस्यैतत् प्रोक्त प्रकरण शिवम् ॥ ३८ ॥
रन्ध्रसूर्यदिवसख्यात (७६) मात्रावृत्तमिहोदितम् ।
सप्रभेदं वसुद्वन्द्व-शतद्वय-(२८८) मुदीरितम् ॥ ३९ ॥
तथा प्रकरण चात्र रससख्य[2] प्रकीर्त्तितम् ।
मात्रावृत्तस्य खण्डोऽय प्रथमः परिकीर्तितः ॥ ४० ॥

इति प्रथमखण्डानुक्रमणिका ।

---

१. हरगीतं ख. ।　२. क. रससख्या ।

द्वितीयखण्डानुक्रमणी

अथ द्वितीयखण्डस्य वर्णवृत्तस्य च क्रमात् ।
वृत्तानुक्रमणी स्पष्टा क्रियते वृत्तमौक्तिके ॥ १ ॥
आरभ्यैकाक्षरं वृत्तं षड्विंशत्यक्षरावधि ।
तत्तत्प्रस्तारगत्याऽत्र वृत्तानुक्रमणी स्थिता ॥ २ ॥
तत्र श्रीनामकं वृत्तं प्रथमं परिकीर्तितम् ।
तत इः कथितं वृत्तं द्वौ भेदावत्र कीर्तितौ ॥ ३ ॥
एकाक्षरे, द्व्यक्षरे तु पूर्वं कामस्ततो मही ।
ततः सारं मधुश्चेति भेदाश्चत्वार एव हि ॥ ४ ॥
त्र्यक्षरे चात्र ताली स्यान्नारी चापि शशी ततः ।
ततः प्रिया समाख्याता रमणः स्यादनन्तरम् ॥ ५ ॥
पञ्चालश्च मृगेन्द्रश्च मन्दरश्च ततः स्मृतः ।
कमलं चेति त्वत्र स्युरष्टौ भेदाः प्रकीर्तिताः[१] ॥ ६ ॥
अथातो द्विगुणा भेदाश्चतुर्वर्णादिषु स्थिताः ।
यथासम्भवमेतेषामाद्यान्तानुक्रमात् स्फुटम् ॥ ७ ॥
वृत्तानुक्रमणी सेयमङ्कसंकेततः कृता ।
प्रतिप्रस्तारविस्तारं षड्विंशत्यक्षरावधि ॥ ८ ॥

तत्र–

चतुर्वर्णप्रभेदेषु तीर्णा कन्याऽपि चान्यतः ।
धारी[२] ततस्तु विख्याता नगाणी च ततः परम् ॥ ९ ॥
शुभं चेति समाख्यातामत्र भेदचतुष्टयम् ।
शेषभेदा न संप्रोक्ता ग्रन्थविस्तरशङ्कया ॥ १० ॥
प्रस्तारगत्या ते भेदाः षोडशैव व्यवस्थिताः ।
सुधीभिरूह्याः प्रस्तार्य यथाशास्त्रमशेषतः ॥ ११ ॥
अथ पञ्चाक्षरे[३] पूर्वं सम्मोहा वृत्तमीरितम् ।
हारी ततः समाख्याता ततो हंसः प्रकीर्तितः ॥ १२ ॥

१. ख. भेदः क्रमात् स्थिता । २. ख. धारी । ३. क. पञ्चाक्षरं ।

प्रिया ततः समाख्याता यमकं तदनन्तरम् ।
प्रस्तारगत्या चैवाऽत्र भेदा द्वात्रिंशदीरिताः (३२) ॥ १३ ॥
षडक्षरेऽपि पूर्वं तु शेषाख्यं वृत्तमीरितम् ।
ततः स्यात्तिलका वृत्तं विमोहं तदनन्तरम् ॥ १४ ॥
विजोहे[1]त्यन्यतः स्यातं चतुरंसमतः परम् ।
पिङ्गले चउरंसेति स्त्रीलिङ्गं परिकीर्तितम् ॥ १५ ॥
मन्थान च ततः प्रोक्तं मन्थानेत्यन्यतो भवेत् ।
शङ्खनारी ततः प्रोक्ता सोमराजीति चान्यतः ॥ १६ ॥
स्यात् सुमालतिका चात्र मालतीति च पिङ्गले ।
तनुमध्या ततः प्रोक्ता ततो दमनकं भवेत् ॥ १७ ॥
प्रस्तारगत्या चाप्यत्र भेदा वेदरसंमताः (६४) ।
अथ सप्ताक्षरे पूर्वं शीर्षाख्य वृत्तमीरितम् ॥ १८ ॥
ततः समानिका वृत्तं ततोऽपि च सुवासकम् ।
करहञ्चि ततः प्रोक्तं कुमारललिता ततः ॥ १९ ॥
ततो मधुमती प्रोक्ता मदलेखा ततः स्मृता ।
ततो वृत्त तु कुसुमततिः स्यादतिसुन्दरम् ॥ २० ॥
प्रस्तारगतिभेदेन वसुनेत्रात्मजेरिता[2] (१२८) ।
भेदाः सप्ताक्षरस्यान्या ऊह्याः प्रस्तार्य पण्डितैः ॥ २१ ॥
अथ वस्वक्षरे पूर्वं विद्युन्माला विराजते ।
तत. प्रमाणिका ज्ञेया मल्लिका तदनन्तरम् ॥ २२ ॥
तुङ्गावृत्त तत प्रोक्तं कमलं तदनन्तरम् ।
माणवकक्रीडितक ततश्चित्रपदा मता ॥ २३ ॥
ततोऽनुष्टुप् समाख्याता जलद च ततः स्मृतम् ।
अत्र प्रस्तारगत्यैव रसबाणयुगैर्मताः (२५६) ॥ २४ ॥
भेदा वस्वक्षरे शेषाः सूचनीयाः सुबुद्धिभिः ।
नवाक्षरेऽत्र पूर्वं स्याद् रूपामाला मनोरमा ॥ २५ ॥
ततो महालक्ष्मिका स्यात् सारङ्ग तदनन्तरम् ।
सारङ्गिका पिङ्गले तु पाइन्त तदनन्तरम् ॥ २६ ॥

१. ख. विद्दोहे । २. क. वसुनेत्रात्मतेरिताः ।

पाइन्ता पिङ्गले तु स्यात् कमलं तदनन्तरम् ।
[बिम्बवृत्तं ततः प्रोक्तं तोमरं तदनन्तरम्][1] ॥ २७ ॥
भुजगशिशुसृतावृत्तं मणिमध्यं ततः स्मृतम् ।
भुजङ्गसङ्गता च स्यात् ततः सुललितं स्मृतम् ॥ २८ ॥
प्रस्तारगत्या चात्रास्य नेत्रचन्द्रशरैरपि (५१२) ।
भेदा नवाक्षरे शिष्टाः सूचनीयाः सुबुद्धिभिः ॥ २९ ॥
अथ पंक्त्यर्णके पूर्वं गोपालः परिकीर्तितः ।
संयुतं कथितं पश्चात् ततश्चम्पकमालिका ॥ ३० ॥
क्वचिद् रुक्मवती चेयं क्वचिद् रूपवतीति च ।
ततः सारवती च[2] स्यात् सुषमा तदनन्तरम् ॥ ३१ ॥
ततोऽमृतगतिः प्रोक्ता मत्ता स्यात्तदनन्तरम् ।
पूर्वमुक्ताऽमृतगतिः सा चेद् यमकिता भवेत् ॥ ३२ ॥
प्रतिपादं तदोक्तैषा त्वरिताऽनन्तरं गतिः ।
मनोरमं ततः प्रोक्तमन्यत्र च मनोरमा ॥ ३३ ॥
ततो ललित-पूर्वं तु गतीति समुदीरितम् ।
प्रस्तारान्त्यं सर्वलघुवृत्तमत्यन्तसुन्दरम् ॥ ३४ ॥
प्रस्तारगत्या भेदाः स्युः तत्वाकाशात्मसंख्यकाः (१०२४) ।
दशाक्षरेऽपरे भेदाः सूच्याः प्रस्तार्य पण्डितैः ॥ ३५ ॥
अथ रुद्राक्षरे[3] पूर्वं मालतीवृत्तमीरितम् ।
ततो बन्धुः समाख्यातो ह्यन्यत्र दोधकं भवेत् ॥ ३६ ॥
ततस्तु सुमुखीवृत्तं शालिनी स्यादनन्तरम् ।
वातोर्मी तदनु प्रोक्ता छन्दःशास्त्रविशारदैः ॥ ३७ ॥
परस्परं चैतयोश्चेत् पादा एकत्रयोजिताः ।
तदोपजातिनामानो भेदास्ते च[4] चतुर्दश ॥ ३८ ॥
ततो दमनकं प्रोक्तं चण्डिका तदनन्तरम् ।
सेनिका श्रेणिका चेति तथा नामान्तरं क्वचित् ॥ ३९ ॥
नाममात्रे परं भेदः फलतो न तु किञ्चन ।
इन्द्रवज्रा ततः प्रोक्ता ततश्चोपेन्द्रपूर्विका ॥ ४० ॥

---

१. [-] कोष्ठगतोंशो नास्ति क. ख. प्रतौ । २ ख. 'ततः सारवती च' नास्ति । ३. क. रुद्राक्षरैः । ४. ख, तु ।

उपजातिस्ततः प्रोक्ता पूर्वोक्तेनैव वर्त्मना ।
भेदाश्चतुर्दशैतस्याः विज्ञेयाः पिण्डतो बहिः ॥ ४१ ॥

ततो रथोद्धतावृत्तं स्वागतावृत्तकस्तथा ।
भ्रमरान्ते विलसिताऽनुकूला च ततो भवेत् ॥ ४२ ॥

ततो मोट्टनकं[1] वृत्तं सुकेशी च ततो भवेत् ।
ततः सुभद्रिकावृत्तं बकुलं कथितं तत. ॥ ४३ ॥

रुद्रसंख्याक्षरे भेदा वसुवेदखनेत्रकैः (२०४८) ।
प्रस्तारगत्या जायन्ते शिष्टान् प्रस्तार्य सूचयेत् ॥ ४४ ॥

अथ रव्यक्षरे पूर्वमापीडः कथितोऽन्यतः ।
विद्याधरस्ततश्च स्यात् प्रयातं भुजगादनु ॥ ४५ ॥

ततो लक्ष्मीधरं वृत्तमन्यत्र स्रग्विणी ततः ।
तोटकं स्यात् ततः सारङ्गकं मौक्तिकदामतः ॥ ४६ ॥

मोदकं सुन्दरी चापि ततः स्यात् प्रमिताक्षरा ।
चन्द्रवर्त्म ततो ज्ञेयमतो द्रुतविलम्बितम् ॥ ४७ ॥

ततस्तु वंशस्थविला क्वचित् क्लीबमिदं भवेत् ।
क्वचित्तु वंशस्तनितमिन्द्रवंशा ततो भवेत् ॥ ४८ ॥

अनयोरपि चैकत्रपादानां योजनं यदि ।
तदोपजातयो नाम भेदाः स्युस्ते चतुर्दश ॥ ४९ ॥

सर्वत्रैवं स्वल्पभेदे भवन्तीहोपजातयः ।
वृत्ताभ्यामल्पभेदाभ्यामुपदेशः पितुर्मम ॥ ५० ॥

ततो जलोद्धतगतिर्वैश्वदेवी ततो मता ।
मन्दाकिनी ततो ज्ञेया ततः कुसुमचित्रिता ॥ ५१ ॥

ततस्तामरस वृत्तं ततो भवति मालती ।
कुत्रचिद् यमुना चेति मणिमाला ततो भवेत् ॥ ५२ ॥

ततो जलधरमाला स्यात् ततश्चापि प्रियंवदा ।
ततस्तु ललिता सैव सुपूर्वान्यत्र लक्षिता ॥ ५३ ॥

---

१. ख. मोटनकम् ।

ततोऽपि ललितं वृत्तं ललनेत्यपि च क्वचित् ।
कामदत्ता ततः प्रोक्ता ततो वसन्तचत्वरम् ॥ ५४ ॥
प्रमुदितवदना-मन्दाकिन्योर्भेदो न वास्तवो घटितः ।
नामान्तरेण भेदो गणतो यदितो न चोद्दिष्टः ॥ ५५ ॥[1]
प्रमुदिताद्दूर्ध्वं[2] वदने[3] वदनाऽन्यत्र च प्रभा ।
विख्याता कविमुख्यैस्तु ततः स्यान्नवमालिनी ॥ ५६ ॥
सर्वान्त्यं नयनात् पूर्वं तरलं वृत्तमीरितम् ।
अत्र प्रस्ताररीत्या तु भेदा रव्यक्षरे स्थिताः ॥ ५७ ॥
रसरन्ध्रखवेदैस्तु(४०९६) शेषाः सूच्याः[4] सुबुद्धिभिः ।

त्रयोदशाक्षरे पूर्वं वाराहः कथितो मया ॥ ५८ ॥
मायावृत्तं ततस्तु स्यात् क्वचिन्मत्तमयूरकम् ।
ततस्तु तारकं वृत्तं कन्दं पङ्कावली तथा ॥ ५९ ॥
ततः प्रहर्षिणीवृत्तं रुचिरा तदनन्तरम् ।
चण्डीवृत्तं ततः प्रोक्तं ततः स्यान्मञ्जुभाषिणी ॥ ६० ॥
शम्भौ सुनन्दिनी चेयं चन्द्रिका तदनन्तरम् ।
क्वचिदुत्पलिनीवृत्तं चन्द्रिकैवोच्यते बुधैः ॥ ६१ ॥
कलहंसस्ततश्च स्यात् सिंहनादोप्ययं क्वचित् ।
ततो मृगेन्द्रवदनं क्षमा पश्चात् ततो लता ॥ ६२ ॥
ततस्तु चन्द्रलेखाख्यं चन्द्रलेखेत्यपि क्वचित् ।
ततश्च सुद्युतिः पश्चाल्लक्ष्मीवृत्तं मनोहरम् ॥ ६३ ॥
ततो विमल-पूर्वं तु गतीतिरुचिरं भवेत् ।
प्रस्ताराख्यं वृत्तमेतद् भावितं कविपुङ्गवैः ॥ ६४ ॥
प्रस्तारगत्या विज्ञेया भेदाः कामाक्षरे बुधैः ।
नेत्रग्रहेन्दुवसुभिः (८१९२)शेषान् प्रस्तार्य सूचयेत् ॥ ६५ ॥

अथ मन्वक्षरे पूर्वं सिंहास्यः कथितो बुधैः ।
ततो वसन्ततिलका ततश्चक्रं प्रकीर्तितम् ॥ ६६ ॥
असम्बाधा ततश्च स्यात् ततः स्यादपराजिता ।
कलिकान्तं प्रहरणं वासन्ती स्यादनन्तरम् ॥ ६७ ॥

---

१. पद्यं नास्ति क. प्रतौ । २. ख. प्रमुदितदावरस्यान्ते । ३. क. वान्ते । ४. ख. शेषास्तूह्याः ।

लोला नान्दीमुखी तस्माद् वैदर्भी तदनन्तरम् ।
प्रसिद्धमिन्दुवदन स्त्रीलिङ्गमिदमन्यत ॥ ६८ ॥

ततस्तु शरभी प्रोक्ता ततश्चाहिधृतिः स्थिता ।
ततोऽपि विमला ज्ञेया मल्लिका तदनन्तरम् ॥ ६९ ॥

ततो मणिगण वृत्तमन्त्य मन्वक्षरे भवेत् ।
प्रस्तारगत्या चात्रापि भेदा वेदाष्टतो गुणा[1] ॥ ७० ॥

रसेन्दुप्रमिताश्चापि(१६३८४) विज्ञेया कविशेखरै ।
यथासम्भवसम्प्रोक्ता शेषास्तूह्या स्वबुद्धित ॥ ७१ ॥

लीलाखेलमथो वक्ष्ये वृत्त पञ्चदशाक्षरे ।
सारङ्गिकेति यन्नाम पिङ्गले प्रोक्तमुत्तमम् ॥ ७२ ॥

ततस्तु मालिनीवृत्त तत स्याच्चारु चामरम् ।
तूणक चान्यतश्चापि भ्रमरावलिका तत ॥ ७३ ॥

भ्रमरावली पिङ्गले स्यात् मनोहसस्ततस्तत ।
शरभ वृत्तमन्यत्र मता शशिकलेति च ॥ ७४ ॥

मणिगुणनिकर स्रगिति च भेदौ ह्यस्य यतिकृतौ भवत ।
तत्प्रागेवाभिहित वृत्तद्वयमस्य शरभतो न भिदा ॥ ७५ ॥

ततस्तु निशिपालाख्य विपिनातिलक तत ।
चन्द्रलेखा तत प्रोक्ता चण्डलेखाऽपि चान्यत ॥ ७६ ॥[2]

ततश्चित्रा समाख्याता चित्र चान्यत्र कीर्तितम् ।
ततस्तु कसर वृत्तमेला स्यात्तदनन्तरम् ॥ ७७ ॥

तत प्रिया समाख्याता यतिभेदादलि पुन ।
उत्सवस्तु तत प्रोक्तस्ततश्चोडुगण मतम् ॥ ७८ ॥

प्रस्तारगत्या सम्प्रोक्ता भेदा पञ्चदशाक्षरे ।
वसुदास्त्राश्वनेत्राग्निप्रमिता (३२७६८) कविपण्डितै ॥७९॥

प्रस्तार्य शेषभेदास्तु कृत्वा नामानि च स्वत ।
अस्मदीयापदेशेन सूचनीया सुबुद्धिभि ॥ ८० ॥

अथ प्रथमतो राम प्रस्तारे षोडशाक्षरे ।
ब्रह्मरूपकमित्यस्य नाम प्रोक्त च पिङ्गले ॥ ८१ ॥

---

१. क. गुण । २. क वध भाति ।

नराचमिति यन्नाम ततः स्यात् पञ्चचामरम् ।
ततो नीलं समाख्यातं ततः स्याच्चञ्चलाभिधम् ॥ ८२ ॥

इदमेवान्यतश्चित्रसञ्ज्ञमित्येव भाषितम् ।
ततस्तु मदनादूर्ध्वं ललिता स्यादनन्तरम् ॥ ८३ ॥

वाणिनीवृत्तमाख्यातं प्रवराल्ललितं ततः ।
अनन्तरं तु गरुडरुतं स्याच्चकिता ततः ॥ ८४ ॥

चकितैव यतिविभेदात् क्वचिदपि गजतुरगविलसितं भवति ।
क्वचिदिदमेव ऋषभगजविलसितमिति नाम संधत्ते ॥ ८५ ॥

ततः शैलशिखावृत्तं ततस्तु ललितं मतम् ।
ततः सुकेशरं वृत्तं ललना स्यादनन्तरम् ॥ ८६ ॥

ततो गिरिधृतिः कुत्राप्यचलानन्तरं धृतिः ।
प्रस्तारगत्यैवात्रापि भेदाः स्युः षोडशाक्षरे ॥ ८७ ॥

रसाग्निपञ्चेषुरसैः (६५५३६) मिताः प्रख्यातबुद्धिभिः ।
प्रस्तार्य सूच्याश्चान्येपि भेदा इत्युपदिश्यते ॥ ८८ ॥

अथ सप्तदशे वर्णप्रस्तारे वृत्तमीर्यते ।
लीलाधृष्टं प्रथमतस्ततः पृथ्वी प्रकीर्तिता ॥ ८९ ॥

ततो मालावतीवृत्त मालाधर इति क्वचित् ।
ततः शिखरिणीवृत्तं हरिणीवृत्ततस्तथा ॥ ९० ॥

मन्दाक्रान्ता वंशपत्रपतितं पतिता क्वचित् ।
शम्भौ तु वंशवदनमेतन्नाम प्रकीर्तितम् ॥ ९१ ॥

ततो नर्दटकं वृत्तं यतिभेदात्तु कोकिलम् ।
ततस्तु हारिणीवृत्त भाराक्रान्ता ततो भवेत् ॥ ९२ ॥

मतङ्गवाहिनीवृत्तं ततः स्यात् पद्मकं तथा[१] ।
दशशब्दान्मुसहरमिति वृत्तं समीरितम् ॥ ९३ ॥
प्रस्तारगत्या भेदाः स्युरत्र सप्तदशाक्षरे ।
नेत्राश्वव्योमचन्द्राग्निचन्द्रैः(१३१०७२)परिमिताः परे ॥९४॥
भेदाः सुबुद्धिभिस्तूह्याः प्रस्तार्य स्वमनीषया ।
अथाष्टादशवर्णानां प्रस्तारे प्रथमं भवेत् ॥ ९५ ॥

---

१. ख ततः ।

लीलाचन्द्रस्ततश्च स्यान्मञ्जीरा चर्चरी तत ।
क्रीडाचन्द्रस्ततश्च स्यात् तत कुसुमिताल्लता ॥ ९६ ॥
ततस्तु नन्दन वृत्त नाराच स्यादनन्तरम् ।
मञ्जुलेत्यन्यत' प्रोक्ता चित्रलेखा ततो भवेत् ॥ ९७ ॥
ततस्तु भ्रमराच्चापि पदमित्यतिसुन्दरम् ।
शार्दूलललित पश्चात् ततः सुललित भवेत ॥ ९८ ॥
अनन्तर चोपवनकुसुम वृत्तमीरितम् ।
अत्र प्रस्तारगणितो भेदा ह्यष्टादशाक्षरे ॥ ९९ ॥
वेदश्रुत्यवनीनेत्ररसयुग्मं (२६२१४४)मिता मता ।
शेषा स्वबुद्धया प्रस्तार्य विज्ञेया स्वगुरूक्तित ॥ १०० ॥
अथ प्रथमतो नागानन्दश्चैकोनविंशके ।
शार्दूलानन्तरं विक्रीडित वृत्त तत स्मृतम् ॥ १०१ ॥
ततश्चन्द्र समाख्यात चन्द्रमालेति च क्वचित् ।
ततस्तु धवल वृत्त धवलेति च पिङ्गले ॥ १०२ ॥
तत शम्भु समाख्यातो मेघविस्फूर्जिता तत ।
छायावृत्त ततश्च स्यात् सुरसा तदनन्तरम् ॥ १०३ ॥
फुल्लदाम ततश्च स्यान्मृदुलात् कुसुम तत' ।
प्रस्तारगत्या भेदाश्चैकोनविंशाक्षरे कृता ॥ १०४ ॥
वस्वष्टनेत्रश्रुतिदृग्भूतै (५२४२८८) परिमिता परे ।
भेदा प्रस्तार्य बोद्धव्या स्वबुद्धया शुद्धबुद्धिभि ॥ १०५ ॥
अथ विंशाक्षरे पूर्वं योगानन्द[1] समीरित ।
ततस्तु गीतिकावृत्त गण्डका तदनन्तरम् ॥ १०६ ॥
गण्डकैव क्वचिच्चित्रवृत्तमन्यत्र वृत्तकम् ।
शोभावृत्त तत प्रोक्त तत सुवदना भवेत् ॥ १०७ ॥
प्लवङ्गभङ्गाच्च पुनर्मङ्गल वृत्तमुच्यते ।
तत शशाङ्कचलित ततो भवति भद्रकम् ॥ १०८ ॥
ततो गुणगण वृत्तमन्त्य स्यादतिसुन्दरम् ।
प्रस्तारगत्या चात्रत्या भेदा रसमुनीषुभि ॥ १०९ ॥

---

१. क ख भागानन्द ।

वसुवेदखचन्द्रैश्च (१०४८५७६) मिता स्युश्चापरे[1] बुधैः ।
प्रस्तार्य बुद्धया ससूच्या छन्दःशास्त्रविशारदैः ॥ ११० ॥

अथैकविंशत्यक्षरेऽस्मिन् ब्रह्मानन्दादनन्तरम् ।
स्रग्धरा मञ्जरी च स्यान्नरेन्द्रस्तदनन्तरम् ॥ १११ ॥

ततस्तु सरसीवृत्तं क्वचित् सुरतरुर्भवेत् ।
सिद्धकं चान्यतः प्रोक्तं रुचिरा तदनन्तरम् ॥ ११२ ॥

ततश्च स्यान्निरुपमतिलकं वृत्तमन्त्यगम् ।
प्रस्तारगत्या चात्रापि भेदा नेत्रेषुचन्द्रकैः ॥ ११३ ॥

मुनिरन्ध्रखनेत्रैश्च (२०९७१५२) विज्ञेया कविशेखरैः ।
प्रस्तार्यान्यत्समुन्नेयं भेदजातं सुबुद्धिभिः ॥ ११४ ॥

अथ प्रथमतो विद्यानन्दवृत्तमुदीरितम् ।
द्वाविंशत्यक्षरे हंसीवृत्तं स्यात्तदनन्तरम् ।
ततस्तु मदिरावृत्तं मन्द्रकं तदनन्तरम् । ११५ ॥
तदेव यतिभेदेन शिखरं परिकीर्तितम् ।
ततः स्यादच्युतं वृत्तं मदालसमनन्तरम् ॥ ११६ ॥
ततस्तरुवरं वृत्तमन्त्यं भवति सुन्दरम् ।
प्रस्तारगत्यैवात्रापि भेदा वेदखवह्निभिः ॥ ११७ ॥
वेदग्रहेन्दुवेदैश्च (४१९४३०४) भवन्तीति विनिश्चितम् ।
तथैवान्येपि ये भेदास्ते प्रस्तार्य स्वबुद्धितः ॥ ११८ ॥
सूचनीया कविवरैः छन्दःशास्त्रविशारदैः ।
अथात्र त्र्यधिके विंशत्यक्षरे पूर्वमुच्यते ॥ ११९ ॥
दिव्यानन्दः सर्वगुरुस्ततः सुन्दरिका भवेत् ।
ततस्तु यतिभेदेन सैव पद्मावती भवेत् ॥ १२० ॥
ततोऽद्रितनया प्रोक्ता सैवाश्वललितं क्वचित् ।
ततस्तु मालतीवृत्तं मल्लिका स्यादनन्तरम् ॥ १२१ ॥
मत्ताक्रीडं ततः प्रोक्तं कनकाद्वलयं ततः ।
प्रस्तारगतितो भेदास्त्रयोविंशाक्षरे स्थिताः ॥ १२२ ॥
वसुव्योमरसक्ष्माभृद्वस्वग्निवसुभिर्मिता (८३८८६०८) ।
शेषभेदाः सुधीभिस्तु सूच्याः प्रस्तार्य शास्त्रतः ॥ १२३ ॥

---

१ क चाक्षरे ।

अथ तत्त्वाक्षरे पूर्वं रामानन्दोऽथ दुर्मिला ।
किरीटं तु ततः प्रोक्तं ततस्तन्वी प्रकीर्तिता ॥ १२४ ॥
ततस्तु माधवीवृत्तं तरलानयनं ततः ।
अत्र प्रस्तारभेदेन भेदाः षड्भूमियुग्मकं ॥ १२५ ॥
सप्तर्षिमुनिशास्त्रेन्दु(१६७७७२१६)मिताः स्युरपरे पुनः ।
गुरूपदेशमार्गेण सूचनीया मनीषिभिः ॥ १२६ ॥
अथ पञ्चाधिके विंशत्यक्षरे पूर्वमुच्यते ।
कामानन्दस्ततः क्रौञ्चपदा मल्ली ततो भवेत् ॥ १२७ ॥
ततो मणिगणं वृत्तमिति वृत्तचतुष्टयम् ।
प्रस्तारगतया चात्रापि भेदा नेत्राग्निसिन्धुभिः ॥ १२८ ॥
वेदपञ्चेषुवह्निभ्यामपि(३३५५४४३२)स्युरपरेऽपि च ।
छन्दःशास्त्रोक्तमार्गेण सूचनीया स्वबुद्धितः ॥ १२९ ॥
षड्भिरभ्यधिके विंशत्यक्षरेऽप्यथ गद्यते ।
श्रीगोविन्दानन्दसंज्ञं वृत्तमत्यन्तसुन्दरम् ॥ १३० ॥
ततो भुजङ्गपूर्वं तु विजृम्भितमिति स्मृतम् ।
अपवाहस्ततो वृत्तं मागधी तदनन्तरम् ॥ १३१ ॥
ततश्चान्त्यं भवेद् वृत्तं कमलाऽनन्तरं दलम् ।
प्रस्तारगतया चात्रत्या भेदाः सम्यग् विभाविताः ॥ १३२ ॥
वेदशास्त्रवसुद्वन्द्वखेन्द्रस्वरससूचिताः ।(६७१०८८६४) ।
प्रस्तार्य शास्त्रमार्गेणापरे सूच्याः स्वबुद्धितः ॥ १३३ ॥
एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधि कीर्तितम् ।
यथालाभं वर्णवृत्तमन्यदूह्यं महात्मभिः ॥ १३४ ॥
रसलोचनमुन्यश्वचन्द्रनेत्राब्धिवह्निभिः ।
रादिना योजितैरङ्कैः(१३४२१७७२६)पिण्डसंख्या भवेदिह ॥ १३५ ॥
भेदेष्वेतेषु चाद्यन्तसहितं भेदकल्पनं ।
पञ्चषष्ठ्यधिकं नेत्रशतकं (२६५) वृत्तमीरितम् ॥ १३६ ॥
द्वितीये खण्डके वर्णवृत्ते सयुक्तमीरितके ।
वृत्तानुक्रमणी रूपमाद्यं प्रकरणं त्विदम् ॥ १३७ ॥
प्रकीर्णकप्रकरणं द्वितीयमथ कथ्यते ।
प्रस्तारोत्तीर्णवृत्तानि कानिचित्तत्र वक्ष्महे ॥ १३८ ॥

आदौ पिपीडिका तत्र ततस्तु करभ. स्मृत. ।
अनन्तर च पणव माला स्यात्तदनन्तरम् ॥ १३६ ॥

द्वितीयाऽथ त्रिभङ्गी स्यात् शालूर तदनन्तरम् ।
इति प्रकीर्णक नाम द्वितीय वृत्तमौक्तिके ॥ १४० ॥

प्रोक्त प्रकरण चाथ तृतीयमिदमुच्यते ।
दण्डकाना प्रकरण क्रमप्राप्त मनोरमम् ॥ १४१ ॥

तत्र–

चण्डवृष्टिप्रयातस्तु प्रथम परिकीर्तित ।
तत. प्रचितकश्चाथ ततोऽप्यर्णादयो मताः ॥ १४२ ॥

ततस्तु सर्वतोभद्रस्ततश्चाऽशोकमञ्जरी ।
कुसुमस्तबकश्चाथ मत्तमातङ्ग एव च ॥ १४३ ॥

अनङ्गशेखरश्चेति तृतीय परिकीर्तितम् ।
अथार्द्धसमक नाम चतुर्थं परिकीर्त्यते ॥ १४४ ॥

पुष्पिताग्रा भवेत्तत्र प्रथम वृत्तमुत्तमम् ।
ततश्चैवोपचित्र स्यादथ वेगवती भवेत् ॥ १४५ ॥

हरिणाऽनन्तर चापि प्लुता सपरिकीर्तिता ।
ततश्चापरवक्त्र स्यात् सुन्दरी च ततो मता ॥ १४६ ॥

अथ भद्रविराट् वृत्त तत केतुमती स्थिता ।
ततस्तु वाङ्मतीवृत्तमथ स्यात् षट्पदावली ॥ १४७ ॥

इत्यर्द्धसमक नाम तुर्य प्रकरण मतम् ।

अथोच्यते प्रकरण विषम वृत्तमौक्तिके ॥ १४८ ॥
पञ्चम यत्र पूर्वं स्याद् उद्गता वृत्तमुत्तमम् ।
ततस्तु सौरभ वृत्त ललित तदनन्तरम् ॥ १४९ ॥

अथ भावस्ततो वक्त्र पथ्यावृत्तमत स्मृतम् ।
ततस्त्वानुष्टुभ वृत्तमष्टाक्षरतया कृतम् ॥ १५० ॥

इत्थ विषमवृत्ताना प्रोक्त प्रकरण त्विह ।

अथ षष्ठ प्रकरण वैतालीय प्रकीर्त्यते ॥ १५१ ॥
वैतालीय प्रथमतस्तत्र वृत्त निगद्यते ।
ततश्चौपच्छन्दसिकमापातलिकमेव च ॥ १५२ ॥

द्विविध नलिनाख्य च ततः स्याद् दक्षिणान्तिका ।
अथोत्तरान्तिका पश्चात् [प्राच्यवृत्तिरुदीरिता ॥ १५३ ॥
उदीच्यवृत्तिस्तत्पश्चात् प्रवृत्तकमतः परम् ।
अथापरान्तिका पश्चा]¹च्चारुहासिन्युदीरिता ॥ १५४ ॥
वैतालीय प्रकरण षष्ठमेतदुदीरितम् ।
यतिप्रकरण चाथ सप्तमं परिकीर्त्यते ॥ १५५ ॥
यतीना घटन यत्र सोदाहरणमीरितम् ।
अथ गद्यप्रकरणमष्टम वृत्तमौक्तिके ॥ १५६ ॥
नानाविधानि गद्यानि गद्यन्ते यत्र लक्षणै. ।
तत्र तु प्रथम शुद्ध चूर्णक गद्यमुच्यते ॥ १५७ ॥
अथाऽऽविद्ध चूर्णक तु ललित चूर्णक तत. ।
ततस्तूत्कलिकाप्राय वृत्तगन्धि तत. स्मृतम् ॥ १५८ ॥
ग्रन्थान्तरमत चात्र लक्षित गद्यलक्षणे ।
इति गद्यप्रकरणमष्टम परिकीर्तितम् ॥ १५९ ॥
विरुदावलीप्रकरण नवमं चाथ कथ्यते ।

तत्र–

द्विगाद्या च त्रिभङ्ग्यन्ता कलिका नवधा पुरा ॥ १६० ॥
ततस्त्रिभङ्गी कलिका ²नोधा साऽपि² प्रकीर्तिता ।
विदग्धाद् या द्विपाद्यन्ता सापि षोढा तत स्मृता ॥ १६१ ॥
मुग्धादिका तरुण्यन्ता मध्ये मध्या चतुर्विधा ।
अवान्तरप्रकरण कलिकाया प्रकीर्तितम् ॥ १६२ ॥
अथातो व्यापक चण्डवृत्त विरुदमीरितम् ।
सलक्षण तथा साधारण चेति द्विधैव तत् ॥ १६३ ॥
ततोऽस्य परिभाषा स्यात् तद्भेदानां व्यवस्थिति. ।

तत्र–

पुरुषोत्तमाख्य प्रथम ततस्तु तिलक भवेत् ॥ १६४ ॥
अच्युतस्तु ततः प्रोक्तो वर्द्धितस्तदनन्तरम् ।
ततो रणः समाख्यातस्तत. स्याद् वीरचण्डकम् ॥ १६५ ॥

---

१. [–] कोष्ठगतोंशो क. प्रतौ नोपलभ्यते । २-२. 'नवधा सा' इति सुष्ठु ।

अन्यश्च वीरभद्रः स्यात् ततः शाकः प्रकीर्तितः ।
मातङ्गखेलितं पश्चादथोत्पलमुदीरितम् ॥ १६६ ॥
ततो गुणरतिः प्रोक्ता ततः कल्पद्रुमो भवेत् ।
कन्दलश्चाथ कथितस्ततः स्यादपराजितम् ॥ १६७ ॥
नर्त्तनं तु ततः प्रोक्तं तरल्पूर्वं समस्तकम् ।
वेष्टनाख्यं चण्डवृत्तं ततश्चास्खलितं मतम् ॥ १६८ ॥
अथ पल्लवितं पश्चात् समग्रं तुरगस्तथा ।
पङ्केरुहं ततः प्रोक्तं सितकञ्जमतः परम् ॥ १६९ ॥
पाण्डूत्पलं ततश्च स्यादिन्दीवरमतः परम् ।
अरुणाम्भोरुहं पश्चादथ फुल्लाम्बुजं मतम् ॥ १७० ॥
चम्पकं तु ततः प्रोक्तं वञ्जुलं तदनन्तरम् ।
ततः कुन्दं समाख्यातमथो बकुलभासुरम् ॥ १७१ ॥
अनन्तरं तु बकुलमङ्गलं परिकीर्तितम् ।
मञ्जर्यां कोरकश्चाथ गुच्छः कुसुममेव च ॥ १७२ ॥
अवान्तरमिदं चापि प्रोक्तं प्रकरणं त्विह ।
अथ त्रिभङ्गी कलिका दण्डकाख्या प्रकीर्तिता ॥ १७३ ॥
विदग्धपूर्वा सम्पूर्णा त्रिभङ्गी कलिका ततः ।
ततस्तु मिश्रकलिका कथिता वृत्तमौक्तिके ॥ १७४ ॥
अवान्तरं प्रकरणं तृतीयमतिसुन्दरम् ।
इत्थं सलक्षणं चण्डवृत्तप्रकरणं कृतम् ॥ १७५ ॥
ततः साधारणमतं चण्डवृत्तमिहोदितम् ।
साधारणमतं चैकदेशतः प्रोक्तमत्र हि ॥ १७६ ॥
अवान्तरप्रकरणं साधारणमते स्थितम् ।
चतुर्थं विरुदावल्यां[1] विज्ञेयं कविपण्डितैः ॥ १७७ ॥
ततस्तत्रैव कलिका ज्ञेया सप्तविभक्तिकी ।
अनन्तरं चाक्षमयीकलिका[2] कथिता त्विह ॥ १७८ ॥
ततस्तु सर्वलघुक कलिकाद्वयमीरितम् ।
ततश्च विरुदाना तु युगपल्लक्षणं कृतम् ॥ १७९ ॥

---

१. ख. विरुदावल्यो । २. क. कलिका* ।

ततस्तु विरुदावल्या. सम्पूर्णं लक्षण कृतम् ।
विरुदावलीप्रकरण नवम वृत्तमौक्तिके ॥ १८० ॥

अथ खण्डावली तत्र पूर्वं तामरस भवेत् ।
ततस्तु मञ्जरी नाम भवेत् खण्डावली त्विह ॥ १८१ ॥

खण्डावलीप्रकरण दशम परिकीर्तितम् ।
अथानयोस्तु दोषाणा निरूपणमुदीरितम् ॥ १८२ ॥

एकादश प्रकरणमिदमुक्तमतिस्फुटम् ।
तत. खण्डद्वयस्यापि प्रोक्ताऽनुक्रमणी क्रमात् ॥ १८३ ॥

एतत् प्रकरण चात्र द्वादश परिकीर्तितम् ।
वृत्तानि यत्र गण्यन्ते तथा प्रकरणानि च ॥ १८४ ॥

पूर्वखण्डे षडेवात्र प्रोक्त प्रकरणं स्फुटम् ।
द्वितीयखण्डे चाप्यत्र रविसख्यमुदीरितम् ॥ १८५ ॥

अवान्तर प्रकरण चतु सख्य प्रकीर्तितम् ।
सम्भूय चात्र गदित रसेन्दुमितमुत्तमम् ॥ १८६ ॥

उभयो खण्डयोश्चापि सम्भूयैव प्रकाशितम् ।
द्वाविंशति[1]प्रकरण रुचिर वृत्तमौक्तिके ॥ १८७ ॥

मात्सर्यमुत्सार्य मुदा सदा सहृदयैरिदम् ।
ग्रन्तर्मुखै प्रकरण विज्ञैरालोक्यता मम ॥ १८८ ॥

इति खण्डद्वयानुक्रमणीप्रकरण द्वादशम् ।१२।

---

१. ख. नेत्रद्वय ।

ग्रन्थकृत्-प्रशस्तिः

दुस्थीभूतमिमं जलाशयमधिस्थित्वा नयान्तं क्वचि-
न्मोहान्धीकृतगोव्रजं मनसिजस्फूर्जद्विषज्वालया ।
गर्वाग्निं पदपद्मयुग्मवलनैर्निर्वाप्य सर्वात्मना,
स्वं निर्वासय मन्मनोह्रदगतं दुर्वासनाकालियम् ॥ १ ॥

यद्दोर्मण्डलचण्डमन्दरतटीनिष्पेषणालोडिता,
दैत्याम्भोनिधयो विनाशमगमन्निस्सारभूता भुवि ।
कालिन्दीतटगन्धसिन्धुरममुं लीलाशतैर्बन्धुरै[1]-
राभीरीनिकुरम्बभीतिशमनं[2] वन्दे गभीराशयम् ॥ २ ॥

निःकामतुच्छीकृतकामधाम-
श्रव्यस्फुरद्धाम जगल्ललाम ।
उद्दामचिन्ताशतदामबद्धं,
श्रीराम मामुद्धर वामबुद्धिम् ॥ ३ ॥

श्रीचन्द्रशेखरकृते रुचिरतरे वृत्तमौक्तिकेऽमुष्मिन् ।
अक्षरवृत्तविधायकखण्डस्सम्पूर्णतामगमत् ॥ ४ ॥

लक्ष्मीनाथसुभट्टवर्य्यं इति यो वासिष्ठवंशोद्भव-
स्तत्सूनुः कविचन्द्रशेखर इति प्रख्यातकीर्तिर्भुवि ।
बालानां सुखबोधहेतुमतुलं सच्छन्दसां मन्दिरं,
स्पष्टार्थं वरवृत्तमौक्तिकमिति ग्रन्थं मुदा निर्ममे ॥ ५ ॥

रसमुनिरसचन्द्रैर्भाविते (१६७६) वैक्रमेऽब्दे,
सितदलकलितेऽस्मिन्कार्त्तिके पौर्णमास्याम् ।
अतिविमलमतिः श्रीचन्द्रमौलिर्वितेने,
रुचिरतरमपूर्वं मौक्तिकं वृत्तपूर्वम् ॥ ६ ॥

छन्दःशास्त्रपयोनिधिलोपामुद्रापतिं पितरम्[3] ।
श्रीमल्लक्ष्मीनाथं सकलागमपारगं वन्दे ॥ ७ ॥

---

१. ख बन्धुरा । २. ख- भातिशमन । ३. ख- पितन्तर ।

यातेदिवं सुतनये विनयोपपन्ने,
श्रीचन्द्रशेखरकवौ किल तत्प्रबन्धः ।
विच्छेदमाप भुवि तद्वचसैव सार्द्धं,
पूर्णीकृतश्च स हि जीवनहेतवेऽस्य ॥ ८ ॥

श्रीवृत्तमौक्तिकमिदं लक्ष्मीनाथेन पूरितं यत्नात् ।
जीयादाचन्द्रार्कं जीवातुर्जीवलोकस्य ॥ ९ ॥

श्रीः

इत्यालङ्कारिकचक्रचूडामणि-छन्दःशास्त्र[1]परमाचार्य-सकलोपनिषद्रहस्यार्णव-
कर्णधार-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टात्मज-कवि[2]-चन्द्रशेखरभट्टविरचिते
श्रीवृत्तमौक्तिके पिङ्गलवार्त्तिके वर्णवृत्ताख्यो
द्वितीयः परिच्छेदः ।२।

श्रीः

समाप्तश्चायं वार्त्तिके द्वितीयः खण्डः[3] ।

श्रीकृष्णायानन्तशक्तये नमः । श्रीरस्तु ।

समाप्तमिदं श्रीवृत्तमौक्तिकं नाम पिङ्गलवार्त्तिकम् ।

शुभमस्तु ।

सवत् १६६० समये श्रावनवदि ११ रवौ शुभदिने लिखितं शुभस्थाने अर्गलपुरनगरे लालमनिमिश्रेण । शुभम् । इदं ग्रन्थसंख्या ३८५०॥

---

१. ख. छन्दःशास्त्रे । २. ख. कविशेखरश्री । ३. ख. द्वितीयखण्डः ।

छन्दःशास्त्रपरमाचार्यश्रीलक्ष्मीनाथभट्टप्रणीतो

वृत्तमौक्तिक-वार्त्तिक-दुष्करोद्धारः

प्रथमो विश्रामः

श्रीगणेशाय नमः

प्रणम्य जगदाधारं विश्वरूपिणमीश्वरम् ।
श्रीचन्द्रशेखरकृते वार्त्तिके वृत्तमौक्तिके ।। १ ।।
अन्तःसारं समालोच्य नष्टोद्दिष्टादिदुष्करम् ।
श्रीलक्ष्मीनाथभट्टेन सुकरीक्रियतेतराम् ।। २ ।।

अथानन्तरं छान्दसिकपरीक्षार्थं कौतुकार्थञ्च मात्राणामुद्दिष्टमुच्यते । तत्र त्रयोदशविभेदभिन्नेषु षट्कलप्रस्तारगणेषु इदं कतिम रूपम् इति लिखित्वा पृष्ठं रूपमुद्दिष्टं प्रथमप्रत्ययस्वरूप, तत्प्रकारमाह सार्द्धेन श्लोकेन ।

दद्यात् पूर्वयुगाङ्कान् लघोरुपरि गस्य तूभयतः ।
अन्त्याङ्के गुरुशीर्षस्थितान् विलुम्पेदथाङ्कांश्च ।। ५१ ।।
उर्वरितैश्च तथाङ्कैर्मात्रोद्दिष्टं विजानीयात् ।

दद्यादिति । तस्मिन् लिखिते रूपे पूर्वयुगाङ्कान् दद्यात् । तत्र च लघोरुपर्येव गुरोस्तु उभयत.–उपर्यधश्चेत्यर्थः । अथ पश्चादन्त्याङ्के–शेषाङ्के गुरुशीर्षस्थितान् अङ्कान् विलुम्पेत् । तथा कृते सति उर्वरितैश्च अङ्कैः मात्राणामुद्दिष्टं जानीयात् । एतदुक्तं भवति । षट्कलप्रस्तारे तावदेको गुरु, द्वौ लघू, एको गुरुश्च एवरूपो गणः ऽ।।ऽ कुत्र स्थानेऽस्तीति प्रश्ने कृते, तदाकार गण लिखित्वा पूर्वयुगेन समाना. अमादङ्का दातव्याः २ तः १३ (त)त्रादिकलाया प्रथमोऽङ्को देयः, ततः पूर्वयुगाङ्काभावादुत्सर्गसिद्धो द्वितीयोऽङ्कस्तदधः । तदनन्तर पूर्वाङ्कद्वयमेकीकृत्य तत्सख्यकोऽङ्कोऽग्रे देय. । एवं च पूर्वयुगसमानाङ्कास्त्रिपञ्चादिर्देय इति पूर्वयुगक्रमार्थः । अत्र गुरोरुपर्यधश्चाङ्को देयो द्विकलत्वात् । एतच्च गुरुशीर्षपदाल्लभ्यते । एवं तेषु अङ्केषु अन्त्याङ्के–चरमाङ्के त्रयोदशरूपे १३ यावन्तो गुरुशीर्षस्थितान् अङ्कास्तान् विलुम्पेत् । ते च नव तथा च त्रयोदशात्मनि चरमेऽङ्के नवाङ्के लुप्ते सति उर्वरितैरङ्कैश्चतुर्भिश्चतुर्थं स्थान लिखित्वा तत्समानाङ्कस्थानको यद्गण इति जानीयात् । तदेतन्मात्राणामुद्दिष्टम् । उद्दिष्टस्य गणस्य स्थानमात्रानयनादिति भावः ।

एवं चाप्टभेदविभिन्नो पञ्चकलप्रस्तारे—द्वौ लघू, एको गुरुः, एको लघुश्च इत्येवंरूपो गणः ॥ऽ। कुत्र स्थानेऽस्तीति प्रश्ने, प्रथमलघोरुपरि प्रथमाङ्कस्तदनु द्वितीयलघोरुपरि द्वितीयाङ्कस्ततो गुरोरुपरि तृतीयाङ्कस्तदधः पञ्चमाङ्कस्तदनु लघोरुपरि अष्टमाङ्कश्च देयः। अतोऽन्त्याङ्के-अष्टमाङ्के ८ गुरुशिरोऽङ्कस्तृतीयोऽङ्को ३ लोप्योऽवशिष्टः पञ्चमाङ्को भवति। तस्मात् पञ्चमो गणस्तादृशो भवतीति एव जानीयादिति।

तथा च पञ्चभेदे चतुष्कलप्रस्तारे जगणः ।ऽ। कुत्रास्तीति प्रश्ने, प्रथमलघोरुपरि प्रथमाङ्कस्तदनु गुरोरुपरि द्वितीयाङ्कस्तदधस्तृतीयाङ्कः शेषो लघोरुपरि पञ्चमाङ्को देयः। अतः शेषे पञ्चमाङ्के ५ गुरुशिरोऽङ्को द्वितीयो लोप्यः। अवशिष्टस्तृतीयाऽङ्को भवति। तस्मात् तृतीयस्थाने जगणो वर्त्तत इति जानीयादिति।

एवञ्च सप्ताष्टकलादिकेषु समस्तेषु प्रस्तारेषु प्रथमे शेषे च गणे शङ्कैव नावतरीतर्त्तीति। द्वितीयस्थानादारभ्य उपान्त्यस्थानपर्यन्त प्रश्ने कृते प्रोक्तप्रकारेण उद्दिष्टं बोद्धव्यमतिविशुद्धबुद्धिभिरित्यास्ता विस्तारेण इत्युपरम्यते। इति शिवम्।

श्रीनागराजाय नमः

प्रस्तारविस्तारणकौतुकेन प्रस्तारयन्तं पतगाधिराजम्।
मध्येसमुद्रं प्रविशन्तमन्तर्भजामि हेतुं भुजगाधिराजम् ॥

अथ मात्रा-वर्णोद्दिष्टौ वक्तव्ये तत्र प्रस्तारमन्तरेणोद्दिष्टादीनामशक्यकथनत्वात् समस्तप्रस्तारस्य वसुधावलयेऽप्यसमावेशात् केचन प्रस्ताराः प्रस्तुतोपयोगिनो लिख्यन्ते। एवं अन्येपि षड्विंशत्यक्षरपर्यन्त प्रस्ताराः बोद्धव्याः सुबुद्धिभिः।

द्विकलप्रस्तारो यथा–

ऽ	१
।।	२

त्रिकलप्रस्तारो यथा–

।ऽ	१
ऽ।	२
।।।	३

चतुष्कलप्रस्तारो यथा–

ऽऽ	१
।।ऽ	२
।ऽ।	३
ऽ।।	४
।।।।	५

पञ्चकलप्रस्तारो यथा–

। ऽ ऽ	१
ऽ । ऽ	२
। । । ऽ	३
ऽ ऽ ।	४
। । ऽ ।	५
। ऽ । ।	६
ऽ । । ।	७
। । । । ।	८

षट्कलप्रस्तारो यथा—

ऽ ऽ ऽ	१
। । ऽ ऽ	२
। ऽ । ऽ	३
ऽ । । ऽ	४
। । । । ऽ	५
। ऽ ऽ ।	६
ऽ । ऽ ।	७
। । । ऽ ।	८
ऽ ऽ । ।	९
। । ऽ । ।	१०
। ऽ । । ।	११
ऽ । । । ।	१२
। । । । । ।	१३

मात्राणामुद्दिष्टं द्विलोप्यः

१	३
।	ऽ
	३

मात्राणामुद्दिष्टं प्रथमप्रत्ययः

१	३	५	८
ऽ	।	।	ऽ
२			१३

लोपो नवाङ्कः ९

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्र-चूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारक-विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके दुष्करोद्धारे मात्राप्रस्तारोद्दिष्टगणसमुद्धारो नाम प्रथमो विश्रामः ॥ १ ॥

द्वितीयो विश्रामः

अथ मात्राणामदृष्ट रूप नष्ट द्वितीयप्रत्ययस्वरूपम् । तच्च षट्कलप्रस्तारे प्रस्तारान्तरे वा अमुकस्थाने कीदृश इति प्रश्नोत्तरमध्यर्द्धेन श्लोकद्वयेनाह—

> अथ मात्राणां नष्ट यददृष्ट पृच्छ्यते रूपम् ॥ ५२ ॥
> यत्कलकप्रस्तारो लघव. कार्याश्च तावन्त ।
> दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पृष्ठाङ्क लोपयेदन्त्ये ॥ ५३ ॥
> उर्वरितोर्वरितानामङ्काना यत्र लभ्यते भाग ।
> परमात्रा च गृहीत्वा स एव गुरुतामुपागच्छेत् ॥ ५४ ॥

अथेति । पूर्वार्द्धं अवतारिकयैव व्याख्यातप्रायम् ॥ ५२ ॥

यत्कलकप्रस्तार कृत तत्कलकप्रस्तारकृते तावन्त एव लघव कार्या । चकारोऽवधारणार्थं । तत्र च दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् एक-द्वि-त्रि पञ्चाष्ट-त्रयोदशा-दीन् । यथा— । । । । । । तत पृष्ठाङ्क अन्त्ये—शेषे लोपयेत् ॥ ५३ ॥

एव चोर्वरितोर्वरिताना अवशिष्टानामङ्काना यत्र यत्राङ्के भागो लभ्यते स स एवाङ्क शेषाङ्के लोपयितु शक्यते । स पुनस्तदध स्थितकल परमात्रा च गृहीत्वा गुरुतामुपागच्छेत्—गुरुर्भवतीत्यर्थं । गुरुत्वे चाऽध स्थितकलाया अपि सग्रहोऽर्थाद् भवतीति । अन्यथा लघुगुरुरित्येव ब्रूयादिति ॥ ५४ ॥

अनेन व्याख्यानेनाव्युत्पन्नतम शिष्यो बोधयितु न शक्यत इति स्फुटीकृत्य सोदाहरण विलिख्यते । यथा—

षट्कलप्रस्तारे द्वितीयस्थाने कीदृशो गण ? इति प्रश्ने, पूर्वोक्ताङ्कसहिता लघुरूपा षट्कला स्थापनीया । पूर्वयुगलसदृशा अङ्का देया । तत शेषाङ्के त्रयोदशे १३ पृष्ठाङ्कलोपे द्वितीयाङ्क २ लोपे सति एकादशावशिष्टा ११ भवन्ति । तत्राव्यवहिताष्टलोपे शेषकलाद्वयेन एको गुरुर्भवति । अवशिष्टाङ्क त्रय भवति । तत्र च पञ्चलोपाशक्यत्वात् परमात्रा गृहीत्वा गुरुर्भवतीत्युक्तत्वाच्च त्रिलोपे ३ तृतीयचतुर्थाभ्यामपरो गुरुर्भवति । शेषाङ्को नावशिष्यत इति । प्रथम लघुद्वयमेव । तथा चादौ लघुद्वयमनन्तर गुरुद्वयमित्येतादृशो । । ऽ ऽ द्वितीयो गणो भवतीत्यर्थ । एवमन्यत्रापि ।

यद्यप्याद्यन्तयोरसन्देहाभावस्तथापि प्रथमे कीदृशो गण ? इति प्रश्ने, गुरु-त्रयात्मक प्रथम गण लिखित्वा तत्रोपर्यध क्रमेण पूर्वयुगाङ्का एक-द्वि-त्रि-पञ्चाष्ट-

त्रयोदशाकारा देयाः। यथा— ऽ ॥ ऽ तत्र शेषाङ्के त्रयोदशात्मनि १३ गुरुशीर्षस्था ये अङ्का एकत्र्यष्टरूपास्तैर्जातो द्वादशाङ्को लोप्यस्तथा च लुप्ते तस्मिन् प्रथमो गणस्तादृशो भवतीति वेदितव्यम्।

अथ च त्रयोदशस्थाने कीदृशो गणः ? इति प्रश्ने, पूर्व[व]देव लघूनामुपर्यङ्कान् दत्त्वा शेषाङ्के त्रयोदशात्मनि पृष्ठाङ्कलोपे अवशिष्टाङ्काभावान्न गुरुकल्पना। अतो लघव एवावशिष्यन्ते इति। । । । । ।

चतुर्दशादिप्रश्ने चाङ्कलोपासम्भवादसत्यत्वमात्रं वाच्यम्। तदधिकप्रस्ताराभावादित्थं च मात्राप्रस्तारे सर्वत्रैव शेषाङ्कसमसंख्यागणा भवन्तीत्यपि निश्चीयते। इति गुरुमुखादवगतार्थो लिखित इति शिवम्।

मात्राणां नष्टम्

१	२	३	५	८	१३
।	।	।	।	।	।
		।	।	ऽ	ऽ

द्वितीयः प्रत्ययः

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्तिकदुष्करोद्धारे मात्राप्रस्तारनष्टगणसमुद्धारो नाम द्वितीयो विश्रामः ॥ २ ॥

तृतीयो विश्रामः

अथ तथैव क्रमप्राप्तं वर्णानामुद्दिष्टमाह—द्विगुणानिति श्लोकेन ।

द्विगुणानङ्कान् दत्त्वा वर्णोपरि लघुशिर स्थितानङ्कान् ।
एकेन पूरयित्वा वर्णोद्दिष्टं विजानीत ॥ ५५ ॥

वर्णानामुपरिप्रगुणानां इति अध्याहार्यम् । तथा च तेषामुपरि द्विगुणानङ्कान् दत्त्वा ततो लघुशिर स्थितानङ्कान् सयोज्येति शेष । तथा च त-समुदाय मङ्क एकेनाधिकेन अङ्केन पूरयित्वा-एकीकृत्य वर्णोद्दिष्टं विजानीत शिष्या इति शेष ॥ ५५ ॥

एवमुक्त भवति । एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधिप्रस्तारेषु प्रतिप्रस्तारमाद्य-भेदे लध्वाभावादुद्देश सर्वथा नास्त्येव । अतो द्वितीयभेदादारभ्य उपान्त्यभेद-पर्यन्त उद्देशो भवतीति तत्प्रकारबोधनार्थं शिष्यानभिमुखीकृत्य प्रस्तारा निर्द्धार-पूर्वकं वर्णोद्दिष्टमुच्यते । तथा च—

एकाक्षरप्रस्तारे भेदद्वय भवति । तत्र प्रथमभेदस्य उद्देशासम्भवात । द्वितीय भेदे च एकलघुरूपे द्वितीयाक्षराभावादेकमेवाङ्क तस्मिन् दत्त्वा तदुपरि एक मङ्कमधिक दत्त्वा द्वितीयभेदमुद्दिशेत् । इत्येकाक्षरप्रस्तार ।

द्व्यक्षरप्रस्तारे भेदचतुष्टय ४ भवति । तत्र द्वितीये एको लघुरेकोगुरुरित्येव भेदे । ऽ, प्रथमे लघावेकोऽङ्को, द्वितीये गुरौ द्वितीयोऽङ्को दातव्य तदनु लघोरुपरि एकमधिक दत्त्वा द्वितीयभेद उद्दिशेत् । एव तृतीये एको गुरुरेको लघुरित्येव भेदे ऽ ।, प्रथमे गुरावेकोऽङ्को, द्वितीये लघौ द्वितीयोऽङ्को न्यस्तस्ततो लघोरुपरि स्थिते द्वितीयेऽङ्के एकमधिक दत्त्वा तृतीय भेदमुद्दिशेत् । एवमेव लघुद्वयात्मके ॥ चतुर्थे भेदे प्रथमे लघौ प्रथमाङ्क दत्त्वा, द्वितीयेऽपि लघौ द्वितीयमङ्क विधाय तयोरुपरिस्थयो प्रथमद्वितीयाङ्कयोर्मेलने कृत जात त्रिके एकाङ्क अधिक दत्त्वा तस्य चतुष्टय सम्पाद्य चतुर्थ भेदमुद्दिशेदिति । इति द्व्यक्षरप्रस्तार ।

त्र्यक्षरप्रस्तारे तु भेदाष्टक ८ भवति । तत्र एको लघु द्वौ गुरू चेति गण कुत्रास्तीति प्रश्ने कृते पृष्ठ गण । ऽ ऽ लिखित्वा तत्र प्रथमे लघौ प्रथमाङ्को दातव्य, द्वितीये गुरौ तद्द्विगुणो द्वितीयोऽङ्को दातव्य, तृतीये गुरौ तद्द्विगुण श्चतुर्थोऽङ्को दातव्य । अत्र सर्वत्र प्रथमादिपदेन वर्णो लक्ष्यते, ततो लघोरुपरि योऽङ्कस्तस्मिन्नेकमधिक दत्त्वा तेन सह एकीकृत्य द्व्यङ्को भवति तस्मात द्वितीयो यगणास्त्र्यक्षरप्रस्तारे गणो भवतीत्येव वेदितव्यम् ।

एवं चात्रैव प्रथमं लघुद्वयं ततो गुरुरित्येवं गणः ।। ऽ कस्मिन् स्थानेऽस्तीति प्रश्ने कृते तदाकार गण १, २ लिखित्वा प्रथमे लघावेकाङ्कं दत्त्वा १, द्वितीयेऽपि तद्द्विगुणं द्वयङ्कं २ विधाय, तृतीये गुरौ तद्द्विगुण चतुर्थमङ्कं कृत्वा ४, ततो लघोरुपरिस्थयोः प्रथमद्वितीयाङ्कयोः सयोगकृतत्रयं भवति ३, तस्मिन्नेकेऽधिके दत्ते सति चतुरङ्को भवति ४ । अतश्चतुर्थस्सगणाख्यस्त्र्यक्षरप्रस्तारे गणो भवतीति ज्ञेयम् । एवमन्यत्र । इति त्र्यक्षरप्रस्तारः ।

अथ चतुरक्षरप्रस्तारे षोडश भेदा १६ भवन्ति । तत्र द्वौ गुरू, एको लघुरेको गुरुश्चेत्येवरूपो गण. कुत्रास्तीति प्रश्ने कृते, त पृष्ठं गणं लिखित्वा ऽ ऽ । ऽ तत्र प्रथमगुरोरुपरि प्रथमाङ्को १ देयः, ततो द्विगुणान् द्विगुणान् अङ्कान् दत्त्वा, ततश्च द्वितीयगुरोरुपरि द्वितीयोऽङ्को देयः, तृतीयो लघौ चतुरङ्कः, चतुर्थो गुरावष्टमाङ्को देयः ८ । इति द्वैगुण्यम् । ततो लघोरुपरिश्चतुर्थोऽङ्कस्त एकेन पूरयित्वा तस्य पञ्चत्व विधाय तत्समानाङ्कस्थाने स गणोऽस्तीति विज्ञातव्यम् । इत्युद्दिष्ट वर्णप्रस्तारे प्रथमप्रत्ययस्वरूपं विजानीत शिष्या इति ।

अत्र सर्वत्र गणशब्देन तत्तद्भेदो लक्ष्यते । तथा चात्रैव प्रथम लघुत्रयमनन्तर एको गुरुरित्येवमाकारको गणः कुत्र स्थानेऽस्तीति प्रश्ने कृते तदाकार गण लिखित्वा ।।। ऽ तत्र प्रथमलघोरुपरि प्रथमाङ्क दत्त्वा, ततोऽपि द्विगुणान् द्विगुणान् अङ्कान् दत्त्वा, तदनु द्वितीयलघोरुपरि तद्द्विगुण द्वितीयमङ्कं विलिख्य, तृतीये लघौ तद्द्विगुण चतुरङ्कं विधाय, चतुर्थे गुरावष्टमाङ्कं तद्द्विगुण दत्त्वा, एव द्विगुणत्व सम्पाद्यते । लघुशिरःस्थितान् एक-द्वि-चतुरङ्कान् एकीकृत्य जात सप्ताङ्कं ७, एकेन ग्रन्थिस्थेन पूरयित्वा तस्याष्टत्व विधाय तत्समानाङ्कस्थाने स गणोऽस्तीति ज्ञेयम् । इत्युद्दिष्टं विस्पष्ट विजानीत विज्ञाः । इति चतुरक्षरप्रस्तारः ।

किञ्च—

विपरीतप्रस्तारोद्दिष्टे क्रियमाणे लघुशिर स्थितान् अङ्कान् इत्यत्र गुरुशिर.-स्थितान् इति पाठस्तत्रोद्दिष्टप्रकारः सुलभः । एवञ्च सर्वप्रत्ययेषु पाठविपर्ययः कार्य इत्युपदिश्यते । एवञ्च ते सर्वेऽपि प्रत्यया विपरीता भवन्तीति रहस्यान्तरम् । एवमन्येष्वपि प्रस्तारेषु तत्तद्गणस्थानावस्थान बोद्धव्यमिति विशदबुद्धिभिः । इति संक्षेपः । इति सर्वमवदातम् ।

एकाक्षरप्रस्तारो यथा—

ऽ	१
।	२

द्व्यक्षरप्रस्तारो यथा–

ऽ	ऽ	१
।	ऽ	२
ऽ	।	३
।	।	४

त्र्यक्षरप्रस्तारो यथा–

ऽ	ऽ	ऽ	१
।	ऽ	ऽ	२
ऽ	।	ऽ	३
।	।	ऽ	४
[illegible]	ऽ	।	५
।	ऽ	।	६
ऽ	।	।	७
।	।	।	८

चतुरक्षरप्रस्तारो यथा–

ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	१
।	ऽ	ऽ	ऽ	२
ऽ	।	ऽ	ऽ	३
।	।	ऽ	ऽ	४
ऽ	ऽ	।	ऽ	५
।	ऽ	।	ऽ	६
ऽ	।	।	ऽ	७
।	।	।	ऽ	८
ऽ	ऽ	ऽ	।	९
।	ऽ	ऽ	।	१०
[illegible]	।	[illegible]	।	११
।	।	ऽ	।	१२
ऽ	ऽ	।	।	१३
।	ऽ	।	।	१४
ऽ	।	।	।	१५
।	।	।	।	१६

वर्णानां उद्दिष्टं तथैव प्रथमः ।

[इति] श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारप्रस्तारे विस्तारप्रकारः ।

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिक-
चक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मी-
नाथभट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिक-वार्त्तिकदुष्करो-
द्धारे वर्णप्रस्तारोद्दिष्टगणसमुद्धारो नाम
तृतीयो विश्रामः ॥ ३ ॥

चतुर्थो विश्रामः

अथ क्रमप्राप्तं तथैव वर्णानां नष्टमाह—'नष्टे पृष्ठे' इति श्लोकेन ।

नष्टे पृष्ठे भागः कर्त्तव्यः पृष्ठसंख्यायाः ।
समभागे लं कुर्याद् विषमे दत्त्वैकमानयेद् गुरुकम् ।। ५६ ।।

नष्टे—अदृष्टरूपे पृष्ठे सति पृष्ठसंख्यायाः—पृष्ठायाः संख्यायाः भागः कर्त्तव्यः—विधेयः । तत्र समभागे सति-ल—लघुं कुर्यात्, विषमेऽवशिष्टे सतीति शेषः । एकं दत्त्वा तस्यापि भागं कृत्वा गुरुकमानयेत्—गुरुं लिखेदित्यर्थः । एवं कृते सति प्रकृतप्रस्तारस्थितादृष्टरूपगणस्थानसिद्धिर्भवतीति भावः ।। ५६ ।।

इदमत्रानुसन्धेयम्—

अत्र तावद् भागो नाम नष्टाङ्कस्य यावत्संख्यापूरणम् । तथाहि सोदाहरणमुच्यते । यथा—

चतुरक्षरप्रस्तारे षष्ठो गणः किमाकारः ? इति प्रश्ने, षडङ्कभागं कृत्वा तदर्द्धं त्रयं ३ स्थापनीयम् । अयं च समो भागः, उभयकोटिसाम्यात् । अथ एको १ गुरुर्लेख्यः । अनन्तरं अवशिष्टस्य त्रयस्य विषमत्वात् एकं १ दत्त्वा चतुष्टयं सम्पाद्य तस्य भागं कृत्वा द्वयं २ स्थापनीयम् । तदा एको गुरुर्लेख्यः, ततो द्वयोर्भागं कृत्वा एकं १ स्थापनीयम् । तदा एको १ लघुर्लेख्यः । ततोऽप्यवशिष्टे विषमे एकं १ दत्त्वा द्वित्वं सम्पाद्य तस्यापि भागं कृत्वा एकमेव स्थापनीयम् । तदा एको गुरुर्लेख्यः । एवञ्च प्रथमं लघुरनन्तरं गुरुस्ततो लघुरन्तरे गुरुरेवमाकारश्चतुरक्षरप्रस्तारे षष्ठो । ऽ । ऽ गणं इति वेदितव्यम् ।

तथा चात्रैव सप्तमस्थाने किमाकारको गणः ? इति प्रश्ने, सप्तमस्य विषमत्वात् पूर्वमेको गुरुर्लेख्यः । ततः सप्तसु एकं दत्त्वा अष्टौ कृत्वा विभागः कार्यस्तेन अवशिष्टाश्चत्वारः । अयं च समो भागस्तत एको १ लघुर्लेख्यः । पुनश्चतुष्टयस्यावशिष्टस्य भागं कृत्वा द्वयं समं स्थापनीयम् । अत एको लघुरेव लेख्यः । अनन्तरं अवशिष्टस्य एकाङ्कस्य विषमीभूतत्वाद् गुरुरेव लेख्यः । एवञ्च प्रथमं गुरुरनन्तरं लघुस्ततोऽपि लघुरेव चरमे च गुरुरेवं ऽ । । ऽ आकारश्चतुरक्षरप्रस्तारे सप्तमो गण इति च विज्ञेयम् । एवं पुनः पुनर्भागे समे विभजनीये लघुर्लेख्यः । विषमे एकं दत्त्वा भागे कृते गुरुर्लेख्यः । प्रकृते च लघ्वधिको गण

आयातीति षड्विंशतिवर्णप्रस्तारपर्यन्तं विषमस्थलेषु एकैकं दत्वा गुरुर्लेख्य इति संक्षेप.। सर्वमिदमतिमञ्जुलवञ्जुलवर्णनष्टमिति शिवम्।

वर्णाना नष्टम्

ı S ı S ६

S ı ı S ७

तथैव द्वितीयप्रत्ययः।

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्रचूडा-
मणिसाहित्यार्णवकर्णधार-छन्द.शास्त्रपरमाचार्यश्रीलक्ष्मीनाथभट्टारक-
विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारवर्णप्रस्तार-
नष्टगणसमुद्धारो नाम चतुर्थो विश्रामः॥ ४॥

पञ्चमो विश्रामः

अथ तृतीयप्रत्ययस्वरूपवर्णमेरुमाह—श्लोकद्वयेन कोष्ठानिति ।

> कोष्ठानेकाधिकान् वर्णे कुर्यादाद्यन्तयोः पुन ।
> एकाङ्कमुपरिस्थाङ्कद्वयैरन्यान् प्रपूरयेत् ॥ ५७ ॥
> वर्णमेरुरय सर्वगुर्वादिगणवेदकम् ।
> प्रस्तारसख्याज्ञानञ्च फल तस्योच्यते बुधैः ॥ ५८ ॥

तत्र च क्रमाद् एकाधिकान् कोष्ठान् वर्णैरक्षरैरुपलक्षितान्, पुनराद्यन्तयोरेकाङ्क च कुर्याद् विलिख्य रचयेत् । ततश्च मध्यस्थकोष्ठकस्योपरि स्थिताङ्कद्वयैरेकीकृतैरित्यर्थः । अन्यान् शून्यान् कोष्ठान् प्रपूरयेत् ॥ ५७ ॥

एव कृते सत्यय वर्णमेरुर्मेरुरिव भवतीति शेष । तस्यैवप्रकारेण विरचितस्य मेरोर्बुधैः–अधीतछन्द शास्त्रै भाष्यवार्त्तिकतात्पर्याभिज्ञैरिति यावत् । सर्वगुरुरादौ येषामेवविधाना गणाना वेदक–ज्ञापक प्रबवोधकमिति, यावत् प्रस्तार सख्याज्ञान च यतो भवतीति उभयमपि फलविशेषणम् । तथा च तत्तत्पङ्क्तिस्थकोष्ठगत तत्तद्वर्णप्रस्तारसख्याव्यापक फल उच्यते–प्रकाश्यत इत्यर्थः ॥५८॥

अस्य निर्गलितार्थस्त्वेव समुल्लसति—

एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरपर्यन्त स्वस्वप्रस्तारे कति सर्वगुरव, कत्येकादिगुरव, कति सर्वलघव, कति वा प्रस्तारसख्येति प्रश्ने कृते वर्णमेरुणा प्रत्युत्तर देयम् । तत्र एकाक्षरादिक्रमेण यावदिष्ट कोष्ठकान् विरचय्य, आदावन्ते च कोष्ठके प्रथमाङ्को दातव्य । ततो मध्यस्थकोष्ठके च तदीयशिर कोष्ठकद्वयाङ्क शृङ्खलाबन्धन्यायेन एकीकृत्य पर शून्य कोष्ठक एकीकृताङ्कै पूरयेत् । एव अन्यत्रापि पूरणीये कोष्ठके कोष्ठानामुपरिस्थितकोष्ठद्वयाङ्कमुक्तबन्धन्यायेन पूरण विधेय इति सक्षेप । एव पूरितेषु कोष्ठेषु एकाक्षरप्रस्तारे आदावेकगुर्वात्मकस्तदन्ते च एकलघ्वात्मक सकेत इति ।

द्व्यक्षरप्रस्तारे तु सर्वगुरुरादौ त्रिगुरु-द्विगुर्वोरिभावात् स्थानद्वयेप्येकगुरुरन्ते च सर्वलघुरिति ।

त्र्यक्षरप्रस्तारे चादौ सर्वगुरुस्त्रिगुरोरन्यत्रासम्भवात्, स्थानत्रये द्विगुरु, स्थानत्रये च एकगुरुरन्ते च सर्वलघुरिति ।

चतुरक्षरप्रस्तारेपि सर्वगुरुरादौ च चतुर्गुरोरन्यत्राभावात्, स्थानचतुष्के त्रिगुरु, स्थानषट्के द्विगुरु, स्थानचतुष्टये च एकगुरुरन्ते च सर्वलघुरिति ।

एवमन्या प्रणालिकया सुधीभि षड्विंशत्यक्षरप्रस्तारपर्यन्त अङ्कसञ्चार-प्रकार समुन्नेय ।

किञ्चात्र तत्तत्पङ्क्तिकोष्ठगततत्तद्वर्णप्रस्तारपिण्डसंख्यापि तत्तत्पङ्क्ति-स्थिताङ्कै समुल्लसतीति वर्णमेरुरय मेरुरिवादिभागसकुचितान्तविस्ताररूपो विभातीति श्रीगुरुमुखादवगतो वर्णमेरुलिखननमप्रकार प्रकाशित इति शिवम ।

श्रीलक्ष्मीनाथभट्टेन रायभट्टात्मजन्मना ।
कृतो मेरुरय वर्णप्रस्तारस्यातिसुन्दर ॥

अस्य स्वरूपमुदाहरणमत्र द्रष्टव्यम् ।

वर्णमेरुर्यथा तृतीय-

१	१							
१	२	१						
१	३	३	१					
१	४	६	४	१				
१	५	१०	१०	५	१			
१	६	१५	२०	१५	६	१		
१	७	२१	३५	३५	२१	७	१	
१	८	२८	५६	७०	५६	२८	८	१
१	९	३६	८४	१२६	१२६	८४	३६	९	१

नववर्णमेरुरयम् । एव अग्रेपि समुन्नेय सुधीभि ।

इति श्रीमन्नवनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकासूरि-चक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्द शास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथ-भट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्तिकदुष्करोद्धारे एकाक्षराद् षड्विंशत्यक्षरावधिवर्णप्रस्तारमेरूद्धारो नाम पञ्चमो विश्राम ॥५॥

षष्ठो विश्रामः

अथ मेरुगर्भां चतुर्थप्रत्ययस्वरूपां वर्णानां पताकामाह—श्लोकत्रयेण दत्त्वेत्यादि।

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पूर्वाङ्कै योजयेदपरान्।
अङ्कः पूर्वं यो वै भृतस्ततः पंक्तिसञ्चारः ॥५९॥
अङ्काः पूर्वं भृता येन तमङ्कभरणं त्यजेत्।
अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्कं नैव साधयेत् ॥६०॥
प्रस्तारसंख्यया चैवमङ्कविस्तारकल्पना।
पताका सर्वगुर्वादिवेदिकेयं विशिष्य तु ॥ ६१ ॥

तत्र पूर्वयुगाङ्कान् एक-द्वि-चतुरष्टादीन् अङ्कान् प्रथमं दत्त्वा पूर्वाङ्कैरेकद्व्यादिभिरपरान् त्र्यादीन् अङ्कान् योजयेत् बिभृयात् भरणं कुर्यादिति यावत्। किञ्च, य एवाङ्कः पूर्वं भृतः-पूरितः, ततस्तस्मादेव अङ्कात् वै-नियमेन पंक्तिसञ्चारः विधेय इति शेषः ॥ ५९ ॥

अङ्का इति। नियमान्तरं च, येन-अङ्केन पूर्वमङ्का भृताः-पूरिताः तमङ्कं पुनर्भरणं त्यजेत्, प्रयोजनाभावात्। किञ्च, अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्कं पुनर्न साधयेत्-न स्थापयेदित्यर्थः ॥ ६० ॥

पताकाप्रयोजनमाह-

प्रस्तारेति। एवं प्रस्तारसंख्यया अत्राङ्कविस्तारकल्पना भवतीति शेषः। एतादृशी चेयं पताका विशिष्य-विशिष्टां कृत्वा, तु-अवधारणे, सर्वगुर्वादिसर्वलघ्वन्तवेदिका-ज्ञापिका विज्ञातव्यैवेति वाक्यार्थः ॥ ६१ ॥

एवमुक्तं भवति—

भो शिष्याः! उद्दिष्टसदृशा अङ्का देयाः। पूर्वाङ्कैः परभरणं कुर्यात्, पूरयितव्यः। पंक्तेः प्रधानाङ्कस्य पश्चात् स्थिताः पूर्वाङ्का भरणं पूरणम्। एकत्राधिकस्य अङ्कस्य प्राप्तौ सा पंक्तिरेव तदङ्कभरणे त्यज्यत इत्यवधेयम्।

एवञ्च मेरूक्तप्रस्तारसंख्यया पताकाङ्का वर्द्धयितव्याः। तथाहि—

चतुर्वर्णप्रस्तारे एक-द्वि-चतुरष्टाङ्का देयाः। यथा—१।२।४।८। अत्रैकाङ्कस्य पूर्वाङ्कासम्भवात् द्वितीयाङ्कादारभ्य पंक्तिः पूर्यते। तत्र

पूर्वाङ्का एकाङ्क एव प्रस्तारादिभूतः सर्वगुरुरूपः, तस्य परे द्वितीयादयः ते च अव्यवहितानतिक्रमेण पूर्यन्ते । तथा च एकेन द्वाभ्यां मिलित्वा त्र्यङ्को भवति सः द्वितीयाङ्काधस्तात् स्थापनीयः । तत एकेन अष्टभिश्च मिलित्वा नवाङ्को भवति स पञ्चमाङ्काधःस्यात् स्थापनीयः । ततः पंक्तिपरित्यागः । मेरौ त्रिगुरूणां रूपाणां चतुःसंख्यादर्शनादिति भावः । एतेन चतुर्वर्णप्रस्तारे प्रथमं रूपं सर्वगुरु ब्रूयात् । द्वि-त्रि-पञ्च-नवस्थानस्थानि चतूरूपाणि त्रिगुरूणि जानीयादिति । एवमङ्कचतुष्टयं साधयित्वा, ततश्चतुरङ्कस्य अधस्तात् पूरित-पंक्तिस्थाः पराङ्कमिलिताः षडङ्का देयाः । तत्र प्रथमः पूरित एवेति त्यज्यते । ततो द्वाभ्यां चतुर्भिर्मिलित्वा षष्ठोऽङ्को ६ भवति, स चतुरङ्काधस्तात् स्थापनीयः । ततः त्रिभिः चतुर्भिः सम्भूय सप्तमोऽङ्को भवति, स च षडङ्काधस्तात् स्थापनीयः । एवं च पञ्चभिश्चतुर्भिर्मिलित्वा जायमानो नवाङ्को न स्थापनीयः । 'अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्कं नैव साधयेत्' इत्युक्तत्वात् सिद्धस्य साधनायोगादिति युक्ति-सिद्धत्वाच्च इति । ततो द्वाभ्यां अष्टभिर्मिलित्वा दशाङ्को भवति, स च सप्ताङ्का-धस्तात् स्थापनीयः । ततश्च त्रिभिरष्टभिर्मिलित्वा एकादशाङ्को भवति, स च दशाङ्काधस्तात् स्थापनीयः । ततः पञ्चभिरष्टभिर्मिलित्वा त्रयोदशाङ्को भवति, स चापि एकादशाङ्काधस्तात् स्थापनीय इति । ततः पङ्क्तिपरित्यागः । मेरु-संख्यापरिमाणदर्शनादिति पूर्ववद् हेतुरिति भावः । एतेन च चतुर्वर्णप्रस्तारे चतु-षट्-सप्त-एकादश-त्रयोदशस्थानस्थानि षड्रूपाणि द्विगुरूणि जानीयादिति । एवमङ्कषट्कं पूर्ववदेव साधयित्वा, ततोऽष्टाङ्काधस्तात् पूरितपंक्तिस्थाः पराङ्क-मिलिताश्चत्वारोऽङ्का देयाः तथा च चतुर्भिरष्टभिः सम्भूय द्वादशाङ्को भवति, स चाष्टमाङ्काधस्तात् स्थापनीयः । ततः षड्भिरष्टभिश्च सम्भूय चतुर्दशाङ्को भवति, स तु द्वादशाङ्काधस्तात् स्थापनीयः । ततः सप्तभिरष्टभिश्च सम्भूय पञ्चदशाङ्को भवति, सोऽपि चतुर्दशाङ्काधस्तात् स्थापनीयः । ततोऽपि पंक्तिपरित्यागः । मेरावेकगुरूणां चतुःसंख्यादर्शनादिति भावः । एतेन चतुर्वर्णप्रस्तारे अष्टमद्वादश-चतुर्दश-पञ्चदशस्थानस्थानि रूपाणि एकगुरूणि ब्रूयादिति । एवं अङ्कचतुष्टयं साधयित्वा, ततो दशभिरष्टभिस्तु प्रस्ताराधिकाङ्कगमनादष्टादशाङ्कसञ्चारः । तर्हि षोडशाङ्कः सर्वलघुरूपः १६ अवास्माभिरपेक्षायामष्टमाङ्काग्रे दीयते । सर्व-लघुज्ञानार्थमिति सम्प्रदायः । तथा च प्रथमाङ्कचतुर्थाङ्कयोः सद्भावेन पञ्चमस्थाने भवतीति ज्ञेयम् ।

एतावत्प्रयोजनं तु मेरौ चतुर्वर्णप्रस्तारस्य एकं रूपं चतुर्गुर्वात्मकम् । सर्वगुर्वात्मकं चत्वारि त्रिगुरूणि रूपाणि, षड् द्विगुरूणि रूपाणि, चत्वारि एक-गुरूणि रूपाणि, एकं सर्वलघ्वात्मकं रूपमस्ति ।

तत्र षोडशभेदाभिन्ने चतुर्वर्णप्रस्तारे कतमस्थाने सर्वगुर्वात्मकं, कतमस्थाने च त्रिगुर्वात्मकं, कतरस्थाने द्विगुर्वात्मकं, कतमस्थाने च एकगुर्वात्मकं, कुत्र वा सर्वलघ्वात्मकं रूपमस्ति, कति वा प्रस्तारसंख्येति प्रश्ने कृते पताकया उत्तरं दातव्यमिति ।

पताकाज्ञानफलमिति श्रीगुरुमुखादवगतो वर्णपताकालिखनप्रकारः प्रकाशित इति दिगुपदर्शनम् । उत्तरत्र च षड्विंशतिवर्णपर्यन्तं पताकाविरचनप्रकारः समुन्नेयः सुधीभिः, ग्रन्थविस्तरभयान्नेहास्माभिः प्रपञ्च्यत इति शिवम् ।

अत्र चतुर्वर्णपताकायां तु सिद्धाङ्कान् पिङ्गलोद्योताख्यायां प्राकृतपिङ्गलसूत्रवृत्तौ श्रीचन्द्रशेखरः श्लोकाभ्यां संजग्राह । यथा—

एक-द्वि-त्रि-शराङ्काश्च वेदर्त्तु-मुनि-दिक्-शिवाः ।
कामाष्ट-सूर्य-मनवस्तिथि-क्षोणीशसम्मिताः ॥१॥
सिद्धाङ्काः स्युश्चतुर्वर्णपताकानुक्रमे स्फुटम् ।
पञ्चकोष्ठे लिखेदङ्कान् शेषानेवं लिखेदिति ॥ २ ॥

शेषान् प्रस्तारान्तरपताकाङ्कान् एवं क्रमात् कोष्ठवर्द्धनपूर्वकक्रमात् लिखेत्- विन्यसेदित्यर्थः ।

अत्र अङ्कविन्यासक्रमस्तु श्रीगुरुमुखादेवावगन्तव्य इति सर्वं मङ्गलम् ।

चतुर्वर्णपताका यथा प्रत्ययकाख्यः—

१	२	४	८	१६
	३	६	१२	
	५	७	१४	
	९	१०	१५	
		११		
		१३		

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्रचूडा-मणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे वर्णपताकाङ्कोद्धारो नाम षष्ठो विश्रामः ॥६॥

सप्तमो विश्रामः

अथ तृतीयप्रत्ययस्वरूपमेवात्र [मात्रा]मेरुमाह—एकाधिककोष्ठानामित्यादिना सार्द्धेन श्लोकचतुष्टयेन—

> एकाधिककोष्ठानां द्वे द्वे पङ्क्ती समे कार्ये।
> तासामन्तिमकोष्ठेष्वेकाङ्कः पूर्वभागे तु ॥६२॥
> एकाङ्कमयुक्पङ्क्तेः समपङ्क्ते पूर्वयुग्माङ्कम्।
> दद्यादादिमकोष्ठे यावत् पङ्क्तिप्रपूर्तिः स्यात् ॥६३॥
> आद्याङ्केन तदीयैः शीर्षाङ्कैर्वामभागस्थं।
> उपरिस्थितेन कोष्ठं विषमायां पूरयेत् पङ्क्तौ ॥६४॥
> समपङ्क्तौ कोष्ठानां पूरणमाद्याङ्कमपहाय।
> उपरिस्थाङ्कैस्तदुपरिसस्थैर्वामस्थितैरङ्कैः ॥६५॥
> मात्रामेरुरयं प्रोक्तः पूर्वोक्तफलभागिति।

तत्र क्रमादेकैकेनाधिकेन कोष्ठेनोपलक्षितानां कोष्ठानां मध्ये द्वे द्वे पङ्क्ती समे-समाने कार्ये-लिखनीये इत्यर्थः। तासां-सर्वासां पङ्क्तीनां अन्तिमकोष्ठेषु एकाङ्क-प्रथमाङ्कं यावदित्यं दद्यात् इत्यन्वयः। अथ च सर्वासां पङ्क्तीनां पूर्वभागे तु अङ्कविन्यास उच्यते इति शेषः ॥ ६२ ॥

एकाङ्कमिति। तत्रायुक्पङ्क्तेः-विषमपङ्क्तेरादिमकोष्ठे-प्रथमकोष्ठे एकाङ्क-प्रथमाङ्कं समपङ्क्तेरादिमकोष्ठे-प्रथमकोष्ठे पूर्वयुग्माङ्कं एकान्तरितं प्रथमाङ्कं यावत् पङ्क्तिप्रपूर्त्तिः-पूरणं स्यात्-भवति तावद् दद्यात्-विन्यसेद् इत्यर्थः ॥ ६३ ॥

तदेवाह—

आद्याङ्केनेति। ततश्च सर्वत्र विषमायां पङ्क्तौ उपरिस्थितेन आद्याङ्केन-प्रथमाङ्केन वामभागस्थं तदीयैः शीर्षाङ्कैश्च कोष्ठशून्यमिति शेषः प्रपूरयेत-साङ्कं कुर्यादित्यर्थः ॥ ६४ ॥

किञ्च—

समपङ्क्ताविति। समपङ्क्तौ चाद्याङ्कं अपहाय-त्यक्त्वा उपरिस्थिताङ्कैः-तदुपरिसस्थैः वामभागस्थितैरङ्कैश्च शून्यानां कोष्ठानां पूरणं विधेयमिति शेषः ॥ ६५ ॥

उक्तं मात्रामेरुमुपसंहरति—'मात्रामेरुरयमित्यर्द्धेन ।

भो शिष्याः ! पूर्वोक्तफलभागयं मात्रामेरुरिति प्रकारेणोक्तः । यथा, वर्णमेरोः फलं तथा मात्रामेरोरपीत्यर्थः ।

अत्रैतदुक्तं भवति । द्विमात्रादि-निरवधिकमात्रापंक्तिपर्यन्तं स्वस्वप्रस्तारे कति सर्वगुरवः, कत्येकादिगुरवः, कति सर्वलघवः, कति वा प्रस्तारसंख्येति प्रश्ने कृते मात्रामेरुणा प्रत्युत्तरं देयम् ।

तत्र च क्रमेणैव एकैकेनाधिके कोष्ठेनोपलक्षितानां कोष्ठकानां मध्ये द्वे द्वे कोष्ठे अर्थात् पङ्क्ती समे-सदृशे लिखनीये । तत्र प्रथमे कोष्ठद्वयं । तथा द्वितीयेऽपि कोष्ठद्वयमेव । तृतीये कोष्ठत्रयं । चतुर्थेऽपि कोष्ठत्रयमेव । पञ्चमे चत्वारि । षष्ठेऽपि चत्वार्येव । अत्र कोष्ठपदेन कोष्ठाङ्कः पंक्तिश्च लक्ष्यते, उपचारात् एककलायाः प्रस्तारो नास्तीति प्रथमं न कोष्ठगणनाकल्पना । अतः कोष्ठद्वयात्मिकैव आदौ पंक्तिरिति प्रथम इत्युक्तिरिति समञ्जसम् ।

एवञ्च कोष्ठपंक्तिषु अधोधः क्रमेणाङ्कान् लिखेत् । सर्वत्र च शेषकोष्ठे प्रथमाङ्को देयः । तत्र तत्र च कोष्ठद्वयमध्ये आदावुपरिकोष्ठे च एकरूपोऽङ्को देयः । उपरिस्थितस्योपरिस्थिताङ्काभावाद् उत्सर्गसिद्धैकरूपाङ्केन सहितं कृत्वा द्वितीयकोष्ठे द्वितीयाङ्को देयः इति । तृतीयकोष्ठे तु उपरिस्थिताङ्कसहितं कृत्वा अर्थात् शिरःस्थेनाङ्कद्वयेन मिलितं कृत्वा, अतस्त्रिरूपोऽङ्कस्समायाति । तथा चार्थात् शिरःस्थेनाङ्केन सह प्रथमो द्वितीयेऽधःस्थे मेलनीयः ।

यद्वा, आद्यद्वयमधो मिलतीयं तु प्रक्रिया । तथा च प्रथमकोष्ठद्वयस्य पूरितत्वात् द्वितीयादारभ्याङ्का दातव्याः । तत्र द्वितीये द्वयं, तृतीये पुनरेकं, चतुर्थे त्रयम्, पञ्चमे पुनरेकं, षष्ठे चत्वारि, सप्तमे पुनरेकं, अष्टमे पञ्च, नवमे पुनरेकं, दशमे षट्, एकादशे पुनरेकं, द्वादशे सप्तमेति प्रक्रियया अङ्का देयाः । एवमाद्ये । तदध कोष्ठेऽन्तकोष्ठे च पूर्णे मध्यस्थशून्यकोष्ठे चैषा प्रक्रिया पूरणीया । कोष्ठशिरः-कोष्ठस्थाङ्कः-परकोष्ठस्थाङ्को द्वावङ्को चैकीकृत्य मध्यकोष्ठे-शून्यकोष्ठे मेलितोऽङ्को देयः । एवं सर्वत्र निरवधिकत्वात् यावदित्थं कोष्ठकं विरच्य मात्रामेरुः पूर्वोक्तरूपः कर्त्तव्य इति ।

अयं त्रयोदशमात्रामेरुलिखनक्रमप्रकारः श्रीगुरुमुखादवगतः प्रकाशित इत्युपरम्यते ।

अत्रेदं अनुसन्धेयम् । समविषमरूपा द्वि-द्वि-मात्रादिप्रस्तारमारभ्य निरवधिकमात्राप्रस्तारपर्यन्तं स्वस्वप्रस्तारे कति समकले लघवः, कति च गुरवः, कति

विषमकले लघव, कति च गुरव, कति मोभयत्र प्रस्तारसत्स्येति प्रश्ने कृते मात्रा-मेरुणा प्रत्युत्तर देयम् ।

तत्र द्विकले समप्रस्तारे एक सर्वगुरु, द्वितीयो द्विकलात्मक सर्वलघुरिति द्विभेद प्रस्तारसमेत ।

त्रिकले विषमप्रस्तारे द्वावेककलावेकगुरुकौ चान्ते त्रिकलात्मक सर्वलघु-रिति द्विभेद प्रस्तारसमेत ।

समकले चतुष्कलप्रस्तारे चादौ द्विगुरु स्थानत्रये च एकगुरुर्द्विकलश्चान्ते चतुष्कलात्मक सर्वलघुरिति पञ्चभेद प्रस्तारसमेत ।

विषमकले पञ्चकलप्रस्तारे त्रयो गणा एकलघव, चत्वारो गणास्त्रिलघव, स्थानत्रये द्विगुरु, स्थानचतुष्टये चैकगुरुरन्ते च पञ्चकलात्मक सर्वलघु-रित्यष्टभेद प्रस्तारसमेत ।

समकले षट्कलप्रस्तारे आदौ सर्वगुरु, षड्गणा द्विकला, पञ्चगणाश्चतु-ष्कला, स्थानषट्के द्विगुरु, स्थानपञ्चके चैकगुरुरन्ते च षट्कलात्मक सर्वलघुरिति त्रयोदशभेद प्रस्तारसङ्घेत इति ।

एवमनेन प्रकारक्रमेण यावदित्य मात्रामेर्वभीष्टमात्राप्रस्तारे लघुगुर्वादि-प्रकारप्रक्रिया अवगन्तव्या ।

अथवा पूर्वरूपप्रश्ने यावदित्य यावत्कलकप्रस्तारमात्रामरु कोष्ठकैर्विरच्य समकलप्रस्तारे वामत क्रमेण द्वौ चत्वार षडष्टावनेन प्रकारेण गुरुज्ञानम् । विषमकलप्रस्तारे तु एक त्रि पञ्च-सप्तानेन प्रकारक्रमेण लघुज्ञानम् । अन्त च सर्वत्र लघुरिति । उभयत्रापि एक द्वौ त्रय पञ्चेत्याद्यनया सरण्या दक्षिणतो व्युत्क्रमेण शृङ्खलाबन्ध न्यायन तत्तत्प्रभेदज्ञानम् ।

किञ्चात्र वामभागे सर्वत्रैकाङ्कस्थले सर्वगुरुज्ञान भवतीति विज्ञातव्य-मित्युपदेशरहस्यम् । इति शिवम् । सर्वत्राऽत्र च दक्षिणभागे शृङ्खलाबन्धन्यायेन अग्रिमाङ्कपिण्डोत्पत्तिर्भवतीति रहस्यान्तरमिति च ।

श्रीलक्ष्मीनाथभट्टेन रायभट्टात्मजन्मना ।
कृतो मेरुरय मात्राप्रस्तारस्यातिदुर्गम ॥

अस्य स्वरूपमुदाहरणमत्र द्रष्टव्यम् ।

तथैव तृतीयप्रत्ययः मात्रामेरुः । मात्रामेरुर्यथा :-

वि० १	।	१					
स० २	ऽ	१	१				
वि० ३	।ऽ	२	१				
स० ४	ऽऽ	१	३	१			
वि० ५	।ऽऽ	३	४	१			
स० ६	ऽऽऽ	१	६	५	१		
वि०	।ऽऽऽ	४	१०	६	१		
स०	ऽऽऽऽ	१	१०	१५	७	१	
वि०	।ऽऽऽऽ	५	२०	२१	८	१	
स०	ऽऽऽऽऽ	१	१५	३५	२८	९	१
वि०	।ऽऽ·ऽऽ	६	२१	५६	३६	१०	१

एकादशमात्रामेरुरयम् । एवं अग्रेऽपि समुन्नेयः ।

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिक-चक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथ-भट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्तिकदुष्करोद्धारे एकमात्राविनिरवधिकमात्राप्रस्तारमेरूद्धारो नाम सप्तमो विश्रामः ॥७॥

अष्टमो विश्रामः

अथ मरुगर्भां चतुर्थप्रत्ययस्वरूपामेव मात्राणां पताकामाह—अथेत्यादि अर्द्धेन श्लोकद्वयेन—

> अथ मात्रापताकापि कथ्यते कवितुष्टये ॥६६॥
> दत्त्वोद्दिष्टवदङ्कान् वामावर्त्तेन लोपयेदन्त्ये ।
> अवशिष्टो वै योऽङ्कस्ततोऽभवत् पक्तिसञ्चार ॥६७॥
> एकैकाङ्कस्य लोपे तु ज्ञानमेकगुरोर्भवेत् ।
> द्वित्र्यादीनां विलोपे तु पक्तिर्द्वित्र्यादिबोधिनी ॥६८॥

अथेति । मात्रामेरुकथनानन्तरं मात्राणां पताकापि कवितुष्टये-कवीनां सन्तोषार्थं कथ्यते-उच्यत इत्यर्थः ॥ ६६ ॥

तत्प्रकारमाह—

दत्त्वेति । तत्र उद्दिष्टवत्-उद्देशाङ्कवत् अङ्कान्-एक-द्वि-त्रि-पञ्चाष्ट-त्रयोदशादीन् दत्त्वा-लिखित्वा, ततो वामावर्त्तेन-वामभागतः अन्त्ये-त्रयोदशाङ्के लोपयेत् पूर्वमङ्कमिति शेषः । अवशिष्टो वै योऽङ्कः लोपे सतीति शेषः । ततोऽङ्कात् पक्तिसञ्चारो भवेदिति-जानीयादित्यर्थः ॥६७॥

अपराङ्कलोपेन प्रकारमाह—

एकैकाङ्कस्येति । एकैकाङ्कस्य लोपे तु अन्त्य इति शेषः । एकगुरोर्ज्ञानं भवेत् । द्वित्र्यादीनां अङ्कानां विलोपे तु पक्तिः द्वित्र्यादिगुरुबोधिनी भवतीति शेषः ॥ ६८ ॥

अयमर्थः—उद्दिष्टसदृशा अङ्का स्थाप्याः । ते यथा—१, २, ३, ५, ८, १३ । एक-द्वित्रिपञ्चाष्टत्रयोदशाद्याः । ततो वामावर्त्तेन परं लोपयेत्-सर्वास्मिन् अङ्कं तत्पूर्वेणाङ्केन लोपयेदित्यर्थः । तत एकेनाङ्केन अन्तिमाङ्कलोपे कृते सति एकगुरुरूपज्ञानं भवति । द्वाभ्यां अन्तिमाङ्के लोपे सति द्विगुरुरूपज्ञानं भवति । त्रिभिरन्तिमाङ्कलोपे सति त्रिगुरुरूपज्ञानं भवतीत्यादि ज्ञेयम् । एवं कृते मात्रापताका सिद्ध्यति ।

तत्र षट्कलप्रस्तारे यथा—उद्दिष्टसमाना अङ्का एकद्वित्रिपञ्चाष्टत्रयोदशरूपाः स्थापनीयाः । ततः सर्वापेक्षया परस्त्रयोदशाङ्कः तत्पूर्वोऽष्टमाङ्कः, तेनाष्टमाङ्केन त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति अवशिष्टाः पञ्च । तस्य पञ्चमाङ्कस्य

तत्पूर्वं त्रिविद्यमानत्वात् अष्टमाङ्कलोपात् परकलया सह गुरुभावाच्च पञ्चमाङ्काद् एकगुरुपंक्तिक्रमो विधेय इति । तत्र च पञ्चमस्थाने आदौ चतुर्लघुकमन्ते चैक-गुरुकमेवं ।।।।ऽ आकार रूपमस्तीति ज्ञानपताकाफलम् । एवमन्यत्रापि गुरुभावो ज्ञातव्यः ।

तथा पञ्चभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति अष्टावशिष्यन्ते, ते तु पञ्चाधो लेख्यः । तथा त्रिभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति दशावशिष्यन्ते ते च अष्टाधो लेख्या. । तथा द्वाभ्यां द्वाभ्यां त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति एकादशावशिष्यन्ते तेऽपि दशाधो लेख्यः । तथा एकेन त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति द्वादशावशिष्यन्ते त एकादशाधो लेख्याः । अत्र सर्वत्र पूर्व एव हेतुरुन्नेयः ।

अतश्च मेरावेकगुरुकचतुर्लघुकरूपगुरुस्थानानि प्रस्तारगत्या पञ्चैव भवन्तीति नाग्रे पंक्तिसञ्चारः । एतेन षट्कलप्रस्तारे पञ्चमाष्टमदशमैकादश-द्वादशस्थानस्थानि रूपाणि एकगुरुकानि ब्रूयादिति । एवं अङ्कपञ्चमके एक-गुरुकमुक्तम् ।

अथ द्विगुरूणि रूपाणि उच्यन्ते—तत्र द्वाभ्यामङ्काभ्यां अन्तिमाङ्कलोपे कृते सति द्विगुरुक रूपमिति । पञ्चाष्टभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति भागाभावात् तद्वामावर्त्तस्थैस्त्रिभिस्तदग्रस्थैरष्टभिश्च जातैरेकादशभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति द्वावशिष्येते, द्वयोस्ततपूर्वत्र छिद्यमानत्वात् । तत्रैकादशाङ्कलोपात् पर-कलया सह गुरुभावाच्च द्वितीया मारभ्य द्विगुरुकपंक्तिसचारो भवतीति । तथा च द्वितीयस्थाने प्रथम द्विलघुक ततो द्विगुरुक ।।ऽऽ एवमाकारकं रूप-मस्तीति पूर्ववदेव पताकाफलमुदेतीति ।

एवमन्यत्रापि प्रस्तारान्तरे गुरुभावोऽवगन्तव्यः । तथा च द्वाभ्या अष्ट-भिश्च जातैर्दशभिः त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति त्रयोऽवशिष्यन्ते, ते द्वयधो लेख्या. । तत एकेन अष्टभिश्च जातैर्नवभि. त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति चत्वारो-ऽवशिष्यन्ते, ते च त्रधो लेख्याः । ततः पञ्चभिस्त्रिभिश्च जातैरष्टभिस्त्रयोदशाका-वयवलोपाद् अवशिष्टः पञ्चमाङ्को वृत्त एवेति न स्थाप्यते । 'अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्कं नैव साधयेदिति ।' वर्णपताकातो अनुवृत्तित्वादिति । ततः पञ्चभि-र्द्वाभ्यां च जातो सप्तभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति सप्तावशिष्यन्ते, ते तु षडधो लेख्याः । द्वित्रिलोप. पञ्चमात्मको वृत्त एवेति न स्थापनीय, अनुवृत्तसिद्धघादि-निषिद्धत्वादिति । तत एकेन त्रिभिश्च जातैश्चतुर्भिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति नवावशिष्यन्ते, तेऽपि सप्ताधो लेख्याः । एषु च पूर्ववद् हेतुरुन्नेयः । अतश्च मेरौ द्विगुरुक-द्विलघुकरूपस्थानानि प्रस्तारगत्या षडेव भवतीति नाग्रे पंक्तिसञ्चारः ।

तेन पट्कलप्रस्तारे द्वितीय-तृतीय-चतुर्थ-पष्ठ-सप्तम-नवमस्थानस्थानि रूपाणि द्विगुरूणि ब्रूयादिति ।

तथा च त्रिलोपे त्रिगुरुकं रूपं भवतीति, त्रिपञ्चाष्टलोपे भागो नास्तीति, द्वि-त्रि-पञ्चलोपोऽप्यष्टात्मको वृत्त एवेति, पञ्च-द्वयेकलोपोऽप्यष्टलोपात्मको वृत्त एवेति । एक-द्वि-त्रिलोपोऽपि वृत्त इति प्रकारेण जायमाना अङ्का न स्थापनीया प्रकृतप्रस्तारसमाप्तेरिति भाव ।

ननु प्रथम रूप सर्वं गुर्वात्मकं कुत्रास्तीत्यपेक्षाया एक-त्र्यष्टभिर्मिलित्वा जातैर्द्वादशभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति एकोऽवशिष्ट, स आद्ये स्थाने त्रिगुर्वात्मक रूप भवतीति विज्ञातव्यमिति । चरम रूप तु अष्टमाङ्काग्रे उद्दिष्टाङ्काऽऽकारत्वेन स्थापितमेवास्ति । तथा चात्रापि प्रथमाङ्कचरमाङ्कयो पूर्वोक्तन्यायेनाऽस्थान भवतीति वेदितव्यम् ।

पताकाप्रयोजन तु मेरौ पट्कलप्रस्तारस्यैक प्रथम रूप त्रिगुरूपलक्षित सर्वगुर्वात्मक, षड्द्विगुरूणि रूपाणि, पञ्चैकगुरूणि रूपाणि, एक सर्वलघ्वात्मक रूपमस्ति ।

तत्र त्रयोदशभेदभिन्ने पट्कलप्रस्तारे कुत्र स्थाने सर्वगुर्वात्मक, कतमस्थाने द्विगुर्वात्मक, कतरस्थाने चैकगुर्वात्मक, कुत्र वा सर्वलघ्वात्मक, कति वा प्रस्तारसख्येति प्रश्ने कृते पताकयोत्तर दातव्यमिति पताकाज्ञानफलमिति । श्रीगुरुमुखादवगतो मात्रापताकालिखनप्रकार प्रकाशित । एवमन्यत्रापि निरवधिकमात्राप्रस्तारेषु पञ्चसप्ताष्टकलाना यथाक्रम मात्रापताकाविरचनप्रकार समुन्नेय सुधीभि, ग्रन्थविस्तारभयान्नेहास्माभि प्रपञ्चित इति शिवम् ।

अत्रापि पिङ्गलोद्योताख्याया सूत्रवृत्तौ सार्द्धेन श्लोकेन षण्मात्रपताकाया सिद्धाङ्का सगृहीता । यथा–

> एक-द्वि-त्रि समुद्राङ्ग-मुन्यङ्काश्च त्रयस्तथा ।
> पञ्चाष्ट-दिक् शिवेना स्यु तथाष्टौ च त्रयोदश ॥
> षण्मात्रिकापताकायामङ्कानुक्रमणी स्मृता ।

इति । इहापि च पक्त्या विन्यासक्रमो गुरुमुखादवगन्तव्य ।

किञ्च–

> एक-द्वि-त्रि-समुद्राङ्ग-मुनि-वह्नि-शरस्तथा ।
> वसु-दिग्-रुद्र-सूर्याष्टक्रमादङ्कान् समालिखेत् ॥
> पञ्चमात्रापताकायामङ्कानुक्रमणी मता ।

इति सार्द्धेन श्लोकेन सूत्रवृत्तौ पञ्चमात्रापताकायां सिद्धाङ्कानुक्रमणिका सगृहीता इति ।

अत्राप्यङ्कविन्यासक्रमः पूर्ववदेव । इत्थं सप्ताष्टनवसु कलासु अङ्कान् समुन्नयेत् । दिङ्मात्रमुक्तमस्माभिः ग्रन्थविस्तरशङ्कया इति सर्वमनवद्यम् ।

पञ्चमात्रापताका यथा—

१	२	३	५	८
	३		८	
	४		१०	
	६		११	
	७		१२	

षण्मात्रापताका यथा—

१	२	३	५	८	१३
	३		८		
	४		१०		
	६		११		
	७		१२		
	९				

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिक-चक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथ-भट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे मात्रा-पताकोद्धारो नामाष्टमो विश्रामः ॥ ८ ॥

नवमो विश्रामः

अथ वृत्तजातिसमार्द्धसमविषमपद्यस्थगुरुलघुसंख्याज्ञानप्रकारमाह 'पृष्ठे' इति श्लोकेन ।

पृष्ठे वर्णच्छन्दसि कृत्वा वर्णांस्तथा मात्राः ।
वर्णाङ्केन कलाया लोपे गुरवोऽवशिष्यन्ते ॥ ६६ ॥

तत्राऽमुकसंख्याक्षरप्रस्तारेऽमुके छन्दसि कति गुरवः, कति च लघव इति प्रश्ने कृते गुरुलघुसंख्याज्ञानप्रकारप्रक्रिया प्रकाश्यते ।

तत्रोद्भावितचतुष्पदे वर्णप्रस्तारच्छन्दसि समवृत्ते पृष्ठे सति वर्णान्-तत्रस्थ वर्णान् गुरुलघुरूपतया समुदायमापन्नान् मात्राः-कलाः कृत्वा, तथा गुरुलघुरूपसमुदायतयैव कलारूपतामापाद्येत्यर्थः । ततः कलाया इति जात्या एकवचनं । अतः कलानां मध्यत इत्यवधेयम् । वर्णाङ्केन पृष्ठस्य वृत्तस्य वर्णसंख्याङ्केन लोपे लोपावशिष्टकलासंख्यया गुरवोऽवशिष्यन्ते, तत्तद्वृत्तगतगुरून् जानीयादित्यर्थः । गुरुज्ञाने सति परिशेषादवशिष्टवृत्ताक्षरसंख्यया लघूनपि जानीयादित्यर्थः ॥ ६६ ॥

अत्र समवृत्तस्यैकपादज्ञानेनैव चतुर्णामपि पादानामुद्दिष्टवर्णिका विधाय लिखनेन गुरुलघुज्ञानं भवतीत्यनुसन्धेयं सुधीभिः । यथा—

समवृत्ते एकादशाक्षरप्रस्तारे षोडशमात्रात्मके रथोद्धतावृत्तपादे 'रान्नरैरिह रलौ रथोद्धता' इत्यत्र ऽ।ऽ, ।।।, ऽ।ऽ, ।ऽ वर्णा ११, मात्रा १६ षोडशकलासु पिण्डरूपासु संख्यातासु वृत्तस्यैकादशवर्णसंख्याया लुप्ताया सत्यामवशिष्टपञ्चगुरवः षड्लघवः परिशेषाद् विज्ञेया । इति समवृत्तस्थगुरुलघुज्ञानप्रकारः । एवं पादचतुष्टयेऽपि पादसाम्यात् विंशतिर्गुरवः चतुर्विंशतिर्लघवश्च भवन्तीति ज्ञेयम् । एवं प्रस्तारान्तरेऽपि समवृत्तेषु गुरुलघुज्ञानमूह्यं सुधीभिरित्युपदिश्यते ।

एवञ्च षड्त्रिंशदक्षरायाम्—

गोकुलनारी मानसहारी वृन्दावनान्तसञ्चारी ।
यमुनाकुञ्जविहारी गिरिवरधारी हरिः पायाद् ॥

इत्यस्या देहीसमाख्याया गाथाजातौ सप्तपञ्चाशत् संख्यातासु पिण्डरूपासु कलासु षड्त्रिंशदक्षरलोपे कृते सति एकविंशतिगुरवोऽवशिष्यन्ते । पारिशेष्यात् पञ्चदश लघवोऽपीति च ज्ञेयम् । इति गाथाजातिषु गुरुलघुज्ञानप्रकारः ।

उट्टवणिका यथा—

SII SSS IIS SSS IIII SSS

IIS IIII SSI III SSI SSS

पूर्वार्द्धे ३० मात्रा, उत्तरार्द्धे २७ मात्रा। मात्रा ५७, अक्षर ३६।

एवमेवापरास्वपि जातिषु गुरुलघुज्ञानप्रकार ऊहनीय इत्युपदेशः।

एवमेव अर्द्धसमवृत्तेऽपि प्रथम-तृतीयविषमपादे द्वितीयचतुर्थसमपादे च—

सहचरि कथयामि ते रहस्यं,
न खलु कदाचन तद्गृह व्रजेयाः।
इह विष-विषमागिरः सखीनां,
सकपटचाटुतराः पुरस्सरन्ति॥

इति पुष्पिताग्राभिधाने छन्दस्य[ष्ट]षष्टिकलात्मके ६८ पिण्डे छन्दोक्षर-संख्यां पञ्चाशदात्मकां ५० लुम्पेत्। एवं लोपे सति अष्टादश १८ गुरवोऽव-शिष्यन्ते, परिशेषाद् द्वात्रिंशल्लघवोऽपि ३२ तत्र वर्तन्त इत्यर्द्धसमवृत्तस्य-गुरुलघुज्ञानप्रकारः।

उट्टवणिका यथा—

III III SIS ISS [१२]
III ISI ISI SIS S [१३]
III III SIS ISS [१२]
III ISI ISI SIS S [१३]

१८ गुरु, ३२ लघु, अक्षर ५०।

एवमन्येष्वप्यर्द्धसमवृत्तस्यगुरुलघुज्ञानप्रकारः। एवमन्येष्वप्यर्द्धसमवृत्तेपूदा-हरणमूह्यं इत्युपदिश्यते।

तथा च भिन्नचिह्नचतुष्पादे विषमवृत्तेऽपि-

विललास गोपरमणीषु
तरणितनयातटे हरिः।
वंशमधरदले कलयन्
वनिताजनेन निभृतं निरीक्षितः।

इत्युद्गताभिधाने छन्दसि सप्तपञ्चाशत् ५७ कलात्मके पिण्डे छन्दोऽक्षर-संख्या त्रयश्चत्वारिंशदात्मिकां ४३ लुम्पेत्। एवमक्षरसंख्यायां लुप्तायां सत्यां चतुर्दशगुरवोऽवशिष्यन्ते। परिशेषाद् ऊनत्रिंशल्लघवोऽपि २९ विज्ञेया। इति विषमवृत्तस्यगुरुलघुज्ञानप्रकारः।

उद्धवणिका यथा—

IIS ISI IIS I [१०]
III IIS ISI S [१०]
SII III SII S [१०]
IIS ISI IIS III S [१३]

मात्रा ५७. अक्षर ४३।

एवमन्येष्वपि विषमवृत्तेषु गुरुलघुज्ञानप्रकार ऊहनीयः सुबुद्धिभिर्ग्रन्थविस्तरभयान्नेहास्माभिः प्रपञ्च्यत इति सर्वं चतुरस्रम्।

वृत्तस्थगुरुलघूनां युगपज्ज्ञानं न जायते येषाम्।
तेषां तदवगमार्थं सुकरोपायो मया रचितः॥ १॥

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे वृत्तजातिसमार्द्धसमविषमसमस्तप्रस्तारेषु तत्तद्वृत्तस्थगुरुलघुसंख्याज्ञानप्रकारसमुद्धारो नाम नवमो विश्रामः॥ ९॥

—•—

दशमो विश्रामः

अथ पञ्चमप्रत्ययस्वरूपां वर्णमर्कटीमाह—'मर्कटी लिख्यते' इत्यादिना श्लोकषट्केन—

मर्कटी लिख्यते वर्णप्रस्तारस्यातिदुर्गमा।
कोष्ठमक्षरसंख्यातं पङ्क्ती रचय षट् तथा॥ ७०॥
प्रथमायामाद्यादीन् दद्यादङ्कांश्च सर्वकोष्ठेषु।
अपरायां तु द्विगुणानक्षरसंख्येषु तेष्वेव॥ ७१॥
आदिपङ्क्तिस्थितं रङ्कं विभाव्य परपङ्क्तिगान्।
अङ्कांश्चतुर्थपङ्क्तिस्थकोष्ठकानपि पूरयेत्॥ ७२॥
पूरयेत् षष्ठपञ्चम्यावर्द्धं स्तुर्याङ्कसम्भवैः।
एकीकृत्य चतुर्थस्य-पञ्चमस्याङ्कान् सुधीः॥ ७३॥

कुर्यात् तृतीयपंक्तिस्थकोष्ठकानपि पूरितान् ।
वर्णानां मर्कटी सेयं पिङ्गलेन प्रकाशिता ॥ ७४ ॥
वृत्तं भेदो मात्रा वर्णा गुरवस्तथा च लघवोऽपि ।
प्रस्तारस्य षडेते ज्ञायन्ते पङ्क्तितः क्रमतः ॥ ७५ ॥

तत्र एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधिवर्णवृत्तप्रस्तारेषु तत्तद्वर्णवृत्तप्रस्तारे कति कति प्रभेदा, कियन्त्य कियन्त्यो मात्रा, कियन्त कियन्तो वर्णा, कति कति गुरव, कति कति च लघव ? इति महाप्रश्ने कृते, वर्णमर्कटिकया वक्ष्यमाण-स्वरूपया प्रत्युत्तर देयमिति ।

वर्णमर्कटीविरचनप्रकारो लिख्यते—

मर्कटीति । भो शिष्य ! वर्णप्रस्तारस्य एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधि कृतस्येति शेष । अतिदुर्गमा-अतिदुष्करा मर्कटीव मर्कटी-तन्तुजालैरिव विरचिता अङ्कजालपङ्क्तिस्तावल्लिख्यते-विरच्यत इति प्रतिज्ञा । तत्र वा स्वेच्छया अक्षर-सख्यात-कोष्ठ रचय तथा षट्सख्याविशिष्टा पङ्क्तीश्च रचय-कुरु इत्यर्थ ॥७०॥

अथ प्रथमा वृत्तपङ्क्ति साधयति—

प्रथमायामिति । तत्र प्रथमाया-प्रथमपङ्क्तौ वृत्तपङ्क्ताविति यावत् सर्वकोष्ठेषु पूर्वविरचितेषु आद्यादीन्-प्रथमादीन् एकद्वित्र्यादीन् अङ्कान् १ २ ३ यावदित्थ दद्यात्-विन्यसेत । एव कृते प्रथमवृत्तपङ्क्ति सिद्धयति ।

अथ द्वितीया प्रभेदपङ्क्ति साधयति—

अपरायामिति । चकार -आनन्तर्यार्थे । तत अपराया तु द्वितीयाया प्रभेद-पङ्क्तावित्यर्थ । अक्षरसख्येषु-तत्प्रस्ताराक्षरसख्येषु तेष्वेव विन्यस्तेषु कोष्ठेषु द्विगुणान्-द्विचतुरष्टादिक्रमेण द्विगुणानङ्कान् २ ४ ८ यावदित्यमित्यस्य सर्व-त्रानुवृत्ति, दद्यात् इति पूर्वेणैव अन्वय ॥ ७१ ॥ एव कृते द्वितीयाप्रभेदपङ्क्ति सिद्धयति ।

अथ क्रमप्राप्तामपि तृतीया मात्रापङ्क्तिमुल्लङ्घ्य तन्मूलभूता चतुर्थी वर्ण-पङ्क्ति साधयति—

आदिपङ्क्तिस्थितैरिति । आदिपङ्क्तिस्थितै -प्रथमपङ्क्तिस्थितै वृत्तपङ्क्तिस्थितै रेकद्वित्र्यादिभिरङ्कै परपङ्क्तिगान्-द्वितीयपङ्क्तिस्थितान् द्विचतुरष्टादिक्रमेण स्थितानङ्कान् विभाव्य-गुणयित्वा, ततस्तद्गुणितै -द्व्यष्टचतुर्विंशत्यादिभिरङ्कै २ ८ २४ चतुर्थपङ्क्तिस्थकोष्ठकान् पूरयेदित्यन्वय । अपि एवार्थे । अवि-चारित पूरयेदेवेत्यर्थ । ७२ ॥ एव कृते चतुर्थी वर्णपङ्क्ति सिद्धयति ।

अथ षष्ठ-पञ्चमपङ्क्त्योः पूरणोपायमुपदिशति—

पूरयेदिति । षष्ठपञ्चम्यौ पङ्क्ती कर्मीभूते तुर्याङ्कसम्भवैः-चतुर्थ्यां पङ्क्ति स्थिताङ्कोत्पन्नैरर्द्धैः रेकचतुर्द्वादशादिभिरङ्कैः १ ४ १२ पूरयेत् । एवं कृते षष्ठपञ्चम्यौ गुरुलघुपङ्क्ती सिद्ध्यतः । अत्र पङ्क्त्योर्व्यत्ययः छन्दोऽनुरोधेन कृतः, फलतस्तु न कश्चिद् विशेषोऽङ्कसाम्यादिति पङ्क्तिद्वयं सिद्धम् ।

अथोर्वरिता तृतीया मात्रापङ्क्तिं साधयति—

एकीकृत्येति उत्तरार्द्धपूर्वार्द्धाभ्याम् । तत्र सुधी–अङ्कमेलनकुशलो गणकः चतुर्थपङ्क्तिस्थितान् द्वषष्टचतुर्विंशत्यादिकान् अङ्कान् पञ्चमपङ्क्तिस्थितान् एकचतुर्द्वादशादिकानङ्काश्च, अत्र चकारोऽध्याहार्यः, एकीकृत्य–मेलयित्वा त्रि-द्वादश-षट्त्रिंशदादिरूपतामापद्यति यावत् उर्वरितान्–तृतीयपङ्क्तिस्थितकोष्ठकानपि त्रि-द्वादश-षट्त्रिंशदादिरूपैर्मेलितैरङ्कैः ३ १२ ३६ पूरितान् कुर्यादित्यन्वयः । अत्राप्यपि एवार्थः । अविचारितं पूरितान् कुर्यादेवेत्यर्थः । एवं कृते तृतीयामात्रापङ्क्तिः सिद्ध्यति ।

फलितार्थमाह—परमार्द्धेन 'वर्णाना' इति ।

सोऽयं पूर्वोक्तप्रकारेण घटिता वर्णानां मर्कटीव मर्कटी–अङ्कजालरूपिणी पिङ्गलेन–श्रीनागराजेन प्रकाशिता–प्रकटीकृता ॥ ७४ ॥

एवं विरचनप्रकारेण पङ्क्तिषट्कं साधयित्वा वर्णमर्कटीफलमाह—

वृत्तमिति । वृत्तं वृत्तानि–एकाक्षरादीनि 'एकवचनं तु जात्यभिप्रायेण' भेदः–प्रभेदः वृत्तानां प्रभेदा इत्यर्थः । पूर्ववदत्राप्येकवचननिर्देशः । मात्रा–तत्तद्वृत्तमात्रा, वर्णा–तत्तद्वृत्तवर्णा, गुरवः–तत्तद्वृत्तगुरवः, तथा च लघवोऽपि–तत्तद्वृत्तलघव इत्यर्थः । प्रस्तारस्येति सम्बन्धे षष्ठी । एते वृत्तादयः षट्–षट्संख्याविशिष्टा पङ्क्तितः–षट्पङ्क्तितः क्रमतः–क्रमाद् ज्ञायते–हृदयङ्गमतां आपद्यन्त इत्यर्थः ॥ ७५ ॥

श्रीलक्ष्मीनाथकृतो मर्कटिकायाः प्रकाशोऽयम् ।
तिष्ठतु बुधजनकण्ठे वरमुक्ताहारभूषणप्रख्य ॥

अस्याः स्वरूपमुदाहरणमत्र द्रष्टव्यम् । इत्यलं पल्लवेनेति ।

वर्णमर्कटी यथा—

वृत्त	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
प्रभेद	२	४	८	१६	३२	६४	१२८	२५६	५१२	१०२४	२०४८	४०९६	८१९२
मात्रा	३	१२	३६	९६	२४०	५७६	१३४४	३०७२	६९१२	१५३६०	३३७९२	७३७२८	१५९७४४
वर्णाः	२	८	२४	६४	१६०	३८४	८९६	२०४८	४६०८	१०२४०	२२५२८	४९१५२	१०६४९६
गुरवः	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८	१०२४	२३०४	५१२०	११२६४	२४५७६	५३२४८
लघवः	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८	१०२४	२३०४	५१२०	११२६४	२४५७६	५३२४८

इति त्रयोदशवर्णा मर्कटी । एवमन्यापि वर्णमर्कटी समुन्नेया । पञ्चमः प्रत्ययो वर्णमर्कटिकाख्यः ।

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्रचूडा-
मणि-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-साहित्यार्णवकर्णधार-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारक-
विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिक-वार्त्तिक-दुष्करोद्धारे एकाक्षरादि-
षड्विंशत्यक्षरावधिवर्णप्रस्तारेषु वर्णमर्कटीप्रस्तारोद्धारो
नाम दशमो विश्रामः ॥ १० ॥

एकादशो विश्रामः

श्रीनागराजमानम्य सम्प्रदायानुमानत ।
श्रीचन्द्रशेखरकृते वार्त्तिके वृत्तमौक्तिके ॥ १ ॥
वर्णमर्कटिकामुक्त्वा मात्रामर्कटिकामपि ।
दुष्करा दुष्करोद्धारे सुकरा रचयाम्यहम् ॥ २ ॥

अथ पञ्चमप्रत्ययस्वरूपामेव मात्रामर्कटीमाह—'कोष्ठान्' इत्यादिना 'नष्टोद्दिष्ट' इत्यन्ते एकादशश्लोकेन—

कोष्ठान् मात्रासम्मितान् पंक्तिषट्कं,
कुर्यान्मात्रामर्कटीसिद्धिहेतो ।
तेषु द्व्याद्यैनादिपक्तावथाङ्का
स्त्यक्त्वाऽद्याङ्क सर्वकोष्ठेषु दद्यात् ॥ ७६ ॥

दद्यादङ्कान् पूर्वयुग्माङ्कतुल्यान्,
त्यक्त्वाऽद्याङ्क पक्षपङ्क्तावथाऽपि ।
पूर्वस्याङ्कैर्भावयित्वा ततस्तान्
पूर्यात् पूर्णान्नेत्रपंक्तिस्थकोष्ठान् ॥ ७७ ॥

प्रथमे द्वितीयमङ्क द्वितीयकोष्ठे च पञ्चमाङ्कमपि ।
दत्त्वा बाणद्विगुण तद्द्विगुण नत्रतुर्ययोर्दद्यात् ॥ ७८ ॥

एकीकृत्य तथाऽङ्कान् पञ्चमपंक्तिस्थितान् पूर्वान् ।
दत्त्वा तर्यकमङ्क कुर्यात्तेनैव पञ्चम पूर्णम् ॥ ७९ ॥

दत्त्वा पञ्चममङ्क पूर्वाङ्कानेकभावमापाद्य ।
दत्त्वा तर्यकमङ्क षष्ठ कोष्ठ प्रपूरयेद् विद्वान् ॥ ८० ॥

कृत्वैक्य चाङ्काना पञ्चमपंक्तिस्थितानां च ।
त्यक्त्वा पञ्चदशाङ्क हित्वैक पूरयेन् मुने कोष्ठम् ॥ ८१ ॥

एव निरवधिमात्राप्रस्तारेष्वङ्कबाहुल्यम् ।
प्रकृतानुपयोगवशान् न कृतोऽङ्काना च विस्तार ॥ ८२ ॥

एव पञ्चमपंक्ति कृत्वा पूर्णा प्रथममेकाङ्कम् ।
दत्त्वा पञ्चमपंक्तिस्थितैरथाङ्कै प्रपूरयेत् षष्ठीम् ॥ ८३ ॥

एकीकृत्य तथाऽङ्कान् पञ्चमषष्ठस्थितान् विद्वान् ।
कुर्याच्चतुर्थपंक्तिं पूर्णां नागाज्ञया तूर्णम् ॥ ८४ ॥
वृत्त प्रभेदो मात्राश्च वर्णा लघुगुरू तथा ।
एते षट्पंक्तितः पूर्णप्रस्तारस्य विभान्ति वै ॥ ८५ ॥
नष्टोद्दिष्ट यद्वन् मेरुद्वितय तथा पताका च ।
मर्कटिकापि च तद्वत् कौतुकहेतोर्निबद्धचते तज्ज्ञैः ॥ ८६ ॥

तत्र च एकमात्रादिनिरवधिकमात्राप्रस्तारेषु च तत्तज्जातिप्रस्तारे कति कति प्रभेदाः, कियन्त्यः कियन्त्यो मात्राः, कियन्तः कियन्तो वर्णाः, कति कति लघव, कति कति गुरवः ? इति महाप्रश्ने कृते मात्रामर्कटिकया वक्ष्यमाणस्वरूपया प्रत्युत्तर दातव्यमिति मात्रामर्कटीविरचनप्रकारो लिख्यते—

कोष्ठानिति । तत्र–तावन्मात्रामर्कटीसिद्धिहेतोः–मात्रामर्कटीसिद्धयर्थं पंक्ति-षटक यथा स्यात्तथा मात्रासम्मितान्–मात्राभिः परिमितान् मात्राणां सख्यया समुक्तानिति यावत् कोष्ठान् कुर्यात्–विरचयेदित्यर्थः । तेषु–कोष्ठेषु आदिपङ्क्तौ–प्रथमपङ्क्तौ वृत्तपङ्क्तौ इति यावत् द्वयादीन्–द्वितीयादीन् द्वितीय-तृतीय-चतुर्थ-पञ्चम-षष्ठादीनङ्कान् २ ३ ४. ५. ६ इत्यादीन् क्रमेण यावदित्थ प्रथम दद्यात्–विन्यसेत् । किं कृत्वा? अथ चेत्यर्थः। सर्वकोष्ठेषु–षट्स्वपि कोष्ठेषु आद्याङ्क–प्रथमाङ्कं त्यक्त्वा–परित्यज्य । अत्र सर्वकोष्ठेषु प्रथमाङ्कत्यागो न सर्वथा सर्व-कोष्ठत्यागपरः, किन्तु षष्ठगुरुप्रथमपंक्तिकोष्ठत्यागपर इति प्रतिभाति । तत्र गुरोरभावादेवेति ब्रूमः । अतश्च सम्प्रदायात् पञ्चसु कोष्ठेषु प्रथमाङ्कविन्यासः कर्त्तव्य । अन्यथा वक्ष्यमाणाङ्कविन्यासभङ्गापत्तेरिति भावः ॥ ७६ ॥

एव अङ्कविन्यासे कृते सति प्रथमा वृत्तपंक्तिः सिद्धयति ॥ १ ॥

अथ द्वितीया प्रभेदपंक्ति साधयति—

दद्यादिति । अथेति–प्रथम पंक्तिसिद्धयनन्तर पक्षपङ्क्तावपि–द्वितीय-पंक्तावपि आद्याङ्क–प्रथमाङ्कं त्यक्त्वा–परित्यज्य, प्रथमाङ्कस्य पूर्वाङ्काभावात् द्वितीयकोष्ठादारभ्य प्रथमाङ्कशिरःस्थ प्रथमाङ्क गृहीत्वा पूर्वयुग्माङ्कतुल्यान् उद्देशक्रमानुसारेण एक-द्वि-त्रि-पञ्चाष्ट-त्रयोदशादीन् अङ्कान् १, २, ३, ५, ८, १३ शृङ्खलाबन्धन्यायेन क्रमतो यावदित्थ दद्यात्–विन्यसेदित्यर्थः ।

एव अङ्कविन्यासे कृते सति द्वितीयाप्रभेदपंक्तिः सिद्धयति ।२।

अथ तृतीया मात्रापंक्ति साधयति–

पूर्वस्थाङ्कैरिति । पूर्वस्थाङ्कैः–प्रथमपंक्तिस्थिताङ्कैः ततो द्वितीयपंक्ति-पूरणानन्तरं तां द्वितीयं प्रत्येकं–प्रतिकोष्ठं भावयित्वा–गुणयित्वा इत्यर्थः । नेत्र-

पंक्तिस्थकोष्ठान्-तृतीयपंक्तिस्थितकोष्ठान् पूर्णान् कुर्यात्। अतश्चात्रैकचतुर्नव-विंशति-चत्वारिंशदष्टसप्तत्यादिभिरङ्कैः १, ४, ९, २०, ४०, ७८ तृतीय पंक्तिस्थितकोष्ठान् पूरितान् कुर्यादित्यर्थः। अत्र नेत्रसंख्या रौद्रीति विज्ञातव्या। पाठान्तरे—अग्निपर्यायित्वात् स एवार्थः। एवमन्यत्रापि। शालिनीछन्दसि ॥७७॥

एवमङ्कविन्यासे कृते सति तृतीया मात्रापंक्तिः सिद्धयति ॥३॥

अथ क्रमप्राप्तां चतुर्थीं वर्णपंक्तिमुल्लंघ्य चतुर्थ-षष्ठपंक्तयो युगपदेव साधनार्थं तन्मूलभूतां प्रथम तावत् पञ्चमपंक्तिं साधयति—

प्रथमे इति। तत्र षट्स्वपि प्रथमपंक्तिषु प्रथमकोष्ठस्य त्यक्तत्वात्, द्वितीय-कोष्ठकमेवात्र प्रथमं कोष्ठकम्। अतः तस्मिन् प्रथमे कोष्ठके द्वितीयमङ्कं, तद-पेक्षायाः द्वितीयकोष्ठके च पञ्चमाङ्कं च दत्त्वा, ततो बाणद्विगुणं-पञ्चद्विगुण दश १०, तद्द्विगुणं-दशद्विगुणं विंशतिश्च २०, तौ-द्वावङ्कौ नेत्रतुर्ययोः तदपेक्षयैव तृतीयचतुर्थयोः कोष्ठकयोः दद्यात्-विन्यसेदित्यर्थः ॥७८॥

तथा चात्र पञ्चमपंक्तौ प्रथमकोष्ठं विहाय द्वि-पञ्च-दश-विंशतिभिरङ्कैः २, ५, १०, २० कोष्ठचतुष्टयं पूरयित्वा अग्रिमैतत्पञ्चमकोष्ठपूरणार्थं उपाया-न्तरमाह—

एकीकृत्येति। तथा च-इति आनन्तर्यार्थे। ततः पञ्चमपंक्तिस्थितान् पूर्वान् पूर्वाङ्कान्-द्वयादीन् चतुष्कोष्ठस्थान् एकीकृत्य-मेलयित्वा, तथा ततोऽपीत्यर्थः। तस्मिन्नेकीकृताङ्के एकमधिकं दत्त्वा निष्पन्ने एतेनाङ्केन अष्टात्रिंशता ३८ अङ्केनैव पञ्चमं पूर्वापेक्षाया पञ्चमं कोष्ठकं पूर्णं कुर्यात् ॥७९॥

अथास्य षष्ठकोष्ठपूरणोपायमाह—

त्यक्त्वेति। विद्वान्-अङ्कमेलनकुशलो गणकः पूर्वाङ्कान्-द्वितीयादीन् एक-भावमापाद्य-एकीकृत्य संयोज्येति यावत्। ततः पिण्डीकृतेषु एतेषु अङ्केषु पञ्चमाङ्क *प्रथमाङ्कवत् त्यक्त्वा। तथा पुनरित्यर्थः। एकमङ्कमधिकं दत्त्वा पूर्ववज्जातेन तेन* एकसप्तत्या ७१ षष्ठ कोष्ठं प्रपूरयेदिति ॥८०॥

अथ तथैवात्रस्थसप्तमकोष्ठपूरणोपायमाह—

कृत्वेति। पञ्चमपंक्तिस्थितानां द्वयादीनां एकसप्तत्यन्तानां षण्णामङ्का-नामैक्य-पिण्डीभावं कृत्वा तेषु पूर्ववत् पञ्चदशाङ्कं त्यक्त्वा। ततस्तेष्वपि चैकं हित्वा मुनेः कोष्ठं-सप्तम कोष्ठं त्रिंशदधिकेन शताङ्केन १३० पूरयेत्। इति सप्तमकोष्ठकपूरणप्रकारः ॥ ८१ ॥

एवमङ्कसप्तकेन द्वि-पञ्च-दश-विंशत्यष्टात्रिंशदेकसप्तति-त्रिंशदधिकैकशतक-रूपेण २, ५, १०, २०, ३८, ७१, १३० पञ्चमपङ्क्तौ कोष्ठसप्तकं पूरयेदिति। एव चाग्रत्ये पूरणीये तत्तत्कोष्ठे अग्रत्यानां द्वयादीनामङ्कानां एकीभावं कृत्वा, *यथासम्भवं तत्तदङ्कं त्यक्त्वा, तेष्वपि यथासम्भवं एकादिकं हित्वा तत्तत्कोष्ठक* पूरयेदिति संक्षेपः।

एवं अङ्कविन्यासे कृते सति चतुर्थषष्ठपंक्तिगर्भा: पञ्चमी लघुपंक्तिः सिद्धयति। ननु अस्यां पङ्क्तावग्रिमकोष्ठाऽङ्कसञ्चारः क्रियतां इत्याकाङ्क्षाया प्रकृतानुपयोगादङ्कबाहुल्याद् ग्रन्थविस्तरशङ्कया न क्रियत इत्याह—

एवमिति। सुगमम् ॥ ८२ ॥

अथ पंचमपंक्तिपूरणमुपसंहरन् षष्ठगुरुपंक्तिपूरणप्रकारमुपदिशति—

एवमिति। एव पूर्वोक्तप्रकारेण पञ्चमपंक्ति पूर्णां कृत्वा तत्र गुरुस्थानीय प्रथमं कोष्ठ विहाय अग्रिमकोष्ठं-प्रथम प्रथमत एवाङ्क दत्त्वा पूरणीयम्। अथ-अनन्तर *पञ्चमपंक्तिस्थितैः द्वितीयादिभिरङ्कैः पूर्वस्थापितैरेव प्रतिकोष्ठं षष्ठी प्रपूरये*-दिति। तथा च षष्ठपङ्क्तौ ०, १, २, ५, १०, २०, ३८, ७१, १३० शून्यैक-द्वि-पञ्च-दश-विंशति-अष्टात्रिंशदेकसप्तति-त्रिंशदधिकैकशताङ्कविन्यस्ता दृश्यन्त इति ॥ ८३ ॥

एवमङ्कविन्यासे कृते सति षष्ठी गुरुपंक्तिः सिद्धयति ॥ ६ ॥

अथोर्वरितचतुर्थवर्णपंक्तिपूरणप्रकारमुपदिशति—

एकीकृत्येति। विद्वान्-अङ्कमेलनकुशलो गणकः तथा पूर्वोक्तप्रकारेण पञ्चम-षष्ठपंक्तिस्थितान् द्वयेकादीन् अङ्कान् प्रतिकोष्ठ एकीकृत्य-संयोज्य नागाज्ञया-श्रीपिङ्गलनागोक्तमार्गेण चतुर्थपंक्तितत्पंक्तिस्थकोष्ठकरूपां तूर्णं-अविचारितमेव पूर्णं कुर्यादिति। अग्रत्यप्रथमकोष्ठे असंयुक्तः पञ्चमकोष्ठस्थप्रथमांकः सम्प्रदाय-लभ्यो देय इति रहस्यम् ॥ ८४ ॥

तथा चतुर्थपङ्क्तौ १, ३, ७, १५, ३०, ५८, १०६, २०१ एक-त्रि-सप्त-पञ्चदश-त्रिंशद्-अष्टपञ्चाशन्-नवाधिकशतैकोत्तरद्विशताङ्का *विन्यस्ता* दृश्यन्त इति।

एवं अङ्कविन्यासे कृते सति चतुर्थी वर्णपंक्तिः सिद्धयतीति ॥ ४ ॥

एवं विरचनप्रकारेण पंक्तिषट्कं साधयित्वा मात्रामर्कटीफलमाह—

वृत्तमिति। वृत्तं-वृत्तानि एकमात्रादिनिरवधिकमात्राजातयः। एकवचनं] जात्यभिप्रायेण। प्रभेदजातीनां प्रभेदा इत्यर्थः। पूर्ववदत्राप्येकवचननिर्देशः।

मात्रा.–तत्तज्जातिमात्रा, वर्णाः–तत्तज्जातिवर्णाः तथा–तत इत्यर्थः। लघुगुरू–तत्तज्जातिलघवस्तत्तज्जातिगुरवश्चेत्यर्थः। एते वृत्तादय. षट्प्रकाराः पूर्णप्रस्तारस्य समुदिताः षट्पङ्क्तितो निश्चित विभान्ति–प्रकाशन्त इत्यर्थ. ॥ ८५ ॥

ननु एतत्करण आवश्यकमनावश्यक वा ? इति परामर्शे छान्दसिकपरीक्षारूपत्वात् केवल कौतुकमात्राधायकत्वाच्च अस्य करण अनावश्यकमेवेत्याह–

नष्टोद्दिष्टमिति। यथा नष्टोद्दिष्टादिकं कौतुकावह तथैव तद्विरचनमपीत्यर्थं इति सर्वमवदातम् ॥ ८६ ॥

मात्रामर्कटी यथा–

वृत्तम्	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११
प्रभेदाः	१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५	८९	१४४
मात्राः	१	४	९	२०	४०	७८	१४७	२७२	४९५	८९०	१५८४
वर्णा	१	३	७	१५	३०	५८	१०९	२०१	३६५		
लघव	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५		
गुरव	०	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०		

इति एकादशमात्रामर्कटी। एव अन्येऽपि मात्रामर्कटी समुन्नेया। तथैव मात्रामर्कटिकाख्य पञ्चम प्रत्यय।

[वृत्तिकृत्प्रशस्तिः]

श्रीमत्पिङ्गलनागेन प्रोक्तो यो मर्कटीक्रमः ।
विविच्य स मया प्रोक्तः शिष्यानुग्रहहेतवे ॥ १ ॥
मुनीभभूपतिमिते १६८७ वैक्रमेऽब्दे प्रमाथिनि ।
कार्त्तिकेऽसितपञ्चम्यां लक्ष्मीनाथो व्यरीरचत् ॥ २ ॥
वार्त्तिके दुष्करोद्धारमुदारं छान्दसप्रियम् ।
अन्तःसारं स्फुटार्थं च कवीनां कौतुकावहम् ॥ ३ ॥

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्र-
चूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारक-
विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे एकमात्रादिनिरवधिक-
मात्राप्रस्तारेषु तत्तज्जातिमात्रामर्कटीप्रस्तारोद्धारो
नामैकादशो विश्रामः ॥ ११ ॥

समाप्तश्चायं वृत्तमौक्तिकवार्त्तिके दुष्करोद्धारः ।

शुभमस्तु । श्रीनागराजाय नमः ।

संवत् १६६० समये भाद्रपदशुदि ३ भौमे शुभदिने अर्गलपुरस्थाने लिखितं लालमनि-
मिश्रेण । शुभं भूयात् । श्रीविष्णवे नमः ।

महोपाध्यायश्रीमेघविजयगणिसन्दृब्ध

वृत्तमौक्तिकदुर्गमबोधः

[उद्दिष्टादिप्रकरणव्याख्या]

[मङ्गलाचरणम्]

प्रणम्य फणिना नम्य सम्यक् श्रीपार्श्वमीश्वरम् ।
उद्दिष्टादिषु सूत्रार्थं कुर्वे श्रीवृत्तमौक्तिके ॥ १ ॥

अथ वृत्तमौक्तिके उद्दिष्ट नष्ट वर्णतो मात्रातो वा विव्रियते—

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् लघोरुपरि गस्य तूभयत ।
अन्त्याङ्के गुरुशीर्षस्थितान् विलुम्पेदयाङ्कांश्च ॥ ५१ ॥
उद्धरितैश्च तथाङ्कैर्मात्रोद्दिष्ट विजानीयात् ।

षड्भि पदै सूत्र तद्व्याख्या—

केनापि नरेण लिखित्वा दत्त । ऽ । ऽ । इद कतमत् रूपम् ? इति प्रश्ने उद्दिष्ट ज्ञेयम् । तत्र पुर्वयुगलाङ्का प्रत्येक धार्या । पुर्वयुगलाङ्का इति सज्ञा अङ्कानाम् । तत्कथम् ? इति चेत, मात्रोद्दिष्टे १।२।३।५।८।१३।२१।३४।५५।८६ इति । अत्र १ मध्ये २ योजने ३ । पुन ३ मध्ये पूर्वाङ्क २ मेलने ५ । पुन ५ मध्ये स्वपूर्वाङ्क ३ मेलने ८ । तत्रापि स्वपूर्वाङ्क ५ मेलने १३ । तत्रापि स्वपूर्वाङ्क ८ क्षेपण २१ । तस्मिन्नपि स्वपूर्वाङ्क १३ एकीकरणे ३४ । तन्मध्ये स्वपूर्वाङ्क २१ क्षेपे ५५ । अत्रापि स्वपूर्वाङ्क ३४ योगे ८६ इत्येव योजनारीति । पूर्वं पूर्वमेलनाज्जातत्वात् पूर्वयुगाङ्का इति सज्ञाभाज । तद्धरणरीति —

१	२	५	८	२१
।	ऽ	।	ऽ	।
	३		१३	

एव लघोरुपरि एक अङ्कन्यास गस्य-गुरोस्तु उभयत -उपरि अधश्च पार्श्वद्वयेऽपि अङ्कधरणम् । एतत कृत्वा अन्त्याङ्के २१ रूपे गुरोरुपरिस्था अङ्का २।८ मेलने १०, एतें २१ मध्यात् विलुम्पयेत्-पराकुर्यात्, उद्धरितोऽङ्क ११ एव निश्चित ज्ञात सप्तमात्रे मात्राच्छन्दसि एकादश रूपमिदम् । ईदृश ।ऽ।ऽ। अन्यत्रापि ।

त्रिकले छन्दसि ।ऽ इदं कतमं रूपम् ? इति पृच्छायां पूर्वयुगाङ्कधरणं १ २
। ऽ
३
तत्रांत्याङ्कः ३ तन्मध्यात् गुरुशीर्षस्थाङ्क २ विलोपने शेषं १ इति प्रथमं रूपम् । ऽ ईदृशम् । परत्राऽपि ऽ। इदं कतमत् ? इति प्रश्ने १ ३ अन्त्याङ्के ३
। ऽ
२
गुरुशीर्षस्थ १ विलोपे शेषं २ इति द्वितीयं रूपं त्रिकले ऽ। ईदृशम् ।

चतुःकले छन्दसि ऽ ऽ इदं कतमत् ? इति पृच्छायां १ ३ अङ्केषु धृतेषु
ऽ ऽ
२ ५
अन्त्याङ्कः ५ तन्मध्याद् गुरुशीर्षस्थ अङ्कद्वयं १।३ एतयोर्मेलने ४ तद्विलोपने शेषं १ प्रथमं रूपम् ऽऽ; द्वितीयेऽपि १ २ ३ अङ्केषु न्यस्तेषु अन्त्याङ्कः ५
। । ऽ
५
तन्मध्यात् २ गुरुशिरःस्थाङ्कः ३ तल्लोपे शेषं २ इति द्वितीयं रूपम् । तृतीये । ऽ । ईदृशोऽङ्काः १ २ ५ अन्त्याङ्कः ५ ततः गुरुशिरःस्थः २ लोपे शेषं ३ तृतीयं
। ऽ ।
३
रूपम् । तुर्ये ऽ । । ईदृशोऽङ्काः १ ३ ५ अन्त्याङ्कः ५ ततः गुरुशिरःस्थ १
ऽ । ।
२
लोपे शेषं तुर्यं रूप ऽ।।; पञ्चमं सर्वलघुकम् ।

पञ्चकले । ऽऽ ईदृशोऽङ्काः १ २ ५ अत्रान्त्याङ्कः ८ ततः गुरुशिरःस्थ
। ऽ ऽ
३ ८
२।५ एवं ७ लोपे प्रथमं रूपम्; ऽ।ऽ ईदृशोऽङ्काः १ ३ ५ अन्त्यः
ऽ । ऽ
२ ८
८ तन्मध्यात् १।५ एवं ६ तल्लोपे शेषं २ द्वितीयं रूपम् । तृतीयं ।।।ऽ ईदृशोऽङ्काः १ २ ३ ५ अत्र प्राग्वत् ८ मध्यात् गुरुशीर्षस्थ ५ लोपे शेषं
। । । ऽ
८

३ तृतीयम् । तुर्येऽपि १ ३ ८ प्राग्वत् ८ मध्यात् १ । ३ गुरुशीर्षस्य ४
ऽ ऽ ।
२ ५
लोपे शेष ४ तुर्यं रूपम् । पञ्चमेऽपि १ २ ३ ८ इत्यत्र गुरुशीर्षस्थ
। । ऽ ।
५
३ लोपे अन्त्याङ्क ८ मध्ये शेष ५ इति [पञ्चम रूपम्] । षष्ठे १ २ ५ ८
। ऽ । ।
३
अन्त्याङ्क ८ मध्यत गुरुशिरःस्थ २ लोपे शेष ६ [इति षष्ठ रूपम्] । सप्तमेऽपि
१ ३ ५ ८ तत्र अन्त्याक ८ मध्यात् गुरुशीर्षस्थ १ लोपे शेष ७ इति
ऽ । । ।
२
सप्तम रूपम् ।

एव षटकले मात्राच्छन्दसि १ ३ ८ अत्रान्त्याङ्क १३ तत गुरुशीर्ष-
ऽ ऽ ऽ
२ ५ १३
स्थिताङ्क १।३।८ एषा लोपे शेष १ प्रथम रूपम्, १ २ ३ ८ अत्रापि
। । ऽ ऽ
५ १३
प्राग्वत् ३।८ एव ११ तेषा १३ मध्याल्लोपे शेष २ द्वितीय रूपम् । तृतीये
१ २ ५ ८ अन्त्याङ्क १३ तत २।८ एव १० गुरुशीर्षस्थ लोपे शेष ३ ।
। ऽ । ऽ
३ १३

१ २ ५ १३ २१ ५५ अत्र गुरुशीर्षस्थाङ्क सर्वमेलने ८३ तल्लोप
। ऽ ऽ । ऽ ऽ
३ ८ ३४ ८९
८९ मध्ये शेष ६ रूपमिद दशकले छन्दसि ।

पुव्व जुयल सरि अका दिज्जसु, गुरु सिर अक सेस मेटिज्जसु ।
उवरिल अक लेखि कहुआण, ते परि धुअ उद्दिट्ठा जाण ॥
[प्राकृतपैङ्गलम, परि १, पद्य ३९]

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कं गुरुशीर्षाङ्कं विलुप्य शेषाङ्कै ।
अङ्कैरितोऽवशिष्टैः शिष्टैरुद्दिष्टमुद्दिष्टम् ॥

[वाणीभूषणम् परि. १, पद्य ३१]

मत्त मत्त धुम अंक, लघु सिर गुरुतर हूं धरो ।
जोर अंक सरवंक, सव्वहि घाट उद्दिट्ठ कहु ॥

लघोः शीर्षे एवाङ्कः धार्यः गुरोः शीर्षे तथा 'तर' इति भाषाविशेषात् तले अधोऽपि अङ्कः धार्यः । यथा—पञ्चकले प्रस्तारे १ २ ५ अत्रान्त्याङ्के ८

।	ऽ	ऽ
	३	८

ततः गुरुशीर्षस्थाङ्काः २, ५......७ सप्तमं रूपम् ।

१ २ ५ ८ २१ गुरु सिर अंकेयोजने १० ते २१ मध्ये ऊन शेषं ११

।	ऽ	।	ऽ	।
	३		१३	

संख्या प्राप्ता इति एकादशमिदं रूपमिति छन्दोरत्नावलीग्रन्थे ।

१ २ ३ ५ ८ १३ २१ अत्र प्रश्नः—सप्तकलप्रस्तारे एकादशं

। । । । । । । ११

। ऽ । ऽ ।

रूपं कीदृशम् ? इति, तदा प्राप्तं ।ऽ।ऽ। इदम् ।

इति मात्रोद्दिष्टसूत्रव्याख्या पूर्णा ।

मात्रानष्ट-प्रकरणम्

अथ मात्रानष्ट यथा—

> यत्कलकः प्रस्तारो लघव. कार्याश्च तावन्त ।
> दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पृष्टाङ्क लोपयेदन्त्ये ॥ [॥ ५३ ॥]
> उद्वरितोद्वरितानामङ्काना यत्र लभ्यते भाग ।
> परमात्राञ्च गृहीत्वा स एव गुरुतामुपागच्छेत् ॥ [॥ ५४ ॥]

अस्यार्थ —यावत्य कला. प्रस्तारे एककलस्य एक एव लघु । ईदृश द्विकलस्य द्वे रूपे, आदौ एक एव गुरु ऽ ईदृश , द्वितीयरूपे लघुद्वयम् ॥ ईदृशम् । अत्र पृष्ठानवकाशात् न इष्टरूपलाभ , असम्भवात् । त्रिकले मात्राच्छन्दसि त्रीणि रूपाणि । चतु कले पञ्चरूपाणि १।२।३।५ इति पूर्वयुगाङ्कात् । पञ्चकले अष्टरूपाणि १।२।३।५।८ इति पूर्वयुग्माङ्कात् । षट्कले १३ रूपाणि तावत् एव पूर्वयुग्माङ्कात् । सप्तकले २१ रूपाणि तथैव ।

एव कलाप्रमाणा लघवो लेख्या , यथा—सप्तकले मात्राच्छन्दसि इष्ट एकादश रूप कीदृश ? इति, मुखेन केनचित् पृष्टम्, तदा सप्तैव लघव ।।।।।।। अनया रीत्या लेख्या । तेषामुपरि १।२।३।५।८।१३।२१ एते धार्या । अत्र पृष्टे इष्टाङ्क ११, तस्य २१ मध्याल्लोपे शेष १।२।३।५।८।१३।१० इति । तदा दशमध्ये त्रयोदश न पतन्तीति भागाभाव , तदा ८ अङ्क १३ मध्ये पात्य , एव अष्टाध कलामाकृष्य त्रयोदशाधो गुरु स्थाप्य , दशाध एका कलाऽवशिष्टा, अष्टकस्य लोप परमात्राग्रहेण गुरुभावात् । अत्र त्रिकस्य कला पञ्चके न गृह्यते, मुख्यैककस्य द्विकेन गृह्यते तदा ऽऽऽ। ईदृश नवमरूपतापत्ते । यद्वा त्रिकस्य कला पञ्चके न गृह्यते १।२ अनयो कलाद्वय लघुरूपमेव ध्रियते तदा दशम रूप ईदृश स्यात् ।।ऽऽ, तेन पञ्चकाऽध कला एका भिन्नैव रक्ष्या, अग्रे द्वितीयाङ्कस्य त्रिके कलाग्रहेण त्रिकाधो गुरु , मुख्यैककलाशेषात्, एव ।ऽ।ऽ। ईदृश एकादश रूप व्यवस्थितम । द्विकाष्टकयोर्लोप 'उवरिल अकलोपके लेख' इति वचनात् । यदुक्त छन्दोरत्नावल्याम्—

> सब लघु सिर ध्रुव अक, प्रश्नहीन शेषाङ्क धरि ।
> पर लघु ले लिख वङ्क उवरि भाग जह जह परइ ॥

यद्वा, दशाना भागस्त्रयोदशे प्राप्यते 'दश एके दश' शेष ३ विषमत्वात् परस्य-अन्यस्य त्रयोदशात् पूर्वस्य अष्टकस्य कलाग्रहेण त्रयोदशस्थानजातत्रिकाधो

गः, श्यष्टकलोपः, दशाधो लः, पञ्चके त्रिकस्य भागे शेषं २ इति समत्वात् पञ्चाधो लः ऽ।, द्विकस्य त्रिके भागाप्तौ शेषं १ इति विषमाङ्कत्वाद् गुरुः, द्विकस्य कलाग्रहात् द्विकलोपः, मुख्यैकाधो यथास्थितो लघुरेव, एवं । ऽ । ऽ । इत्येकादशं व्यवस्थितं सप्तकले ।

अथ बालबोधाय इयमेव व्याख्या विस्तरतः—

प्रथमं त्रिकले मात्राच्छन्दसि त्रिलघुकरणं तस्य न्यासः १　२　३ तदुपरि
　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　। 　। 　।
पूर्वयुगाङ्कदानम् । तत्र पृष्टं प्रथमरूपं त्रिकले कीदृग् ? इति, एवं दृष्टं एकरूप तत् त्रिकात् अन्त्याङ्कात् पराकृतं-लुप्तमिति यावत् शेषं १ । २ । २ 'उद्वरितोद्वरितानां अङ्कानां यत्र लभ्यते भागः' इति वचनात् द्विकस्य द्विकेन भागे परद्विकाधो गः, पूर्वस्य द्विकस्य कलाग्रहात् तस्य लोपः, शेषं । ऽ इति प्रथमं रूपम् । पृष्टे द्वितीये, अन्त्यत्रिकात् २ लोपे शेषं १ । २ । १, अत्र अन्त्यैककस्य भागलाभो द्विके तदधो गः, मुख्यैककलाग्रहात् तस्य लोपः, अन्त्यैकाधो लः ऽ। इति द्वितीयं रूपम् । तृतीयं सर्वलघुकमेव ।

अथ चतुःकले १　२　३　५ अत्र पृष्टे १ लोपे शेषं १ । २ । ३ । ४,
　　　　　　। 　। 　। 　।
त्रिकस्य भागः चतुष्के प्राप्यः तदधो गः, त्रिकस्य कलाग्रहात् त्रिकलोपः, द्विकेपि मुख्यैकस्य भागः तेन द्विकाधो गः, एककस्य लोपः, जातं ऽऽ प्रथमम् । पृष्टे २ लोपे शेषं १ । २ । ३ । ३, त्रिके-त्रिकस्य भागे परत्रिकाधो गः, पूर्वत्रिकलोपः कलाग्रहात्, शेषे द्विके एकस्य भागापत्तौ कलाङ्कसाम्यादपि पूर्वरूपापत्तिः, तेन नैकस्यापि लोपः, लघुद्वयं ।।ऽ द्वितीयम् । पृष्टे ३ लोपे शेषं १ । २ । ३ । २, एवं द्विकस्य अन्त्यस्य भागस्त्रिके तदधो गः, पूर्वद्विकस्य कलाग्रहाल्लोपः, एवं । ऽ । तृतीयम् । पृष्टे ४ लोपे शेषं १ । २ । ३ । १ एकस्य भागोऽत्र त्रिके, एवमन्त्यैकाधो लः, त्रिकेऽपि शेषाभावादधो लः, 'त्रिण एकुं ३' लघु १ तस्य भागः द्विके तदधो गः, एकलोपः, अत्र मुख्यैकस्य भागो द्विके तदधो गः, कलापूर्त्तेः त्रिके चान्त्यैकके च प्रत्येक कला मुख्यैककलोपः, ऽ।। तुर्यम् । पञ्चमं लघुसकलरूपम् ।

पञ्चकले १　२　३　५　८ अत्र पृष्टे १ लोपे शेषं १, २, ३, ५, ७,
　　　　　। 　। 　। 　। 　।
अत्र सप्तके पञ्चकस्य भागः, तेन सप्ताधो गः, पञ्चकस्य लोपः, द्विकस्य त्रिके भागः तदधो गः, द्विकलोपः, मुख्यैकाधः कला स्थितैव । ऽऽ प्रथमम् । पृष्टे २ लोपे शेषं १, २, ३, ५, ६, षट्के पञ्चकस्य भागे

पडधो ग, पञ्चकलोप, त्रिके-त्रिकलस्य द्वितीयरूपस्य गुर्वधिकत्वे तादृरूप्यात् द्विकस्य भाग पूर्वरूपे कृत तेनात्र द्विके एकस्य भागे द्विकाधो ग, मुख्यैकलोप, त्रिकाध कला, द्वितीय ऽ । ऽ रूपम्। पृष्टे ३ लोपे शेष १, २, ३, ५, ५, पञ्चकेन पञ्चकस्य भागे परपञ्चकाधो ग, पूर्वपञ्चकलोप, शेष कलात्रयमङ्कत्रय चेति साम्यात् ५, ५ इति समभागाच्च प्रत्येक लघवस्त्रय, एव । । । ऽ तृतीयम्। पृष्टे ४ लोपे शेष १, २, ३, ५, ४, अत्र चतुष्के पञ्चकभागो न प्राप्य, पञ्चके चतुष्कस्य भागात् पञ्चकाधो ग, त्रिकस्य कलाग्रहाल्लोप, चतुष्काध कला, एव कलात्रये सिद्धे शेषमङ्कद्वय कलाद्वय चेति साम्याल्लघुद्वय कार्यमिति न विचार्य द्वाभ्या कलाभ्या गुरुसिद्धेर्गु र स्थाप्य । पञ्चकलेऽप्टरूपात्मके तुर्यरूपे लघ्वन्ते गुरुद्वयेनापि कलापूर्त्ते इति एकस्य द्विके भागात द्विकाधो ग, मुख्यैकलोप, एव ऽ ऽ । तुर्यम । पृष्टे ५ लोपे शेष १, २, ३, ५, ३, अत्र त्रिकस्यान्त्यस्य पञ्चके भागात् पञ्चकाधो ग, अन्त्यत्रिकाधो ल, पूर्वत्रिकलोप, अत्रापि समकलाङ्कत्वे गुरुरिति न कार्य पूर्वरूपापत्ते, अर्द्धोपरि लघूनामेव वृद्ध । तेन लघुद्वय । । ऽ । पञ्चमम्। पृष्टे ६ लोपे शेष १, २, ३, ५, २, अत्र पञ्चकस्य त्रिके भागो नेति द्विकस्य त्रिके भागात् त्रिकाधो ग, द्विकलोप, पञ्चाधो ल, अन्त्यद्विकाधो ल, मुख्यैकाधोऽपि ल, तेन । ऽ । । षष्ठम्। पृष्टे ७ लोपे शेष १, २, ३, ५, १, अत्र पूर्वरूपे द्विकस्य त्रिके भागलाभात् त्रिकाधो ग, उक्त सप्तमे पुना रूपे द्विके एकस्य भागात् द्विकाधो ग, मुख्यैकलोप त्रि-पञ्च अन्त्यैकानामध प्रत्येक लघुत्रय, ऽ । । । सप्तमम । पर सर्वलमष्टमम्।

पटकले १, २, ३, ५, ८, १३, इह पृष्टे १ लोपे शेष १, २, ३, ५, ८, १२,
। । । । । ।

अत्र १२ मध्ये ८ भागे द्वादशाधो ग, अष्टकलोप, एव पञ्चके त्रिकस्य भागात् पञ्चकाधो ग, त्रिकलोप, द्विके मुख्यैकस्य भागात् द्विकाधो ग, मुख्यैकलोप सर्वत्रकलाग्रहात ऽऽऽ प्रथमम्। पृष्टे २ लोपे शेष १, २, ३, ५, ८, ११, अत्रापि ११ मध्येऽष्टभागात् तत्कलाग्रहे ११ अधो ग, ८ लोप, पञ्चके त्रिकस्य भागात् पञ्चाधो ग, त्रिकलोप शेषाङ्ककलासाम्यात् । । ऽऽ द्वितीयम्। पुन पृष्टे ३ लोपेऽन्त्यदशाधो ग, अष्टाना भागे तत्कलाग्रहात् त्रिकाधो ग, द्विकस्य कलाग्रहात् पञ्चाधो ल, मुख्यैकाधो ल, एव । ऽ । ऽ तृतीयम्। पुन पृष्टे ४ लोपे शेष ९, अन्ते तत्राप्यष्टकलाग्रहादधो ग, द्विके एकस्य भागात कलाग्रहे द्विकाधो ग, त्रिकाधो ल, परस्य अष्टकस्य लोपात पञ्चाधो ल, भागासम्भवात्, एव ऽ । । ऽ चतुर्थम्। पृष्टे ५ तस्य १३ मध्यात् लोपे शेष १, २, ३, ५, ८, ८, पूर्वाष्टककलाग्रहात् पराष्टकाधो ग, पूर्वाष्टकलोप, शेषे कलाङ्कसाम्यात्

चतस्र कला एव । यद्यत्र पञ्चके त्रिकभागात् द्विके एकस्य भागात् कलाग्रहणादि क्रियते तदा पूर्वरूपापत्ति, सा तु सर्वत्रापि निषिद्धा 'उवरिल अक लोपिके लेख' इति वचनात्, ।।।।ऽ पञ्चमम् । षष्ठे पृष्टे १३ मध्यात् ६ लोपे अन्ते ७, तदष्टाना भागो नाप्य, किन्तु सप्ताना भागोऽष्टके, तेनाष्टाधो ग, सप्ताधो ल, पञ्चकस्य लोपोऽष्टकेन कलाग्रहात् द्विकस्य त्रिके भागात् त्रिकाधो ग, द्विकलोप, मुख्यैकाधो ल, एव ।ऽऽ। षष्ठम् । पृष्टे ७ तल्लोपेऽन्ते ६, तदधो ल, अष्टके षट्कस्य भागात् अष्टाधो ग, पञ्चके लोपात द्विके एकस्य भागात् द्विकाधो ग, एकस्य कलाग्रहात् एकस्य लोप, त्रिकाधो ल, एव ऽ।ऽ। सप्तमम् । पृष्टे ८ तल्लोपेऽन्ते ५ तदधो ल, पञ्चकस्य अष्टके कलाग्रहात् अष्टाधो ग, पञ्चकस्य अन्त्यस्य भागलाभाच्च शेषे कलाङ्कसाम्यात् अय प्रत्येक लघव, ।।।ऽ। अष्टमम् । पृष्टे ९ लोपे शेष १, २, ३, ५, ८, ४, चतुष्कस्य अष्टसु भागात् चतु काधो ल, अष्टाधोऽपि ल, पञ्चके त्रिकभागात तत्कलाग्रहेण पञ्चाधो ग, त्रिकलोप, द्विके एकस्य भागात् तत्कलाग्रहे द्विकाधो ग, एकस्य लोप, एव ऽऽ।। नवमम् । अत्र पञ्चकस्य कला नाष्टके क्षेप्या पूर्वरूपापत्त, गुरूणा रूपाग्रभागसञ्चारात् पश्चिमभागे लघूनामाधिक्याच्च । पृष्टे १० लोपे, शेष १, २, ३, ५, ८, ३, तद्वा त्रिकस्यान्त्यस्य अधो ल, अष्टाधोऽपि ल, त्रिकस्य पञ्चके भागात् पञ्चाधो ग, त्रिकलोप, शेष १ । २ कलाङ्कसाम्याल्लघुद्वय ।।ऽ।। दशमम् । पृष्टे ११ लोपे प्रान्ते २, तदधो ल, द्विकस्य त्रिके भागात् कलाग्रहे त्रिकाधो ग, द्विकलोप, शेष १, ५, ८, एषु प्रत्येक ल, एव ।ऽ।।। एकादशम् । पृष्टे द्वादशे १२ लोपे, शेष १, २, ३, ५, ८, १, अत्र द्विकेन मुख्यैकाध, कलाग्रहात् द्विकाधो ग, मुख्यैकलोप, शेष ३, ५, ८, १, एषामधो लघव, एव ऽ।।।। द्वादशम् । पर सर्वलघुकम् ।

सप्तकले १ २ ३ ५ ८ १३ २१ अत्र पृष्टे १ लोपे शेष १, २, ३, ५,
। । । । । । ।
८, १३, २०, अत्र विंशती १३ भागप्राप्ति तेन विंशाधो ग, १३ लोप, अष्टाधो ग, पञ्चलोप, त्रिकाधो ग, द्विकलोप मुख्यैककला स्थितैव, एव । ऽऽऽ प्रथमम् । पृष्टे २ लोपे, शेष १९, तदधो ग, १३ लोपात् अष्टाधो ग, पञ्चलोपात् त्रिके द्विककलाग्रह प्रथमरूपे, अत्र द्विके मुख्यैककलाग्रहात् द्विकाधो ग, एकलोप, त्रिके कला, एव ऽ।ऽऽ द्वितीयम् । पृष्टे ३ लोपे अन्ते १८, तदधो ग, १३ भागात् १३ लोप, अष्टाधो ग, पञ्चकलाग्रहात् तल्लोप शेष समकलाङ्कत्वात् ३ लघव. ।।।ऽऽ तृतीयम् । पृष्टे ४ लोपे शेष १७, तदधो ग, १३ लोप पञ्चाधो ग, त्रिककलाग्रहात् अष्टाधो ल, द्विकाधो ग, मुख्यस्य कला स्थिता ऽऽ।ऽ तुर्यम् ।

पृष्टे पञ्चलोपे शेषमन्ते १६, तदधो ग, १३ कलाग्रहात् लोप, अष्टाधो ल, पञ्चकेऽधो ग, त्रिके कलाग्रहाल्लोप, शेषे समकलाङ्कत्वाल्लघुद्वय।।ऽ।ऽ पञ्चमम। पृष्टे ६ तल्लोपे शेषमन्ते १५, तदधो ग, अष्टाधो ल, पञ्चाधो ल, त्रिकाधो ग, द्विकस्य कलाग्रहात् मुख्याध कला एव, एव।ऽ।।ऽ षष्ठम्। पृष्टे ७ तल्लोपेऽन्ते १४, तदधो ग, १३ न्यूनत्वात् लोप ८।५।३ अधो ल, द्विकाधो ग, मुख्यकलाग्रहात लोप ऽ।।।ऽ सप्तमम्। पृष्टे ८ लोपे शेषमन्ते १३, पूर्व १३ अधो ग, समभागबलात् पूर्व १३ लोप, एव कलाद्वय, शेषपञ्चाङ्का पञ्चकला चेति साम्यात् पञ्च लघव एव।।।।।ऽ अष्टमम्। पृष्टे ९ लोपे शेषमन्ते १२, तेन भाग पूर्व १३ मध्ये, यदुक्त वाणीभूषणे—

> नष्टे कृत्वा कला सर्वा पूर्वयुग्माङ्कयोजिता।
> पृष्ठाङ्कहीनशेषाङ्क येन येनैव लुप्यते॥
> परा कलामुपादाय तत्र तत्र गुरुर्भवेत्।
> मात्राया नष्टमेतत्तु फणिराजेन भाषितम्॥
>
> (वाणीभूषणम् परि १, पद्य ३२-३३)

तत्र १३ अधो ग, १२ अधो ल, अष्टकस्य लोप कलाग्रहात् एव पञ्चाधो ग, त्रिकभागेन कलाग्रहात् द्विकाधो ग, मुख्यलोपात, एव ऽऽऽ। नवमम्। पृष्टे सप्त-कले छदसि दशम रूप कीदृग्? इति, तदा १ २ ३ ५ ८ १३ २१ एव

| | | | | | |

कला कृत्वा पूर्वयुग्माङ्कयोजिता पृष्टाङ्क १०, ते २१ मध्यात् अपकृष्टा शेष ११, तथा १३ मध्ये भागात् तदधो ग, ११ अधो ल, अष्टकलोप, पञ्चाधो ग, त्रिककलाग्रहात्, शेष कलाङ्कयो साम्याल्लघुद्वय।।ऽऽ। दशम रूपम्। पृष्टे ११ तस्य लोपे १०, तत १३ मध्ये भागात् १३ अधो ग, अष्टलोप, त्रिके द्विकभागात् त्रिकाधो ग द्विकलोप, एव रूप।ऽ।ऽ। एकादशम्। पृष्टे १२ तल्लोपे शेष ९ तस्य १३ मध्ये भागात् १३ अधो ग, ९ अधो ल, अष्टलोप, द्विके मुख्यंमस्य भागात् द्विकाधो ग, मुख्यलोप त्रिकपञ्चकयो अधो ल प्रत्येक, एव ऽ।।ऽ। द्वादशम्। पृष्टे १३ तल्लोपे शेष ८ तस्य १३ मध्ये भागात् १३ अधो ग, ८ अधो ल, पूर्वाष्टकलोप, शेष समाङ्कलाभावात १, २, ३, ५ एषामधो लघव प्रत्येक, ।।।।ऽ। त्रयोदशम्। पृष्टे १४ तस्य २१ मध्याल्लोपे शेष ७, तस्य १३ मध्ये भागे शेष ६ इति परात्-सप्तमात् न्यूनता इति हेतो १३ अधो ल, सप्ता धोऽपि ल, अष्टके पञ्चकभागात अष्टाधो ग, पञ्चकलोप, त्रिके द्विकभागात् त्रिकाधो ग, द्विकलोप, मुख्यकाध कला,।ऽऽ।। चतुर्दशम्। पृष्टे १५ लोपे

शेप ६ तदधो ल, १३ अधोऽपि प्राग्सिद्धत्वात् ल एव, अष्टके पञ्चकभागादष्टाधो ग, पञ्चकलोप, द्विके एकस्य भागात् द्विकाधो ग, त्रिकाधो ल, एव ऽ।ऽ।। पञ्चदशम्। पृष्टे १६ तल्लोपे शेप ५ तस्य १३ मध्ये भागे शेप ८ तदधो ल, पञ्चाधो ल, अष्टके पञ्चकभागात् अष्टाधो ग, पूर्वपञ्चलोप, शेपे समकलाङ्कत्वात् त्रयोपि लघव, ।।।ऽ।। षोडशम्। पृष्टे १७ तल्लोपे शेप ४ तदधो ल, तस्य १३ मध्ये भागे शप ६, अथ परोङ्क पूर्वस्याष्टकादधिक इति हेलो तस्याप्यधो ल पञ्चके त्रिकस्य भागात पञ्चाधो ग, त्रिकलोप, द्विके मुख्यैकभागाद् द्विकाधो ग, मुख्यैकलोप, ऽऽ।।। सप्तदशम्। पृष्टे १८ तल्लोपे शेप ३ तदधो ल तस्य १३ मध्ये भागे शेप १० तदधो ल, अष्टकादधिका १० इति अष्टकाधो ल, पञ्चके त्रिकभागात पञ्चाधो ग, त्रिकलोप, शेपे समकलाङ्कत्वात् लघुद्वय, ।।ऽ।।। अष्टादशम्। पृष्टे १६ तल्लोपे शेप २ तस्य १३ मध्ये भागे शेप ११ तस्य अष्टमध्ये भागाभावात, अष्टकस्य पञ्चके भागाभावात् सर्वत्र ५, ८, ११, २ एषु लघव, द्विकस्य त्रिकेऽभावात् त्रिकाधो ग, द्विकलोप, मुख्याधो ल, एव।ऽ।।।। एकोनविंशम्। अथ पृष्टे २० तस्य २१ मध्याल्लोपे शेप १ तत्र १३ मध्यात् भागे शप १२ तस्य नाष्टसु भाग, अष्टाना न पञ्चके भाग, पञ्चकस्य न त्रिके इति सर्वत्र लघव पञ्चस्वङ्केपु द्विके मुख्यैकभागात द्विकाधो ग, एकस्य लोप, एव ऽ।।।।। विशतितम रूपम्। परत सर्वलघुकम् इति भाव्यम्। एव सर्वत्र मात्राच्छन्दसि इष्टज्ञानम।

एककल—

।	१

द्विकले द्वे—

ऽ	१
।।	२

त्रिकले त्रीणि—

।ऽ	१
ऽ।	२
।।।	३

चतुष्कले पञ्च—

ऽऽ	१
।।ऽ	२
।ऽ।	३
ऽ।।	४
।।।।	५

पञ्चकले अष्ट—

।ऽऽ	१
ऽ।ऽ	२
।।।ऽ	३
ऽऽ।	४
।।ऽ।	५
।ऽ।।	६
ऽ।।।	७
।।।।।	८

षट्कले अष्ट—

S S S १
I I S S २
I S I S ३
S I I S ४
I I I I S ५
I S S I ६
S I S ७
I I S I ८
S S I I ९
I I S I I १०
I S I I I ११
S I I I I १२
I I I I I I १३

षट्कलं पूर्णम् ।

सप्तकले एकविंशति—

I S S S १
S I S S २
I I I S S ३
S S I S ४
I I S I S ५
I I I I S ६
S I I I S ७
I I I I I S ८
S S S I ९
I I S S I १०
I S I S I ११
S I I S I १२
II I I S I १३
I S S I I १४
S I S I I १५
II I S I I १६
S S I I I १७
II S I I I १८
IS I I I I १९
SI I I I I २०
II I I I I I २१

सप्तकलं पूर्णम् ।

अष्टकले चतुस्त्रिशत्—

S S S S १
II S S S २
IS I S S ३
SI I I S ४
II I I S S ५
I S S I S ६
S I S I S ७
II I S I S ८
SS I I S ९
II S I I S १०
IS I I I S ११
SI I I I S १२
II I I I I S १३
I S S S I १४
S I S S I १५
II I S S I १६
S S I S I १७
I I S I S I १८
IS I I S I १९
SI I I S I २०
II I I I S I २१
S S S I I २२
II S S I I २३
IS I S I I २४
SI I S I I २५
II I I S I I २६
IS S I I I २७
SI S I I I २८
II I S I I I २९

S S I I I I　३०
I I S I I I I　३१
I S I I I I I　३२
S I I I I I I　३३
I I I I I I I I　३४

अष्टकलं पूर्णम् ।

नवकले पञ्चपञ्चाशत्—

I S S S S　१
S I S S S　२
I I I S S S　३
S S I S S　४
I I S I S S　५
I S I I S S　६
S I I I S S　७
I I I I I S S　८
S S S I S　९
I I S S I S　१०
I S I S I S　११
S I I S I S　१२
I I I I S I S　१३
I S S I I S　१४
S I S I I S　१५
I I I S I I S　१६
S S I I I S　१७
I I S I I I S　१८
I S I I I I S　१९
S I I I I I S　२०
I I I I I I I S　२१
S S S S I　२२
I I S S S I　२३
I S I S S I　२४
S I I S S I　२५
I I I I S S I　२६
I S S I S I　२७
S I S I S I　२८
I I I S I S I　२९
S S I I S I　३०
I I S I I S I　३१
I S I I I S I　३२
S I I I I S I　३३
I I I I I I S I　३४
I S S S I I　३५
S I S S I I　३६
I I I S S I I　३७
S S I S I I　३८
I I S I S I I　३९
I S I I S I I　४०
S I I I S I I　४१
I I I I I S I I　४२
S S S I I I　४३
I I S S I I I　४४
I S I S I I I　४५
S I I S I I I　४६
I I I I S I I I　४७
I S S I I I I　४८
S I S I I I I　४९
I I I S I I I I　५०
S S I I I I I　५१
I I S I I I I I　५२
I S I I I I I I　५३
S I I I I I I I　५४
I I I I I I I I I　५५

नवकलं पूर्णम् ।

दशकले नवाशीति—

S S S S S　१
I I S S S S　२
I S I S S S　३
S I I S S S　४

I I I I S S S	५	S I I I S S I	४१
I S S I S S	६	I I I I I S S I	४२
S I S I S S	७	S S S I S I	४३
I I I S I S S	८	I I S S I S I	४४
S S I I S S	९	I S I S I S I	४५
I I S I I S S	१०	S I I S I S I	४६
I S I I I S S	११	I I I I S I S I	४७
S I I I I S S	१२	I S S I I S I	४८
I I I I I I S S	१३	S I S I I S I	४९
I S S S I S	१४	I I I S I I S I	५०
S I S S I S	१५	S S I I I S I	५१
I I I S S I S	१६	I I S I I I S I	५२
S S I S I S	१७	I S I I I I S I	५३
I I S I S I S	१८	S I I I I I S I	५४
I S I I S I S	१९	I I I I I I I S I	५५
S I I I S I S	२०	S S S S I I	५६
I I I I I S I S	२१	I I S S S I I	५७
S S S I I S	२२	I S I S S I I	५८
I I S S I I S	२३	S I I S S I I	५९
I S I S I I S	२४	I I I I S S I I	६०
S I I S I I S	२५	I S S I S I I	६१
I I I I S I I S	२६	S I S I S I I	६२
I S S I I I S	२७	I I I S I S I I	६३
S I S I I I S	२८	S S I I S I I	६४
I I I S I I I S	२९	I I S I I S I I	६५
S S I I I I S	३०	I S I I I S I I	६६
I I S I I I I S	३१	S I I I I S I I	६७
I S I I I I I S	३२	I I I I I I S I I	६८
S I I I I I I S	३३	I S S S I I I	६९
I I I I I I I I S	३४	S I S S I I I	७०
I S S S S I	३५	I I I S S I I I	७१
S I S S S I	३६	S S I S I I I	७२
I I I S S S I	३७	I I S I S I I I	७३
S S I S S I	३८	I S I I S I I I	७४
I I S I S S I	३९	S I I I S I I I	७५
I S I I S S I	४०	I I I I I S I I I	७६

S S S I I I I I ७७	I I I S I I I I I ८४
I I S S I I I I ७८	S S I I I I I I ८५
I S I S I I I I ७९	I I S I I I I I I ८६
S I I S I I I I ८०	I S I I I I I I I ८७
I I I I S I I I I ८१	S I I I I I I I I ८८
I S S I I I I I ८२	I I I I I I I I I I ८९
S I S I I I I I ८३	दशकल सम्पूर्णम् ।

इष्टशब्देन चित्तेष्टं पृष्टरूपमिहोच्यते ।
प्राचा वाचा नष्टमिहममाङ्गल्य न चोदितम् ॥ १ ॥

उपान्त्यतोऽन्त्येऽभ्यधिके ह्यधो ग ,
साम्येपि गो लस्तु ततोऽन्त्यहानौ ।
पश्चाद्गुरोर्लोपनमङ्ककस्य,
कलाङ्कसाम्ये लघवो निधेया ॥ २ ॥

शेषाङ्कपूर्वापरयोरधो ग.,
स्याप्योऽत्र वृद्धस्य स एकशये ।
न पूर्वरूप पुनरेव कार्यं,
यो यत्र लुप्येदिति तद्विचार्यम् ॥ ३ ॥

पृष्ट पञ्चकले पञ्चम १ २ ३ ५ ८, तदा पृष्ट पञ्चम तस्य अन्त्येऽष्टके
I I I I I
लोपे शेषमन्ते ३ तस्याधो ल, उपान्त्यात् हीनत्वात् शेषाङ्का १, २, ३, ५, अत्र त्रिकस्य पञ्चके भाग वृद्धत्वात् तदधो ग, पश्चात् त्रिकस्य लोप, शेष १।२ कलाना अङ्काना च साम्यात प्रत्येक लघव, इति ।। ऽ। पञ्चम रूपम् । यद्यत्र एकात् द्विकस्य वृद्धस्याध गुरुर्दीयते तदा तु पञ्चकले तुर्यरूपापत्ति । अत्र हि प्रथमरूपनये त्रिकलवत् न्यस्ते प्रान्तगुरुत्वम् । पञ्चकत्वाच्छन्दस त्रिकले पूर्व-पूर्वत्वात् प्रश्ने तदतिक्रमे चतु कल स्वत पूर्वस्य द्वितीयरूपप्राप्तिस्तदभगश्च दोषश्च । अथ यो नर पूर्वरूप न जानाति तस्य का गति ? इति चेत, तेन पुसा विचार्यं यत् पञ्चकले सर्वरूपाण्यष्ट, तर्हि त्रिरूपव्यतिक्रान्ते गुर्वधिकता न युक्ता । यस्य यावत् कलच्छन्दस स्वपूर्वच्छन्दस ५१ परस्य याथद् रूपाधिक्य तावति रूपे अर्द्धं प्रान्तगुरुता च । यथा– अत्र पञ्चकले स्वपूर्वचतु कलात् पञ्चरूपात्मकात् रूपत्रयमधिकमिति त्रिरूपी यावदर्द्धेऽन्तगुरुता च ।

पूर्वं-पूर्वंत्रिकलरूपतापि । तत्र गुर्वाधिक्य परार्द्धे लघूनामाधिक्य प्रान्तलघुता च । यथा, त्रिकलत चतु कले रूपद्वयाधिक्य तेन प्रथमरूपद्वये न गुरुत्व, शेषद्वये चान्तलघुत्व, पञ्चम तु चतुर्लम् । पञ्चकलेपि प्रथमत्रिरूपीत्रिकलस्य पश्चात् पञ्चरूपी चतु कलस्य तत्रापि प्रान्तलघुता । पञ्चसु रूपेष्वपि द्विकलाद् रूपद्वय प्रान्तगुरुक तस्याप्यग्रे एक लघु । ततोऽपि रूपद्वय त्रिकलवत् प्रान्तलघुद्वय चतु-कलापेक्षया पञ्चम, पञ्चकलापेक्षयाऽष्टम सर्वलघुकम् ।

पञ्चकलात् षट्कले पञ्चरूपाधिक्य, पञ्चापि रूपाणि चतु कलवत् प्रान्ते एकगुरोरधिकस्य दानात् कलापूर्ति, पञ्चमे रूपे एको गुरुरन्ते शेष लघुचतुष्टयम् ।

परतोऽष्टरूपाणि पञ्चकलवत् प्रान्ते एकलघुनाऽधिकानि । तत्राप्यष्टमे प्रान्ते एकगुरु शेष लघुपञ्चक, अष्टास्वपि रूपत्रय त्रिकलवत् प्रान्ते गुरुलघुभ्यामधिक षट्सप्तमाष्टरूप, पर रूपपञ्चक चतु कलवत् प्रान्ते लघुद्वयाधिक इत्यादौ विचार एव बलवान् ।

एव पृष्टे पञ्चकले षष्ठरूपे तदा प्रान्त्याष्टमध्ये ६ लोपे शेष १, २, ३, ५, २, अन्त्यद्विकाधो ल, तस्य पञ्चके भागात् उपान्त्यादूनत्वाच्च पञ्चकेपि द्विकस्य भागे लब्ध २ शेष १ तेन पञ्चकाधोपि ल, त्रिकाधो ग, द्विकलोप, तुर्ये पञ्चमे च रूपे पञ्चकाधो ग, त्रिकलोप । पञ्चकले हि त्रिकलवत् त्रिरूपी गुरुणान्तेऽधिका इद पृष्ट षष्ठ रूप इति विचारात् लब्धस्य द्विकस्य त्रिके भागाच्च, मुख्यैकाध कला । ऽ।। इति षष्ठ रूपम् । यथा उपान्त्ये–अ त्यस्य भागे उपान्त्याधो ग, अन्त्याधो ल, उपान्त्यपूर्वस्य लोप, तथा द्विकस्य पञ्चके शेष १ तस्य त्रिके भागेपि सभवति त्रिकाधो ग, पञ्चकस्थानीयद्विकाधो ल, पूर्वद्विकलोप, मुख्याधो ल । इति रूपनिर्णय ।

पञ्चकले सप्तमेपि अन्त्याष्टके सप्तलोपे शेष १ तदधो ल शेषैकस्यापि पञ्चके भागे शेष पूर्णम् । अग्र त्रिकस्य द्विके भागाभाव वृद्धत्वात् मुख्यैकस्य द्विके भागात् द्विकाधो ग, मुख्यैकलोप, त्रिकाधो ल, इति ऽ।।। सप्तमम् ।

यो यस्मात पूर्वपूर्वोऽङ्कस्तावद्रूपेषु चान्त्यग ।
तत्पर प्रान्त-लान्येव स्वत पूर्वाङ्कसख्यया ।। ४ ।।

एव सप्तकले पृष्टे एकादशे रूपे अन्त्याङ्क २१ मध्ये ११ पाते शेष १० तस्य उपान्त्याङ्के १३ मध्ये भाग प्राप्त, तत्र अष्टकस्य कलाग्रहात् १३ स्थानीयत्रिकाधो ग अष्टकलोप', दशाधो ल, द्विकस्य त्रिके भाग, तेन त्रिकाधो ग, द्विकलोप, मुख्यैकाधो ल, पञ्चकाधो ल, एव ।ऽ।ऽ। इत्येकादशरूपसिद्धि ।

ननु अत्र पञ्चके त्रयोदशस्थानीयत्रिकस्य भागात् पञ्चकाधो ग, पूर्वत्रिक-लोप, अग्रे १,२ अनयोरध कलाद्वयमिति कथ न क्रियते ? इति चेत्, न, दशम-रूपापत्ते । परस्य १० अङ्कस्य पूर्वस्मिन् १३ अङ्के भागाधिकारात् पूर्वत्रिके भागश्चेन् सम्भवति तदाऽय विधियुं क्त । यद्यपि त्रयोदशस्थानीयत्रिकस्य परस्य पूर्वस्मिन् पञ्चके भागसम्भव, पर मध्येष्टकलोपेन व्यवधानान्नाय विधिर्घटते ।

यद्यपि सप्तकले दशमे रूपे अयमेव विधिर्दृश्यते, तथापि सप्तकले पूर्वपूर्वं पञ्चकल तस्याष्टरूपाणि प्रथमतोऽतिक्रान्तानि शेष ९।१०।११ इति षट्कलस्य तृतीय रूप प्रश्ने प्राप्त, तच्च ।ऽ।ऽ ईदृशमिति, तद्भङ्गापत्तेरानीयमध्वाप्रध्वर ।

षट्कलेपि तादृग् रूप चतु कले स्वपूर्वपूर्वे तृतीयरूपे ।ऽ। ईदृशे प्रान्ते गुरु-दानात् सिद्धम् । चतु कलेपि द्विकलवत् रूपद्वये प्रान्ते गुरुणाधिकेप्यतीते त्रिकलस्य प्रथम रूप प्राप्त, चतु कलापेक्षया तृतीय, तत्रान्ते लघोरधिकारात् प्रश्ने ।ऽ। ईदृशस्यैव सिद्धे ।

स्वपूर्वपूर्वस्य कलाप्रमाणे, गोऽन्त स्वपूर्वस्य कलाप्रमाणे ।
लोऽन्तो विचिन्त्येति निवेद्यमेव, छन्दोविदा पृष्टमिहेऽष्टरूपम् ॥

नट्ठे सव्व कला कारिज्जसु, पुव्व जुयल सरि अका दिज्जसु ।
पुच्छिल अक मेटावहु सेस, उवरिल अक लोपि के लेख ॥
जत्थ जत्थ पाविज्जइ भाग, एह कहे फुर पिंगलनाग ।
परमत्ता लेइ गुरुताइ, जत लेवेहु तत लेवेहु आइ ॥

नष्टाङ्के कल्पयेद् भाग समभागे लघुर्भवेत् ।
दत्त्वैक विषमे भागे कार्यस्तत्र गुरुर्भवेत् ॥
[वाणीभूषणम्, परि० १, पद्य ३५]

अथ सिलमिली [शाल्मली] प्रस्तार

गुरु पढम हिट्ठ ठाण, लहुआ परि ठवहु अप्पबुद्धेण ।
सरिसा सरिसा पन्ती, उव्वरिआ गुरु-लहू देहु ॥

इति मात्रानष्ट न्यास ।

वर्णोद्दिष्ट–नष्ट–प्रकरणम्

अथ वर्णोऽ[? द्दि]ष्टरूपज्ञानमाह—

द्विगुणानङ्कान् दत्त्वा वर्णोपरि लघुशिरःस्थितानङ्कान् ।
अङ्केन पूरयित्वा वर्णोद्दिष्टं विजानीयात् [।। ५५ ।।]

अस्यार्थः सोदाहरण. । यथा, । ऽ । ऽ इद चतुरक्षरे छन्दसि कतम रूपम् ? इति, उद्दिष्टे द्विगुणा अङ्का उपरि देयाः १ २ ४ ८ इति न्यासे लघूपरि १,४
। ऽ । ऽ
मेलने ५, तत्र सैककरणे षष्ठ रूप इत्युद्देश्यम् ।

उद्दिष्टे वर्णोपरि दत्त्वा द्विगुणक्रमेणाङ्कम् ।
एक लघुवर्णाङ्के दत्त्वोद्दिष्टं विजानीयात् ।।
[वाणीभूषणम्, परि० १, पद्य १४]

इ[? न]ष्टज्ञानमपि आह—

नष्टे पृष्टे भागः कर्त्तव्य पृष्टसंख्यायाः ।
समभागे ल कुर्याद् विषमे दत्त्वैकमानयेद् गुरुकम् [।। ५६ ।।]

यथा चतुरक्षरे छन्दसि षष्ठ रूप कीदृशम् ? इति पृष्टे षण्णां भागोऽर्द्धं त्रय एव समभागात् लघुः प्राप्तः, पुनस्त्रयाणामर्द्धकरणाभावात् सैककरणे ४, तदर्द्धं २ एव गुरुः प्राप्त., द्वयस्यार्द्धं १ एव लघु प्राप्त., तस्याप्यर्द्धाऽसम्भवात् सैक-करणे २ तदर्धे १ एव गुरुप्राप्ति । जात । ऽ । ऽ एव इ(? न)ष्टरूपज्ञानम् ।

इति वर्णोद्दिष्टनष्टप्रकरणम् ।

वर्णमेरु-प्रकरणम्

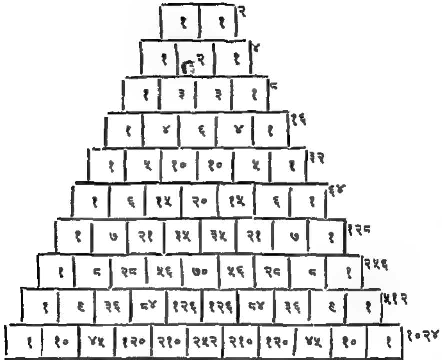
वर्णमेरुमाह—

> *कोष्ठानेकाधिकान् वर्णैः कुर्यादाद्यन्तयोः पुनः ।*
> *एकाङ्कमुपरिस्थाङ्क - द्वयैरन्यान् प्रपूरयेत् [॥ ५७ ॥]*

१	१				
१	२	१			
१	३	३	१		
१	४	६	४	१	
१	५	१०	१०	५	१

यस्य छन्दसो यावन्तो वर्णास्तावन्त कोष्ठा एकेनाधिकाः कर्त्तव्या । तत्रापि आद्यन्तकोशद्वये एकाङ्कन्यास, तत पुन उपरिस्थाङ्कयो कोशयोर्मेलनेन विचालस्थकोशपूरण कार्यम् । यथा—द्विकवर्णच्छन्दसो द्वे रूपे–एक गुरुक १, एक लघुक च २, एव कोशद्वयम् । द्विवर्णच्छन्दसोपि चत्वारि रूपाणि—ऽऽ, ।ऽ, ऽ।, ।।, इति । एक सर्वगुरुक, द्वे रूपे एकगुरुके, एक सर्वलघुक, एव उपरितनकोशद्वयाङ्कौ १।१ तयोर्मेलने द्वाविति मध्यकोशे द्विकन्यास । त्रिवर्णच्छन्दसोऽष्टरूपाणि—एक सर्वगुरु ऽऽऽ, त्रीणि द्विगुरूणि २, ३, ५, त्रीणि एकगुरूणि ४, ६, ७, एक सर्वलघु मध्ये कोशद्वये ३।३ न्यास, उपरिस्थ १।२ मेलने जात । चतुर्वर्णच्छन्दसि षोडशरूपाणि—एक सर्वगुरु आद्य, चत्वारि एक गुरूणि ८, १२, १४, १५, षट् द्विगुरूणि ४, ६, ७, १०, ११, १३, चत्वारि त्रिगुरूणि २, ३, ५, ९, एक सर्वलघु, एव षोडशरूपाणि । विचालकोशत्रये १।३ मेलने ४ प्रथम-मध्यकोशपूरण, उपरितन ३।३ मेलने ६ द्वितीयमध्यकोशे, तृतीयेपि १।३ मेलने ४ इति, एवमग्रेपि ।

'वर्णमेरुरय' इत्यादि स्पष्टम ॥ ५८ ॥



इति वर्णमेरु ।

द्व्यक्षरे छन्दसि ४ रूपाणि—एक सर्वगुरुरूप, द्वे रूपे एक गुरुके, एक सर्वलघुः । त्र्यक्षरे छन्दसि ८ रूपाणि—१ सर्वगुरु, त्रीणि एकगुरूणि, त्रीणि द्विगुरूणि, एक सर्वलघु । चतुर्वर्णे छन्दसि १६ रूपाणि—४ एकगुरु, द्विगुरु ६, त्रिगुरु ४, एक सर्वगुरु, एक सर्वलघु । पञ्चवर्णे छन्दसि ३२ रूपाणि । षड्वर्णे ६४ रूपाणि । सप्ताक्षरे १२८ रूपाणि । अष्टाक्षरे २५६ रूपाणि । ९ वर्णे ५१२ रूपाणि । दशाक्षरे छन्दसि १०२४ रूपाणि ।

इति वर्णमेरु-प्रकरणम् ।

वर्णपताका-प्रकरणम्

वर्णपताकामाह—

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पूर्वाङ्कैर्योजयेदपरान् ।
अङ्कः पूर्वं यो वै धृतस्तत. पङ्क्तिसञ्चारः ॥ [॥ ५६ ॥]
अङ्काः पूर्वं भृता येन तमङ्कं भरणे त्यजेत् ।
अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्कं नैव साधयेत् ॥ [॥ ६० ॥]
प्रस्तारसंख्यया चैवमङ्कविस्तारकल्पना ।
पताका सर्वगुर्वादिविवेकिकेय विशिष्यतु ॥ [॥ ६१ ॥]

पूर्वयुगाङ्काः वर्णच्छन्दसि १।२।४।८।१६।३२।६४ इत्यादयः, तद्वरण न्यासवेद्यम् ।

१	२
१	२

१	२	४
१	२	४
	३	

अथ तान् यथायोगं पूर्वाङ्कैर्योजयेत् तदा अधोऽधस्तनी अङ्कश्रेणिर्जायते । प्रथम एकवर्णच्छन्दसि रूपद्वयमेव, तत्र २ पङ्क्तिस्थापना । द्विवर्णे मध्यस्था एका-पङ्क्ति । त्रिवर्णे मध्यस्थ पङ्क्तिद्वय । चतुर्वर्णे मध्यस्थ पङ्क्तित्रयम् । पञ्चवर्णे मध्यस्थ पङ्क्तिचतुष्टयम् ।

आदौ एक वर्णे ऽ गुरु । लघुश्चेति रूपद्वयम् । द्विवर्णे १।२ इत्यनयोर्योजने ३ द्विकाध. । अत्र पूर्वं अङ्क धृत. तत. पङ्क्तिसञ्चारः, एकैव द्विकाद्यापङ्क्ति परतः सिद्धोऽङ्कस्तस्य साधना नास्तीति । तत्र एक रूप सर्वग प्रथम, द्वे रूपे द्वितीय-तृतीयरूपे एकगुरुके, तुर्यं सर्वलम् । एव द्विवर्णच्छन्दसि चत्वार्येव रूपाणि भवन्ति ।

१	२	४	८
१	२	४	८
	३	६	
	५	७	

त्रिवर्णे छन्दसि १।२ योजने ३ द्विकाधः, पुनः २।४ मेलने ६ परतः सिद्धोऽङ्कः, पुनः २।३ योजने ५, पुनः ४।३ योजने ७, पुनः ४।३ योगे ७ शेषाङ्काभावात्। एवं एक रूपं सर्वगं, द्वितीय-तृतीय-पञ्चमानि रूपाणि एकेन गुरुणा ऊनानि त्रीणि रूपाणि द्विगुरूणि, ४, ६, ७ रूपाणि गुरुद्वयोनानि एक गुरूणि त्रीणि, एकं अष्टमं सर्वलघुकमिति अग्रेपि मन्तव्यम्।

सुखेन अग्रेपि करणज्ञानाय विधिः—

१	२	४	८	१६
१	२	४	८	१६
	३	६	१२	
	५	[illegible]	१४	
	[illegible]	१०	१५	
		११		
		१३		

१।२ योजने ३, पुनः ४।२ योजने ६, पुनः ८।४ योजने १२, द्वितीया कोशश्रेणिः, १६ स्थाग. सिद्धाङ्कत्वात्। अस्याः श्रेणेरप्यधः २।३ योजने ५, पुनः ४।३ योजने ७, पुनः ८।६ योजने १४ तृतीया श्रेणिः। तस्या अध. ४।५ योजने ९, पुनः ४।६ योजने १०, पुनः ८।७ योजने १५ तुर्याश्रेणि। ६।५ योजने ११, पुनः ६।७ योजने १३, एव श्रेणिद्वय एककोशम्। एव एक रूप सर्वग प्रथमपङ्क्तौ। द्वितीयपङ्क्तौ २।३।५।९ चत्वारि रूपाणि एक गुरुणा ऊनानि त्रिगुरूणि। [तृतीयपङ्क्तौ] ४।६।७।१०।११।१३ इति षड्रूपाणि द्विगुरूणि। [चतुर्थपङ्क्तौ] ८।१२।१४।१५ एतानि एकगुरूणि। [पञ्चमपङ्क्तौ] षोडश सर्वलघु, एव षोडशरूपाणि।

१	२	४	८	१६	३२
	३	६	१२	२४	
	५	७	१४	२८	
	९	१०	१५	३०	
	१७	११	२०	३१	
		१३	२२		
		१८	२३		
		१९	२६		
		२१	२७		
		२५	२९		

पञ्चवर्णे छन्दसि १।२ योजने ३ द्विकाध, २।४ योजने ६ चतुकाध, ८।४ योजने १२, अष्टाध, १६।८ योजने २४ द्वितीयश्रेणि। तदध २।३ योजने ५, पुनः ४।३ योजने ७, पुन ८।६ योजने १४, पुन १६।१२ योजने २८ तृतीयश्रेणि। ४।५ योजने ९, पुन ४।६ योजने १०, पुन ८।७ योजने १५, पुन १६।१४ योगे ३० तुर्यश्रेणि। ८।९ योजने १७, ४।७ योजने १ , पुन ८।१२ योजने २०, पुन १६।१५ योजने ३१ पञ्चमश्रेणि। ६।७ योजने १३, पुन ७।११ योजने १८, पुन ९।१० योजने १९, पुनः १०।११ योजने २१, पुन १०।१५ योजने २५, पुन ८।१४ योजने २२, पुन ८।१५ योजने २३, पुन १२।१४ योजने २६ पुन १२।१५ योजने २७, पुन १४।१५ योजने २९ एव पताकया सर्वगुर्वादिज्ञापनम्।

एक सर्वगुरुरूप। २।३।५।९।१७ पचरूपाणि चतुर्गुरूणि। ४।६।७।१०।११।१३।१८।१९।२१।२५ एतानि त्रिगुरूणि। ८।१२।१४।१५।२०।२२।२३।२६।२७।२९ एतानि द्विगुरूणि। १६।२४।२८।३०।३१ एतानि एकगुरूणि। ३२ एक सर्वलघुरूपम्।

पूर्वाङ्के उपरितनैः पार्श्वस्थैर्वा पङ्क्त्यन्तरेप्युपरिस्थैरङ्कानां योजना स्यात् १।२ इत्यादयः, साम्ये योज्याः २।३ इत्यादयः, उपरितनैः ३।४ इत्यादयः, पङ्क्त्यन्तरस्थैर्योगो भाव्यः। येन येन अङ्केन मीलितेन य अङ्कः रूपस्य पताकायां भृतस्तमङ्कं पुनर्जायमानं न पूरयेत्, यावद्रूपैः प्रस्तारस्तावद्रूपैः कोपभरणमिति ज्ञेयम्।

उद्दिट्ठा सरि अंका दिज्जसु, पुव्व अंक परभरण करिज्जसु।
पाउल अंक मढ परिसिज्जसु, पत्थर संख पताका किज्जसु ॥

एकवर्णपताका

१	२
१	२

S
I

द्विवर्णपताका

१	२	४
१	२	४
	३	

SS	(१)
IS	(२)
SI	(३)
II	(४)

द्विवर्णे एकं सर्वगुरु, द्वे रूपे एकगुरुके द्वितीय-तृतीये, तुर्यं सर्वलघुकम्।

त्रिवर्णपताका

SSS	(१)
ISS	(२)
SIS	(३)
IIS	(४)

१	२	४	८
१	२	४	८
	३	६	
	५	७	

SSI	(५)
ISI	(६)
SII	(७)
III	(८)

एकं सर्वगुरु, द्विगुरु २।३।५, एकगुरु ४,६,७ रूपाणि, अष्टमं सर्वलम्।

चतुर्वर्णपताका

S S S S	(१)
I S S S	(२)
S I S S	(३)
I I S S	(४)
S S I S	(५)
I S I S	(६)
S I I S	(७)
I I I S	(८)

१	२	४	८	१६
	३	६	१२	
	५	७	१४	
	९	१०	१५	
		११		
		१३		

S S S I	(९)
I S S I	(१०)
S I S I	(११)
I I S I	(१२)
S S I I	(१३)
I S I I	(१४)
S I I I	(१५)
I I I I	(१६)

पोडशके प्रस्तारे एक सर्वगुरुरूपम्, २।३।५।९ एतानि त्रि-गुरूणि, ४,६ ७,१०,११,१३ एतानि द्विगुरूणि, ८।१२।१४।१५ एतानि एकगुरूणि, १६ एक सर्वलघुरूपम् ।

पञ्चवर्णपताका

१	२	४	८	१६	३२
	३	६	१२	२४	
	५	७	१४	२८	
	९	१०	१५	३०	
	१७	११	२०	३१	
		१३	२२		
		१८	२३		
		१९	२६		
		२१	२७		
		२५	२९		

पञ्चवर्णपताका

श्री	ग									
१	१									
५	२	३	५	९	१७					
१०	४	६	७	१०	११	१३	१८	१९	२१	२५
१०	८	१२	१४	१५	२०	२२	२३	२६	२७	२९
५	१६	२४	२८	३०	३१					
१	३२									
ऐ	ला									

एकद्वयोर्योगे ३, द्विचतुरोर्योगे ६, चतुरष्टयोर्योगे १२, अष्टषोडशयोगे २४। ऊर्ध्वाध २।३ योगे ५, चतुस्त्रियोगे वक्रत्वे ७, ८।६ योगे १४, १६।१२ योगे २८। १।३।५ योगे ९, ४।६ योगे १०, ८।७ योगे १५, १६।१४ योगे ३०।; ४।६।७ योगे १७, १।३।७ योगे ११, ८।१२ योगे २०, [११।२० योगे ३१; ६।७ योगे १३, ७।११ योगे १८, ९।१० योगे १९, १०।११ योगे २१;१०।१५ योगे २५।] ८।१४ योगे २२,१५।८ योगे २३,१२।१४ योगे २६, १५।१२ योगे २७, १५।१४ योगे २९।

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ	(१)	ऽ ऽ ऽ ऽ ।	(१७)
। ऽ ऽ ऽ ऽ	(२)	। ऽ ऽ ऽ ।	(१८)
ऽ । ऽ ऽ ऽ	(३)	ऽ । ऽ ऽ ।	(१९)
। । ऽ ऽ ऽ	(४)	। । ऽ ऽ ।	(२०)
ऽ ऽ । ऽ ऽ	(५)	ऽ ऽ । ऽ ।	(२१)
। ऽ । ऽ ऽ	(६)	। ऽ । ऽ ।	(२२)
ऽ । । ऽ ऽ	(७)	ऽ । । ऽ ।	(२३)
। । । ऽ ऽ	(८)	। । । ऽ ।	(२४)
ऽ ऽ ऽ । ऽ	(९)	ऽ ऽ ऽ । ।	(२५)
। ऽ ऽ । ऽ	(१०)	। ऽ ऽ । ।	(२६)
ऽ । ऽ । ऽ	(११)	ऽ । ऽ । ।	(२७)
। । ऽ । ऽ	(१२)	। । ऽ । ।	(२८)
ऽ ऽ । । ऽ	(१३)	ऽ ऽ । । ।	(२)
। ऽ । । ऽ	(१४)	। ऽ । । ।	(३०)
ऽ । । । ऽ	(१५)	ऽ । । । ।	(३१)
। । । । ऽ	(१६)	। । । । ।	(३२)

इति वर्णपताका-प्रकरणम् ।

मात्रामेरु-प्रकरणम्

अथ मात्राछन्दो मेरुमाह—

एकाधिककोष्ठानां द्वे द्वे पङ्क्ती समे कार्ये ।
तासामन्तिमकोष्ठेष्वेकाङ्कं पूर्वभागे तु ॥६२॥

एककलच्छन्दसः ५१ अधिककोष्ठानां द्विकल-त्रिकलादीनां द्वे द्वे समे पङ्क्ती कार्ये । कोऽर्थः ? द्विकल-त्रिकलयोः समे पङ्क्ती द्वयोरपि चतु.कोशात्मिके कार्ये । एवं चतु.कलाष्टकलयोः षट्कोशरूपे । त्रयोदशकल-एकविंशतिकलयो. अष्टकोशात्मिके कृत्वा अन्त्यकोशे एकाङ्क एव धार्यः ।-पूर्वभागे तु पुनः अयुग्पङ्क्तेः १ । ३ । ५ । ७ इत्याद्विकायाः प्रथमकोशेषु सर्वत्र एककः स्थाप्य, समपङ्क्तेः २ । ४ । ६ । ८ इत्यादिकाया पूर्वभागे प्रथमकोशे पूर्वयुग्माङ्काः । इह मात्रा छन्दसि १ ।२। ३ । ५ । ८ । १३ । २१ इत्याद्या योज्याः । एतत्तु दुर्बोधम् । सर्वपंक्तिषु आदौ पूर्वयुग्माङ्का देयाः । द्विकलाद्यपेक्षया अयुग्पङ्क्तीनां द्वितीयकोशे एकक, समपक्तीनां द्वितीयकोशे २ । ३ । ४ । ५ । ६ । ७ । ८ इत्यादयः स्थाप्याः यावता पंक्ति. पूर्यते । आद्य एककलघुकोशापेक्षया २ । ४ । ६ । ८ एतासु पंक्तिषु एकक इति ।

आद्याङ्केन तदीयैः शीर्षाङ्कैर्वामभागस्थं. ।
उपरिस्थितेन कोष्ठं विषमायां पूरयेत् पङ्क्तौ ॥६३॥

					१	१
			२	१	१	२
			३	२	१	३
		५	१	३	१	४
		८	३	४	१	५
	१३	१	६	५	१	६
	२१	४	१०	६	१	७
३४	१	१०	१५	७	१	८
५५	५	२०	२१	८	१	९

यथा द्वाभ्या एककाभ्या मेलने जात २ । अग्रे अन्तकोष्ठे एक सिद्ध एव इति द्वितीया पक्ति । अस्या प्रथमकोश निकरत विहाय कोशभरण एव तृतीय पड्क्तौ । विषयामा द्वितीयपड्क्तिगत द्विक तदुपरि वामस्थित एक, एव १।२ मीलने जाता ३ मध्यकोशे, अन्तकोशे पुन एक सिद्ध एव । प्रथमकोशे तु 'एकाङ्कमयुगपड्क्ते ।' इति सूत्रणात् एकाङ्क स्थाप्य एव, तस्याप्यादौ पूर्व-युग्माङ्क पञ्चक सकोशभरणेन ग्राह्य । एव प्राप्त चतु कले पञ्चरूपाणि एक सर्वग, त्रीणि एकगुरूणि, एक अन्ते सर्वलघुरूपम ।

एव पञ्चकलमेरुकोशेपु द्विकलेन समकोशत्वात चतु कलस्य १।३ एतौ सयोज्य उपान्त्ये ४ अन्ते एक सिद्ध एव । तत द्विकलपक्तिग द्विक त्रिकलपक्तिग एकञ्च सयोज्य त्रिक स्थाप्य, तस्याप्यग्रेऽष्टक पूर्वयुग्माङ्क । एव च त्रीणि रूपाणि द्विगुरूणि, चत्वारि एक गुरूणि । कानि कानि ? इत्याशङ्का पताकया निरस्या । अत्र मेरौ लग त्रियावत् रूपसख्यैव ।

षट्कले तु चतु कलस्यैक, पञ्चकलस्य चतु क च सयोज्य उपा त्ये पञ्चक, अन्त्ये तु एक सिद्ध एव चतु कलगतत्रिक तथा पञ्चकलगतत्रिक सयोज्य जाता ६ । ततोऽप्याद्यकोशे एकक षटकलत्वात आदौ सर्वगुरवैकरूपज्ञानाय ततोऽप्यादौ १३ युग्माङ्क । एवञ्च एक रूप त्रिगुरुक, षट्रूपाणि द्विगुरुकाणि, पञ्चरूपाणि एकगुरुकाणि एकमन्त्य सर्वलघुकम । एव सर्वाणि १३ रूपाणि ।

सप्तकलके पञ्चकलस्य त्रिक षटकलस्यैक सयोज्य आदौ ४, तस्याप्यादौ २१ युग्माङ्क । चतु कात परकोशे पञ्चकलगत चतु क षटकलगत षटक सयोज्य १०, तत पर पञ्चकलगत एक षटकलगत पञ्चक सयोज्य षट ततोऽ ते एक सिद्ध एव । एव च चत्वारि रूपाणि त्रिगुरूणि, दशरूपाणि द्विगुरूणि षट्रूपाणि एकगुरूणि, एक सर्वलघु एव २१ सर्वरूपाणि ।

अष्टकलके समपङक्तित्वात् एक सर्वगुरुरूप तदङ्क १, तस्यादौ ३४ युगमाङ्क, एकस्य कोशादग्रतनकोशे षटकलपक्तिगत षटक, सप्तकलपक्तिगत चतु क सयोज्य १०, तदग्र पट्कलगत पञ्चक सप्तकलगतदशक १० योगे १५ धरण, तदग्रे षट्कलगत एक सप्तकलगत षट्क सयोज्य ७, अन्त चैक । एव च एक सर्वगुर, दशरूपाणि त्रिगुरकाणि, १५ रूपाणि द्विगुरूणि, सप्त एकगुरूणि, एक सर्वल, इति ३४ रूपाणि ।

एव नवकले उपरितनपक्तिगत ४।१ योगे ५, पुन १०।१० योग २०, पुन ६।१५ योगे २१, पुन १।७ योगे ८ इति ५५ रूपाणि । इति मात्रामरु ।

मात्रामेरु-कर्त्तव्यता—

सिर अंके तसु सिर पर अंके, उवरल कोट्ठ पुरुहु निस्सके ।
मत्तामेरु अंक सचारि, बुज्झइ बुज्झइ जन दुइ चारि ॥
[प्राकृतपैङ्गलम् परि० १, पद्य ४७]

दुई दुई कोठा सरि लिहहु, पढम अंक तसु अंत ।
तसु आईहि पुणु एक्कु सउ, पढमे बे वि मिलंत ॥

२ ऽ	१	१							२
३ ।ऽ	२	१							३
४ ऽऽ	१	३	१						५
५ ।ऽऽ	३	४	१						८
६ ऽऽऽ	१	६	५	१					१३
७ ।ऽऽऽ	४	१०	६	१					२१
८. ऽऽऽऽ	१	१०	१५	७	१				३४
९. ।ऽऽऽऽ	५	२०	२१	८	१				५५
१०. ऽऽऽऽऽ	१	१५	३५	२८	९	१			८९
११. ।ऽऽऽऽऽ	६	३५	५६	३६	१०	१			१४४
१२ ऽऽऽऽऽऽ	१	२१	७०	८४	४५	११	१		२३३
१३ ।ऽऽऽऽऽऽ	७	५६	१२६	१२०	५५	१२	१		३७७
१४ ऽऽऽऽऽऽऽ	१	२८	१२६	२१०	१६५	६६	१३	१	६१०
१५ ।ऽऽऽऽऽऽऽ	८	८४	२५२	३३०	२२०	७८	१४	१	९८७

अयुग्पङ्क्ते पूर्वभागे एकाङ्कं दद्यात, समकोष्ठकपङ्क्तिद्वयमध्ये प्रथमपक्ते आदिमकोष्ठे इत्यर्थः । समकोष्ठकपङ्क्तिद्वयमध्ये द्वितीयपङ्क्तेराद्यकोष्ठे पूर्वयुग्माङ्कं दद्यात् ।

एककलो लघुरेव । द्विकले २ रूपे-एक गुरु, एक लघु इति। त्रिकले त्रीणि रूपाणि-द्वे रूपे एक गुरुके, एक सर्वलघुरूपम् । चतु.कले ५ रूपाणि-एकं सर्वगुरुकं, त्रीणि एकगुरूणि, एक सर्वलघु । पञ्चकले ८ रूपाणि-रूपत्रयं द्विगुरुकं, रूपचतुष्टय एकगुरुक, एकं सर्वलघु ।

अथ मात्रासूचीमेरुः

अक्खर संखे कोट्ठ करु, आइ अंत पढमंक।
सिर दुइ अंके अवर भरु, सूई मेरु णिस्संक ॥
[प्राकृतपैङ्गलम् परि. १, पद्य ४४]

१. ।	०	१	१						
२. ऽ	१गु	१ल	२						
३. ।ऽ	० ३	२गु	१ल	३					
४. ऽऽ	१ ५	३ गु.	१ल	५					
५ ।ऽऽ	० ८	३ द्वि.गु	४ गु१	१	८				
६. ऽऽऽ	१ १३	६ द्विगु १३	५ गु१	१	१३				
७ ।ऽऽऽ	० २१	४	१०	६	१	२१			
८ ऽऽऽऽ	१ ३४	१०	१५	७	१	३४			
९. ।ऽऽऽऽ	० ५५	५	२०	२१	८	१	५५		
१० ऽऽऽऽऽ	१ ८९	२१	३५	२३	९	१	८९		
११. ।ऽऽऽऽऽ	० १४४	६	३५	५६	३६	१०	१	१४४	
१२. ऽऽऽऽऽऽ	१ २३३	२१	७०	८४	४५	११	१	२३३	
१३. ।ऽऽऽऽऽऽ	० ३७७	७	५६	१२६	१२०	५५	१२	१	३७७
१४. ऽऽऽऽऽऽऽ	२८ ६१०	१२६	२१०	१६५	६६	१३	१	६१०	

मात्रासूचीमेरु सेसनागगुरुरसवादे जानीयात् ३०००२७७० ।

एककलस्य एक रूप-सर्वलघु तदेव । द्विकलस्य द्वे रूपे-एक गुरु ■ रूप, द्वितीय ल-द्वयम् । त्रिकलस्य रूपाणि ३, द्वे एकगुरुके, एक त्रिलघुकम् । चतुःकले-एक सर्वगुरु, त्रीणि द्विगुरूणि, एक सर्वल एव ५ । पञ्चकले च त्रीणि द्विगुरूणि, चत्वारि एकगुरूणि, एक सर्वल एव ८ । षट्कले-एक सर्वगुरुरूप, षट् रूपाणि द्विगुरूणि, पचरूपाणि एकगुरूणि, एक सर्वल, एव १३ । सप्तकले-चत्वारि त्रि-गुरूणि, दश द्विगुरूणि, षट् एकगुरूणि, एक सर्वल, एव सर्वाणि २१ । अष्टकले-एक सर्वगुरु, दश त्रिगुरूणि, १५ द्विगुरूणि, सप्त एकगुरूणि, एक सर्व ल, एव सर्वाणि ३४ ।

[a]१०	६	८	७	६	५	४	३	२	१
१	२	३	४	५	६	७	८	६	१

अत्र '१० एक दश' इति । ततः पुनर्दशाभा नवतिर्गुणने ६०, तत्र द्वाभ्या भागे ४५, ततः ४५ अष्टगुणे ३६०, तत्र ३ भागे लब्ध १२० तेषा सप्तगुणत्वे ८४०, तत्र ४ भागे लब्ध २१०, तेषा षड्गुणत्वे १२६०, तत्र पञ्चभिर्भागे लब्ध २५२, तेषा पञ्चगुणत्वे १२६० लब्ध, तत्र षड्भिर्भागे २१०, तेषा चतुर्गुणत्वे ८४०, सप्त-भिर्भागे लब्ध १२०, तेषा त्रिगुणत्वे ३६०, तत्र ८ भागे लब्ध ४५, तेषा द्विगुणत्वे ६०, तत्र ६ भागे लब्ध १०, तत्राप्येकगुणने तदेव १०, तत्र एकेन भागे लब्ध १। एव मेवङ्का सिद्धा १।१०।४५।१२०।२१०।२५२।२१०।१२०।४५।१०।१ इति । [a]

इति मात्रामेरु-प्रकरणम् ।

[a-a] विहृ,नान्तर्गतोऽयमश वस्तुतस्तु वर्णमेरुप्रकरणे पत्राङ्क ३४५ स्थ-वर्णमेरुविवेऽन्तिम-कोष्ठेन सम्बद्धोऽस्ति ।

मात्रापताका-प्रकरणम्

अथ मात्रापताका—

दत्त्वोद्दिष्टयदङ्कान् वामावर्तेन लोपयेदन्त्ये ।
अवशिष्टो यं योऽङ्कस्ततोऽभवत् पङ्क्तिसञ्चारः [॥६७॥]

अत्र उद्दिष्टाङ्काः १।२।३।५।८ इत्यादयः प्रागुक्तास्तेषु द्विकापेक्षया वामस्थ एकः तयोर्योगे ३ इति त्रिके पंक्तित्यागः, द्विकाधस्त्रिकः तदधः ४, तदधः ६, तदधः ७, तदधः ९ । पुनः, उद्दिष्टाङ्कः ५ द्विकत्रिकयोर्योगे जातः, तदधः ८ उद्दिष्टाङ्कस्तस्य पंक्तित्यागः । पञ्चकाधःस्थितेः तदधोऽधः १०।११।१२; पुनः पंक्तौ १३, एवं षट्कलस्य पताका । तस्यां त्रिक-पचञ्कयो एकस्य चतुष्कस्य उद्दिष्टे लोपात्–अदर्शनात् त्रिषु गुरुषु प्रथमरूपस्थेषु एकस्यैव लोपः । एतावता २।३।४।६।७।९ रूपाणि द्विगुरूणि, पञ्चकादनन्तर उद्दिष्टे ६।७ अङ्कयोर्लोपात् द्विगुरुलोपेन जातानि ५।८।१०।११।१२ रूपाणि एकगुरूणि इत्यर्थः, एकं १३ सर्वलघुरूपम् । एवं सर्वत्र पताका प्रागेव न्यासेन दर्शिता–उदाहृता दशमात्रिकस्य ८९ पूर्णरूपैः ।

चतुष्कले न्यासः

१	२	५
	३	
	४	

पञ्चकलपताका

१	२	५	८
	४	३	
		६	
		७	

विषमकले पञ्चकलस्य अष्टरूपाणि । तत्र १।२।४ रूपाणि द्विगुरूणि, ५।३।६।७ रूपाणि त्रिकस्य एकस्य लोपात् एकगुरुलोपेन एकगुरुकानि ।

चतुःकले एक सर्वगुरुकं, २।३।४ रूपाणि एकलोपात् एकगुरूणि, पञ्चमं सर्वलम् । इति पताकाकरणम् ।

समाङ्कमात्रायां, विषमे तु लोपं प्राप्तोऽङ्कः परोद्दिष्टाङ्काधः स्थाप्य एकलोपे । सप्तकले तत एव लुप्तस्त्रिकः पञ्चकाधः त्रिकाधः, परेपि षडाद्याः सप्तदशान्ता अष्टकषोडशवर्जा उद्दिष्टद्विकाधः ४।६ इत्यङ्कद्वयमेव त्रिगुरुक-एकलघुरूपज्ञापकम् । उद्दिष्टपञ्चकाधः ३।६।७।१० इत्यादीनि रूपाणि द्विगुरुक-त्रिलघुरूपाणि । पुनः त्रयोदशोद्दिष्टाङ्काधः ८।१६।१८।१९।२० एकगुरु-पञ्चलघुरूपाणि । एकं २१ रूपं सर्वलघुकम् ।

पञ्चकलेपि १।२।४ द्विगुरु-एकलघूनि, ५।३।६।७ एकगुरु-त्रिलघूनि, ८ सर्वलम् ।

मात्रापताका

उद्दिट्ठा सरि अंका थिप्पहु, वामावत्ते परलइ लुप्पहु ।
एक लोपे इक गुरु जाण, दुइ तिणि लोपे दुइ तिणि जाण ।
मत्तपताका पिंगल गाव, जे पाइअ तापर हि मेलाव ।।
[प्राकृतपैङ्गलम् परि. १, पद्य ४८]

चतुःकले ५ भेद

१	२	५
	३	
	४	

द्वि–त्रि–चतुर्थानि एकगुरूणि

पञ्चकले ८ भेद

१	२	५	८
	४	३	
		६	
		७	

१।२।४, रूपद्वयं द्विगुरु

५।३।६।७ एकगुरु

अष्टमं सर्वलघु

षट्कले पताका

१	२	५	१३
	३	८	
	४	१०	
	६	११	
	७	१२	
	९		

षट्कले १ एकं सर्वगुरु

२।३।४।६।७।९, द्विगुरूणि

पञ्चाष्टदशादीनि ५।८।१०।११।१२। एकगुरूणि

त्रयोदशं सर्वलघु

सप्तकलपताका

१	२	५	१३	२१
	४	३	८	
	९	६	१६	
		७	१८	
		१०	१९	
		११	२०	
		१२		
		१४		
		१५		
		१७		

सप्तकले १।२।४।९ रूपाणि त्रिगुरूणि।

५।३।६।७।१०।११।१२।१४।१५।१७, रूपाणि द्विगुरूणि।

१३।८।१६।१८।१९।२० रूपाणि एक-गुरूणि।

२१ एकं सर्वलघुरूपम्।

१, २, ३, ५, ८, १३, २१, ३४, ५५, ८९

१	२	५	१३	३४	८९
	३	८	२१	५५	
	४	१०	२६	६८	
	६	११	२९	७४	
	७	१२	३१	८१	
	९	१६	३२	८४	
	१४	१८	३३	८६	
	१५	१९	४२	८७	
	१७	२०	४७	८८	
	२२	२३	५०		
	३५	२४	५२		
	३६	२५	५३		
	३८	२७	५४		
	४३	२८	६०		
	५६	३०	६३		
		३७	६५		
		३९	६६		
		४०	६७		
		४१	७१		
		४४	७३		
		४५	७४		
		४६	७५		
		४८	७८		
		४९	७९		
		१	८०		
		५७	८२		
		५८	८३		
		५९	८५		
		६१			
		६२			
		६४			
		६९			
		७०			

दशमात्रिकस्य पताका

उद्दिष्टवदङ्का देयाः। १।२।३।५।८। १३।२१।५५।८९; अत्र १।२ मेलने ३ इति त्रिकस्य लोपोऽस्ति, ३।५ मेलने ८ तस्य लोपः। ८।१३ मेलने २१ तल्लोपः, २१।३४मेलने५५तल्लोप.। ते लुप्ताङ्का द्वितीयपङ्क्तौ प्रथम-पंक्तेरधः स्थाप्याः।

२।३।४।६ इत्यादि चतुर्गुरुकाणि रूपाणि।

५।८।१०।११।१२ इत्यादीनि त्रिगुरु-काणि रूपाणि।

१३।२१।२६।२९ इत्यादीनि द्विगुरूणि ३४।५५।६८।७४ इत्यादि एकगुरूणि, ८९ सर्वलम्।

अथ वर्णमर्कटीकरण यथा—

> प्रथमायामाद्यादीन् दद्यादङ्काश्च सर्वकोष्ठेषु ।
> अपरस्या तु द्विगुणान् अक्षरसख्येषु तेष्वेव [॥ ७१ ॥]

प्रथमाया पङ्क्तौ १।२।३।४।५।६।७ इत्याद्यान् लिखेत् । अपरस्या द्वितीयपङ्क्तौ द्विगुणान् २।४।८।१६।३२।६४।१२८ इत्यादीन् लिखेत् । ऊर्ध्वाध पट्पङ्क्त्य कार्या । प्रथमपक्तिस्थैरङ्कैर्द्वितीयपक्तिगान् अङ्कान् विभावयेत्-गुणयेत्, जातैरङ्कैश्चतुर्थपक्तिकोशान् पूरयेत् । २।८।२४।६४।१६०।३८४।८९६ इत्यादि । तत पञ्चमी पक्ति षष्ठी च पक्ति चतुर्थपक्तिकोशाङ्कार्द्धेन १।४।१२।३२।८०।१९२।४४८ ईदृशाङ्करूपेण पूरयेत् । तत तुर्यपक्तिस्थै पञ्चमपक्तिस्थान् अङ्कान् सम्मील्य तृतीयपक्तिस्थकोशान् [३।१२।३६।९६।२४०।५७६।१३४४।] पूरितान् कुर्यात् ।

एवमनया मर्कटया वर्णवृत्त १, तद्भेदा. २, तेषा मात्रा ३, वर्णा ४, गुरव ५, लघव ६ षडपि पदार्था ज्ञायन्ते । प्रस्तारस्यैते प्रकारा बोध्या । यन्त्रन्यास प्रागुक्त ।[1]

एव एकाक्षर वृत्त तस्य भेदद्वय, मात्रास्तिस्र, वर्णद्वय, एको गुरु, एको लघु । द्व्यक्षरे वृत्ते चत्वारो भेदा, द्वादशमात्रा, अष्टौ वर्णा, चत्वारो गुरवस्तावत एव लघव । एव सर्वत्र ज्ञेयम् ।

आदीति । पूरयेदिति । कुर्यादिति । वृत्तमिति । सूत्रचतुष्टय गतार्थम । [॥ ७२-७५ ॥]

> अक्खरसखे कोठा किज्जसु, छह पती तहि अका दिज्जसु ।
> एक्कहि आइहि पढमा पती, दूसरि दूणा वेवि णिभती ॥
> आइ वेवि गुण चौढ ठविज्जसु, ता अद्धे पचमि छट्ठमि किज्जसु ।
> चौथो पचइ दुहु मेलिज्जसु, तीसरि पती अका दिज्जसु ॥
> वित्त पअ भेअ मत्त अरु वण्णह, पचमि छट्ठमि लहु गुरु गण्णह ।

1 यन्त्र-पाठ ३६२ पत्राङ्के द्रष्टव्य ।

गुरु लहु माला जुयलं, वेय वेय ठाविज्जें गुरु-लहुयं ।
तिस पिच्छे इम ठाविज्जइ, अद्ध गुरु अद्ध लहुयाइं ॥

वर्णमर्कटी

वृत्त	१	२	३	४	५	६	७
भेद	२	४	८	१६	३२	६४	१२८
मात्रा	३	१२	३६	९६	२४०	५७६	१३४४
वर्ण	२	८	२४	६४	१६०	३८४	८९६
लघु+	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८
गुरु	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८

+ अत्र लघुसख्या वृत्तमौक्तिके षष्ठपक्तावुक्ता युक्ता च ।

आदिपंक्तिस्थित एकः तेन द्वितीयपक्तिगः द्विकः गुणितः जातं २, एवं तुर्यपक्तिगः द्विकः सिद्धः। आदिपक्तिगद्विकेन तदधः ४ गुण्यते जातं ८, एव त्रिकेन अष्टगुणने २४, चतुष्केन षोडशगुणने ६४, पञ्चकेन ३२ गुणने १६०, षट्केन ६४ गुणने ३८४, सप्तकेन १२८ गुणने ८९६, जातं तुर्यपंक्तिभरणम् । तुर्यपक्तिस्थाङ्काना अर्द्धेन पञ्चमी षष्ठी च पंक्ति पूरयेत् । तुर्यपंक्तिस्थं अङ्कं पञ्चमपंक्तिस्थाङ्केन योज्यते तदा तृतीयपंक्तिस्था अङ्का जायन्ते ।

इति वर्णमर्कटीकरणम् ।

मात्रामर्कटी-प्रकरणम

अथ मात्रामर्कटीमाह—

कोष्ठान् मात्रासम्मितान् पंक्तिषट्कं,
कुर्यान्मात्रामर्कटीसिद्धिहेतो ।
तेषु द्व्याद्यीनादिपङ्क्तावथाङ्का-
स्त्यक्त्वाऽऽद्याङ्कं सर्वकोशेषु दद्यात् [॥ ७६ ॥]

दद्यादङ्कान् पूर्वयुग्माङ्कतुल्यान्,
त्यक्त्वाऽऽद्याङ्कं पक्षपङ्क्तावथापि ।
पूर्वस्याङ्कैर्भावयित्वा ततस्ता,
कुर्यात् पूर्णान्नेत्रपङ्क्तिस्थकोष्ठान् [॥ ७७ ॥]

वृत्त	१	२	३	४	५	६	७	८	९
भेदा	१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५
मात्रा	१	४	९	२०	४०	७८	१४७	२७२	४९५
वर्ण	१	३	७	१५	३०	५८	१०९	२०१	३६५
लघव	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५
गुरव	०	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०

आद्याङ्कं एकक मुक्त्वा द्वितीयपङ्क्तौ द्व्यादीन्–द्व्यादिभिरेव भावयित्वा–गुणयित्वा, नेत्रशब्देन अत्र हरनेत्राणि त्रीणीति तृतीया पंक्ति पूरयेत्, तदङ्का ४।९।२०।४०।७८।१४७।२७२।४९५ इयं तृतीया पंक्ति ।

तुर्यां पंक्ति विमुच्य पञ्चमी पंक्ति वक्ति—प्रथमे द्वितीयमङ्कं, द्वितीयकोष्ठे च पञ्चमाङ्कमपि दत्त्वा बाणद्विगुण तद्द्विगुण नेत्र (३) तुर्ये (४) यो दद्यात् । द्विकस्य द्विकेन गुणकारकरणापेक्षया प्रथमकोश, द्विकाधस्तन वर्णाङ्कापेक्षया त्रिकाधस्तन कोश, तत्र द्विक ततोऽग्रे द्वितीयकोष्ठे पञ्चमाङ्कं दत्त्वा तत नेत्र-(३) तुर्ये (४) कोशयो बाणा -पञ्च, तद्द्विगुण–दशक, पुन तद्द्विगुण–विंशति २० दद्यात् ।

एकीकृत्येति। २।५।१०।२० एतान् अङ्कान् सम्मील्य जाते ३७ अङ्के एकं अङ्क दत्त्वा ३८ गुणकारापेक्षया पञ्चमपङ्क्तेः पञ्चमं कोशं पूर्णं कुर्यात् [॥७६॥]

त्यक्त्वा पञ्चममिति। २।१०।२०।३८ एव ७० एकं तत्रापि दत्त्वा ७१ पञ्चमपङ्क्ते षष्ठं कोश पूरयेत् [॥ ८० ॥]

कृत्वैक्यमिति। २।५।१०।२०।३८।७१ एषां ऐक्ये-मेलने जातं १४६ तत्र पञ्चदशाङ्कं १५ एक च हित्वा षोडशोनत्वे १३० पञ्चमपंक्तेः सप्तमकोशं मुनि-(७) प्रमितं पूरयेत् [॥८१॥]

एवमिति। स्पष्टार्थम् [॥८२॥]

एवमिति। अनया रीत्या पञ्चमपंक्ति पूरयित्वा प्रथमं गुणकारापेक्षया प्रथमकोशे द्विकाधस्तने एकाङ्क दत्वा पञ्चमपंक्तिस्थैरङ्कैः षष्ठी पंक्ति पूरयेत् [॥८३॥]

एकीकृत्येति। पञ्चमपंक्तिस्थैरङ्कैः षष्ठपंक्तिस्थाङ्कानां मीलनेन चतुर्थ-पंक्ति पूर्णां कुर्यात्। यथा—१।२ योगे ३, पुनः ५।२ योगे ७, पुनः ५।१० मीलने १५, पुनः २०।१० मीलने ३० इत्यादि ज्ञेयम् [॥८४॥]

अथ मात्रामर्कटी

छह छह कोठा पंती पार, एक्क कला लिखि लेहु विचार।
बीए आइहि पढमा पंती, दोसरि पुव्व जुअल तिम्मंती॥
पढम बेवि गुणि अंका लिज्जसु, छट्ठइ पंती तिहि भरि दिज्जसु।
चौथी अंका पुव्व हि देय्यहु, तीसरि सिर पर तहि करि लेलहु॥
तीसरि सम छह माले अंका, बाचे पंचमि भरहु निसंका।
पच इकट्ठहु ताहि समानहि, चौथी लिखहु लिखाअहु आनहि॥

सोरठा

लिहि साअर परजन्त, इहि विहि कइ पिंगल ठिअउ।
अक भरण यह मत्त, पढम मेअ भणि भणि भरहु॥

दोहा

वित्त भेअ गुरु लघु सहित, अक्खर कला कहन्त।
पिंगलक इम मक्करि कहिअ, जिह गइंद उरब्भंत॥

मात्रामर्कटी

१	२	३	४	५	६	७	८	९	वृ.
१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५	भे
०	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	गु
१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५	ल
१	३	७	१५	३०	५८	१०९	२०१	३६५	व
१	४	९	२०	४०	७८	१४७	२७२	४६५	मा.

१ एक तृतीयपक्तिस्थ, द्विक तुर्यपक्तिस्थ एकीकृत्य पञ्चमपक्तौ त्रिक.। एव २।५ ऐक्ये ७, तथा ५।१० ऐक्ये १५, १०।२० ऐक्ये ३०, पुन ३८।२० ऐक्ये ५८, पुन ३८।७१ ऐक्ये १०९, पुन. ७१।१३० ऐक्ये २०१, पुन तृतीयपक्तिस्थ १३० तत्र तुर्यपक्तिस्थ २३५ ऐक्ये ३६५; एव पञ्चमीपक्ति पूरणीया।

द्वयोर्द्विगुणत्वे ४, त्रिकस्य त्रिगुणत्वे ९, चतुष्कस्य पञ्चगुणत्वे २०, पञ्चाना अष्टगुणत्वे ४०, त्रयोदशाना षड्गुणत्वे ७८, सप्ताना २१ गुणे १४७, अष्टाना ३४ गुणे २७२, नवाना ५५ गुणने ४६५ इति षष्ठी पक्ति। प्रथमद्वितीय-पक्तिभ्या निष्पन्ना।

चतुर्थीपक्तिस्तृतीयपक्तिसमा पर पूर्णाध एक, तत २। ५।१०।२०।३८।७१।१३०। अथ तृतीयपक्तिस्थ १३० तस्याध तुर्यपङ्क्तौ २३५।

> वृत्त प्रभेदो मात्रा च, वर्णा लघुगुरू तथा।
> एते षट् पक्तिस. पूर्ण—प्रस्तारस्य विभान्ति वै [॥ ८५ ॥]

अत एव लघूना वर्णाना सख्याङ्का: पञ्चम्या पङ्क्तौ न्यस्ता। गुरव· षष्ठ्याम्। वर्णमर्कट्या लघुन्यास षष्ठपक्तौ, गुरुन्यास पञ्चमपङ्क्तौ वर्णेषु गुर्वादित्वात्। मात्रामर्कट्या लघुसख्या पञ्चम्या युक्ता लघ्वादित्वात्। तथापि अष्टमकोष्ठे २३५ भरण, अनुक्तमपि २।५।१०।२०।३८।७१।१३० एषा ऐक्ये २७६, तत्र ४० हीनकरण, न्यासे ५ अङ्कादुपरि तिर्यक् १५ ततोप्युपरि पङ्क्तौ तिर्यक्कोशे ४० सद्भावात्। एव शेष २३६ ततोऽपि सप्तमकोशभरणवत् एकोनत्वे २३५ लघवो नवकलच्छन्दसि।

अत्र उद्दिष्टादिवत् सर्वे प्रत्ययाः चतुर्विंशतिर्ज्ञेयाः। प्रस्तार १, नष्ट २, उद्दिष्ट ३, लगक्रिया ४, संख्या ५, अध्वा ६, मेरुः ७, पताका ८, मर्कटी ९, समपाद १०, अर्धसमपाद ११, विषमपादता १२। एते वर्णमात्राभ्यां चतुर्विंशतिः। कौतुकहेतुः—

	वृत्तभेदाः		वृत्तभेदाः
१. [एकाक्षरे]	२	१४. [चतुर्दशाक्षरे]	१६,३८४
२. [द्व्यक्षरे]	४	१५. [पञ्चदशाक्षरे]	३२,७६८
३. [त्र्यक्षरे]	८	१६. [षोडशाक्षरे]	६५,५३६
४. [चतुरक्षरे]	१६	१७. [सप्तदशाक्षरे]	१,३१,०७२
५. [पञ्चाक्षरे]	३२	१८. [अष्टादशाक्षरे]	२,६२,१४४
६. [षडक्षरे]	६४	१९. [एकोनविंशाक्षरे]	५,२४,२८८
७ [सप्ताक्षरे]	१२८	२०. [विंशाक्षरे]	१०,४८,५७६
८. [अष्टाक्षरे]	२५६	२१. [एकविंशाक्षरे]	२०,९७,१५२
९. [नवाक्षरे]	५१२	२२. [द्वाविंशाक्षरे]	४१,९४,३०४
१०. [दशाक्षरे]	१,०२४	२३. [त्रयोविंशाक्षरे]	८३,८८,६०८
११. [एकादशाक्षरे]	२,०४८	२४. [चतुर्विंशाक्षरे]	१,६७,७७,२१६
१२. [द्वादशाक्षरे]	४,०९६	२५. [पञ्चविंशाक्षरे]	३,३५,५४,४३२
१३. [त्रयोदशाक्षरे]	८,१९२	२६. [षड्विंशाक्षरे]	६,७१,०८,८६४

[वृत्तिकृत्प्रशस्तिः]

कोटयस्त्रयोदश-द्वाचत्वारिंशल्लक्षकाः नगाः ।
भूः सहस्राणि षड्विंशत्यथा सप्तशती पुन. ॥ १ ॥

प्रस्तारपिण्डसंख्येय विधृता वृत्तमौक्तिके ।
बोधनात् साधनाल्लभ्या येषां नालस्यवश्यता ॥२॥

उद्दिष्टादिषु वृत्तमौक्तिकमिति व्याख्यातवान् श्वेतसिक्,
श्रीमेघाद्विजयाख्यवाचकवरः प्रौढया तपाम्नायिकः ।
यत्सम्यग्विवृत्त न वाऽनवगमान्मिथ्याधृत सज्जनै-
स्तत्संशोध्य शुभ विधेयमिति मे विज्ञप्तिमुक्तालता ॥३॥

समित्यर्थविभू १७५५ वर्षे, प्रौढिरेषाऽभवच्छ्रिये ।
भान्वादिविजयाध्यायहेतुतः सिद्धिमाश्रिता ॥ ४ ॥

इति श्रीवृत्तमौक्तिकदुर्गमबोध

श्रीरस्तु । वाचकपाठकानाम् ।

प्रथम परिशिष्ट

टगणादि कला-वृत्तभेद-पारिभाषिक शब्द सङ्केत

१. टगण[1] ६ मात्रा, भेद १३—

१. ऽऽऽ हर[2]
२. ।।ऽऽ शशि
३. ।ऽऽ। सूर्य[3]
४. ऽ।।ऽ शक्र[4]
५. ।।।।ऽ शेष
६. ।ऽ।ऽ अहि
७. ऽ।ऽ। कमल[5]
८. ।।।ऽ। धातृ[6]
९. ऽऽ।। कलि
१०. ।।ऽ।। चन्द्र
११. ।ऽ।।। ध्रुव
१२. ऽ।।।। धर्म
१३. ।।।।।। शालि[7]

---

१ ट ठ ड. ढ. ण गणों की कलायें, प्रस्तार-भेद, नाम तथा पर्याय प्राकृतपैंगल, वाणी-भूषण और वाग्वल्लभ मे वृत्तमौक्तिक के अनुसार ही हैं किन्तु प्राकृतपैंगल मे ट ठ ड ढ. ण के स्थान पर छ प, च, त. द गण नाम भी स्वीकृत हैं। स्वयम्भूछन्द और कविदर्पण मे टादि के स्थान पर छ प. च. त. द और प त. ट. च क. स्वीकृत है। इन दोनो ग्रंथो मे केवल छ पांच. चार आदि कलाविधान ही दिए हैं किन्तु इनके प्रस्तार-भेद, नाम तथा पर्याय की सूची नहीं है। हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन मे ष प च त द गण और प्रस्तार भेद दिये हैं किन्तु नामादि की सूची नही है।

२ वाणीभूषण और वाग्वल्लभ मे हर के स्थान पर शिव है।

३ सूर्य के स्थान पर प्राकृतपैंगल मे सूर, वाणीभूषण मे दिनपति. और वाग्वल्लभ में दिनेश्वर है।

४. शक्र के स्थान पर वाणीभूषण मे सुरपति और वाग्वल्लभ मे सुरेश है।

५ कमल के स्थान पर वाणीभूषण और वाग्वल्लभ मे सरोज है।

६. धातृ के स्थान पर प्राकृतपैंगल मे ब्रह्मा और वाग्वल्लभ मे धाता है।

७ शालि के स्थान पर प्राकृतपैंगल, वाणीभूषण और वाग्वल्लभ में शालिकर है।

२. ठगण ५. मात्रा, भेद ८—

१. ।SS. इन्द्रासन, सुनरेन्द्र, अधिप, कुञ्जर पर्याय[1], रदन, मेघ, ऐरावत[2], तारापति।[3]

२. S।S. सूर्य[4], वीणा, विराट्[5], मृगेन्द्र, अमृत, विहग, गरुड पर्याय[6], ओहल, यक्ष, भुजंगम[7], पक्षी

३. ।।।S चाप

४. SS। हीर

५. ।।S। तोमर

६. ।S।। कुसुम

७. S।।। अहिगण

८. ।।।।। पापगण

तथा प्रहरण[8] (आयुध) के विविध नाम पंचकल के वाचक हैं।

---

१. कुञ्जर के पर्यायवाची शब्दों में वृत्तमौक्तिक के मतानुसार 'गज' शब्द सम्मिलित नहीं है। 'गज' को चतुर्मात्रिक स्वीकार किया है।

२. वृत्तजातिसमुच्चय के अनुसार पञ्चमात्रिक ।SS ऐरावत के निम्न पर्याय और स्वीकृत हैं—सुरगज, सुरवारण, सुरहस्तिन्।

३. प्राकृतपैंगल के अनुसार पञ्चमात्रिक ।SS में गगन, कम्प और सम्प तथा वाग्वल्लभ में दन्तावल पयोदवन्त भी स्वीकृत हैं।

४ सूर के स्थान पर प्राकृतपैंगल, वाणीभूषण और वाग्वल्लभ में 'सूर' है।

५. विराट् के स्थान पर प्राकृतपैंगल और वाणीभूषण में विडाल है।

६. वृत्तजातिसमुच्चय में गरुडपर्यायों में निम्न शब्द और स्वीकृत हैं—पक्षिनाथ, विहगनाथ, विहगाधिपति, विहगपति, सुपर्ण।

७. प्राकृतपैंगल वाणीभूषण और वृत्तमौक्तिक में 'भुजंगम' को S।S पञ्चमात्रिक स्वीकार किया है जब कि वृत्तजातिसमुच्चय में 'भुजगेन्द्र, भोगिन्, विषधर' को ।।।S पञ्चमात्रिक माना है।

८. वृत्तमौक्तिककार ने प्रहरण (आयुधों) के विविध नाम पञ्चकल के वाचक माने हैं, ऐसा मानते हुए भी 'प्रहरण' और 'वज्र' को ।।S चतुष्कल से, 'पञ्चशर' को ।। चतुष्कलवाची, 'तोमर' को ।S त्रिमात्रिक और 'बाण' को ।।।। चतुष्कलवाची और एकमात्रिक भी स्वीकार किया है। वृत्तजातिसमुच्चयकार ने तोमर, प्रहरण और बाण को पञ्चकलवाची ही माना है। साथ ही प्रहरण के नामों की निम्नलिखित तालिका भी दी है—अशनि, असि, आयुध, कणप, करवाल, क्षुरप्र, चाप, तोमर, धनुष्, पट्टिश, प्रालम्ब बाण, बाणासन, मुद्गर, रथाङ्ग, शक्तिदण्ड शर, शरासन, शिलीमुख।

वृत्तजातिसमुच्चय में पुरोहित, पुरोधस् और मन्त्रिन्' शब्दों को चतुष्कल एवं पञ्चकल वाची स्वीकार किया है। वृत्तमौक्तिक, प्राकृतपैंगल और वाणीभूषण में इनका कोई भी उल्लेख नहीं है।

३ डगण ४. मात्रा, ५ भेद—

१. ऽऽ (गुरुयुग्म)[1] कर्ण, सुरतलता गुरुयुगल, कर्णसमान, रसिक, रसलान, सुमतिलम्बित, मनोहर[2], लहलहित[3]

२. ।।ऽ (गुर्वन्त) करतल, कर[4], पाणि, कमल, हस्त, प्रहरण, भुजदण्ड, बाहु, रत्न, वज्र गजाभरण, भुजाभरण

३. ।ऽ। (गुरुमध्य) पयोधर[5], भूपति[6], नायक, गजपति, नरेन्द्र, कुच वाचक शब्द, गोपाल, रज्जु, पवन

४. ऽ।। (आदिगुरु) वसुचरण, दहन, पितामह, तात, पद-पर्याय, गण्ड, बलभद्र, जङ्घायुगल, रति[7]

५. ।।।। (सर्वलघु) विप्र, द्विज, जाति, शिखर, पचशर, बाण, द्विजवर

तथा गज, रथ[8], तुरगम और पदाति ये सब चतुष्कल के वाचक हैं।

१ चतुर्मात्रिक ऽऽ के और ।।।। के पर्याय वाणीभूषण मे प्राप्त नही है।

२. मनोहर के स्थान पर प्राकृतपैंगल मे 'मनहरण' है।

३ प्राकृतपैंगल मे ऽऽ चतुर्मात्रिक मे सुवर्ण अधिक है।

४. 'करपल्लव' को भी ।।ऽ चतुर्मात्रिक, वृत्तजातिसमुच्चयकार ने माना है। वाग्वल्लभकार ने अलकृति भी स्वीकार किया है।

५ वृत्तजातिसमुच्चय मे पयोधर के वाची 'स्तन, स्तनभार' भी स्वीकृत है, जब कि स्तनादि का प्रयोग वृत्तमौक्तिककार ने कुचवाची शब्दो मे किया है। वाग्वल्लभ मे पयोधृत्, पयोद, जलद, जलधर, वारिद भी स्वीकृत हैं।

६ भूपति के पर्यायो मे वृत्तजातिसमुच्चय मे नराधिप, पार्थिव, भूमिनाथ, राजन् और सामन्त भी स्वीकृत है। प्राकृतपैंगल मे नरपति, उद्धतनायक अधिक है। वाणीभूषण मे मनुजपति अधिक हैं। प्रा० पैं० और वाणीभूषण मे अश्वपति और चक्रवर्ती अधिक है, जब कि प्रा. पैं, वृत्तजातिसमुच्चय और वाणीभूषण द्वारा समर्थित वसुधाधिप अधिक है। वाग्वल्लभ मे मनुजपति, चक्राधीश, तुरगपति और वर्य अधिक हैं।

७ प्राकृतपैंगल मे चतुर्मात्रिक ऽ।। मे नूपुर भी स्वीकृत हैं; जब कि प्राकृतपैंगल, वृत्तमौक्तिकादि मे द्विमात्रिक ऽ मे स्वीकृत एव प्रयुक्त है। वाग्वल्लभ मे दहन, बलभद्र, जङ्घायुगल और रति शब्द है एव पिता, हलायुध और पावक अधिक है।

८ वृत्तजातिसमुच्चय मे चतुष्कलवाची गजादि के निम्नपर्याय स्वीकृत है—करि, कुञ्जर, गज, मातग, वारण, वारणेन्द्र, हस्तिन् तुरग, हरि, योध, स्यन्दन। जब कि वृत्तमौक्तिककार ने गजातिरिक्त कुञ्जर पर्यायो को ।ऽऽ पचमात्रिक स्वीकार किया है।

४. ढगण ३ मात्रा भेद, ३—

१. ।ऽ ध्वज[1], चिह्न, चिर, चिरालय, तोमर, पत्र, चूतमाला[2], रस, वास, पवन, वलय, तुम्बुरु,

२. ऽ। करताल, पटह[3], ताल सुरपति आनन्द, तूर्य निर्वाण सागर[4]

३. ।।। भाव[5], रस, ताण्डव और भामिनी के पर्यायवाची शब्द

५ णगण २ मात्रा, भेद २—

१. ऽ नूपुर, रसना, चामर, फणि, मुग्धाभरण कनक, कुण्डल, वक्र, मानस, वलय, कङ्कण, हारावली, ताटक, हार, केयूर[6]

२. ।। सुप्रिय, परम[7]

एक लघु के नाम निम्न प्रकार हैं—

शर, मेरु, दण्ड, कनक, शब्द, रूप, रस, गन्ध, काहल, पुष्प, शल, तथा बाण[8]।

---

१. वृत्तजातिसमुच्चय में । ऽ त्रिकलवाची निम्न शब्द और अधिक हैं—कदलिका, ध्वज-पट, ध्वजपताका, ध्वजाग्र, पताका, वैजयन्ती । वाग्वल्लभ में पटच्छदन अधिक है ।

२ वाणीभूषण में चूतमाला के स्थान पर चूडमाला है । वाग्वल्लभ में चूतभवा, स्रक्, आम्रमाला है ।

३. वृत्तमौक्तिककार ने तूर्य और पटह को ऽ । त्रिकलवाची माना है, जब कि वृत्तजाति-समुच्चयकार ने तूर्य और पटह को ।।। त्रिकलवाची माना है ।

४ प्राकृतपैंगल में 'छन्द' ऽ । त्रिकलवाची अधिक है । वाग्वल्लभकार ने सखा, भय, भाय' अधिक स्वीकार किये हैं और सुरपति के स्थान पर स्वःपति तथा आनन्द के स्थान पर नन्द पर्याय स्वीकार किये हैं ।

५. वृत्तमौक्तिक में भाव और रस ।।। त्रिकलवाची स्वीकृत हैं, और रस । एककल-वाची भी । जब कि वृत्तजातिसमुच्चय में ।। भाव और रस ।। द्विमात्रिक स्वीकृत हैं । वाग्वल्लभ में ।।। में कुलभामिनी भी स्वीकृत है ।

६. वृत्तजातिसमुच्चय में ऽ द्विमात्रिक में निम्न शब्द भी स्वीकृत हैं—कटक, पद्मराग, भूषण, मणि, मरकत, मुक्ता, मौक्तिक, रत्न, विभूषण, हारलता । वाणीभूषण में 'मञ्जरी' भी स्वीकृत है । वाग्वल्लभ में अङ्गद, मञ्जीर, कटक भी स्वीकृत हैं ।

७ प्राकृतपैंगल में सुप्रिय, परम के स्थान पर निजप्रिय, परमप्रिय हैं ।

८. लघुवाचक । शब्दों में प्राकृतपैंगल में 'सरा' और वाणीभूषण एवं वाग्वल्लभ में स्पर्श भी स्वीकृत है ।

इस पद्धति से मगणादि ८ गणों के पर्याय निम्नलिखित होते हैं--

१. मगण – हर

२. यगण – इन्द्रासन, सुनरेन्द्र, अधिप, कुञ्जरपर्याय, रदन, मेघ, ऐरावत, तारापति ।

३. रगण – सूर्य, वीणा, विराट्, मृगेन्द्र, अमृत, विहग, गरुड-पर्याय, जोहल, यक्ष, भुजंगम ।

४. सगण – करतल, कर, पाणि, कमल, हस्त, प्रहरण, भुजदण्ड, बाहु, रत्न, वज्र, गजाभरण, भुजाभरण

५. तगण – हीर ।

६. जगण – पयोधर, भूपति, नायक, गजपति, नरेन्द्र, कुच वाचक शब्द, गोपाल, रज्जु, पवन ।

७. भगण – वसुचरण, दहन, पितामह, तात, पद-पर्याय, गण्ड, बलभद्र, जंघा-युगल, रति ।

८. नगण – भाव, रस, ताण्डव और भामिनी के पर्यायवाची शब्द ।



द्वितीय परिशिष्ट

(क) मात्रिक-छन्दों का अकारानुक्रम

वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या

■ चिह्नित छन्द गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और षट्पद के भेद हैं।
(टि)–टिप्पणी में उद्धृत छन्द।

(ख) वर्णिक-छन्दों का अकारानुक्रम

संकेत- ( ) वृत्तमौक्तिक मे दिया हुआ नाम-भेद, अ=अर्द्धसम छन्द, द=दण्डक छन्द, प्र=प्रकीर्णक छन्द, वि=विषमवृत्त, वै=वैतालीय वृत्त, टि=टिप्पणी मे उद्धृत छन्द।

(ग.) विरुदावली छन्दों का अकारानुक्रम

तृतीय परिशिष्ट

(क.) पद्यानुक्रम

(ख.) उदाहरण-पद्यानुक्रम

चतुर्थ परिशिष्ट

क मात्रिक छन्दों के लक्षण एवं नाम-भेद

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची—

	ग्रन्थ नाम	ग्रन्थकार
१	वृत्तमौक्तिक	चन्द्रशेखर भट्ट
२	छन्द सूत्र	पिङ्गल
३	नाट्यशास्त्र	आचार्य भरत
४	बृहत्संहिता	वराहमिहिर
५	स्वयम्भूछन्द	स्वयम्भू
६	कविदर्पण	अज्ञात
७	वृत्तजातिसमुच्चय	कवि विरहाङ्क
८	सुवृत्ततिलक	क्षेमेन्द्र
९	प्राकृतपैङ्गल	हरिहर(?)
१०	छन्दोनुशासन	हेमचन्द्राचार्य
११	छन्दोनुशासन-स्वोपज्ञटीका	"
१२	वाणीभूषण	दामोदर
१३	वृत्तरत्नाकर	केदारभट्ट
१४	वृत्तरत्नाकर-नारायणीटीका	नारायणभट्ट
१५	छन्दोमञ्जरी	गंगादास
१६	वृत्तमुक्तावली	श्रीकृष्णभट्ट
१७	वाग्वल्लभ	दुःखभञ्जन
१८	जयदेवच्छन्द	जयदेव
१९	छन्दोनुशासन	जयकीर्ति
२०	रत्नमञ्जूषा	अज्ञात जैन कवि
२१	गाथालक्षण	नन्दिताढ्य
२२	छन्दोविचिति	जनाश्रय

संकेत— छन्दनाम=वृत्तमौक्तिक के क्रमानुसार है। मात्रासंख्या=छन्द के प्रत्येक चरण की मात्रायें। लक्षण=ट=६ मात्रा, ठ=५ मात्रा, ड=४ मात्रा, ढ=३ मात्रा, ण=२ मात्रा, ग=दो मात्रा, ल=१ मात्रा। सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क=ऊपर सूचित सन्दर्भ ग्रन्थ सूची की क्रम-सूचक संख्या है। छन्द नाम एवं लक्षण के आगे के अंक यह सूचित करते हैं कि इन-इन अंकों के ग्रन्थों में भी यह छन्द इसी नाम से स्वीकृत है और नाम भेद के आगे के अंक यह सूचित करते हैं कि इन इन ग्रन्थों में इसी लक्षण का छन्द इस नाम से प्रचलित है। जिन छन्दों का इन ग्रन्थों में उल्लेख नहीं है उनके अंक यहाँ नहीं दिए गए हैं।

छन्द नाम	मात्रा संख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
गाथा	[१२ १८ १२ १५, ६ ७ ग, इसमें छठा '६' जगण होता है या चार लघु होते हैं। इसके विषम गणों में अर्थात् १ ३ ५ ७ '६' में जगण निषिद्ध है। चतुर्थ चरण में छठा '६' केवल एक लघु होता है।]	१ ५ ६ ७, ९, १०, १२, १४ १६ १७ २१ आर्या– १० १४, १७ १८ १९ २०, २२
विगाथा	[१२ १५ १२ १८]	१ ९ १२ १४ १६, १७ २१, उद्गीति– ५ ६ १०, १४ १७, १८ १९, २१
गाहू	[१२ १५ १२, १५]	१ ९ १४, गाथिका– १६, गाह– २१ उपगीति– ५ ६ ७, १०, १२, १४, १७, १८ १९ २१
उद्गाथा	[१२ १८, १२ १८]	१, ९, १४ १६ १७ २१, गीति– ५, ६ ७ १० १२ १४, १७, १८ १९ २० २१ २२
गाहिनी	[१२ १८ १२ २०]	१, ९ १२ १४ २१, गाथिनी– १६, १७ ललितावल्गुगीति– १४
सिंहिनी	[१२ २० १२ १८]	१ [illegible] १२ १४ १६ १७ ललितावल्गु-गीति– १४
स्कन्धकम्	[१२ २० १२ २०]	१ ५ ६ ७ ९ १० १२ १४ १६ १७ २१, आर्यागीति– १४ १७ १८ १९ २०
दोहा	[१३ ११ १३, ११ प्रथम और तृतीय चरण में ६ ४ ३ और द्वितीय तथा चतुर्थ चरण में ६ ४ ल, अर्द्धसम]	१, ९ १० १२ १४, १७ दोहक– ६ द्विपथा– १६ द्विपथ्या– १७ द्विपथक– ७, एवं ५ २१ के अनुसार मात्राएं– १४ १२, १४ १२ हैं।
रसिका	[११ षट्पदी ६ ४ ६]	१ ९ १७, रसिक– १६ उत्कृष्टा– १४, सुललित– १७ सुललितमति १२
रोला	[२४, चतुष्पदी]	१ ९ १२ १४ १६ १७
गन्धानक	[१७ १८ १७ १८ वर्ण अर्द्धसम]	१ ९, १२ १६ गन्धा–१४ १७ के अनुसार १७ वर्ण २० मात्रा १८ वर्ण २४ मात्राएं होती हैं।
चौपैया	[३० चतुष्पदी षोडशपदी समग्र मात्रा ४८० ६-७ ग]	१, ९ १२ १७, चतुष्पदा– १४ चतुष्पदी– १६

छन्द-नाम	मात्रा-सख्या एव लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
घत्ता	[३१; द्विपदी; ड-७, ढ; 'ढ' त्रिलघुक होता है।]	१, ६, ६, १२, १४, १६, १७; ६ के अनुसार षट्पदी है, लक्षण भिन्न-भिन्न हैं– १२, ८, १३। ८, ८, ११। १०, ८, ११। १२, ८, ११। १२, ८, १२। १०, ८, १२। १०, ८, १३। १०, ८, १४। १०, ८, २२। ५ के अनुसार चतुष्पदी, लक्षण– ६, १४, ६, १४। १२, १२, १२, १२। १६, १६, १६, १६ है।
घत्तानन्द	[३१; ट. ड. ड. ड. ठ. ड. ड.]	१, ६, १२, १४, १७.
काव्यम्	[२४; चतुष्पदी; ट. ड. ड. ड. ट; तीसरा 'ड' जगण हो या चार लघु हों।]	१, ६, १२, १४, १६; वस्तुवदन– ६.
उल्लालम्	[२८; चतुष्पदी; ड. ड. ड. ढ. ट ड. ढ]	१, ६, १२, १४, १६; कर्पूर– १०.
षट्पद	[२४, २४, २४, २४, २८, २८, मिश्रित षट्पदी; ट. ड. ड. ड. ड. ण; दो चरण उल्लाल के लक्षणानुसार]	१, ६, ६, १२, १४, १६, १७; वस्तुक– २१
पज्झटिका	[१६; चतुष्पदी; ड-४; चौथा 'ड' जगण होता है।]	१, ६, १२, १४, १६, १७; पद्धटिका– ५, १०, २१; पद्धतिका– ६.
अडिल्ला	[१६; चतुष्पदी; ड-४; इसमे जगण वर्जित है और चरण के अन्त मे दो लघु होने चाहिए]	१, ५, ६, ७, ६, १०; अरिल्ला– १२; अरिल्लम्– १६, १७; अलिला– १७; अलिल्लिह– १४.
पादाकुलकम्	[१६; चतुष्पदी; गणनियम-रहित]	१, ५, ६, ६, १२, १४, १६, १७, १८, १६, २२; १० के अनुसार १२ मात्रा चतुष्पदी होती हैं।
चौबोला	[१६, १४, १६ १४ अ०स०]	१, ६, चतुर्वचनं– १६.
रड्डा	[१५, १२, १५, ११, १५, दोहा के चार चरण; नवपदी; प्रथम चरण मे 'ढ. ड. ड. ड.' अन्तिम 'ड' जगण हो या चार	१, ५, ६, ७, ६, १०, १४, १७; नवपदं– ६, १२, १४, १७.

छन्द नाम	मात्रा संख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
	लघु हों, द्वितीय चरण मे 'ठ ठ ठ' तीसरा 'ठ' चार लघुरूप मे हो, तृतीय और पञ्चम चरण मे 'ठ ठ ठ ठ' अन्त मे दो लघु आवश्यक हैं, चतुर्थ चरण मे 'ठ ठ ठ' और अन्तिम चार चरण दोहा लक्षणानुसार होते हैं।]	
करभी रड्डा	[१३ ११, १३, ११ १३ दोहा]	१, ७ ६, करभी– १४
नन्दा रड्डा	[१४, ११, १४, ११, १४, दोहा]	१, ६ १४, मोदनिका– ७
मोहिनी रड्डा	[१६, ११, १६, ११, १६, दोहा]	१, ६ १४
चारुसेना रड्डा	[१५, ११, १५ ११, १५, दोहा]	१, ६, १४, चारुनेत्रा– ७
भद्रा रड्डा	[१५, १२, १५ १२, १५, दोहा]	१, ६, १४
राजसेना रड्डा	[१५, १२, १५ ११, १५ दोहा]	१, ६, १४
तालङ्किनी रड्डा	[१६ १२ १६ ११, १६, दोहा]	१, ६ १४, राहुसेनिका– ७
पद्मावती	[३२, चतुष्पदी, ड- ८, ये ड' SS IIS SII IIII रूप मे होने चाहियें। जगण का निषेध है।]	१ ६ १२ १४ १६, पद्मावतिका– १७
कुण्डलिका	[दोहा-काव्य मिश्रित]	१ ६, १२ १४, १६, १७, प्राकृतपिङ्गला-नुसार दोहा उल्लाला-मिश्रित
गगनाङ्गणम	[२५ मात्रा, २० वर्ण, चतुष्पदी ठ ठ ठ ठ ठ ल ग]	१ १२ १७, गगनाङ्ग–६, १६ मदनातक– १४
द्विपदी	[२८, ठ ठ ठ ठ ठ ग]	१, ६, १२ १४, १६, ५ के अनुसार २६ मात्रा द्विपदी, एवं ९ १०, १६, २१ के अनुसार २८ मात्रा चतुष्पदी, द्विदला– १७ माण्डीरक्रीडनस्तोत्र की टीका मे १२ मात्रा, चतुष्पदी माना हैं।
झुल्लणा	[३७ द्विपदी, गणनियमरहित]	१ झुल्लन– ६, १६
खञ्जा	[४१, द्विपदी, ड- ६ रगण, ड' चार लघ्वात्मक हों]	१, ६, १२, १४, १६, खञ्जिका– १७ खञ्जक– ५ ६, १० के अनुसार २३ मात्रा चतुष्पदी है।

छन्द-नाम	मात्रा-संख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
शिखा	[विषम द्विपदी; प्रथम पद में २८ मात्रा, २७ वर्ण; ड- ६, जगण, द्वितीय पद में ३२ मात्रा, ३१ वर्ण; ड- ७, जगण; दोनों पदों में 'ड' चार लघु-रूप में हों।	१, ६, १२, १४, १६, १७.
माला	[विषम द्विपदी; प्रथम पद में ४५ मात्रा, ४१ वर्ण; ड- ६ रगण, गुरुद्वय; द्वितीय पद में गाथा छन्द का तृतीय और चतुर्थ चरण अर्थात् २७ मात्रा]	१, ६, १२, १४, १६, १७.
चुलिआला	[१३, १६, १३, १६; अर्द्धसम]	१, ६, १२, १६, १७; चूलिका-१४.
सोरठा	[११, १३, ११, १३ अर्द्धसम]	१, ६, १२, १७; सौराष्ट्र- १६, १७; सौराष्ट्रा- १४; सौराष्ट्री- १७.
हाकलि	[१४; चतुष्पदी; प्रथम-द्वितीय चरण में ११-११ वर्ण और तृतीय-चतुर्थ चरण में १०-१० वर्ण, सगण या भगण दो गण हों और नगण तथा लघु गुरु हों]	१, ६, १२, १६ १७; काहलि- १४.
मधुभार	[८; चतुष्पदी; ड, जगण]	१, ६, १२, १६; मधुभारसम्- १४; वसुकला- १७; तालवनचरित की टीका में 'कलगीत'
आभीर	[११; चतुष्पदी; चरण के अन्त में जगण अपेक्षित है।]	१, ६, १२, १४, १६, १७; यमलार्जुन-भञ्जनस्तोत्र की टीका में 'अनुकूला'
दण्डकला	[३२; चतुष्पदी; ड. ड. ड. ड. ट. ड. ड. गुरु]	१, ६, १६; दण्डकाहल- १४.
कामकला	[३२; चतुष्पदी; यतिभेद- दण्डकला में १०, ८, १४ पर यति होती है और इसमें १६, १६ पर यति होती है]	१.
रुचिरा	[३०, द्विपदी; ड- ७, गुरु; जगण निषिद्ध है]	१, १२, १७;

छन्द नाम	मात्रा सख्या एव लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
दीपक	[१० चतुष्पदी, ड लघु २, जगण]	१, ९ १२, १४, १६, १७
सिंहविलोकित	[१६, चतुष्पदी, सगण और ४ लघु का यथेच्छ प्रयोग]	१ १२, १६, १७, सिंहावलोक- ९, १४.
प्लवङ्गम	[२१, चतुष्पदी, ट ठ ड जगण, गुरु]	१, ९ १२, १६, १७
लीलावती	[३२, चतुष्पदी, लघु गुरु वर्ण-नियम रहित, ड ८, ड' मे सगण, ४ लघु जगण भगण, गुरुद्वय का प्रयोग अपेक्षित है]	१, ९, १२, १६, लीलावतिका- १७
हरिगीतम्	[२८, चतुष्पदी, ठ ट ठ ठ ठ, गुरु]	१, १२, १६, हरिगीतक- १७
हरिगीतकम	[३०, चतुष्पदी, ठ ट ठ ठ ठ गुरुद्वय]	१
मनोहर-हरि गीतम	२८, चतुष्पदी ठ ट ठ ठ ठ गुरु, विराम पर ठ' गुर्वंत अपेक्षित है, यति १६ १२ पर है]	१
हरिगीता	[२८, चतुष्पदी, ठ ट ठ ठ ठ गुरु विराम ९ ७ १२ पर अपेक्षित है]	१, ९
अपरा हरि गीता	[२८ चतुष्पदी, ठ ट ठ ठ ठ गुरु, विराम १४-१४ पर अपेक्षित है]	१,
त्रिभगी	[३२ चतुष्पदी, ड- ८, जगण निषिद्ध है]	१ ९, १२ १६, १७
दुर्मिलका	[३२, चतुष्पदी, ड ८,]	१ १२ दुर्मिला- ९, १६, १७,
हीरम	[२३, चतुष्पदी, ट ट ट रगण ट' एक गुरु और ४ लघु-रूप होना चाहिए।]	१ ९ १६, हीरक- १२, १७
जलहरणम्	[३२, चतुष्पदी, ड ८, जिसमे २८ लघु और अन्त मे सगण हो]	१, १६ जलहरण- ९, १२, १७

छन्द-नाम	मात्रा-सख्या एव लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
मदनगृहम्	[४०; चतुष्पदी; ड- १०; पहला 'ड' सगण होना चाहिए]	१, ६, १२, १७; मदनदीपन- १६.
मरहट्ठा	[२६; चतुष्पदी; ट. ड. ड. ड. ड. ड. गुरु, लघु]	१, ६, १२, १६, १७.
मदिरा सवया	[३०; चतुष्पदी; भ.–७, ग.]	१
मालती सवया	[३२; चतुष्पदी, भ.–७, ग.२]	१
मल्ली सवया	[३४; चतुष्पदी, स.–८, ग.]	१
मल्लिका सवया	[३१; चतुष्पदी, ज.–७ ल.ग.]	१
माधवी सवया	[३३, चतुष्पदी, ज.–७, ल.ग.ग.]	१
मागधी सवया	[३२; चतुष्पदी; ड.–८;]	१
घनाक्षरम्	[४८ मात्रा, ३१ वर्ण, चतुष्पदी]	१
गलितकम्	[२१; चतुष्पदी; ठ. ठ. ड. ड. लघु, गुरु]	१, ६, १०; संपिण्डितागलिता- ७.
विगलितकम्	[२३; चतुष्पदी; ठ. ठ. ड. ड. ठ,]	१, १०.
संगलितकम्	[१३, चतुष्पदी; ड. ड. ठ.]	१, १०; पदगलिता- ७.
सुन्दरगलितकम्	[१३; चतुष्पदी; ठ. ठ. लघु. गुरु;]	१, १०.
भूषणगलितकम्	[१६; चतुष्पदी ठ. ठ. ढ. ढ.]	१, १०.
मुखगलितकम्	[२०; चतुष्पदी; ट. ढ. ढ ढ ढ. गुरु]	१, १०.
विलम्बित-गलितकम्	[२२; चतुष्पदी; ट ड. ड ड. ड; अन्तिम 'ड' गुर्वन्त हो]	१, १०.
समगलितकम्	[२५, चतुष्पदी; ड. ठ. ठ. ड. ड लघु गुरु]	१, १०.
अपर सम-गलितकम्	[३२; द्विपदी; प्रथम पद मे— ड. ठ. ठ. ड. ड. ल ग. ड. ढ, द्वितीय पद मे—ट. ढ. ढ. ढ. ढ. ग. ड ड. ड;]	१
अपरं सङ्ग-लितकम्	[३२; द्विपदी; अपर सङ्ग-लितकम् की पदस्थिति पूर्ण-रूपेण विपरीत होती है]	१

छन्द नाम	मात्रा संख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-साङ्केताङ्क
अपरं लम्बिता-गलितकम्	[२२; चतुष्पदी, ड. ड. ड. ड. ड. गुरु; प्रथम और तृतीय चरण मे जगण नहीं;]	१; लम्बितागलितकम्–७, १०.
विक्षिप्तिका-गलितकम्	[२५; चतुष्पदी; प्रथम और तृतीय चरण मे ठ. ठ. ठ. ठ ठ, द्वितीय और चतुर्थचरण मे ड ठ. ठ ठ. ठ ग होता है।]	१; विच्छित्तिर्गलितकम्–१०.
ललिता-गलितकम्	[२४; चतुष्पदी; ड- ६,]	१ ७, १०
विषमिता-गलितकम	[२५, चतुष्पदी; प्रथम और द्वितीय चरण मे ठ. ड. ड ड. ड. ड, तृतीय एवं चतुर्थ चरण मे ड ड ड ड ड. ड. ग होता है।]	१; विषमागलितक– १०;
मालागलितकम्	[४६; चतुष्पदी; ड. ड- १०, अर्थात् १ ३, ५, ७, ९ वां 'ड' जगण, २, ४, ६, ८ वां ड' चार लघ्वात्मक, और १० वां 'ड' सगण होना चाहिये]	१, १०.
मुग्धामाला-गलितकम्	[३८; चतुष्पदी, ड. ड- ८]	१, मुग्धगलितकम– ५, १०
उद्गलितकम्	[३०, चतुष्पदी, ड. ड- ६;]	१, उद्गाता– ७, उग्रगलितकम्– ५, १०

क (२) गाथादि छन्द-भेदों के लक्षण एवं नाम-भेद

गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य एवं षट्पद नामक छन्दों के प्रस्तार-क्रम से भेद, लक्षण एवं नाम-भेद निम्नलिखित ग्रन्थों में ही प्राप्त हैं—

गाथा-प्रस्तार-भेद

प्रस्तार-क्रम	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैंगल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका	वाग्वल्लभ	गाथालक्षण और कवि-दर्पण
१	२७	३	३०	लक्ष्मी.	लक्ष्मी	लक्ष्मी	लक्ष्मी·	कमला
२	२६	५	३१	ऋद्धि	ऋद्धि·	ऋद्धि	ऋद्धिः	ललिता
३	२५	७	३२	बुद्धि	बुद्धि	बुद्धि	बुद्धि·	लोला
४	२४	९	३३	लज्जा	लज्जा	लज्जा	लज्जा	ज्योत्स्ना
५	२३	११	३४	विद्या	विद्या	विद्या	विद्या	रम्भा
६	२२	१३	३५	क्षमा	क्षमा	क्षमा	क्षमा	मागधी
७	२१	१५	३६	देही	देही	गौरी	देही	लक्ष्मी
८	२०	१७	३७	गौरी	गौरी	देही	गौरी	विद्युत्
९	१९	१९	३८	धात्री	धात्री	रात्री	धात्री (रात्री)	माला
१०	१८	२१	३९	चूर्णा	चूर्णा	पूर्णा	चूर्णा	हंसी
११	१७	२३	४०	छाया	छाया	छाया	छाया	शशिलेखा
१२	१६	२५	४१	कान्ति	कान्ति	कान्ति	कान्ति	जाह्नवी
१३	१५	२७	४२	महामाया	महामाया	महामाया	महामाया	शुद्धि
१४	१४	२९	४३	कीर्त्ति	कीर्त्ति	कीर्त्ति	कीर्त्ति	काली
१५	१३	३१	४४	सिद्धि	सिद्धि	सिद्धा	सिद्धा	कुमारी
१६	१२	३३	४५	मानी	मानिनी	मानी	मानिनी (मनोरमा)	मेधा
१७	११	३५	४६	रामा	रामा	रामा	रामा	सिद्धि
१८	१०	३७	४७	विश्वा	गाहिनी	गाहिनी	गाहिनी	ऋद्धि
१९	९	३९	४८	वासिता	विश्वा	विश्वा	विश्वा	कुमुदिनी
२०	८	४१	४९	शोभा	वासिता	वासिता	वासिता	धरणी
२१	७	४३	५०	हरिणी	शोभा	शोभा	शोभा	यक्षिणी
२२	६	४५	५१	चक्री	हरिणी	हरिणी	हरिणी	वीणा
२३	५	४७	५२	कुररी	चक्री	चक्री	चक्री	ब्राह्मी (वाणी)
२४	४	४९	५३	हंसी	सारसी	सारसी	सुरसी	गान्धर्वी
२५	३	५१	५४	सारसी	कुररी	कुररी	कुररी	मञ्जरी
२६	२	५३	५५	×	सिंही	सिंही	सिंही	गौरी
२७	१	५५	५६	×	हंसी	हंसी	हंसी (हंसपदवी)	×

स्कन्धक प्रस्तार-भेद

प्रस्तार-क्रम	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृतपैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी टीका	वाग्वल्लभ
१	३०	४	३४	नन्द	नन्द	×	×
२	२९	६	३५	भद्र	भद्र	×	×
३	२८	८	३६	शिव	शेष	नन्द	नन्द
४	२७	१०	३७	शेष	सारंग	भद्र	भद्र
५	२६	१२	३८	सारङ्ग	शिव	शेष	शेष
६	२५	१४	३९	ब्रह्मा	ब्रह्मा	सारंग	सारङ्ग
७	२४	१६	४०	वारण	वारण	शिव	शिव
८	२३	१८	४१	वरुण	वरुण	ब्रह्म	ब्रह्मा
९	२२	२०	४२	मदन	नील	वारण	वारण
१०	२१	२२	४३	नील	मदन	वरुण	वरुण
११	२०	२४	४४	तालाङ्क	तालाङ्क	नील	नील
१२	१९	२६	४५	शेखर	शेखर	मदन	निशाङ्क
१३	१८	२८	४६	शर	शर	तालङ्क	मदन
१४	१७	३०	४७	गगनम्	गगनम	शेखर	ताल
१५	१६	३२	४८	शरम	शरभ	शर	शेखर
१६	१५	३४	४९	विमति	विमति	गगनम	शर
१७	१४	३६	५०	क्षीरम	क्षीरम	शरभ	गगनम
१८	१३	३८	५१	नगरम	नगरम	विमति	सरभ
१९	१२	४०	५२	नर	नर	क्षीरम	विमति
२०	११	४२	५३	स्निग्ध	स्निग्ध	नगरम	क्षीरम
२१	१०	४४	५४	स्नेहलु	स्नेह	नर	नगरम
२२	९	४६	५५	मदकल	मदकल	स्निग्ध	नर
२३	८	४८	५६	भूप	भूपाल	स्नेहनम	स्निग्धम
२४	७	५०	५७	शुद्ध	शुद्ध	मदकल	स्नेह
२५	६	५२	५८	कुम्भ	सरित	लोभ	मदकल
२६	५	५४	५९	सरि	कुम्भ	शुद्ध	भूपाल
२७	४	५६	६०	कलश	कलश	सरित	शुद्ध
२८	३	५८	६१	शशी	शशी	कुम्भ	सरित
२९	२	६०	६२	+	+	कलश	कुम्भ
३०	१	६२	६३	+	+	शशधर	शशी

दोहा प्रस्तार-भेद

प्रस्तार क्रम	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर नारायणी टीका	वाग्वल्लभ	गाथा लक्षण
१	२३	२	२५	+	+	+	भ्रमर	+
२	२२	४	२६	भ्रमर	भ्रमर	भ्रमर	भ्रामर	भ्रमर
३	२१	६	२७	भ्रामर	भ्रामरः	भ्रामर	शरभ	भ्रामर
४	२०	८	२८	शरभ	शरभ	शरभ	श्येन	समर
५	१९	१०	२९	श्येन	श्येन	श्येन	मण्डूक	सञ्चार
६	१८	१२	३०	मण्डूक	मण्डूक	मण्डूक	मर्कट	मकरन्द
७	१७	१४	३१	मर्कट	मर्कट	मर्कट	करभ	मर्कटक
८	१६	१६	३२	करभ	करभ	करभ	नर	नर
९	१५	१८	३३	मदकल	नर	नर	मराल	मराल
१०	१४	२०	३४	पयोधर	मराल	मराल	मदकल	मदकल
११	१३	२२	३५	चल	मदकल	मदकल	पयोधर	पयोधर
१२	१२	२४	३६	नर	पयोधर	पयोधर	चल	+
१३	११	२६	३७	मराल	चल	चल	वानर	+
१४	१०	२८	३८	त्रिकल	वानर	वानर	त्रिकल	+
१५	९	३०	३९	वानर	त्रिकल	त्रिकल	कच्छप	+
१६	८	३२	४०	कच्छ	कच्छप	कच्छप	मत्स्य	+
१७	७	३४	४१	मत्स्य	मत्स्य	मत्स्य	शार्दूल	+
१८	६	३६	४२	शार्दूल	शार्दूल	शार्दूल	अहिवर	+
१९	५	३८	४३	अहिवर	अहिवर	अहिवर	व्याघ्र	+
२०	४	४०	४४	व्याघ्र	व्याघ्र	व्याघ्र	बिडाल	+
२१	३	४२	४५	उन्दुर	बिडाल	बिडाल	श्वा	+
२२	२	४४	४६	शुनक	शुनक	श्वा	उदुम्बर (उन्दुर)	+
२३	१	४६	४७	बिडाल	उन्दुर	उन्दुर	सर्प	+
२४	०	४८	४८	सर्प	सर्प	सर्प	शशधर.	+

रोला-प्रस्तार-भेद

प्र.क्र.	लघु	गुरु	मात्रा	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	लघु	गुरु	मात्रा	वृत्तरत्नाकर नारायणी-टीका	वाग्वल्लभ
१	६६	[illegible]	६६	रसिका	रसिका	६६	०	६६	लोहाङ्गिनी	लोहाङ्गी
२	६४	१	६६	हंसी	हंसी	५८	४	६६	हंसी	हंसिनी
३	६२.	२	६६	रेखा	रेखा	५०	८	६६	रेखा	रेखा
४	६०	३	६६	तालाङ्कर	तालङ्किनी	४२	१२	६६	तालङ्किनी	तालाङ्की
५	५८	४	६६	कम्पिनी	कम्पिनी	३४	१६	६६	कम्पी	कम्पी
६	५६	५	६६	गम्भीरा	गम्भीरा	२६	२०	६६	गम्भीरा	गम्भीरा
७	५४	६	६६	काली	काली	१८	२४	६६	काली	काली
८	५२	७	६६	कलरुद्राणी	कलरुद्राणी	१०	२८	६६	कलरुद्राणी	कलरुद्राणी

रसिका-प्रस्तार-भेद

प्र.क्र.	गुरु	लघु	मात्रा	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	प्रथम-चरणे गुरु	लघु	मात्रा	वृत्तरत्नाकर नारायणी-टीका	वाग्वल्लभ
१	१३	७०	९६	कुन्द	कुन्द	११	२	२४	कुन्द	कुन्द.
२	१२	७२	९६	करतल	करतल	१०	४	२४	करताल	कर्णासत:
३	११	७४	९६	मेघ	मेघः	९	६	२४	मेघः	मेघः
४	१०	७६	९६	तालाङ्क	तालाङ्क	८	८	२४	तालङ्क	तालाङ्कः
५	९	७८	९६	रुद्र	कालरुद्रः	७	१०	२४	कालः	कालरुद्रः
६	[illegible]	८०	९६	कोकिल	कोकिलः	६	१२	२४	रुद्रः	कोकिलः
७	[illegible]	८२	९६	कमलम्	कमलम्	५	१४	२४	कोकिल.	कमलः
८	६	८४	९६	इन्दुः	इन्दुः	४	१६	२४	कमलः	चन्द्रः
९	५	८६	९६	शम्भु	शम्भु	३	१८	२४	इन्द्र'	शम्भु
१०	४	८८	९६	चमर.	चामरः	२	२०	२४	शम्भु	चामर.
११	३	९०	९६	गणेश	गणेश्वरः	१	२२	२४	चामरः	गणेश्वरः
१२	२	९२	९६	शेष	सहस्राक्ष.	०	२४	२४	गणेश्वर.	+
१३	१	९४	९६	सहस्राक्ष.	शेष					

रसिका छन्द के केवल प्रथम चरण के ही वाग्वल्लभ के मतानुसार ११ भेद होते हैं और वृत्तरत्नाकर के टीकाकार नारायणभट्ट के मतानुसार १२ भेद होते हैं। वाग्वल्लभ और नारायणी टीका के अनुसार अवशिष्ट द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ चरण २४ मात्रा सहित यथेष्ट गुरु, लघु निर्मित होते हैं।

काव्य-प्रस्तार-भेद

प्र क्र.	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका
१	०	९६	९६	शक्र	शक्र	शक्र
२	१	९४	९५	शम्भु	शम्भु	शम्भु
३	२	९२	९४	सूर्य	सूर्य	सूर
४	३	९०	९३	गण्ड	गण्ड	गण्ड
५	४	८८	९२	स्कन्ध	स्कन्ध	स्कन्ध
६	५	८६	९१	विजय	विजय	विजय
७	६	८४	९०	तालाङ्क	दर्प	दर्प
८	७	८२	८९	दर्प	तालाङ्क	ताराङ्क
९	८	८०	८८	समर	समर	समर
१०	९	७८	८७	सिंह	सिंह	सिंह
११	१०	७६	८६	शेष	शेष	शेष
१२	११	७४	८५	उत्तेजा	उत्तेजा	उत्तज
१३	१२	७२	८४	प्रतिपक्ष	प्रतिपक्ष	फणि
१४	१३	७०	८३	परिधर्म	परिधर्म	रक्ष
१५	१४	६८	८२	मराल	मराल	प्रतिधम
१६	१५	६६	८१	दण्ड	मृगेन्द्र	मराल
१७	१६	६४	८०	मृगेन्द्र	दण्ड	मृगेन्द्र
१८	१७	६२	७९	मर्कट	मर्कट	दण्ड
१९	१८	६०	७८	मदन	मदन	मर्कट
२०	१९	५८	७७	राष्ट्र	महाराष्ट्र	अनुबन्ध
२१	२०	५६	७६	वसन्त	वसन्त	वासण्ठ
२२	२१	५४	७५	कण्ठ	कण्ठ	कण्ठ
२३	२२	५२	७४	मयूर	मयूर	मयूर
२४	२३	५०	७३	बन्ध	बन्ध	बन्ध
२५	२४	४८	७२	भ्रमर	भ्रमर	भ्रमर
२६	२५	४६	७१	भिन्नमहाराष्ट्र	द्वितीयो महाराष्ट्र	भिन्नमहाराष्ट्र
२७	२६	४४	७०	बलभद्र	बलभद्र	बलभद्र
२८	२७	४२	६९	राजा	राजा	राजा
२९	२८	४०	६८	वलित	वलित	वलित
३०	२९	३८	६७	राम	राम	मयूख
३१	३०	३६	६६	मन्थान	मन्थान	मन्थान

प्रक्र	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी टीका
३२	३१	३४	६५	मोह	बली	बली
३३	३२	३२	६४	बली	मोह	मोह
३४	३३	३०	६३	सहस्रनेत्र	सहस्राक्ष	सहस्राक्ष.
३५	३४	२८	६२	बाल	बाल	बाल
३६	३५	२६	६१	दृप्त	दृप्त	दर्पित
३७	३६	२४	६०	शरभ	शरभ	सरभ
३८	३७	२२	५९	दम्भ	दम्भ	दम्भ.
३९	३८	२०	५८	दिवस	अह	उद्दम्भ
४०	३९	१८	५७	उद्दम्भ	उद्दम्भ	वलिताकः
४१	४०	१६	५६	वलिताक	वलिताक	तुरग
४२	४१	१४	५५	तुरग	तुरङ्ग	हार
४३	४२	१२	५४	हरिण	हरिण	हरिण
४४	४३	१०	५३	अन्ध	अन्ध	अन्ध
४५	४४	८	५२	भृङ्ग	भृङ्ग	भृङ्ग

षट्पद-प्रस्तार-भेद

प्रक्र	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी टीका
१	७०	१२	८२	अजय	अजय	अजय
२	६९	१४	८३	विजय	विजय	विजय
३	६८	१६	८४	बलि	बलि	बलि
४	६७	१८	८५	कर्ण	कर्ण	वर्ण
५	६६	२०	८६	वीर	वीर	वीर
६	६५	२२	८७	वैताल	वैताल	वेताल
७	६४	२४	८८	बृहन्नर	बृहन्नल	बृहन्नल
८	६३	२६	८९	मर्क	मर्कट	मर्कट
९	६२	२८	९०	हरि	हरि	हरि
१०	६१	३०	९१	हर	हर	हर
११	६०	३२	९२	विधि	ब्रह्म	ब्रह्मा
१२	५९	३४	९३	इन्दु	इन्दु	इन्दु
१३	५८	३६	९४	चन्दनम्	चन्दनम	चन्दनम
१४	५७	३८	९५	शुभङ्कर	शुभङ्कर	शुभङ्कर

प्रक्र	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका
१५	५६	४०	९६	श्वा	श्वा	शालः
१६	५५	४२	९७	सिंहः	सिंह	सिंह
१७	५४	४४	९८	शार्दूल	शार्दूल	शार्दूल
१८	५३	४६	९९	कूर्म	कूर्मः	कूर्म
१९	५२	४८	१००	कोकिल	कोकिल	कोकिल
२०	५१	५०	१०१	खर.	खर	खर
२१	५०	५२	१०२	कुञ्जर	कुञ्जर.	कुञ्जर
२२	४९	५४	१०३	मदनः	मदन	मदन
२३	४८	५६	१०४	मत्स्य	मत्स्य.	मत्स्य
२४	४७	५८	१०५	तालाङ्क	तालाङ्क	सारङ्गः
२५	४६	६०	१०६	शेषः	शेष	शेष
२६	४५	६२	१०७	सारङ्ग	सारङ्ग	सारस
२७	४४	६४	१०८	पयोधरः	पयोधर	पयोधरः
२८	४३	६६	१०९	कुन्द	कुन्द	कुन्द
२९	४२	६८	११०	कमलम्	कमलम्	कमलम्
३०	४१	७०	१११	वारण	वारणः	कुन्द'
३१	४०	७२	११२	जङ्गम	शरभ'	वारणः
३२	३९	७४	११३	शरभ	जङ्गमः	शरभ.
३३	३८	७६	११४	द्युतीष्टम्	द्युतीष्टम्	जङ्गम'
३४	३७	७८	११५	दाता	दाता	शरः
३५	३६	८०	११६	शर	शर	सुशरः
३६	३५	८२	११७	सुशर	सुशर	समर
३७	३४	८४	११८	समर	समर	सारसः
३८	३३	८६	११९	सारस	सारस	सरसः
३९	३२	८८	१२०	शारद	शारद	मेरुः
४०	३१	९०	१२१	मद	मेरुः	सकल
४१	३०	९२	१२२	मदकर	मदकर.	मृग
४२	२९	९४	१२३	मेरु	मद'	सिद्ध
४३	२८	९६	१२४	सिद्धि	सिद्धिः	बुद्धि'
४४	२७	९८	१२५	बुद्धि	बुद्धि	कलकल
४५	२६	१००	१२६	करतलम्	करतलम्	कमलाकर
४६	२५	१०२	१२७	कमलाकर	कमलाकर'	धवलः
४७	२४	१०४	१२८	धवल	धवल	मतक

प्रस्तार	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी टीका
४८	२३	१०६	१२९	मानस	मन	ध्रुव
४९	२२	१०८	१३०	ध्रुवक	ध्रुव	वलय
५०	२१	११०	१३१	कनकम्	कनकम्	किन्नर
५१	२०	११२	१३२	कृष्ण	कृष्ण	शक
५२	१९	११४	१३३	रञ्जनम्	रञ्जनम्	जन
५३	१८	११६	१३४	मेघकर	मेघकर	मेघाकर
५४	१७	११८	१३५	ग्रीष्म	ग्रीष्म	ग्रीष्म
५५	१६	१२०	१३६	गरुड	गरुड	गरुड
५६	१५	१२२	१३७	शशी	शशी	शशी
५७	१४	१२४	१३८	सूर्य	सूर्य	सूर्य
५८	१३	१२६	१३९	शल्य	शल्य	शल्य
५९	१२	१२८	१४०	नवरङ्ग	नवरङ्ग	नर ।
६०	११	१३०	१४१	मनोहर	मनोहर	तुरग
६१	१०	१३२	१४२	गगनम्	गगनम्	मनोहर
६२	९	१३४	१४३	रत्नम्	रत्नम्	गगनम
६३	८	१३६	१४४	नर	नर	रत्नम्
६४	७	१३८	१४५	हीर	हीर	नव
६५	६	१४०	१४६	भ्रमर	भ्रमर	हीर
६६	५	१४२	१४७	शेखर	शेखर	भ्रमर
६७	४	१४४	१४८	कुसुमाकर	कुसुमाकर	शेखर
६८	३	१४६	१४९	दीप्त	दीप	कुसुमाकरदीप
६९	२	१४८	१५०	शङ्ख	शङ्ख	शङ्ख
७०	१	१५०	१५१	वसु	वसु	वसु
७१	०	१५२	१५२	शब्द	शब्द	शब्द

ख. वर्णिक छन्दों के लक्षण एवं नाम-भेद

सङ्केत—क्रमाङ्क एवं छन्द-नाम=वृत्तमौक्तिक के अनुसार हैं। लक्षण=छन्द लक्षण में प्रयुक्त ग=गुरु, ल=लघु, म=मगण, य=यगण, र=रगण, स=सगण त=तगण, ज=जगण, भ=भगण और न=नगण के सूचक है। सन्दर्भ-ग्रन्थ संकेताङ्क=सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची एवं तदनुसार क्रमसूचक संख्या चतुर्थ परिशिष्ट क. पृ. ४१४ के अनुसार है।

एकाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१.	श्रीः	[ग.]	१, ६, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १६, २२; उक्तम्-५; गी-६; गौ-७.
२.	इः	[ल.]	१, १६; स्तु-१७.

द्व्यक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३.	कामः	[ग. ग.]	१, ६, १२, १६; अत्युक्तं-५; गौ-७; स्त्री-६, १०, १२, १३, १५; पदम्-११, १६; आशीः-२२.
४.	मही	[ल. ग.]	१, ६, १२, १६, १७; सुखं-१०, १६.
५.	सारः	[ग. ल.]	१, १६; साब-६, १२; दुःखं-१०; चाव-१७, जन्तु-१६;
६.	मधु.	[ल. ल.]	१, ६, १२, १६, १७; मद-१०; पुष्पम्-११; वलि-१६.

त्र्यक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
७	ताली	[म]	१, ६, १६; नारी-१, ६, ७, १०, १३, १५, १७; श्यामाङ्गी-१६.
८.	शशी	[य.]	१, ६, १२, १६; मध्यमं-५; केशा-१०; धूः-११; बलाका-१७; वनम्-१६.
९.	प्रिया	[र.]	१, ६, १२, १६; मध्यमं-५; मृगी-६, १०, १३, १५, १७; तडित्-११; सुधी-१६, मञ्जुला-२२.
१०.	रमण	[स.]	१, ६, १२, १६, १७; मध्यमं-५; मदन.-१०; रजनी-११; प्रवरः-१६.
११.	पञ्चालम्	[त.]	१, ६, १२, १६, १७; सेना-१६.
१२.	मृगेन्द्रः	[ज]	१, ६, १२, १६; मृगेन्द्रु-१७, सुवस्तु-१६.

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
२८	मथानम्	[त त]	१, ६, १२ १६, मन्याना–१
२९	शखनारी	[य य]	१, ६, १६, सोमराजी–१ ६ १०, १४ १७, शखधारी–१२; द्रुतम्–१६
३०	सुमालतिका	[ज ज]	१ १२, मालती–१, ६, मालतिका–१७, मनोहर–१६
३१	तनुमध्या	[त य]	१, २, ३ ६ ७ ८, १०, १३, १४ १८, १९ २० २२
३२	वमनकम्	[न न]	१, ६ १२ १६, उपवलि–१७

सप्ताक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
३३	शीर्षा	[म म ग]	१ १२, शीर्षरूपक ६, गान्धर्वी–१०, १६, मुक्तागुम्फ–१६, शिप्रा–१७
३४	समानिका	[र ज ग]	१, ६, १२, १६, उष्णिक–१०, शिखा–११, चामरम–१७, गोभिमी–१६,
३५	सुवासकम्	[न ज ल]	१, ६, १२, १६ वासकि–१७, सवासनि–१७,
३६	करहञ्च	[न स ल]	१, १२, करहञ्च–६, करहस–१६, महरि–१७, करहन्तु–१७, गोपिकागीते मुखदेवम ।
३७	कुमारललिता	[ज स ग]	१, २, ८, १०, १४, १५, १८, १९, २०, २२.
३८	मधुमती	[न न ग]	१ १४, १५, हरिविलसित–१०, हरिविलसितक–७, चपला–११, द्रुतगति–११, लटह–१६
३९	मदलेखा	[म स ग]	१, ६ ७, १०, १३, १४, १९ में लक्षण 'भ स ग' है।
४०	कुसुमतति	[न न ल]	१, मधदु–१७

अष्टाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
४१	विद्युन्माला	[म म ग ग]	१, २, ३, ६, ७ ८, ९ १० १२ १३, १४, १६, १८ १९
४२	प्रमाणिका	[ज र ल ग]	१, ६, ८, ९, १२, १३, १४, १६, १९, प्रमाणी–१०, १८, स्थिर–४, मत्तचेष्टितम्–३, ११, वासगर्भिणी २२
४३.	मल्लिका	[र ज ग ल]	१, ६, १२ १६, समानिका–२, ४, ६,

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-अङ्काङ्क
			१०, १३, १५, १७; समानी-१८, १६; समानं-२२.
४४.	तुङ्गा	[न.न.ग.ग.]	१; तुङ्ग-६, १२; रतिमाला-१०; तुरङ्गा-१२.
४५.	कमलम्	[न स.ल.ग.]	१, ६, १२, १६; लसदसु-१७.
४६.	माणवकक्रीडितकम्	[भ.त ल.ग.]	१, २, ७, १२ २०, २२; माणवकक्रीडा-१६; माणवकम्-५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १६.
४७.	चित्रपदा	[भ.भ.ग.ग]	१, २, ५, ६, १०, १३, १५, १८, १६; वितानं-७ १८, १६; चित्रपदम्-२०; हंसरुतम्-२२
४८.	अनुष्टुप्	`	१, १२; श्लोक-७, ८, १६.
४६.	जलदम्	[न.भ ल.ल.]	१; कुतयु -१७; कुमयु-१७.

नवाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-अङ्काङ्क
५०.	रूपामाला	[म म.म]	१, ६; रूपामाली-१२, १५ १६, १७.
५१.	महालक्ष्मिका	[र.र.र.]	१, ६, १२, १७; महालक्ष्मी-१६.
५२.	सारङ्गम्	[न य स.]	१; सारङ्गिका-१, ६, १२, १६, १७; भुजला-१७.
५३.	पाईत्तम्	[म भ स.]	१, पाइत्ता-१, ६, १२, १६; पविता-१७; सिंहाक्रान्ता-१०; धीरा-१७; प्रवीरा-१७.
५४.	कमलम्	[न न.स]	१, ६, १२; कमला-१५, १६; लघुमणि-गुणनिकर-१०; मदनकं-१७; रतिपदम्-१७.
५५.	बिम्बम्	[न स य.]	१, ६, १२, १६, १७; गुर्वी-७, १८; विशाला-६, १०.
५६.	तोमरम्	[स ज ज.]	१, ६, १२, १६, १७
५७.	भुजगशिशुसृता	[न न म]	१, २, ५, १०, १३, १८, २०, २२. भुजगशिशुसृतम्-१६; भुजगशिशुभृता-१, ८, १३, १५, १७, भुजगशिशुवृता-१७, मधुकरी-३; मधुकरिका-११.

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
५८	मणिमध्यम्	[भ म स]	१, १५, १७ १८, २२, मणिबन्धम्–१६, १७.
५९	भुजङ्गसङ्गता	[स ज र]	१, १५, १७.
६०	सुललितम्	[न न न]	१, चुलरूम्–१७

दशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
६१	गोपाल	[म म म ग]	१, पद्मावर्त –१७
६२	संयुतम	[स ज ज ग]	१, १६, संयुता–१, ९, १७; संयुगा–१७, सगतिका–१२; सहतिका–१७
६३	चम्पकमाला	[भ म स ग]	१, २, ६, ७, ९, ११, १२, १६, १७, १८, रुक्मवती–१, ८, १०, १३, १५ १७, १८, १९, २०, रुमवती–२२, रूपवती–५, १७, सुभावा–११, पुष्पसमृद्धि –११
६४	सारवती	[भ भ भ ग]	१, ९, १६, १७, हारवती–१२, चित्रगति-१०, १९, विश्वमुखी–१७,
६५	सुषमा	[त य भ ग]	१ ५, ९, १२, १६, १७
६६	अमृतगति	[न ज न ग]	१, ९, १६, १७, मृगललितिका–१७
६७	मत्ता	[म भ स ग]	१ १० १३, १५, १७, १८, १९ २०, हसी–१६, विलासिता–२२
६८	त्वरितगति	[न ज न ग]	१ ७ १० १५, १० १९.
६९.	मनोरमम	[न र ज ग]	१, मनोरमा–१, ६, १०, १३, १५ १७
७०	ललितगति	[न न न ल]	१, कुतकवलि–१७

एकादशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
७१	मालती	[म भ म ग ग]	१, ९ १२, माला–१६, मारती–१७, भारती–१७
७२	बन्धु	[भ भ भ ग ग]	१, ९, १२, १७; दोधकम्–१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२ १३, १५, १७ १८, १९, २०, २२. उपचित्रा–११, सरोरुह–१९,
७३	सुमुखी	[न ज ज ल ग.]	१, ६, ९, १० १२, १३, १५, १६, १७, द्रुतपदगति –११

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
७४.	शालिनी	[म.त.त.ग.ग.]	१, २. ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५. १६, १७, १८. १९, २०, २२.
७५.	वातोर्मी	[म.भ.त.ग.ग.]	१, ३, ५, ९, १०, १३, १५, १७, १८, १९; उर्मिला–४; वातोर्मीमाला–२०, २२. १० एवं १९ में [म.भ.भ.ग ग.] लक्षण भी माना है।
७६.	उपजातिः	[शालिनी-वातोर्मीमिश्रा]	१.
७७.	दमनकम्	[न.म.न.ल.ग]	१, ९, १२. १६. १७.
७८.	चण्डिका	[र.ज.र.ल.ग.]	१; श्रेणिका–१; श्रेणिः–१९; श्येनी–२, १०, १५, १७ १८, २०, २२; श्येनिका–५, १३, १७; सेनिका–१२, १७; नि.श्रेणिका–५; नि श्रेणिकम्–११; ताल–१६.
७९,	सेनिका	[ज.र.ज.ग.ल.]	१, ९; सैनिकम्-१७;
८०.	इन्द्रवज्रा	[त.त ज.ग.ग.]	१, २, ३. ४, ६ ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७. १८, १९. २०, २२; उपस्थिता–६, ११.
८१.	उपेन्द्रवज्रा	[ज.त ज.ग.ग.]	१, २, ३. ४, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६ १७, १८, १९, २०, २२.
८२.	उपजातिः	[इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रामिश्रा]	१, २. ४, ७. ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९; इन्द्रमाला–१९, २०, २२.
८३.	रथोद्धता	[र.न.र.ल.ग.]	१, २, ३, ४, ५, ६, ८, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२.
८४.	स्वागता	[र.न.भ.ग.ग.]	१, २. ३, ४, ५, ६, ७, ८, १०, १२, १३, १५, १६, १७ १८, १९, २०, २२.
८५.	भ्रमरविलसिता	[म.भ.न.ल.ग.]	१, ४, ५, १५, १७, १८. २०. २२; भ्रमरविलसितम्–२, ७, १०, १३, १९; वानवासिका–११.
८६.	मनुकूला	[भ.त.न.ग.ग.]	१. १५, १७; कुड्मलदन्ती–२, १०; धीः–१०, १३, १७, १८; सान्द्रपदम्–११, १९; चपिरा–११; मौक्तिकमाला–१७
८७.	मोटनकम्	[त.ज.ज.ल.ग.]	१, ३, १०, १५, १७; मोटकम्–१९.

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
८८.	सुकेशी	[म.स.ज.ग.ग.]	१, एकरूपम्-५, १०, १६; विश्वविराट्-१७; मणि:-१६.
८९.	सुभद्रिका	[न.न.र.ल.ग.]	१, ५, १२, १७, २०; भद्रिका-६, १०, १३, १५, १८, १६; प्रसभम्-४; अपरवक्त्रम्-११; उत्तरान्तिका-११; समुद्रिका-१७.
९०.	बकुलम्	[न.न.न.ल.ल.]	१, अगरिम-१७.

द्वादशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
९१.	आपीड:	[म.म.म.म.]	१. विद्याधर:-९; विद्याधार-१२, १५, १७; विद्याहार:-१६; कल्याणं-१०; काञ्चनम्-११.
९२.	भुजंगप्रयातम्	[य.य.य.य.]	१, २, ४, ६, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२; अप्रमेया-३, ११.
९३.	लक्ष्मीधरम्	[र.र.र.र.]	१. ६, ९, १०, १२, १६, १७; स्रग्विणी-१, २, १३ १५, १७, १८, १६; पद्मिनी-३, ११; शृङ्गारिणी-१७.
९४.	तोटकम्	[स.स.स.स.]	१, २, ३, ४, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १६, २०, २२.
९५.	सारङ्गकम्	[त.त.त.त.]	१, सारङ्ग-१२, १५, १७; सारङ्गरूपम्-१६; सारङ्गरूपकम्-९; कामावतार:-१०, १६, मैनावली-१७; रणक्रीडास्तोत्र में 'भृङ्गार:'.
९६.	मौक्तिकदाम	[ज.ज.ज.ज.]	१, ९, १०, १२, १३, १५, १७, १६; मुक्तादाम-१६.
९७.	मोदकम्	[भ.भ.भ.भ.]	१, ९, १२, १६, १७; मोदक-१५
९८.	सुन्दरी	[न.भ.भ.र.]	१, ९, १२, १६; हरिणप्लुता-३; मत्तकोकिलकम्-१६.
९९.	प्रमिताक्षरा	[स.ज.स.स.]	१, २, ३, ४, ६, १०, १२, १३, १५, १७, १८, १६, २०; प्रतिमाक्षरा-२२.
१००.	चन्द्रवर्त्म	[र.न.भ.स.]	१, १०, १३, १५, १७, १८, १६.

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१०१.	द्रुतविलम्बितम्	[न भ भ.र]	१, २, ६, ७, ८, १०, १३, १५, १७ १८, १९, २०, २२; हरिणप्लुतम्–३, ११.
१०२.	वंशस्थविला	[ज त.ज र.]	१; वंशस्थविलम्–१, १५, १७; वंशस्तनितम्–१; वंशस्थम्–३, ६, ७, ८, १०, १३, १६, १७, १८, १९, २२; वंशस्था–२, २०; वसन्तमञ्जरी–७, ११; भ्रम-वंशा–११.
१०३.	इन्द्रवंशा	[त त ज र]	१, २, ४, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२; इन्दुवंशा–१७, वीरा-सिका–१७.
१०४	उपजाति	[वंशस्थविला-इन्द्रवंशा मिश्रा]	१, १७; करम्बजाति–१९; कुलालचक्रम्–१९; वंशमालिका–१९; वंशमाला–२०.
१०५	जलोद्धतगतिः	[ज स ज.स.]	१, २, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२.
१०६	वैश्वदेवी	[म म य य]	१, २, ४, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२; चन्द्रलेखा–३.
१०७	मन्दाकिनी	[न न.र र]	१, १५, १७; गौरी–२; प्रभा–१, १७.
१०८	कुसुमविचित्रा	[न य.न य]	१, २, १०, १३, १५, १७, २२; मदन-विकारा–११; गजलुलितम्–११; गजल-लिता–१९.
१०९	तामरसम्	[न ज.ज य]	१, ६, १०, १३, १५, १७; ललितपदा–४, १९; कमलविलासिनी–११.
११०.	मालती	[न ज ज.र]	१, ४, ६, १०, १३, १५, १७, वरतनु–२, ११, १४, १९; यमुना–१.
१११.	मणिमाला	[त य त य.]	१, ६, ११, १३, १५, १७, १९; प्रवर-विचित्रा–१९, पुष्पविचित्रा–१०, १८.
११२.	जलधरमाला	[म.भ.स.म.]	१, २, १०, १३, १४, १५, १७, १८, १९; कान्तोत्पीडा–२, ११, सौदामिनी–२२
११३.	प्रियम्वदा	[न.भ.ज.र.]	१, ६, १०, १३, १५; प्रियम्वद–१७; मत्तकोकिला–११.
११४.	ललिता	[त.भ.ज.र.]	१, १०, १३, १५, १७, सुललिता–१.
११५.	ललितम्	[भ त.न स]	१; ललना–१, २, १०; धीरणमाला–१७; रति–१९

क्रमांक छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
११६ कामदत्ता	[न न र य]	१, ३, १०, १६, परिमितविजया-१७
११७. वसन्तचत्वरम्	[ज र ज र]	१, ६, ११, विभावरी-१०, पञ्चचामरम्-१३, १५, ललामललिताधरा-१७,
११८ प्रमुदितवदना	[न न र र]	१, ६, १०, १३, १७, १६, २२, प्रभा-१, ११, १३, १७, चञ्चलाक्षी-२, ११, मन्दाकिनी-१७, गौरी-१४.
११६ नवमालिनी	[न ज भ य]	१, २, १०, १४, १८, १६, २० २२; नवमालिका-१३, १५, नयमालिनी-१७, वनमालिका-१७
१२० तरलनयनम्	[न न न न]	१, १२, १५, १७, तरलनयना-१६, तरलनयनी-६

त्रयोदशाक्षर छन्द

क्रमांक छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
१२१ वाराह	[म म म म ग]	१, सव्याली-१७
१२२ माया	[म त य स ग]	१, ६, १२, १६, मत्तमयूरम्-१, २, ३, ४, ६, ६, १०, १३, १५, १७ १८, १६, २२, मत्तमयूर-२०
१२३ तारकम्	[स स स स ग]	१, ६, १२, १६, १७
१२४ कन्दम्	[य य य य ल]	१, ६, १२, १६, कन्द-१७, कन्दुकम्-१५
१२५ पङ्कावलि	[भ न ज ज ल]	१, ६, १२, पङ्कवती-१७, कमलावली-१६
१२६ प्रहर्षिणी	[म न ज र ग]	१ २, ३ ४, ६ ८, १०, १३, १५ १६ १७, १८, १६ २०, २२, मयूरपिच्छम्-७
१२७ रुचिरा	[ज भ स ज ग]	१ २, ४, ५, ६ १०, १३, १५ १७, १८, १६, २०, २२, प्रभावती-३, सदागतिः-७, अतिरुचिरा-१४ १७
१२८ चण्डी	[न न स स ग]	१, १५, १७, कमलाक्षी-१०, हाकलिका-१७; कलावती-१६
१२६ मञ्जुभाषिणी	[स ज स ज ग]	१, १३, १५, १७ सुनन्दिनी-१, नन्दिनी-५, १०, १६ २२, प्रबोधिता-१ १४, कनकप्रभा-२, १४, मनोवती-११, १६ मे 'न ज स ज ग' और १० मे 'ज त ज स. ग' लक्षण भी माना है।

क्रमाङ्क	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१३०	चन्द्रिका	[न न त त ग.]	१, १३, १५, १७, उत्पलिनी–१, १७; कुटिलमति–२; कुटिलगति–१०; ६ मे चन्द्रिका का लक्षण 'न. न त र ग' है और १६ मे 'य म र र ग' है।
१३१	कलहस	[स ज स स ग.]	१, १५. १७; सिंहनाद–१, १७, कुटज–१, १०, १६, कुटजा–१७, भ्रमर–११, भ्रमरी–१६; क्षमा–१७
१३२	मृगेन्द्रमुखम्	[न ज ज र ग]	१, १५, १७; सुवक्त्रा–१०, १६, प्रघला ११
१३३	क्षमा	[म न.त.र ग]	१, १३; १० में 'न त त र ग' लक्षण है।
१३४	लता	[म स ज ज ग]	१; लय–१०; उपगतशिखा–१७,
१३५	चन्द्रलेखम्	[म स र र ग]	१, १४, चन्द्रलेखा–१, १०; चन्द्ररेखा–१५
१३६	सुद्युति.	[न स त त ग]	१; विद्युन्मालिका–१०
१३७	लक्ष्मी	[त भ.स ज ग]	१, ४, १०, १६, प्रभावती–१५, १६, १७ रुचि–१६.
१३८.	विमलगति	[न न न न ल.]	१; अवमल–१७

चतुर्दशाक्षर छन्द

क्रमाङ्क	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१३९	सिंहास्य	[म म म म.ग ग]	१, सकल्पासार–१७, सकल्पाधार–१७.
१४०.	वसन्ततिलका	[त भ.ज ज ग ग]	१, २, ३, ४, ५, ६, ९. १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८. १९; काश्यपमते सिंहोन्नता–२, ७, ११, १३, १७, २२, सैतवमते उद्धर्षिणी–२, १०, १३, १७, राममते मधुमाधवी १७; भरतमते सुन्दरी–१७, वसन्ततिलकम्–८, २०, २२; सैतवमते इन्दुमुखी–२२.
१४१	चक्रम्	[भ न न न ल ग]	१, १२, १७; चक्रपदम–९, १६
१४२	असम्बाधा	[म त न स ग ग.]	१, २, ३, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२
१४३.	अपराजिता	[न न र स ल ग]	१, २, ५ ६, १० १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२
१४४.	प्रहरणकलिका	[न न भ न ल.ग]	१, ५, ६, १५, १७, १९, २०, प्रहरणकलिता–२, १०, १३, १८, प्रहरणगलिता–२२.

क्रमांक छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१४५. वासन्ती	[म त न म ग.ग.]	१, १५, १७.
१४६. लोला	[म स म भ ग.ग.]	१, १३, १५, १७; अलोला–१०, १७.
१४७ नान्दीमुखी	[न न त त ग ग.]	१, ५, १५, १७; नन्दीमुखी–११; वसन्त–१०, १६.
१४८. वैदर्भी	[म भ.न.य ग.ग.]	१, १४; कुटिला–२, १४; कुटिल–१०, १४; हंसश्येनी–११; हंसश्यामा–१६; मध्यक्षामा–१४; चूडापीडम्–१७.
१४९. इन्दुवदनम्	[भ.ज स न.ग ग.]	१; इन्दुवदना–१, १३, १७; वरसुन्दरी–२; स्खलितम्–१०; वनमयूर–११, १६; इन्द्रवदना–१७; विलासिनी–२२; १० में 'भ.ज.स न.ल ग.' लक्षण है।
१५०. शरभी	[म भ म स त ग.]	१; शरभा–३.
१५१. अहिधृति	[न,न भ.ज.ल ग.]	१
१५२ विमला	[म ज भ.ज ल ग.]	१; धृति–१०; मणिकटकम्–११. १६; प्रभवा–१४
१५३ मल्लिका	[स.ज स ज.ल ग]	१, मञ्जरी–१४; कुररीरुता–१७.
१५४ मणिगणम्	[न न न न ल ल]	१, अकहरि–१७, अकुहरि–१७

पञ्चदशाक्षर छन्द

क्रमांक छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१५५ लीलाखेल	[म म म.म म]	१, १५; सारंगिका–१, ६; सारंगी–१२, १६, १७; कामक्रीडा–१०. १४, १७; लीलालेख.–१७, ज्योति–१६, मित्रम्–१६.
१५६ मालिनी	[न न म य य.]	१. २, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७. १८, १९, २०, २२, नान्दीमुखी–३, ११.
१५७ चामरम्	[र ज र.ज र]	१, ६, १२, १६, तूणकम्–१, १०, १५, १७; तोणकम्–५; तोटक–७, पंचचामर–१७; महोत्सव–१६.
१५८ भ्रमरावलिका	[स.स.स स स]	१, १७; भ्रमरावली–१, ६, १२, १६.
१५९. मनोहंस	[स.ज.ज भ र]	१, ६, १२, मणिहंस–१७; पदहंसकम्–१६.
१६०. शरभम्	[न.न.न न स]	१, ६. १२, १६, १७, शशिकला–१, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९; मणिगुणनिकर–१, २, ४, ५. ११, १३, १५, १७

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-अङ्कैसाङ्क
			१८. १६, २०, २२; स्रक्–१, ११, १३, १५, १७, १८, १६; चन्द्रावर्ता–२, ११, २२; माला–२, ११, २०, २२; मणिनिकर–१७; रुचिरा–१६; चन्द्रवर्त्मा–२०.
१६१.	निशिपालकम्	[भ.ज स न र.]	१, ६, १२, १६, १७.
१६२.	विपिनतिलकम्	[न स.न.र.र.]	१, १५, १७.
१६३.	चन्द्रलेखा	[म र.म य य]	१, ६, १०, १३, १५, १७; चण्डलेखा–१; ७, १०, १४ में 'र.र.म.य य' और १६ मे 'र.र.त त म' लक्षण है।
१६४.	चित्रा	[म म म य य.]	१, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८; चित्रम्–१, मण्डुकी–११, १८, १६; चञ्चला–११.
१६५.	केसरम्	[न.ज.भ.ज.र.]	१; प्रभद्रकम्–६, १०, १३, १७; सुकेसरम्–१४, १६.
१६६.	एला	[स ज न.न.य.]	१, १०, १३, १७, १६.
१६७.	प्रिया	[न.न.त भ र]	१; उपमालिनी–६, १०; रूपमालिनी–१४
१६८.	उत्सव.	[र न भ भ र.]	१; सुस्वरम्–१०; मणिभूषणं–११, १६; रमणीयं–११, १६; नूतनं–१७; सुकर्णं–१७.
१६९.	ऋतुगणम्	[न.न.भ म न]	१, शरहृतिः–१७.

षोडशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-अङ्कैसाङ्क
१७०.	रामः	[भ.भ भ भ भ ग]	१, ब्रह्मरूपकम्–१, ६, १६; ब्रह्मरूपम्–१५; ब्रह्म–१२, १७; वाणुकी–१०; चक्रापीडम्–१७.
१७१	पञ्चचामरम्	[ज र.ज र ज ग]	१, ५, ६, १०, १४, १५, १६; नराचम्–१, ६, १२, १४, १५, १६, १७.
१७२	नीलम्	[भ.भ.भ भ.भ.ग.]	१, ६, १२, १६, १७; अश्वगतिः–६, १४, १५; सङ्गतम्–१०, पद्ममुखी–११, १६; सुरता–११, सद्मपुद्धरण–११; सोपानकं–११; रथगतिः–१७; विशेषिका–१७
१७३.	चञ्चला	[र ज र ज र ल.]	१, ६, १२, १६, १७; चित्रसंज्ञं–१, १४, १५; चित्रं–५, ६, १७; चित्रशोभा–५;
१७४.	मदनललिता	[म भ न म.न.ग]	१, १०, १५, १७, मदनललित–५.

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
१७५	वाणिनो	[न ज भ ज र ग]	१, ६, १०, १३, १५, १७ १६; १० में वाणिनी का 'न ज ज ज र ग' लक्षण भी स्वीकार किया है।
१७६	प्रवरललितम्	[य म न स र ग]	१, ३, १५, १७, जयानन्दम्-१०, १६
१७७	गरुडरुतम्	[न ज भ ज त ग]	१, १५, १७, चन्द्रलेखा-२२
१७८	चकिता	[भ स म त न ग]	१, १५, १७
१७६	गजतुरग-विलसितम्	[भ र न न न ग]	१, ऋषभगजविलसितम्-१, २, ३, १०, १३, १५, १७, १८, १६, गजवरविलसितम्-५, मत्तगजविलसितम-११, वृषभगजविलसिता-२०; ऋषभगजविलसिता-२२
१८०	शैलशिखा	[भ र न भ भ ग]	१, २, १०, १४, भामिनी-१६
१८१	ललितम	[भ र न र न ग]	१, ४, धीरललिता-१४, १५, महिषी-१०.
१८२	सुकेसरम	[न स ज स ज ग]	१
१८३	ललना	[भ न न ज भ ग]	१,
१८४	गिरिवरधृति	[न न न न न ल]	१, अचलधृति-१, ५, ६, १०, १५, १७, १८

सप्तदशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
१८५	लीलाधृष्टम्	[म म म म म ग ग]	१, मानाक्रान्ता १७
१८६	पृथ्वी	[ज स ज स य ल ग]	१ २ ५ ६, ७, ८, ६ १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १६ २०, २२, विलम्बितगति ३, ११
१८७	मालावती	[न स ज स य ल ग]	१, मालाधर-१, ६, १२ १६, १७
१८८	शिखरिणी	[य म न स भ ल ग]	१, २, ३, ४, ५, ६ ७, ८ १०, १२ १३, १५, १६, १७, १८, १६, २० २२,
१८६	हरिणी	[न स म र स ल ग]	१,२, ३, ५, ६, ७, ८ १०, १२, १३, १५, १७, १८, १६, २०, २२, वृषभचरितम्-४, वृषभललितम ११
१६०	मन्दाक्रान्ता	[म भ न त त ग ग]	१, २, ४, ५, ६, ७ ८, १०, १२, १३, १५ १६, १७, १८, १६, २०, २२ श्रीधरा-३, ११

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१६१	वंशपत्रपतितम्	[भ र न भ न ल ग]	१, २, ३, ४, ६, १० १३, १५, १७, १८, १६, २२, वंशपत्रपतिता–१, २०, वंशदलम्–१, ११, वंशलल–५, वंशपत्रललितम्–५, वंशपत्रम्–१७
१६२.	नर्दटकम्	[न ज भ ज ज ल ग]	१ १७; नर्कुटं–८, नर्कुटकम्–४, ७, ११, १३, १५, १८, १६, अवितयम्–२ १०, १४
	कोकिलकम्[≠]	[न ज भ ज ज ल ग]	१, २, १०, १३, १४, १५, १७, १६
१६३.	हारिणी	[म भ न म य ल ग]	१, ५, १०, १५, १७ में 'म भ न य म ल ग' लक्षण है।
१६४.	भाराक्रान्ता	[म भ न र स ल ग]	१, ५, १०, १५, १७,
१६५	मतंगवाहिनी	[र ज र ज र ल ग]	१,
१६६	पद्मकम	[न स भ त त ग ग]	१, १०,; पद्मम्–५
१६७	वंशमुखहरम्	[न भ न भ न ल ल.]	१, प्रचलन्नयनम्–१७

अष्टादशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१६८	लीलाचन्द्र	[म म म म म म]	१, ६
१६६	मञ्जीरा	[म म भ म स म.]	१, ६, १२ १६ १७
२००.	चर्चरी	[र स ज ज भ र]	१, ६, १२, १६, १७; विबुधप्रिया–२, १४, उज्ज्वलम– १०, मालिकोत्तरमालिका–११, १६, मत्तकोकिलम्–१७, कूर्पर–१७; मञ्चरी १७, रूपगोस्वामी कृत मुकुन्दमुक्तावली में 'रथिणी' और गोवर्द्धनोद्धरण में 'मुग्धसौरभम्' नाम दिए हैं।
२०१	क्रीडाचन्द्र	[य य य य य य]	१, १२, १७, क्रीडाचक्रम्–१६; चारुधाणा–१७, क्रीडगा–१७, चन्द्रिका–१७
२०२	कुसुमितलता	[म त न य य य]	१, २, ५, १०, १३ १५, २२, चित्रलेखा–३, चन्द्रलेखा–७, कुसुमलतावेल्लिता–१७, १८, कुसुमितलतावेल्लिता–१६, २०
२०३	नन्दनम	[न ज भ ज र र.]	१, १५, १७.
२०४	नाराच	[न न र र र र]	१, १५, १७ नाराचकम–२, मञ्जुला–१, महामालिका–१७, तारका–६, वरदा–१६, निशा–१६
२०५	चित्रलेखा	[म भ न य य य]	१, ५, १०, १४, १५, १७, चन्द्रलेखा–१७, महाराणा कुम्भकर्ण रचित पाठ्यरत्न-

[≠]लक्षण 'नर्दटकम्' का है परन्तु यतिभेद के कारण अपर नाम 'कोकिलकम्' दिया है।

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
			कोष के अनुसार 'य त न य य स' लक्षण है।
२०६	भ्रमरपदम	[भ र भ न न स]	१, ५, ६, १० १४, १५.
२०७	शार्दूलललितम्	[म स ज स त स]	१, ५, १०, १४, १५, १७
२०८	सुललितम्	[न न म त भ र]	१, ५, १०
२०९	उपवनकुसुमम	[न न न न न न]	१, तुमुलकम–१७

एकोनविंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२१०	नागानन्द	[म म म म म म ग]	१,
२११	शार्दूलविक्रीडितम	[म स ज स त त ग]	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७ १८, १९, २०, २२, शार्दूलसट्टकम–९
२१२	चन्द्रम	[न न न ज न न ल]	१, १२, १६, चन्द्रमाला–१, ९
२१३	धवलम	[न न न न न न ग]	१, १२, १६, १७; धवला–१, [illegible]
२१४	शम्भु	[स त य भ म म ग]	१ ९, १२ १६, १७
२१५	मेघविस्फूर्जिता	[य म न स र र ग]	१, १०, १४, १५, १८, १९, विस्मिता–२, सुवृत्ता–४, रम्भा–५, ११, १९, चन्द्रकान्ता–७
२१६	छाया	[य म न स त त ग]	१, ५, १० १४ १५, १७
२१७	सुरसा	[म र भ न य न ग]	१, १५, १७
२१८	फुल्लदाम	[म त न स र र ग]	१, १५, १७, पुष्पदाम–५, १०, १४
२१९	मृदुलकुसुमम	[न न न न न न ल]	१,

विंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२२०	योगानन्द	[म म म म म म ग ग]	१
२२१	गीतिका	[स ज ज भ र स ल ग]	१, १२, १५, १७, गीता–९, हरिगीतम १६.
२२२	गण्डका	[र ज र ज र ज ग ल]	१, ९, १२ १७, चित्तवृत्तम–१, चित्र–६, वृत्तम–१ २ १० १४, १५ १८, १९, २२, मुण्डक–१६, ईदृश–१७, मादश–१७
२२३	शोभा	[य म न न त त ग ग]	१ ५, १०, १४, १५ १७
२२४	सुवदना	[म र भ न य भ ल ग]	१, २, ३, ४ ५, ६, १०, १३, १५ १७, १८, १९, २०, वृत्तम–७, २२ के अनुसार 'म र भ न य भ ल ल' लक्षण है।

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२२५	प्लवङ्गभङ्ग-मङ्गलम्	[ज र ज र ज.र.ल ग]	१,
२२६	शशाङ्कचलितम्	[त भ ज भ.ज भ स ग]	१, शशाङ्कचरितम्–७, शशाकरचितम्–१०.
२२७.	भद्रकम	[भ.भ भ भ भ र स ल ग]	१, मन्दकम्–१०, आसुरम्–१६.
२२८	घनर्वघिगुणगणम	[न न न न न न ल ल.]	१,

एकविंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२२९	ब्रह्मानन्द	[म म म म म म म]	१,
२३०	स्रग्धरा	[म र भ न य य य]	१, २, ३, ४, ५ ६, ७, ८, ६, १०, १२, १३ १५, १६, १७, १८, १६, २०, २२
२३१.	मञ्जरी	[र न र.न र न र.]	१; तरग.–१०, तरगमालिका–१६, कनकमालिका–१७.
२३२	नरेन्द्र	[भ र न न ज ज ज]	१, ६, १२, १६.
२३३.	सरसी	[न ज भ.ज ज ज र]	१, १५ १७, सुरतरु–१, सिद्धकम्–१; सिद्धि –५, १०; सिद्धिका–६, शशिवदना–२, ११, चित्रलता–११, चित्रलतिका–१६, सलिलम–१४, श्री –१४, चम्पकमालिका–१७, १६; चम्पकावली–१७, पञ्चकावली–१७
२३४.	रुचिरा	[न ज भ ज ज ज र]	१, ११.
२३५	निरुपम-तिलकम	[न न न न न न न]	१,

द्वाविंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२३६.	विद्यानन्द	[म म म म म म म ग.]	१,
२३७	हंसी	[म म त न न न स ग]	१, ६, १२, १५, १६, १७, रजतहंसी–१७.
२३८	मदिरा	[भ भ भ भ भ भ भ ग]	१, २, १०, १४, १५, १७, लताकुसुमम–६, ११, १६, सवैया–१६, मालिनी–१७
२३९.	मन्द्रकम्	[भ.र न र न र न ग.]	१, मद्रकम–२, ३, ५, १०, १८ १६, २२, भद्रकम्–६, १३, १५ २०, विशुद्धचरितम्–७, १७ मे 'भ र न स न र न ग' लक्षण है। भद्रक–१७, भद्रिका–१७,
२४०	शिखरम्	[भ र न र न र न ग]	१

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२४१.	अच्युतम्	[न न न न स ज ज ग]	१,
२४२	मवालसम्	[त भ य ज.स र.न ग]	१, सितस्तवक-१७; परिस्तबक-१७
२४३	तरुवरवृत्तम्	[न न न न न न न स]	१,

त्रयोविंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२४४.	विष्यानन्द	[म म म म म म म ग ग]	१,
२४५	सुन्दरिका	[स स भ स त ज ज स ग]	१, ६, १२; सुन्दरी-११.
	पद्मावतिका	[स स भ स त ज ज स.ग]	१, १२
२४६	अद्रितनया	[न ज भ ज भ.ज भ ल ग]	१, १५, १७; अश्वललितम्-१ २, ३, ११, १७, १८, १६, २०, २२, ललित-५, १०, हयलीलाङ्गी-७
२४७	मालती	[भ भ भ भ भ भ भ ग ग]	१; सवैया १६; मत्तगजेन्द्र -१७
२४८.	मल्लिका	[ज ज ज ज ज ज ज ल ग]	१, मानवती-१७; मानिनी-१७.
२४६	मत्ताक्रीडम्	[म म त न न न न ल ग]	१, १५, १८, १६; मत्ताक्रीडा-२, ५, ६, १०, ११, १७, २०, २२.
२५०	कनकवलयम्	[भ न न न न न न ल ल]	१,

चतुर्विंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२५१	रामानन्द	[म म म म म म म म]	१
२५२	दुर्मिलका	[स स स स स स स स]	१ १२, दुर्मिला-२, १६, द्विमिला-१७; सवैया-१६,
२५३.	किरीटम्	[भ भ.भ भ भ भ भ भ]	१ ६, १२, १७, सुभद्र-१०, सुभद्रकम्-६, सवैया-१६, मेदुरवन्त-१७; मेदुरव-१७
२५४	तन्वी	[भ त न स भ भ न य]	१, २, ५, ७, १०, ११, १५, १७, १८ १६, २०, २२
२५५	माधवी	[ज ज ज ज ज ज ज ज]	१, अनाभय-१७
२५६	तरलनयनम्	[न न न न न न न न]	१

पञ्चविंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२५७	कामानन्द	[म म म म म म म म ग.]	१
२५८	क्रौञ्चपदा	[भ म स,भ न न न न ग]	१, २, ३, ५, ६, १०, १३, १५, १८, १६, २०, क्रौंचपदी-७, क्रोञ्चपदा-१७, क्रौञ्चीपदा-२२

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२५९.	मल्ली	[स स.स स स.स.स.स ग.]	१; मुदिरम्–१७
२६०.	मणिगुणम्	[न न न न.न न.न न.ल]	१.

षड्विंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२६१.	गोविन्दानन्दः	[म.म.म.म.म.म.म म ग ग]	१; जीमूतायतनम्–१७.
२६२	भुजङ्गविजृम्भितम्	[म.म त न न न.र स.ल.ग.]	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२.
२६३.	अपवाहः	[म न.न.न.न म.न.स.ग ग]	१, ५, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०; अपवाहकः–२; २२; प्रवबाधम्–६;
२६४.	मागधी	[भ.भ.भ.भ.भ.भ.भ.भ.ग.ग.]	१; प्रियजीवितम्–१७.
२६५.	कमलदलम्	[न न न.न.न.न.न.न.ल.ल.]	१.

प्रकीर्णक छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१	पिपीडिका	[म म त न.न न न ज भ.र.]	१, ५, १०; जलद दण्डक–२२
२	पिपीडिकाकरभः	[म म त न न न.न.ल–५, ज भ.र]	१, ५, १०.
३	पिपीडिकापणवः	[म म त न न.न न ल–१०, ज.भ.र]	१, ५, १०.
४	पिपीडिकामाला	[म म त.न न न.न.ल–१५, ज.भ र.]	१, ५, १०.
५	द्वितीयत्रिभङ्गी	[ल–२०, भ.ग.ग.स ग.ग.ल.ल.ग.ग.]	१, १६.
६	शालूर.	[ग.ग. ल–२४, स]	१, १६.

दण्डक छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१.	चण्डवृष्टिप्रपात	[न.न.र–७]	१, १०, १३, १५, १७, मेघमाला–३; चण्डवृष्टिः–५, १०, १६; चण्डवृष्टिप्रयात–२, ६, १८, १९, २०, २२.
२.	प्रचितकः	[न न.र–८]	१, २
३.	अर्णः	[न न.र–८]	१, ५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९; अर्णवः–२२.

क्रमांक छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
४. सर्वतोभद्र.	[न न य य य य य य य.]	१; प्रचितक–६, १०, १३, १५, १६, १७, १८ १९.
५. अशोककुसुम-मञ्जरी	[र ज र ज र.ज र ज र ल.]	१; अशोकपुष्पमंजरी–५, ६, १०, १५ १७; अशोकमंजरी–१६
६ कुसुमस्तबक	[स स स स स स स स स]	१, १५, १६, १७, कुसुमस्तर–५, कुसुमस्तरण–१०.
७. मत्तमातङ्ग	[र.र.र र र र र.र र र]	१, १०; मत्तमातंगलीलाकर–५, १५, १७, मत्तमातंगखेलित –१६.
८ अनंगशेखर	[ज र ज र ज र ज र ज ग]	१, ५, ६, १०, १५, १६, १७

अर्द्धसमवृत्त

१ पुष्पिताग्रा	१ ३ *	[न न र य.]	२.४ °	[न ज ज.र ग]	१, २, ३, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२.
२ उपचित्रम्	,,	[स स स ल ग.]	,,	[भ भ भ ग ग]	१, ६, १०, १३, १५; उपचित्रा–१७, उपचित्रकम्–२, ५, १८, १९, २०, २२.
३ वेगवती	,,	[स स स ग]	,,	[भ भ भ ग ग.]	१, २, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८ १९, २०, २२.
४ हरिणप्लुता	,,	[स स स ल ग]	,,	[न भ भ र]	१, २, १०, १३, १५, १६, १७, १८, २२; हरिणीप्लुता–१९, २०, हरिणपद–५, हरिणोद्धता–६
५ अपरवक्त्रम्	,,	[न न र ल ग]	,,	[न ज ज र]	१, २, ३, ४, ५, ६, १०, १३ १५, १७, १८, १९, २०, २२
६ सुन्दरी	,,	[स स ज ग]	,,	[स भ र ल ग]	१, १५, १७; प्रबोधिता–१०, वियोधिता–१९; सुरमालिका–१७, वियोगिनी–१७
७ भद्रविराट	,,	[त ज र ग]	,,	[म स ज ग ग]	१, २, १०, १३, १७, १८ १९, २०, २२; भद्रविराटिका–५

*–१,३. अर्थात् प्रथम और तृतीय चरण का लक्षण।
°–२ ४. अर्थात द्वितीय और चतुर्थ चरण का लक्षण।

क्र. छन्द-नाम	लक्षण			सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
८. केतुमती	१.३ [स ज स ग]	२,४.	[भ.र.न.ग.ग.]	१, २, ३, ५, ६, १०, १३, १७, १८, १९, २०, २२.
९. वाड्मती	,, [र ज.र.ज.]	,,	[ज.र.ज.र.ग.]	१; यवमती–२, ५, ६, १०, १३, १८; यमरावती–१७; यमवती–१७, २०, २२. यवध्वनि–१९; २० के अनुसार 'र.ज.र.ज.ग.' 'ज.र.ज.र ग.' लक्षण है।
१०. षट्पदावली	,, [ज.र.ज.र.]	,,	[र ज.र ज.ग.]	१, ५, १०, १४.

विषमवृत्त

	लक्षण		सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१. उद्गता	[*१. स ज स.ल. *३. भ.न.भ ग.	*२. न स.ज.ग. *४. स ज स ग.]	१, २, ४, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९; उद्गतः २०,
२. उद्गताभेदः	[१. स ज स ल. ३. भ न ज ल ग.	२. न.स.ज ग. ४. स.ज.स ग.]	१, १५, २२
३. सौरभम्	[- तसल. ३. र न.भ.ग.	२. न स.ज ग. ४. स.ज स.ज.ग.]	१, १७; सौरभकम्–२, ५, ६, १०, १३, १५, १८, १९; सौरभक.–२०; सौरभकं–२२.
४, ललितम्	[१. स ज स ल. ३. न न स.स.	२. न.स ज ग. ४. स ज.स ज ग.]	१, २, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २२, ललित –२०
५, भाव	[१. न न. ३ न न.	२. न न. ४. भ.भ.भ.ग.]	१.

६, यवत्रम् [लक्षण अनुष्टुप् के समान है किन्तु द्वितीय और चतुर्थ चरण में 'न ग य ग.' होता है]
१, २, ३, ४, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२

७, पथ्यावक्त्रम् [लक्षण अनुष्टुप् के समान है किन्तु द्वितीय एवं चतुर्थ चरण का पाचवां छठा और सातवां अक्षर 'जगण' होता है]
१, २, ६, १०, १३, १५, १७, १८; पथ्या–५, १९, २०, २२.

*–१–प्रथम चरण का लक्षण, २–द्वितीय चरण का लक्षण, ३–तृतीय चरण का लक्षण, ४–चतुर्थ चरण का लक्षण।

वैतालीय-छन्द

क्रमाङ्क	छन्दनाम		लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
१	वैतालीयम	*१,३	[१४ मात्रा-कला ६, र ल ग]	१,२ ४ ६,७ १० १३ १५
		*२ ४	[१६ मात्रा-कला ८ र ल ग]	१७,१८, १९ २०, २२
२	औपच्छन्दसकम	१ ३	[१६ मात्रा-कला ६, र ल ग ग]	१, २ ४ ६ ७ १० १३
		२ ४	[१८ मात्रा-कला ८, र य]	१५ १७, १८, १९ २० २२
३	आपातलिका	१ ३	[१४ मात्रा-कला ६, भ ग ग]	१ २ ६ ७ १० १३, १७
		२,४	[१६ मात्रा-कला ८ भ ग ग]	१८ १९ २० २२
४	नलिनम		[१४ मात्रा-कला ६, भ ग ग]	१,
५	अपर नलिनम		[१६ मात्रा-कला ८ भ ग ग]	१,
६	दक्षिणान्तिका वैतालीयम		[१४ मात्रा-ल ग, कला ३ र ल ग]	१, ६, १०, १३ १७, २२
७	उत्तरान्तिका वैतालीयम		[१६ मात्रा-कला ८ र ल ग]	१, १३
८	प्राच्यवृत्ति	१,३	[१४ मात्रा-कला ६ र ल ग.]	१ २, ६ १० १३, १७,
		२ ४	[१६ मात्रा-कला ३ ग, कला ३ र ल ग.]	१८, १९ २० २२
९	उदीच्यवृत्ति	१ ३	[१४ मात्रा-ल ग कला ३ र ल ग]	१, २ ६, १३, १७ १८, १९ २०, २२
		२ ४	[१६ मात्रा-कला ८, र ल ग]	
१०	प्रवृत्तकम	१,३	[१४ मात्रा-ल ग कला ३ र ल ग]	१, २ ६, १०, १३, १७ १८, १९, २०, प्रसवतकम-२२
		२,४	[१६ मात्रा-कला ३, ग कला ३ र ल ग]	
११	अपरान्तिका		[१६ मात्रा-कला ३, ग कला ३, र ल ग]	१, २ ६ १०, १३, १७, १८, २२, अपरान्तिकम्-१९
१२	चारुहासिनी		[१४ मात्रा-ल ग कला ३, र ल ग]	१, २ ६, १०, १३, १७, १८, १९

---

*१ ३, अर्थात् प्रथम और तृतीय चरण का लक्षण।

*२,४ अर्थात् द्वितीय और चतुर्थ चरण का लक्षण।

(ग.) छन्दों के लक्षण एवं प्रस्तारसंख्या[a]

क्रमाङ्क	छन्द नाम	लक्षण	प्रस्तार संख्या
		एकाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद २	
१	श्री	ऽ	१
२	इ	।	२
		द्वयक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ४	
३	काम	ऽऽ	१
४.	मही	।ऽ	२
५	सार	ऽ।	३
६	मधु	।।	४
		त्र्यक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ८	
७	ताली	ऽऽऽ	१
८	शशी	।ऽऽ	२
९	प्रिया	ऽ।ऽ	३
१०	रमण	।।ऽ	४
११	पाञ्चालम	ऽऽ।	५
१२	मृगेन्द्र	।ऽ।	६
१३.	मन्दर	ऽ।।	७
१४	कमलम	।।।	८
		चतुरक्षर छन्द–प्रस्तारभेद १६	
१५.	तीर्णा	ऽऽऽ ऽ	१
१६	धारी	ऽ।ऽ।	११
१७	नगाणिका	।ऽ। ऽ	६
१८	शुभम्	।।।।	१६
		पञ्चाक्षरछन्द–प्रस्तारभेद ३२	
१९	सम्मोहा	ऽऽऽ ऽऽ	१
२०	हारी	ऽऽ। ऽऽ	५
२१	हंस	ऽ।। ऽऽ	७
२२.	प्रिया	।।ऽ ।ऽ	१२
२३	यमकम	।।। ।।	३२

[a] यहाँ क्रमाङ्क और छन्द नाम वृत्तमौक्तिक के अनुसार दिए गए है। ऽ चिह्न गुरु अक्षर का सूचक है और । लघु का। अंतिम कोष्ठक मे प्रस्तार भेदो की संख्या दी गई है।

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
	षडक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ६४		
२४.	शेषा	SSS SSS	१
२५	तिलका	IIS IIS	२८
२६.	विमोहम्	SIS SIS	१९
२७.	चतुरंसम्	III ISS	१६
२८.	मन्थानम्	SSI SSI	३७
२९.	शंखनारी	ISS ISS	१०
३०.	सुमालतिका	ISI ISI	४६
३१.	तनुमध्या	SSI ISS	१३
३२.	दमनकम्	III III	६४
	सप्ताक्षर छन्द-प्रस्तारभेद १२८		
३३.	शीर्षा	SSS SSS S	१
३४.	समानिका	SIS ISI S	४३
३५.	सुवासकम्	III ISI I	११२
३६.	करहञ्चि	III IIS I	९६
३७.	कुमारललिता	ISI IIS S	३०
३८.	मधुमती	III III S	६४
३९.	मदलेखा	SSS IIS S	२५
४०.	कुसुमततिः	III III I	१२८
	अष्टाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद २५६		
४१.	विद्युन्माला	SSS SSS SS	१
४२.	प्रमाणिका	ISI SIS IS	८६
४३.	मल्लिका	SIS ISI SI	१७१
४४.	तुङ्गा	III III SS	६४
४५.	कमलम्	III IIS IS	९६
४६.	माणवकक्रीडितकम्	SII SSI IS	१०३
४७.	चित्रपदा	SII SII SS	५५
४८	अनुष्टुप्		
४९	जलदम्	III III II	२५६
	नवाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ५१२		
५०.	रूपामाला	SSS SSS SSS	१
५१.	महालक्ष्मिका	SIS SIS SIS	१४७

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
५२.	सारङ्गम्	III ISS IIS	२०८
५३.	पाइंत्तम्	SSS SII IIS	२४१
५४	कमलम्	III III IIS	२५६
५५	बिम्बम्	III IIS ISS	६६
५६	तोमरम्	IIS ISI ISI	३६४
५७	भुजगशिशुसृता	III III SSS	६४
५८.	मणिमध्यम्	SII SSS IIS	१९९
५९.	भुजङ्गसङ्गता	IIS ISI SIS	१७२
६०.	सुललितम्	III III III	५१२

दशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद १०२४

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
६१	गोपालः	SSS SSS SSS S	१
६२.	संयुतम्	IIS ISI ISI S	३६४
६३.	चम्पकमाला	SII SSS IIS S	१९९
६४.	सारवती	SII SII SII S	४३९
६५.	सुषमा	SSI ISS SII S	३९७
६६	अमृतगति	III ISI III S	४९६
६७	मत्ता	SSS SII IIS I	२४१
६८.	त्वरितगति	III ISI III S	४९६
६९	मनोरमम	III SIS ISI S	३४४
७०	ललितगति.	III III III I	१०२४

एकादशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद २०४८

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
७१	मालती	SSS SSS SSS SS	१
७२	बन्धु	SII SII SII SS	४३९
७३	सुमुखी	III ISI ISI IS	८८०
७४	शालिनी	SSS SSI SSI SS	२८९
७५	वातोर्मी	SSS SII SSI SS	३०५
७६	उपजाति	[शालिनी वातोर्मी मिश्रित]	
७७.	दमनकम्	III III III IS	२०२४
७८.	चण्डिका	SIS ISI SIS IS	६८३
७९	सेनिका	ISI SIS ISI SI	१३६६
८०	इन्द्रवज्रा	SSI SSI ISI SS	३५७
८१.	उपेन्द्रवज्रा	ISI SSI ISI SS	३५८
८२.	उपजाति	[इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रा मिश्रित]	

क्रम क	छन्द नाम	लक्षण	प्रस्तारसख्या
८३	रथोद्धता	SIS III SIS IS	६६६
८४	स्वागता	SIS III SII SS	४४३
८५.	भ्रमरविलसिता	SSS SII III IS	१००६
८६	अनुकूला	SII SSI III SS	४८७
८७	मोटनकम	SSI ISI ISI IS	८७३
८८.	सुकेशी	SSS IIS ISI SS	३४५
८९	सुभद्रिका	III III SIS IS	७०४
९०	बकुलम्	III III III II	२०४८

द्वादशाक्षर छन्द-प्रस्तारभद ४०९६

क्रम क	छन्द नाम	लक्षण	प्रस्तारसख्या
९१	आपीड	SSS SSS SSS SSS	१
९२.	भुजङ्गप्रयातम	ISS IS- ISS ISS	५८६
९३	लक्ष्मीधरम	SIS SIS SIS SIS	११७१
९४	तोटकम	IIS IIS IIS IIS	१७५६
९५	सारङ्गकम	SSI SSI SSI SSI	२३४१
९६	मौक्तिकदाम	ISI ISI ISI ISI	२९२६
९७	मोदकम	SII SII SII SII	३५११
९८	सुन्दरी	III SII SII SIS	१४६४
९९	प्रमिताक्षरा	IIS ISI IIS IIS	१७७२
१००	चन्द्रवर्त्म	SIS III SII IIS	१९७९
१०१	द्रुतविलम्बितम	III SII SII SIS	१४६४
१०२	वंशस्थविला	ISI SSI ISI SIS	१३८२
१०३	इन्द्रवंशा	SSI SSI ISI SIS	१३८१
१०४	उपजाति	[वंशस्थविलेन्द्रवंशा मिश्रित]	
१०५	जलोद्धतगति	ISI IIS ISI IIS	१८८६
१०६	वैश्वदेवी	SSS SSS ISS ISS	५७३
१०७	मन्दाकिनी	III III SIS SIS	१२१६
१०८	कुसुमविचित्रा	III SS III ISS	९७६
१०९	तामरसम्	III ISI ISI ISS	८८०
११०	मालती	III ISI ISI SIS	१३९२
१११.	मणिमाला	SSI ISS SSI ISS	७८१
११२	जलधरमाला	SSS SII IIS SSS	२४१
११३.	प्रियम्वदा	III SII ISI SIS	१४००
११४	ललिता	SSI SII ISI SIS	१३९७

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
११५.	ललितम्	SII SSI III IIS	२०२३
११६.	कामदत्ता	III III SIS ISS	७०४
११७	वसन्तचत्वरम्	ISI SIS ISI SIS	१३६६
११८	प्रमुदितवदना	III III SIS SIS	१२१६
११९	नक्षमालिनी	III ISI SII ISS	६४४
१२०	तरलनयनम्	III III III III	४०९६

त्रयोदशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ८१९२

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१२१	वाराह	SSS SSS SSS SSS S	१
१२२	माया	SSS SSI ISS IIS S	१६३३
१२३	तारकम्	IIS IIS IIS IIS S	१७५६
१२४	कन्दम्	ISS ISS ISS ISS I	४६८२
१२५	पङ्क्तावलि	SII III ISI ISI I	७०३९
१२६	प्रहर्षिणी	SSS III ISI SIS S	१४०१
१२७	रुचिरा	ISI SII IIS ISI S	२८०६
१२८	चण्डी	III III IIS IIS S	१७९२
१२९	मञ्जुभाषिणी	IIS ISI IIS ISI S	२७९६
१३०	चन्द्रिका	III III SSI SSI S	२३६८
१३१	कलहंस	IIS ISI IIS IIS S	१७७२
१३२	मृगेन्द्रमुखम्	III ISI ISI SIS S	१३६२
१३३	क्षमा	III III SSI SIS S	
१३४	लता	III IIS ISI ISI I	२९१२
१३५	चन्द्रलेखम्	III IIS SIS SIS S	११८४
१३६	सुद्युति	III IIS SSI SSI S	२३३६
१३७	लक्ष्मी	SSI SII IIS ISI S	२८०५
१३८	विमलगति	III III III III I	८१९२

चतुर्दशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद १६३८४

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१३९.	सिंहास्य	SSS SSS SSS SSS SS	१
१४०.	वसन्ततिलका	SSI SII ISI ISI SS	२९३३
१४१.	चक्रम्	SII III III III IS	८१९१
१४२	असम्बाधा	SSS SSI III IIS SS	२०१७
१४३	अपराजिता	III III SIS IIS IS	५८२४
१४४	प्रहरणकलिका	III III SII III IS	८१२८
१४५	वासन्ती	SSS SSI III SSS SS	४८१

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१४६	सोला	SSS IIS SSS SII S S	३०६७
१४७	नान्दीमुखी	III III SSI SSI S S	२३६८
१४८	धंवर्भी	SSS SII III ISS S S	१००९
१४९	इन्दुवदनम्	SII ISI IIS III S S	३८२३
१५०.	शरभी	SSS SII III SSI S S	
१५१	अहिधृति	III III SII ISI I [illegible]	७०९६
१५२	विमला	III ISI SII ISI I S	७०८८
१५३	मल्लिका	IIS ISI IIS ISI I S	
१५४	मणिगणम्	III III III III I I	१६३८४

पञ्चदशाक्षर छन्द प्रस्तारभेद ३२७६८

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१५५	लीलाखेल	SSS SSS SSS SSS SSS	१
१५६.	मालिनी	III III SSS ISS ISS	४६७२
१५७.	चामरम्	SIS ISI SIS ISI SIS	१०९२३
१५८	भ्रमरावलिका	IIS IIS IIS IIS IIS	१४०४४
१५९	मनोहंस	IIS ISI ISI SII SIS	११६२८
१६०	शरभम्	III III III III IIS	१६३८४
१६१	निशिपालकम्	SII ISI IIS III SI [illegible]	१२०१५
१६२	विपिनतिलकम	III IIS III SIS SIS	९६९६
१६३	चन्द्रलेखा	SSS SIS SSS ISS ISS	४६२५
१६४.	चित्रा	SSS SSS SSS ISS ISS	४६०९
१६५.	केसरम्	III ISI SII ISI SIS	११०८४
१६६	एला	IIS ISI III III ISS	८१७२
१६७.	प्रिया	III III SSI SII SIS	११५८४
१६८	उत्सव	SIS III SII SII SIS	११७०७
१६९.	उडुगणम्	III III III III III	३२७६८

षोडशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ६५५३६

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१७०	राम	SSS SSS SSS SSS SSS S	१
१७१	पञ्चचामरम्	ISI SIS ISI SIS ISI S	२१८४६
१७२	नीलम	SII SII SII SII SII S	२८०८७
१७३	चञ्चला	SIS ISI SIS ISI SIS I	४३६९१
१७४	मदनललिता	SSS SII III SSS III S	२९१९९
१७५	वाणिनी	III ISI SII ISI SIS S	१११८४

क्रमांक	छंद नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१७६.	प्रवरललितम्	ISS SSS III IIS SIS S	१०,१७८
१७७	गरुडरुतम्	III ISI SII ISI SSI S	१९,३७६
१७८	चकिता	SII IIS SSS SSI III S	३०,७५१
१७९	गजतुरगविलसितम्	SII SIS III III III S	३२,७२७
१८०	शैलशिखा	SII SIS III SII SII S	
१८१.	ललितम्	SII SIS III SIS III S	३०,१५१
१८२	सुकेशरम्	III IIS ISI IIS ISI S	
१८३	ललना	IIS III III ISI SII S	
१८४	गिरिवरधृति	III III III III III I	६५,५३६

सप्तदशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद १,३१,०७२

क्रमांक	छंद नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१८५	लीलाधृष्टम्	SSS SSS SSS SSS SSS SS	१
१८६	पृथ्वी	ISI IIS ISI IIS ISS IS	३८,७५०
१८७	मालावती	III IIS ISI IIS ISS IS	३८,७५२
१८८	शिखरिणी	ISS SSS III IIS SII IS	५९,३३०
१८९	हरिणी	III IIS SSS SIS IIS IS	४६,११२
१९०.	मन्दाक्रान्ता	SSS SII III SSI SSI SS	१८९२९
१९१	वंशपत्रपतितम	SII SIS III SII III IS	६४,९८३
१९२	नर्दटकम्	III ISI SII ISI ISI IS	५६,२४०
	कोकिलकम्	III ISI SII ISI ISI IS	५६,२४०
१९३	हारिणी	SSS SII III SSS ISS IS	३७,८७३
१९४	नाराकान्ता	SSS SII III SIS IIS IS	४६,५७७
१९५.	मतङ्गवाहिनी	SIS ISI SIS ISI SIS IS	
१९६	पद्मकम्	III IIS SSS SSI SSI SS	
१९७	वंशमुखहरम्	III III III III III II	१,३१,०७२

अष्टदशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद २,६२,१४४

क्रमांक	छंद नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१९८	लीलाचन्द्रः	SSS SSS SSS SSS SSS SSS	१
१९९	मञ्जीरा	SSS SSS SII SSS IIS SSS	१२,६७२
२००	चर्चरी	SIS IIS ISI ISI SII SIS	९३,०१९
२०१	क्रीडाचन्द्रः	ISS ISS ISS ISS ISS ISS	३७,४५०
२०२	कुसुमितलता	SSS SSI III ISS ISS ISS	३७,८५७
२०३	नन्दनम्	III ISI SII ISI SIS SIS	७६,७२०
२०४	नाराच	III III SIS SIS SIS SIS	७४,९४४
२०५.	चित्रलेखा	SSS SII III ISS ISS ISS	३७,८७३

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२०६	भ्रमरपदम्	SII SIS III III III IIS	१,३०,९७१
२०७	शार्दूलललितम्	SSS IIS ISI IIS SSI IIS	१,१६,५६६
२०८	सुललितम्	III III SSS SSI SII SIS	
२०९	उपवनकुसुमम्	III III III III III III	२,६२ ४४
	एकोनविंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ५,२४,२८८		
२१०	नागानन्द	SSS SSS SSS SSS SSS SSS S	१
२११	शार्दूलविक्रीडितम्	SSS IIS ISI IIS SSI SSI S	१,४९,३३७
२१२.	चन्द्रम्	III III III ISI III III I	५,२३,२६४
२१३	धवलम्	III III III III III III S	२,६२,१४४
२१४	शम्भु	IIS SSI ISS SII SSS SSS S	३,१७२
२१५	मेघविस्फूर्जिता	ISS SSS III IIS SIS SIS S	७५,७१४
२१६.	छाया	ISS SSS III IIS SSI SSI S	१ ४९,४४२
२१७	सुरसा	SSS SIS SII III ISS III S	२,३७,४५७
२१८	फुल्लदाम	SSS SSI III IIS SIS SIS S	८५,७४५
२१९	मृदुलकुसुमम्	III III III III III III I	५,२४,२८८
	विंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद १०,४८,५७६		
२२०	योगानन्द	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SS	१
२२१	गीतिका	IIS ISI ISI SII SIS IIS IS	३ ७२,०७६
२२२	गण्डका	SIS ISI SIS ISI SIS ISI SI	६ ९९,०५१
२२३	शोभा	ISS SSS III III SSI SSI SS	१ ५१,४९०
२२४.	सुवदना	SSS SIS SII III ISS SII IS	४,६६ ८३१
२२५	प्लवङ्गभङ्गमङ्गलम्	ISI SIS ISI SIS ISI SIS IS	
२२६	शशाङ्कचलितम्	SSI SII ISI SII ISI SII IS	
२२७	भद्रकम	SII SII SII SII SIS IIS IS	
२२८	अनवधिगुणगणम्	III III III III III III II	१०,४८,५७६
	एकविंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद २०,९७,१५२		
२२९	ब्रह्मानन्द	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS	१
२३०	स्रग्धरा	SSS SIS SII III ISS ISS ISS	३,०२ ९९३
२३१	मञ्जरी	SIS III SIS III SIS III SIS	७ ६५,६२७
२३२	नरेन्द्र	SII SIS III III ISI ISI ISI	४,५०,५१९
२३३	सरसी	III ISI SII ISI ISI ISI SIS	७,११ ६००
२३४	रुचिरा	III ISI SII ISI ISI ISI SIS	७,११,६००
२३५	निरुपमतिलकम्	III III III III III III III	२० ९७ १५२

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या

द्वाविंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ४१,९४,३०४

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२३६.	विद्यानन्द	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS S	१
२३७	हंसी	SSS SSS SSI III III III IIS [illegible]	१०,४८,३२१
२३८	मदिरा	SII SII SII SII SII SII SII S	१७,६७,५५६
२३९	मन्द्रकम्	SII SIS III SIS III SIS III S	१६,३१,२२३
२४०	शिखरम्	SII SIS III SIS III SIS III S	१६,३१,१२३
२४१	अच्युतम्	III III III III IIS ISI ISI S	
२४२.	मदालसम्	SSI SII ISS ISI IIS SIS III S	१६,१५,५०६
२४३.	तरवरवृत्तम्	III III III III III III III I	४१,९४,३०४

त्रयोविंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ८३,८८,६०८

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२४४.	दिव्यानन्दः	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SS	१
२४५.	सुन्दरिका	IIS IIS SII IIS SSI ISI ISI IS	३५,६०,०४४
	पद्मावतिका	IIS IIS SII IIS SSI ISI ISI IS	३५,६०,०४४
२४६	अद्रितनया	III ISI SII ISI SII ISI SII IS	३८,६१,४२४
२४७	मालती	SII SII SII SII SII SII SII SS	१७,६७ ५५६
२४८	मल्लिका	ISI ISI ISI ISI ISI ISI ISI IS	३५,६५ ११८
२४९	मत्ताक्रीडम	SSS SSS SSI III III III III IS	४१,९४,०४९
२५०.	कनकवलयम्	III III III III III III III II	८३,८८,६०८

चतुर्विंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद १,६७,७७,२१६

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२५१.	रामानन्द:	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS	१
२५२	दुर्मिलका	IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS	७१,६०,२१६
२५३	किरीटम्	SII SII SII SII SII SII SII SII	१,४३,८०,४७१
२५४	तन्वी	SII SSI III IIS SII SII III ISS	३६,५५ ३६७
२५५.	माधवी	ISI ISI ISI ISI ISI ISI ISI ISI	१,१६,८३,७२६
२५६	तरलनयनम्	III III III III III III III III	१,६७,७७,२१६

पञ्चविंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ३,३५,५४,४३२

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२५७	कामानन्द	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS S	१
२५८.	क्रौञ्चपदा	SII SSS IIS SII III III III III	३१,६१,७६ ३८१
२५९	मल्ली	IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS S	७१ ६०,२३६
२६०	मणिगुणम्	III III III III III III III III	३,३५,५४,४३२

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या

षड्विंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ६,७१,०८,८६४

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२६१.	गोविन्दानन्द	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SS	१
२६२.	भुजङ्गविजृम्भितम्	SSS SSS SSI III III III SIS IIS IS	२,३८,५४,८४९
२६३	अपवाह	SSS III III III III III III IIS SS	८३,८८,६०१
२६४.	मागधी	SII SII SII SII SII SII SII SII SS	१,४३,८०,४७१
२६५.	कमलदलम्	III III III III III III III III II	६,७१,०८,८६४

प्रकीर्णक–छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण
१.	पिपीडिका	SSS SSS SSI III III III III ISI SII SIS
२.	पिपीडिकाकरभः	SSS SSS SSI III III III III III III SIS IIS IS
३.	पिपीडिकापणव.	SSS SSS SSI III III III III III III III IIS ISI ISI S
४.	पिपीडिकामाला	SSS SSS SSI III III III III III III III III III ISI SII SIS
५.	द्वितीयत्रिभंगी	III III III III III III IIS IIS SII SSS IIS S
६	शालूरः	SSI III III III III III III III III IS

दण्डक–छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण
१.	चण्डवृष्टिप्रपात	III III SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS
२	प्रचितक	III III SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS
३	अर्ण	III III SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS
४.	सर्वतोभद्र	III III ISS ISS ISS ISS ISS ISS ISS
५	अशोककुसुममञ्जरी	SIS ISI SIS ISI SIS ISI SIS ISI SIS I
६	कुसुमस्तबक	IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS
७.	मत्तमातङ्ग	SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS
८.	अनङ्गशेखर	ISI SIS ISI SIS ISI SIS ISI SIS ISI S

अर्धसम–वृत्त

क्रमाङ्क छन्द-नाम	प्रथम और तृतीय चरण का लक्षण	द्वितीय और चतुर्थ चरण का लक्षण
१. पुष्पिताग्रा	III III SIS ISS	III ISI ISI SIS S
२. उपचित्रम्	IIS IIS IIS IS	SII SII SII SS
३. वेगवती	IIS IIS IIS S	SII SII SII SS
४. हरिणप्लुता	IIS IIS IIS IS	III SII SII SIS
५. अपरवक्त्रम्	III III SIS SS	III ISI ISI SIS
६. सुन्दरी	IIS IIS ISI S	IIS SII SIS IS
७. भद्रविराट्	SSI ISI SIS S	SSS IIS ISI SS
८. केतुमती	IIS ISI IIS S	SII SIS III SS
९. वाङ्मती	SIS ISI SIS ISI	ISI SIS ISI SIS S
१० पद्पदावली	ISI SIS ISI SIS	SIS ISI SIS ISI S

विषमवृत्त

छन्द-नाम		
१. उद्गता	[प्र.च.][*] IIS ISI IIS I	[द्वि च.][*] III IIS ISI S
	[तृ च.][*] SII III SII S	[च च.][*] IIS ISI IIS S
२ उद्गताभेदः	[प्र च.] IIS ISI IIS I	[द्वि च] III IIS ISI S
	[तृ च.] SII III ISI IS	[च.च] IIS ISI IIS S
३. सौरभम्	[प्र च.] IIS ISI IIS I	[द्वि च] III IIS ISI S
	[तृ च] SIS III SII S	[च.च.] IIS ISI IIS ISI S
४ ललितम्	[प्र च] IIS ISI IIS I	[द्वि च.] III IIS ISI S
	[तृ च] III III IIS IIS	[च च.] IIS ISI IIS ISI S
५ भाव	[प्र च] SSS SSS	[द्वि च.] SSS SSS
	[तृ च] SSS SSS	[च च] SII SII SII S
६ वक्त्रम्		[समचरणे] SSS, S ISS S
७. पथ्यावक्त्रम्		[समचरणे] ISI (५ ६ ७ [illegible] वर्ण)

---

[*][प्र च] प्रथम चरण का लक्षण। [द्वि.च.] द्वितीय चरण का लक्षण
[तृ च.] तृतीय चरण का लक्षण। [च च] चतुर्थ चरण का लक्षण

(घ.) विरुदावली छन्दों के लक्षण[1]

छन्द-नाम	वर्णसंख्या या मात्रासंख्या	लक्षण	विशेष
द्विगा कलिका	१६ मा०च०	४–चतुष्कल	चतुष्कल की मैत्री
रादिकलिका	२० मा०च०	४–पञ्चकल	१–२ और ३–४ पञ्चकलों की मैत्री
मादिकलिका	४८ मा०च०	मगण, षट्कल–७	
स्रादिकलिका	२४ मा०च०	त्रिकल–८, अर्थात् सगण ८,	अनुप्रासयुक्त
गलादिकलिका	२० मा०च०	४–पञ्चकल, प्रत्येक पञ्चकल के आदि में गुरु	
मिश्रा कलिका	२७ व०च०	गुरु-लघु-मिश्र	तिल-तंदुल के समान गुरु और लघु मिश्रित हों।
(१) मध्या कलिका		आदि और अन्त मे कलिका और मध्य मे गद्य	
(२) मध्या कलिका		आदि और अन्त में मैत्री-रहित गद्य और मध्य में कलिका।	
द्विभङ्गी कलिका	२८ व०च०	गुरु-लघु-क्रम से २४ वर्ण, अन्त मे ४ गुरु	६ भंग होते हैं इनमे भंग होने पर भी मैत्री होती है। द्वितीय और चतुर्थ मधुर एवं श्लिष्ट होते हैं।
विदग्धत्रिभङ्गी कलिका	२४ व०च०	त,न,त,न,त,न,भ,भ.	युग्मार्ण-भग और दोनों भगणो की मैत्री

---

[1]कलिका मे प्रत्येक के चार चरण होते हैं। चण्डवृत्तों मे प्रत्येक मे ६, ८, १०, १२, १४ तक कलिका विरुद होते हैं। विरुद तीन होते हैं। धीर, वीर, देव आदि सम्बोधन होते हैं। यहाँ केवल चण्डवृत्त छन्दो के लक्षण मात्र दिये गये हैं, कलिका विरुदादि के नहीं दिये गये हैं क्योंकि ये ऐच्छिक होते हैं।

संकेत—म = मगण, य = यगण, र = रगण, स = सगण, त = तगण, ज = जगण, भ = भगण, न = नगण, ग = गुरु, ल = लघु, षट्कल = ६ मात्रा, पञ्चकल = ५ मात्रा, चतुष्कल = ४ मात्रा, त्रिकल = ३ मात्रा, च = चतुष्पदी, व = वर्ण, मा = मात्रा

छन्द-नाम	वर्णसंख्या या मात्रासंख्या	लक्षण	विशेष
तुरगत्रिभंगी कलिका	२२ व०च०	त भ ल,त भ ल,त.भ ल ग	
पद्म ,, ,,	३२ मा०च०		देखें, प्रथम खंड के चतुर्थ प्रकरण मे पद्मावती, त्रिभङ्गी, दण्डकलादिछन्द
हरिणप्लुत ,,	३३व०च०	न य भ,न य भ,न य भ.भ.भ.	६ भग हों और दोनों भगणों की मैत्री हो।
नर्तक ,, ,,	३४व०च०	न.य.भ,न य भ,न य.भ,न.ज स	
भुजङ्ग ,, ,,	३०व०च०	म भ स ल,म भ स ल,म भ ल.ल,भ भ.	दूसरे और चौथे मे भग, क्वचित् चौथे मे भग न भी हो, दोनों भगणों की मैत्री हो।
ललितात्रिगता ,, ,,	३३व०च०	म म न,म न.म,म न न.भ भ	तृतीय वर्ण मे भग हो।
ललिता ,, ,, ,,	३०व०च०	त म.भ,त.न भ त म भ.भ.	द्वितीय वर्ण मे भंग हो।
वरतनु ,, ,, ,,	३६व०च०	न.य म ल,न य न ल,न य म ल. भ भ	६ भग होते हैं।
मुग्धा द्विपादिका युग्म-भंगा कलिका	२०व०च०	म त.ल म त ल,भ.भ.	युग्मभग
प्रगल्भा ,, ,, ,,	१८व०च०	म त ल,म त ल,ग.ग ग ग.	
मध्या(१),, ,, ,,	१८व०च०	म भ स म भ भ	
,, (२) ,, ,, ,,	१४व०च०	न स भ न ज ल.	
,, (३) ,, ,, ,,	११व०च०	न न स ल स	
,, (४) ,, ,, ,,	११व०च०	न ज न ल स.	
शिथिला,, ,, ,,	१८व०च०	म त स,म त स,स ल स त	
मधुरा ,, ,, ,,	२२व०च०	म भ ल ल,म भ स स म,भ	
तरुणी ,, ,, ,,	२०व०च०	भ भ ल ल,भ भ स ल,ग ग ग.ग.	
	प्रति चरण-वर्ण		
पुरुषोत्तम चण्डवृत्त	६	स भ.भ.	४, ८ वर्ण श्लिष्ट; ३, ६ वर्ण दीर्घ;
तिलक ,,	१५	न न स न.न	१०वां वर्ण मधुर;
अच्युत ,,	२४	म य न य.न य.न.य. शेष चरण मे—न.य न य.न य म ज.	छठा वर्ण श्लिष्टपर; ४ या ८ पर होते हैं।
वर्द्धित ,,	१३	भ.भ.ज ज ल.	२, ६, १२वां वर्ण श्लिष्ट

छन्द-नाम	प्रति चरण-वर्ण	लक्षण	विशेष
रण ,,	१२(१४)	ज.र ज र. अन्तिम चरण में–ज.भ स.ज भ स.	१, ३, ५, ७, ६, ११वां वर्ण श्लिष्ट; पद - संख्या ऐच्छिक होती है।
धीर ,,	१२	भ भ न न	१, २, ३, ४, वर्ण श्लिष्ट; पद-संख्या १२
शाक ,,	१०	भ भ.र ल	५वां वर्ण श्लिष्ट; ७, ६वां वर्ण दीर्घ; दूसरा वर्ण मधुर;
मातङ्गखेलित ,,	१०	र.र य.ल.	५, १०वां वर्ण श्लिष्ट या मधुर; ५वें वर्ण पर भंग और मैत्री; १, ३, ६, ८वां वर्ण दीर्घ; पद - संख्या ऐच्छिक;
उत्पल ,,	६(१२)	भ.भ मतान्तरे–भ भ.भ.भ.	२, ५वां वर्ण श्लिष्ट; पद-संख्या ऐच्छिक;
गुणरति ,,	७(१४)	स न ल मतान्तरे–स न स स न ल	३ रा वर्ण दीर्घ; पद-संख्या ऐच्छिक;
कल्पद्रुम ,,	६	त ज.य.	२, ३, ६, ६वां वर्ण श्लिष्ट; ६वां वर्ण श्लिष्टपर; पद-संख्या ऐच्छिक;
कन्दल ,,	६	भ.भ.	२ रा वर्ण मधुर, ५वां वर्ण श्लिष्ट;
अपराजित ,,	११	भ स.ज ग ल.	२ रा वर्ण मधुर; ६, ८, १०वां वर्ण दीर्घ;
नर्तन ,,	११	स.स र स ल.	४, ७वां वर्ण श्लिष्ट; ८वां वर्ण मधुर;
तरन्समस्त ,,	११	त्र म स स स.	३, ५ ६ वर्ण श्लिष्ट, संश्लिष्ट एवं मधुर,
वेष्टन ,,	१०	न.य स ल ल ल.	७वा वर्ण श्लिष्ट; ५, ६, वर्ण दीर्घ
अस्खलित ,,	१०	त र भ ल.	३, ५, ७, ८वां वर्ण संश्लिष्ट; प्रथम वर्ण दीर्घ;
पल्लवित ,,	१३	भ त न स ल ल ल.	२ रा वर्ण शिथिल या मधुर, ४, ५वा वर्ण दीर्घ;

छन्द-नाम	प्रति चरणवर्ण	लक्षण	विशेष
समग्रम् ,,	१०(१३)	ज र ज र. अन्तिम चरण मे–ज र ज र ल	३ रा वर्ण मधुर; ५वां वर्ण श्लिष्ट; पद-संख्या ऐच्छिक.
तुरग ,,	१०	भ न ज ल.	२, ६वां वर्ण मधुर, पद-संख्या ऐच्छिक;
पङ्केरुह ,,	६	न य	छठा वर्ण कवर्ग रचित छठा वर्ण मधुर और इसी वर्ण पर भग और मैत्री भी। इकारादि स्वरभेद होने पर इसी छन्द के भेद बनते हैं। पद-संख्या ऐच्छिक।
सितकञ्ज ,,	६	न य.	छठा वर्ण चवर्गीय, शेष पकेरुह के अनुसार।
पाण्डूत्पल ,,	६	न य	छठा वर्ण टवर्गीय, शेष पकेरुह के समान।
इन्दीवर ,,	६	न य	छठा वर्ण तवर्गीय, शेष पकेरुहवत्।
अरुणाम्भोरुह ,,	६	न य	छठा वर्ण पवर्गीय; शेष पकेरुहवत्।
फुल्लाम्बुज ,,	६	न य	छठे वर्ण का भग और मैत्री यवर्गीय सकार से होती है।
चम्पक ,,	६	भ म	२ रा वर्ण मधुर एव क्वचित श्लिष्ट, पद संख्या ऐच्छिक।
वञ्जुल ,,	७	न ज ल	५वां वर्ण मधुर, पद संख्या ऐच्छिक।
कुन्द ,,	६	भ.ज	२, ६ वर्ण मधुर एव क्वचित श्लिष्ट; पद संख्या ऐच्छिक
बकुलभासुर ,,	१६मा०	४ चतुष्कल, जगण रहित	शृङ्खलाबद्ध;
बकुलमङ्गल ,,	१२व०	भ भ.भ.भ.	तृतीय भगण शृङ्खलाबद्ध, पद-संख्या ऐच्छिक;
मञ्जरी कोरक	१२व०	भ.भ भ भ	प्रथम मञ्जरी पश्चात् कोरक, मञ्जरी का सदाप नहीं, आद्यन्त यमकाङ्कित शृङ्खला रहित; २० पद;

छन्द-नाम	प्रतिचरण वर्ण	लक्षण	विशेष
गुच्छक ,,	१६	न स ज म ज.ल.	सानुप्रास एवं यमकांकित; १६ पद,
कुसुम ,,	१२	न न न न	२० पद, पादान्तयमक;
दण्डकत्रिभङ्गी-कलिका	३३	म न. र-६.	पद-सख्या ऐच्छिक
सम्पूर्णविदग्ध-त्रिभंगी कलिका	२४	स न स न स.न. भ भ	८ पद; आशी पद्ययुक्त; द्वितीयाक्षर मे भग,
मिश्रकलिका		कलिका लक्षण–भ.न.ज ल.	६ कलिका, आद्यन्त में आशी पद्य, मध्य में कलिका विरुदसहित.

साधारण खण्डवृत्त सामान्यलक्षण—कलान्यास ऐच्छिक; वर्ण सख्या ३ से कम नहीं और १७ वर्ण से अधिक नहीं। जिस गण से प्रारम्भ हो वही गण अन्त तक रहना चाहिये। प्र, ह्न, प्र स्कु, स्मि, स्म, क्व इत्यादि सयुक्त वर्णो के सयोग होने पर भी इस प्रकरण मे पूर्व-पूर्व वर्ण का लघुत्व होता है। मात्रिक मे चतुष्कलद्वय होने पर जगण का प्रयोग निषिद्ध है। इसके अनेक भेद होते हैं।

साप्तविभक्तिकीकलिका (प्रथमा विभक्ति) भ. स; (द्वितीया०) न. य; (तृतीया०) न.न.स ल.; (चतुर्थी०) त त. ल., (पचमी०) य य; (षष्ठी०) त. त, (सप्तमी०) भ. स, (सम्बोधन) त न, सब विभक्तियो के चार-चार चरण होते हैं।

अक्षरमयी कलिका अ से क्ष पर्यन्त प्रत्येक अक्षर के दो चतुष्कल होते हैं। चतुष्कल मे SS, । । । ।, S । ।, । । S का यथेच्छ प्रयोग, जगण का प्रयोग निषिद्ध है।

सर्वलघुकलिका १५, १६ या १७ सर्व लघु — कलिका सहित

खण्डावली

छन्द-नाम	प्रतिचरण वर्ण	लक्षण	विशेष
तामरस खण्डावली	११	र स.स ल.ल	कलिका के आद्यन्त मे विरुद-रहित आशी पद्य
मञ्जरी खण्डावली	१६मा०	चार चतुष्कल जगण रहित	आद्यन्त मे आशी पद्य

पञ्चम परिशिष्ट

सन्दर्भ-ग्रन्थों में प्राप्त वर्णिक-वृत्त*

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
		चतुरक्षर-छन्द	
२.	वीडा	य ग	१०, ६; क्रीडा-१७; वृद्धि-१६
३.	समृद्धिः	र ग	१०; पुष्प-११; नन्द-१७; वृद्धि १६
४.	सुमतिः	स ग	१०, १६; भ्रमरी-११; दोला-१७; रामा-१७,
५.	सोमप्रिया	त ग	१०; धरा-१७; तारा-१६.
७	सुमुखी	भ ग	१०, १६; ललिता-११, धना-१७.
८	मृगवधू	न ग	७, १०, १५; सती-१७; मधु-१६; कुसुमिता- २२; तरणिजा-१७
९	मुग्धम्	म ल	१७; गोपाल-१७, वल्ली-१६.
१०	धारि	य ल	१७; धर्तृ-१७, सप-१६
१२	काम	स ल	१७; वीर-१७; पदली-१६
१३	सावुरि	त ल	१७; कृष्ण-१७; मधु-१६
१४.	ऋजु	ज ल	१७, जपा-१६.
१५	मनूजु	भ ल	१७; मिश्रि-१७; जतु-१६.
		पञ्चाक्षर-छन्द	
२	नाली	य ग ग	१७;
३	प्रीतिः	र ग ग	१०, १६, सूरिणी-१७.
४	घनपङ्क्ति	स ग ग	१०; प्रगुणं-१७, चतुरंशा-१७; गुरुतो-१६
६.	सती	ज ग ग	१०, १६, शिखा-११, वष्टी-१७
८	वलि	न ग ग	१७;

*जिन छन्दों का वृत्तमौक्तिक में समावेश नहीं हुआ है और जो अन्य सन्दर्भ ग्रन्थों में प्राप्त होते हैं वे अवशिष्ट छन्द प्रस्तार-क्रम से इस परिशिष्ट में दिए गए हैं। प्रारम्भ में प्रस्तारानुक्रम से उस छन्द की प्रस्तार-संख्या दी है, तत्पश्चात् छन्द का नाम और उसके लक्षण दिए हैं। तदनन्तर सन्दर्भ-ग्रन्थ का संकेत और छन्द का नाम-भेद एवं सन्दर्भ-ग्रन्थ का संकेतांक दिया है। सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची और संकेतांक पृष्ठ ४१४ के अनुसार है।

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
६.	सावित्री	म ल ग	१०; हासिका–१७
१०.	जया	य ल ग	६, १०; नरी–१७.
११.	विदग्धकः	र ल ग	१०; वागुरा–११; वैनस–१७; शामिनी–२२; धृति–१६
१३	नन्दा	स ल ग	६, १०, १६; कणिका–१७
१४	शिला	ज ल ग	१७.
१५.	रतिः	भ ल ग	१०; मण्डलम्–१७; शर्म–१६
१६.	अभिमुखी	न ल ग	१०; मृगचपला–११; कनकमुखी–११; धृति –१६; सुसू–१७
१७.	कुम्भारि	म ग ल	१७.
१८.	भ्रूः	य ग ल	१७.
१९.	ह्री	र ग ल	१७.
२०.	पालि	स ग ल	१७.
२१.	किञ्जल्कि	त ग ल	१७
२२.	धाद्धि	ज ग ल	१७
२३.	विद्	भ ग ल	१७
२४.	पांशु	न ग ल	१७
२५	मालीनम्	म ल ल	१७.
२६	वरीय	य ल ल	१७.
२७	कल्किः	र ल ल	१७
२८	जतु	स ल ल	१७.
२९	छिद्रम्	त ल ल	१७
३०.	क्षपम्	ज ल ल	१७; हरम–१७
३१	क्षुत्	भ ल ल	१७; विष्णु –१७.

षडक्षर-छन्द

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
	शिखण्डिनी	य म	१०, २०; पन्था–१७
३	मालिनी	र म	३, १०; करेणु–१७.
४	सूचीमुखी	स म	१०, २०, अभिख्या–१७.
५	वभ्रू	त म	१७.
६	कञ्जा	ज म	१७
७.	विक्रान्ता	भ म	१०, सिन्धुरया–१७
८.	गुणवती	न म	१७
९	सुनन्दा	म य	१०, तन्त्री–१७; तटी–१६
११.	पिकाली	र य	१७

प्रस्तार-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१२	विमला	स य	१०, कमनी-१७
१४.	भरजस्का	ज य	१७
१५.	कामलतिका	भ य	१०; ईति-१७; कामललिता-१६
१७.	तटी	म र	१०; प्रबोढा-१७
१८	कच्छपी	य र	१७.
२०	मृदुकीला	स र	१७.
२१	जला	त र	१०; स्याली-१७.
२२.	वल्लीमुखी	ज र	१७
२३.	लघुमालिनी	भ र	१०, शुनकम्-१७
२४	निरसिका	न र	१७, मणिरुचि-१६
२५.	मुकुलम	म स	१०, १६; वीथी-११, निस्का-१७
२६	मरागा	य स	१७
२७	कर्मदा	र स	१७.
२६	वसुमती	त स	१०, १७
३०	कुहो	ज स	१७
३१.	सौरभि	भ स	१७.
३२	सरि	न स	१७.
३३	साहूति	म त	१७
३४	विन्दु	य त	१७
३५	मन्त्रिका	र त	१७
३६.	तुष्टि	स त	१७
३८.	क्षमापालि	ज त	१७
३६.	राढि	भ त	१७
४०	क्षनिभृतम्	न त	१७
४१	मड कुरम्	म ज	१७.
४२	वृत्तहारि	य ज	१७
४३	भार्भवम	र ज	१७
४४.	मधुमारकम	स ज	१७.
४५	हाटकशालि	त ज	१७
४७.	पाकलि	भ ज	१७.
४८	पुटमर्दि	न ज	१७.
४६	कसरि	म भ	१७
५०	सोमश्रुति	य भ	१७.
५१	सोपधि	र भ	१७

प्रस्तार-संख्या	छन्दनाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
५२	गुरुमध्या	स भ	१०, शशद्युति –१७
५३.	इन्धा	त भ	१७
५४	सावदु	ज भ	१७
५५.	मन्दि	भ भ	१७
५६	अपमितम	न भ	१७.
५७.	प्रोया	म न	१७
५८	अर्त्ति	य न	१७
५९	कच्छपी	र न	१०, प्रतरि–१७.
६०	विसर्ति	स न	१७
६१	प्रतिकलि	त न	१७.
६२.	सुवामि	ज न	१७
६३	मनति	भ न	१७

सप्ताक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्दनाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
२.	प्रहाण	य म ग	१७.
३	संरवो	र म ग	१७
४	शम्बूक	स म ग	१७
५	निम्नाशया	त म ग	१७.
६.	सुमोहिता	ज म ग	१७.
७	मधीरा	भ म ग	१७
८	होला	न म ग	१७
९	इभभ्रान्ता	म य ग	१७
१०	अभीक	य य ग	१७
११.	अहिंसा	र य ग	१७
१२	रसधारि	स य ग	१७
१३	वेधा	त य ग	१७.
१४.	पद्मा	ज य ग	१७
१५	किणपा	भ य ग	१७
१६	कुमुदवती	न य ग	१०, सुरि–१७
१७	किर्मीरम	म र ग	१७
१८	वयस्य	य र ग	१७
१९.	हंसमाला	र र ग	६, १०, सूरिधाम–१७
२०	दीप्ता	स र ग	१०, हंसमाला–१७ १४.
२१	भीमार्जनम	त र ग	१७.

प्रस्तार सख्या	छद नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
२२.	सुभद्रा	ज र ग	१०, पुरोहिता-१७
२३	होडपदा	भ र ग	१७
२४	मनोज्ञा	न र ग	१०; खरकरा-१७
२६.	मुदिता	य स ग	१०, महनीया-१७
२७	उद्धता	र स ग	१०, ३, शरगीति-१७, उद्यता-२२
२८	करभित	स स ग	१७
२९	भ्रमरमाला	त स ग	१०, ३, १९, स्थूला-१७ वज्रक-२०.
३१	विधुवक्त्रा	भ स ग	१०, रुचिर-१७, मदलेखा-१९
३२	द्युति	न स ग	१७
३३	हिम्बीर	म त ग	१७
३४	ऊपिकम्	य त ग	१७
३५	मृष्टपादा	र त ग	१७
३६	मायाविनी	स त ग	१७
३७	राजराजी	त त ग	१७
३८	कुठारिका	ज त ग	१७
३९	कल्पमुखी	भ त ग	१७
४०	परभृतम	न त ग	१७
४१	महोन्मुखी	म ज ग	१७
४२	महोद्धता	य ज ग	१७
४४	विमला	स ज ग	१०, कठोद्गता-१७
४५	पूर्णा	त ज ग	१७
४६	वह्निवलि	ज ज ग	१७
४७	शारदी	भ ज ग	१०, उर्वरि-१७, धुनी-१९
४८	पुरटि	न ज ग	१७
४९	सरलम	म भ ग	१०, १९, वक्करिता-१७
५०	वेगवती	य भ ग	१७
५१	सौरकान्ता	र भ ग	१७
५२	अधिकारी	स भ ग	१७
५३	चूडामणि	त भ ग	१४, निर्वाधिका-१७
५४	मट्टोपिका	ज भ ग	१७
५५	मौरलिकम	भ भ ग	१७, कलिका-१० १९, सोप्पन-११ २२, भोगवती-११
५६	स्वनकरी	न भ ग	१७
५७	नवसरा	म न ग	१७

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५८.	चिररुचिः	य न ग	१७.
५९.	बहुलया	र न ग	१७.
६०	यमनकम्	स न ग	१७.
६१.	हीरम्	त न ग	१७; मधुकरिका-१०; वज्रम्-११.
६२.	स्विदा	ज न ग	१७;
६३	चित्रम्	भ न ग	१०, १६; उत्पा-१७
६५.	नीहारी	म म ल	१७
६६.	कंसारि	य म ल	१७.
६७.	लविणी	र म ल	१७.
६८.	गृहिणी	स म ल	१७.
६९.	वर्धिष्णु	त म ल	१७; शूर-१७.
७०.	श्रोणी	ज म ल	१७;
७१.	व्याहारी	भ म ल	१७.
७२.	किशलयं	न म ल	१७
७३.	देवलम्	म य ल	१७.
७४.	नर्हि	य य ल	१७.
७५.	मनासाधि	र य ल	१७.
७६.	मलालापि	स य ल	१७.
७७	गुञ्जा	त य ल	१७.
७८.	ऋचा	ज य ल	१७.
७९.	नन्दथु	भ य ल	१७.
८०.	मनु	न य ल	१७.
८१.	मन्मेथी	म र ल	१७.
८२.	मयूरी	य र ल	१७.
८३.	सामिका	र र ल	१७.
८४.	प्रोज्झिता	स र ल	१७.
८५.	वृन्दा	त र ल	१७.
८६.	प्रतर्दि	ज र ल	१७.
८७.	मीनपदी	भ र ल	१७.
८८.	मणिमुखी	न र ल	१७.
८९.	मौलिस्रक्	म स ल	१७.
९०.	परभानु	य स ल	१७.
९१.	मेघिका	र स ल	१७.
९२.	गोधि	स स ल	१७.

प्रस्तार-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
९३	सरलाग्नि	त स ल	१७
९४	विरोही	ज स ल	१७
९५	वरजापि	भ स ल	१७.
९७	सम्पाक	म स ल	१७.
९८	पद्धरि	य स ल	१७
९९.	पूर्णिका	र स ल	१७
१००	कान्नी	स स ल	१७
१०१	कामोद्धता	त स ल	१७
१०२.	सर्परि	ज स ल	१७
१०३	शान्तनु	भ स ल	१७; लीला-१७
१०४	मुरजिका	म स ल	१७
१०५	कालम्बी	म ज ल	१७
१०६	उपोहा	य ज ल	१७
१०७	कर्णिका	र ज ल	१७.
१०८	मुट्टरा	स ज ल	१७
१०९	दोधा	त ज ल	१७
११०	उपोदरि	ज ज ल	१७
१११	जासरि	भ ज ल	१७
११३.	भूरिमधु	म भ ल	१७
११४	सूरिवसु	य भ ल	१७
११५	हर्षिणी	र भ ल	१७,
११६	लोलतनु	स भ ल	१७
११७	क्रोशान्तिकम्	त भ ल	१७
११८	स्तरधि	ज भ ल	१७
११९	पौरसरि	भ भ ल	१७
१२०	वीरभट्ट	म भ ल	१७
१२१	प्रमति	भ न ल	१७
१२२	प्रहृति	य न ल	१७
१२३	वरराशि	र न ल	१७
१२४	घनघरि	स न ल	१७
१२५	मुद्राकि	त न ल	१७
१२६	कुरदि	ज न ल	१७
१२७	कोदि	भ न ल	१७

प्रस्तार-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
	अष्टाक्षर-छन्द		
२.	अनिर्भर	य म ग ग	१७
७	इन्द्रफला	भ म ग ग	१७, इन्द्रबला-१७.
८.	गोपावेदी	न म ग ग	१७.
१०	सुमधारी	य य ग ग	१७
११	मौलिमालिका	र य ग ग	१७
१२	युगधारि	स य ग ग	१७
१४	विराजिकरा	ज य ग ग	१७
१५	वात्या	भ य ग ग	१७
१६.	पाञ्चालाङ्घ्रि	न य ग ग	१७.
१८.	कुलाधारी	म र ग ग	१७; शुद्धगा-१७
१९	पद्मिनी	र र ग ग	२२
२०.	परिधारा	स र ग ग	१७
२१	विभा	त र ग ग	१०.
२२	यशस्करी	ज र ग ग	१७.
२४	कुररिका	न र ग ग	१७
२६	मनोला	य स ग ग	१७
२८	पञ्चशिखा	स स ग ग	१७, रमणीयशिखा-१७.
३०	भार्ङ्गी	ज स ग ग	१७
३२	गुणलयनी	न स ग ग	१०, रुद्राली-१७
३४	पाराग्तचारी	य त ग ग	१७.
३६	कौचमार	स त ग ग	१७
३७	कराली	त त ग ग	१७; केतुमाला-१९
३८	वारिशाला	ज त ग ग	१७, वितान-१७
४०	वृत्तमार	न त ग ग	१७
४३	सिंहलेखा	र ज ग ग	३, १०, १७, मालिनी-७
४४	दिगीश	स ज ग ग	१७
४५	सारावनदा	त ज ग ग	१७
४७	कृष्णगतिका	भ ज ग ग	१७
४८	चित्रविलसितम्	न ज ग ग	३
४९	प्रतिसीरा	म भ ग ग	१७
५२	अतिमोहा	स भ ग ग	१७, वितानम्-१०, १३; वितान के १३ और ११ के अनुसार 'त र ल ग.' एवं 'त य ल ल' लक्षण भी हैं।

प्रस्तार-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५४.	वतुरोहा	स भ ग ग	१७.
५६	धृतमुखी	न भ ग ग	१७.
५७	हंसरुतम्	म न ग ग	२, १०, १४, १७.
६१.	सन्ध्या	त न ग ग	१७.
७४.	विहावा	य य ल ग	१७.
७५.	अनुष्टुप्	र य ल ग	१०.
८१.	क्षमा	म र ल ग	१९.
८३	हेमरूपम्	र र ल ग	१८.
८४.	शान्तकप्लुतम्	स र ल ग	१७.
८५	नाराचिका	त र ल ग	१४, १७; नाराचम्-५, १०; नाराचक-६, १९
८८.	सुमालती	न र ल ग	१०, १९, उपसिनी-१७, कुलवती-१७
९२	मही	त स ल ग	१०; कलिला-१७; कलिता-१७
९३	श्यामा	त त ल ग	७
१००	सरघा	य त ल ग	१७
१०४	माण्डवकम्	भ त ल ग	१७
१०५	ह्राद्नी	य ज ल ग	१७
१०७	भद्रा	र ज ल ग	१७; उद्धरा-१७
१०९.	विद्या	त ज ल ग	१७; उपमा-१७; आनुष्टुभ्-१९.
११०	कराल	ज ज ल ग	१७
११२.	ललितगति	न ज ल ग	१०; प्रगति-१७.
११५	कुरबरी	र भ ल ग	१७
१२०	गजगति	न भ ल ग	१५, १७
१२१	शिथिलितिका	य न ल ग	१०.
१२५	ईहा	स भ ल ग	१०, ईला-१७.
१२७.	धरि	य भ ल ग	१७
१२८.	कुसुमम्	म भ ल ग	७; हरिवर्त-१७, हुमरं-१७.
१४०	मालाकि	स य न ल	१७
१४७	लक्ष्मीः	र र न ल	१७
१४८	कलोदेन्दु	स र न ल	१७
१५०	प्रमाणिका	ज र न ल	१७
१५२	मलयरा	स र न ल	१०
१६०	हरिण्	न न न ल	१७
१६५.	बिन्दु	स न न ल	१७

प्रस्तार-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
१८०	अनुतनर्म	स भ ग ल	१७; नुतनर्म-१७
१८१	अमरन्दि	त भ ग ल	१७
१८२.	कुलचारि	ज भ ग ल	१७
१९०	करञ्जि	ज न ग ल	१७
१९६	वृत्तम्	स म ल ल	१७
१९८	वाखोटकि	ज म ल ल	१७
१९९	पञ्जरि	भ म ल ल	१७
२००	अप्रीता	न म ल ल	१७; प्रीता-१७, अतिप्रीता-१७, अलिप्रीता-१७
२०१	मन्थरि	म य ल ल	१७.
२०२	वातुलि	य य ल ल	१७
२०४.	सफुल्लकम्	त य ल ल	रूपगोस्वामिकृत नन्दाहरणस्तोत्र
२१०.	भाषा	य र ल ल	१७, सभाषा-१७; सभासा-१७
२१६.	पाकलि	न र ल ल	१७
२२०.	अमना	स स ल ल	१७
२३०	आकतनु	ज त ल ल	१७
२३५	आखेटम्	र ज ल ल	१७
२४१.	अतिजनि	म भ ल ल	१७.
२४४	सुतमधु	स भ ल ल	१७
२४६.	मद	ज भ ल ल	१७
२५०	मयनम्	य न ल ल	१७
२५१	कुशकम्	र न ल ल	१७
२५२	निचयम्	स न ल ल	१७.
२५३.	सिन्धुक्	त न ल ल	१७
२५४.	क्षरम्	ज न ल ल	१७; क्षुर-१७
२५५	वेधि	भ न ल ल	१७; वेधि-१७

नवाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
२	मेघालोक	य म म	१७
७.	वक्त्रम्	भ म म	१०
१६.	मायासारी	न य म	१७
२५	खेलाढ्यम्	म स म	१७.
२८	तारम्	स स म	१०, उदरश्रि-१७, उदरस्रक्-१७, उदरास्रक्- ७

प्रस्तार-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२६.	वैसारु	त स म	१७; वैसारम्–१७
३०	निर्विन्ध्या	ज स म	१७, निर्वन्ध्या–१७.
३१	कर्मिष्ठा	भ स म	१७, किमिष्ठा–१७.
४६	धृतहाला	म भ म	१७
५२	कलहम्	स भ म	१७.
५७	श्यनपताका	भ न म	१७
६१	मकरलता	त म म	१०; रम्भा–१७; ६ के अनुसार–'म न य' लक्षण है
७४	विशल्यम्	य य य	१७; बृहत्य–१६
६७	अर्थक्षामा	म त य	१७, सुन्दरलेखा–१६
१००	सम्बुद्धि	स त य	१७.
१०३	डम्बरधारी	भ त य	१७
११२	शशिलेखा	न ज य	१०; शरलीढा–१७.
११७	रुचिरा	त भ य	१०
१२१.	कालीकम	भ न य	१७
१२४	सुगन्धि	स न य	१७
१२५.	रामा	त न य	१७.
१५२	वृहतिका	भ र र	५, १०.
१६४	निभालिता	स त र	१७
१६६	चारुहासिनी	ज त र	१६
१७१	कामिनी	र ज र	१०, तरंगवती–११, २०.
१७३	रथोन्मुखी	त ज र	१७
१७४	अवनिजा	ज ज र	१७.
१७५	प्रश्नह लिका	भ ज र	१७
१७६	हलोदगता	न ज र	१७
१८०	मधुमल्ली	स भ र	१७
१८२	सहेलिका	ज भ र	१७
१८३	मदनोद्धुरा	भ भ र	१७; उत्सुकम्–१०, १६
१८४	करदाया	न भ र	१७
१८७	भद्रिका	र न र	१०, १४, १७, १६.
१६२.	उपस्थुतम्	न न र	१०, १६
२१५.	नियधम्	भ र स	१७.

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२१७.	कनकम्	म स स	१०; गाथा–१६.
२२०.	सौम्या	स स स	१०; अर्धकला–१७.
२२३.	रञ्जकम्	भ स स	१७.
२३६.	अक्षि	स ज स	१०, १६.
२३६.	उदयम्	भ ज स	१०; विद्युत्–१६.
२४४.	अनघोरा	स भ स	१७.
२४७.	प्रियतिलका	भ भ स	१७.
२५१.	हुलमुखी	र न स	२, ५, ६, १०, १३, १७, १८, १६,
२५३.	आकेकरम्	त न स	१७.
२५५.	धौनिकम्	भ न स	१७.
२६३.	वल्गा	त त स	१७.
३००.	कीटमाला	त ज त	१७.
३२०.	मसृणकम्	न न त	१७.
३३६.	लीला	न य ज	१७.
३५६.	वारिधियानम्	भ त ज	१७.
३६६.	कुहू	भ ज ज	१७.
३८३.	कठिनास्थि	भ न ज	१७; अहीरी–१७.
४००.	विकचवती	न य भ	१७.
४०३.	चन्द्ररथः	भ स भ	१७.
४३६.	दधि	भ भ भ	१७; उदधि–१७.
४६४.	स्फुटघटिता	म य न	१७.

दशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२.	शैफाली	य म म ग	१७.
१०.	धूम्राली	य य म ग	१७.
२०.	मीरोहा	स र म ग	१७.
३०.	चोरान्ता	ज स म ग	१७.
४०.	निर्मेघा	न त म ग	१७.
४६.	मध्याधारः	म भ म ग	१७.
५०.	वशारोपी	य भ म ग	१७.
५५.	बन्धूकः	भ भ म ग	१६.
६१.	कूलम्	स न म ग	१७.
६३.	बन्धूकम्	भ न म ग	१०.
६६.	बोधातुरा	म म य ग	१७; सक्रुद्बोधा–१७.

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३०३.	खेटकम्	भ ज त ग	१७.
३०६.	बर्हातुरा	त भ त ग	१७.
३१७.	नीराञ्जलि	त न त ग	१७.
३२७.	दीपकमाला	भ म ज ग	१५.
३३१.	पंक्तिका	र य ज ग	५, १०; कर्णपालिका-१७; मौक्तिकम्-१९.
३४२.	सराविका	ज र ज ग	१७.
३४५.	शुद्धविराट्	म स ज ग	२, ५, ६, १०, १७, १८, १९, २०, २२; विराट्-१७.
३४७.	अक्षरावली	र स ज ग	१७.
३४८.	सहजा	स स ज ग	१७.
३४९.	महिला	त स ज ग	१७.
३५१.	कुप्यम्	भ स ज ग	१७.
३५२.	अनुषयिता	न स ज ग	१७.
३६३.	वर्मिता	र ज ज ग	१७.
३६५.	उपस्थिता	त ज ज ग	२, ५, १०, १३, १७, १८, २०, २२.
३६६.	उषिता	ज ज ज ग	१०; जरा-१७.
३७५.	भिन्नपदम्	भ भ ज ग	१७.
३७६.	खण्डिताभेदिनी	न भ ज ग	१७.
३७७.	पणवः	म न ज ग	१३, १७
३८४.	चितिभृतम्	न न ज ग	१७.
४००.	फलिनी	न य भ ग	१७.
४१२.	सुरयानवती	स स भ ग	१७.
४१५.	विरलम्	भ स भ ग	१७; कटिका-१७.
४२४.	छलितकम्	न त भ ग	१७.
४२८.	प्रवादपदा	स ज भ ग	१७.
४३३.	हंसक्रीडा	म भ भ ग	१९.
४३६.	वारवती	स भ भ ग	१७.
४३७.	परिचारवती	त भ भ ग	१७.
४३८.	काण्डमुखी	ज भ भ ग	१७.
४४०	शरत्	न भ भ ग	१७.
४४७.	गहना	भ न भ ग	१७.
४४८.	फलधरम्	न न भ ग	१७.

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
३६	लक्षणलीला	भ त म ग ग	१७
४३	कूलचारिणी	र ज म ग ग	१७; कूलिका–१७
४८	विलुलितमञ्जरी	न ज म ग ग	१७
५७	भूरिघटकम्	भ न म ग ग	१७.
६४.	कलितकमलमाला	न न म ग ग	१७
७५	वल्लवीविलास	र य य ग ग	१७
८०	विकसितपद्मावली	न य य ग ग	१७
८६	प्रमोधमालिका	ज र य ग ग	१७
९२	ललितागमनम	स स य ग ग	१७.
१००	ससुतशोभासार	स त य ग ग	१७.
१०८	ललितालयलम्	स ज य ग ग	१७
११२	वार्ताहारी	न ज य ग ग	१७.
१२२	कडारम्	य भ य ग ग	१७
१२४.	उदितदिनेश	स न य ग ग	१७.
१३२	जालपाद	स भ र ग ग	१७.
१४७	वारवेहा	र र र ग ग	१७; वारवेहा–१७
१८४	रोचकम	भ भ र ग ग	१०
१८७	सुधाधारा	र न र ग ग	१७
१६२.	कुमुदवनजनिता	भ न र ग ग	१४.
१६६	कन्दविनोद	भ भ स ग ग	१७
२१७	विलम्बितमध्या	म स स ग ग	१७
२२०	विष्टम्भ	स स स ग ग	१७
२२३	कोशितकुशला	भ स स ग ग	१७
२४४	उपहितचण्डी	स भ स ग ग	१७
२४७	श्रितकमला	भ भ स ग ग	१७
२५६	युक्ता	न न स ग ग	२, १०, १३, १८, १६, २०, रुप-पद–१७; वृत्ता–१७; सुकृति–१७
२८६	उपस्थितम	ज स त ग ग	६, १०, १३, १७, १८; शिखण्डित–१५ टी०[*]
२६३	प्राकारबन्ध	त त त ग ग	१७; लयग्राहि–१०, १६, विधंकमाला–१५ टी०
३००	विहारिणी	स ज त ग ग	१७, भासिनी–१३

[*]१५ टी०=छन्दोमञ्जरी 'प्रभा' टीका, हरिदास कृत।

प्रस्तार-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
७०१.	नीला	त न र ल ग	१७
७२०	सौरभवर्द्धिनी	न य स ल ग	१७.
७२८	भुजगहारिणी	न र स ल ग	१७
७३१	अच्युतम	र स स ल ग	१७, १६
७३२	विदुषी	स स स ल ग	१०, उपचित्रम्–१७, १४; सुचित्र–१७; नरेश –१७.
७३६	सम्मदमालिका	म स स ल ग	१७.
७४२	कनककामिनी	ज त स ल ग	१७.
७४७.	द्रुता	र ज स ल ग	१५ टी०, उपवारिका–१७
७४८	दारिका	स ज स ल ग	१७.
७४९	मालविका	त ज स ल ग	१७.
७५०.	नाभसम्	ज ज स ल ग	१७
७५१	सौभगकला	भ ज स ल ग	१७
७५२.	बोधम	न ज स ल ग	१७
७५३	प्राशापाद	म भ स ल ग	१७.
८००.	भुजलता	म स त ल ग	१७
८२०.	हरिकान्ता	स भ त ल ग	१७
८२३.	कलस्वनवंश	भ भ त ल ग	१७.
८३२.	मदनया	न न त ल ग	१७.
८७८	लटका	ज ज ज ल ग	१७.
८७९.	शल्कशकलम्	भ ज ज ल ग	१७.
८८५	उत्थापनी	त भ ज ल ग	१०, जिह्माशया–१७
८८६.	कुशलकलावलिका	म म ज ल ग	१७
८९५	अर्थशिखा	भ न ज ल ग	१७
९२८	निरवधिगति	न स भ ल ग	१७
९६०	दामघटिता	न न भ ल ग	१७
९६४.	विमला	स म न ल ग	१०
९७६	कमलदलाक्षरी	न य न ल ग	१०, रुचिरमुखी–११, समित–१७
९८५.	सामपदा	भ स न ल ग	१७.
१०२१	मुखचपला	त न न ल ग	१०
११७१.	गम्भारि	र र र ग ल	१७
१२१३	कामुकलेखा	भ म स ग ल	१७
१३१७.	सधयधो	त त त ग ल	१७

प्रस्तार-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
१३७२.	पिचुलम्	स स ज य ल	१७.
१४००.	कालवर्म	न भ ज ग स	१७
१५११	सान्द्रपदम्	भ त न ग ल	१७; १५ टी०
१७७७.	दीपापीडम्	म भ स स स	१७
२०००.	केलिचरम्	न य भ स स	१७.

द्वादशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
३१	भापितभरणम्	भ स म म	१७.
३२	विषमध्याली	न स म म	१७
६१	शम्पा	स न म म	१७
६४	मिथुनमाली	न न म म	१७
९१	किञ्जुरास्तरणम्	र स य म	१७.
९२	रसलीला	स स य म	१७.
९३.	विशालाम्भोमाली	त स य म	१७; अम्भाआसो-१७
९४.	वीणादण्डम्	ज स य म	१७
९७.	मतालो	भ त य म	१७.
१२८	यसनविशाला	न न य म	१७
१९३	लीलारत्नम्	म भ स म	१७
२५१.	विपरीविलसितम्	त न स म	१७
२५६.	मुद्रान्तम्	न न स म	१७
३४८.	साक्षी	स स ज म	१७
३६४.	स्वरर्षिणी	स ज ज म	१७.
४४८	धवलश्री	न न भ म	१७
४७६.	सुम्बाक्षी	स स न म	१७; सुग्पाक्षी-१७
५०५.	मलयसुरभि	म न न म	१७
५२५.	शाङ्गिनी	स य म य	२०
५७६.	पुट	न न म य	२, ३, ४, ६, १०, ११, १७, १८, १९, २२, पुटा-२०
५७८.	धारिदेवी	य म य य	१७.
६०४.	समयशङ्गिता	स स य य	१७
६०८.	मिहिरा	न स य य	१७
६१४	कलसकलीविरुद्ध	ज स य य	१७.
६१२.	मयुपारा	ज र र य	१७; अलपारा-१७.
६८८	वर्षोजिता	न भ र य	१७, १९; अचलमर्यादिका-१७.

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ- सङ्केताङ्क
६८६.	पुण्डरीकम्	म भ र य	१७.
६६२.	बधिरा	स भ र य	१७
६६५.	वलभी	भ भ र य	१७.
७१६	केकीरवम्	स य स य	१०; महेन्द्रवज्रा-११; शिविका-१६.
७३३	कोल	म स स य	१०.
७३७	लीढालकं.	म त स य	१७.
७४१	वनिताविलोक.	त त स य	१७.
७४२.	कुमुदिनीविकाश	ज त स य	१७.
७५३.	वसन्तहासः	म भ स य	१७.
७५७	श्रुतिः	त भ स य	१६.
७५८.	स्मृतिः	ज भ स य	१६.
७८३.	सितमणिमाला	भ य त य	१७; श्वेतमणिमाला-१७.
७८४.	विद्रुमवोला	न य त य	१७.
८१७.	सुखशैलम्	म भ त य	१७
८२०.	करमाला	स भ त य	१७.
८३२.	विजयपरिचया	न न त य	१७.
८६५	कासारकान्ता	म त ज य	१७.
८७७.	माया	त ज ज य	१७.
८७८.	परिलेखः	ज ज ज य	१७, धारी-१७.
८७९	वरश्री	भ ज ज य	१७.
८८१	कुम्भोध्नी	म भ ज य	१७.
८८४.	शारमेया	स भ ज य	१७.
८८५.	मौदान्तिकम्	त भ ज य	१७.
८८८.	कलहंसा	न भ ज य	१०, १६; द्रुतपदम्-१७; द्रुतपदा-४, ११, १६; मुक्तरम्-११.
८९१.	अर्दितपादम्	र न ज य	१७.
८९२	परितोषा	स न ज य	१७
८९३.	छलितकपदम्	त न ज य	१७.
८९४.	उपधानम्	ज न ज य	१७.
८९५.	पथिकान्ता	भ न ज य	१७.
९७१.	कुमुदिनी	र य न य	१०; कुमुदविभा-३; तथा ३ के अनुसार 'न य र य' लक्षण भी हैं।
९९१.	अर्पितमदना	भ स न य	१७.

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१०१६.	द्रुतपदम्	न भ न य	१४.
१०२१.	विरतिमहती	स न न य	१७.
१०८०.	ततम्	न न म र	२, १०, १८; ललितम्–१७, १४; गौरी–१७.
११४२.	गलितमाला	ज भ य र	१७.
११६२.	सरोजावली	य य र र	१७.
११७६.	मेघावली	न र र र	१०; वसन्तः–११.
११९९.	विप्लुतशिखा	भ ज र र	१७.
१२००.	विशिखलता	न ज र र	१७
१२३६.	सुतलम्	स र स र	१७
१३६४.	अर्तविकासवासक.	स र ज र	१७
१३७१.	परिपुङ्खिता	र स ज र	१७.
१३७६.	प्रसृमरमरालिका	न स ज र	१७.
१३९०.	विधारिता	ज ज ज र	१७
१३९१.	पिनालिका	भ ज ज र	१७; पिपासिनी–१७.
१४०४.	विरसा	स न ज र	१७; वीरसा–१७.
१४०७.	अविरलरतिका	भ न ज र	१७.
१४६०	राधिका	स भ भ र	१७.
१४७२.	उज्ज्वला	न न भ र	१०, ११, १७; चपलनेत्रा–११; चलनेत्रिका १८
१५१५	विपुलपालिका	र ज न र	१७
१५२४.	उपलेखा	स भ न र	१७
१५२६.	भसलविनोदिता	ज भ न र	१७.
१५२७.	विरतप्रभा	भ भ न र	१७.
१५३१.	मुकुलितकलिकावलि	र न न र	१७.
१६३६	प्रतिवाधिता	स य र स	१७
१६६१.	भुजङ्गजुषी	र स र स	१७.
१६६५.	धविलतपतिका	भ भ र स	१७.
१७०३.	ललना	भ त न स	१४.
१७२८.	दुती	न न न स	१०.
१७३५.	ललना	भ म स स	१७; १५ टी०
१७१८	कुरङ्गाभास	य य स स	१७.
१७७४.	विकसनम्	ज ज स स	१७.
१७७५	मौक्तिकशिखा	भ ज स स	१७.

प्रस्तार-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
१७८३.	वनिताभरणम्	भ म स स	१७
१८२५	सुभद्रावतरणि	भ त स स	१७.
१८८१	विरलोद्धता	भ स ज स	१७
१८८२	सुविहिता	य स ज स	१७
१८८४	उत्कर्षिता	स स ज स	१७
१८८५.	मुकुलमालिका	त स ज स	१७, उपवनमालिका-१७
१९७२	नगमहिता	स भ भ स	१७; क्रमुकवती-१७
१९७५	सम्मदवदना	भ भ भ स	१७.
१९८२.	कुमारगति	ज न भ स	१७
२०१९	उदयनमुखी	म स न स	१७
२०२०	रसिकपरिचिता	स स न स	१७
२०२९	व्यायोगवती	त ज न स	१७
२०३०	वियोगवती	ज ज न स	१७
२०३१	सामवती	भ ज न स	१७.
२०४४	कर्वालिता	स न न स	१७
२०४५	रूपावलि	त न न स	१७.
२०४६	अनीचकम	ज न न स	१७
२०४७	भासितसरणि	भ न न स	१७.
२०४८.	कुलकुतिका	न न न स	१७, कलिका-१७
२३६८	विकलमकुलवल्ली	म न त त	१७
२४०६.	निमग्नकीला	ज त ज त	१७
३२६५	वासरमणिका	भ स स भ	१७
३५०८	अरिला	स भ भ भ	१७

त्रयोदशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
२२५	उल्काभास	म स स म ग	१७
२४१	लीलालोल	म भ स म ग	१७
३७५	कलाधाम	म भ ज म ग	१७
४३९	वासविलासवती	भ भ भ म ग	१७
४७२	विपन्नकदनम	न र न म ग	१७, विपन्नकलन-१७, विपन्नकवलम-१७
७८४	विभा	न य त य ग	१७
९७५	रसधारा	न य न य ग	१७
१००९.	प्रज्ञामूलम	म भ न य ग	१७, भद्रा-२२

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
	क्षमा	न न म र ग	१०.
१,१५४.	चञ्चरीकावल	य म र र ग	१७, १४; चन्द्रणी–१०; चन्द्रिका–१६.
१,१६२.	दर्पमाला	य य र र ग	१७; दर्भमाला–१७.
१,१६५	भाजनशीला	त य र र ग	१७.
१,१७१.	अद्धरान्ता	र र र र ग	१७.
१,२०६	आनता	म भ र र ग	१७.
१,२१६.	प्रमोदः	न भ र र ग	१७; चन्द्रिका–१०.
	कोडुम्भ	म त स र ग	१०.
१,३६८	सुकर्णपूरम्	न र ज र ग	१७
१,३७२	जगत्समानिका	स स ज र ग	१७.
१,३६०.	अतिरहः	ज ज ज र ग	१७
१,४६१	माणविकाविकाश	त भ भ र ग	१७.
१,४६६	कीरलेखा	म र न र ग	१७.
१,६३६	आननमूलम्	भ त य स ग	१७.
१,७५३	लोध्रशिखा	म स स स ग	१७
	उपस्थितम्	ज स त स ग	१३.
	गौरी	न न त स ग	१०; २ के अनुसार 'न न न स ग' लक्षण है।
१,८६६	हासभलोला	य य ज स ग	१७
१,८८१	पङ्कजधारिणी	म स ज स ग	१७.
१ ८८४	कुबेरकटिका	स स ज स ग	१७.
१ ८८६	हविवर्णा	ज स ज स ग	१७, साला–१७
१,८८७	मयूखसरणि	भ स ज स ग	१७
१,६८४.	विधुरवितानम्	न न भ स ग	१७.
	भवललिता	न ज न स ग	१०, १६.
२,३४१	पारावत.	त त त त ग	१७
२,३४२.	प्रवाहिका	ज त त त ग	१७.
२,३४३.	स्विन्नशरीरम्	भ त त त ग	१७.
२,३४४.	उर्वशी	न त त त ग	१०, परिवृढम्–१७, कौमुदी–१६
२,३५१.	वामवदना	भ ज त त ग	१७.
२,३५२.	किरात.	न ज त त ग	१७
	विद्युत्	न न त त ग	१४, कुटिलपति–१४
२,३६६	भरतसभवम्	म स ज त ग	१७, भमसपवम्–१७.
२,४००.	कटिनी	म स ज त ग	१७.

प्रस्तार-संख्या	छंद नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
२,४०५	वृद्धवामा	त त ज त ग	१७
२,४२१	ममस्फुरम	त भ ज त ग	१७
२,७०६	पथ्यवती	त र र ज ग	१७, मिस्तुया-१७,
२,७१०	अलण्डमण्डनम	ज र र ज ग	१७
२,७३१	कलार्पतिप्रभा	र ज र ज ग	१७
२,७५२	अशोकपुष्पकम	न न र ज ग	१७, अशोकम-१७
२,७६२	करपल्लवोद्गता	य य स ज ग	१७
२,७६३	सार्द्धपदा	र य स ज ग	१७
२,७६४	सुदन्तम	स य स ज ग	१०, अम्बुदावली-१७ मणिकुण्डलम-१६
२,७६०	मञ्जुभाषिणी	ज त स ज ग	१० मजुहासिनी-१४
२,७६५	मञ्जुमालती	र ज स ज ग	१७, मजुभाषिणी-१६
२,८०८	विरोधिनी	न भ स ज ग	१७
२,८१६	नलिनम	भ न स ज ग	१६
२,६०७	चन्द्रहासकरा	र स ज ज ग	१७
२,६०८	द्रुतलम्बिनी	स स ज ज ग	१७
२,६०६	कनककेतकी	त स ज ज ग	१७
२,६१०	गद्यवारिता	ज स ज ज ग	१७
२,६११	अमितनगानिका	भ स ज ज ग	१७
२,६१८	आपणिका	ज त ज ज ग	१७
२,६२६	गुणसारिका	ज ज ज ज ग	१७ गणसारिका-१७
२,६३३	प्रमोदतिलका	त भ ज ज ग	१७, अभ्रकम-१०
२,६३६	सारसनावलि	न भ ज ज ग	१७
२,६४३	उपचितरतिका	भ न ज ज ग	१७
२,६८२	उदात्तहास	ज त भ ज ग	१७
३,०४६	कलनायिका	ज त न ज ग	१७
३,२७७	अभ्रभ्रमशीला	त य स भ ग	१७
३,३६०	विदला	न स त भ ग	१७
३,४२३	प्रमातलिका	भ स ज भ ग	१७
३,५११	कमठ	भ भ भ भ ग	१७, अङ्गरुचि-१६
३,५४३	लवलीलता	भ र न भ ग	१७
३,७३६	अनिलोद्धतमुखी	न र र न ग	१७
३,७७१	प्रबोधफलिता	र न र न ग	१७
३,७८८	कोमलकल्पकलिका	स य स न ग	१७

प्रस्तार संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३,८३५	परगति	र न स न ग	१७
३ ८९२	अभिरामा	स भ त न ग	१७
३ ९६४	उपसरसी	स न ज भ ग	१७
४,०४८	मदनजवनिका	न य न भ ग	१७
४ ०६०	परिवंगिता	स स न न ग	१७, परिवंगिता-१७
४,०६३	प्रयंकुसुमिता	भ स न न ग	१७
४,०८४	विनताक्षी	स भ न न ग	१७, वनिताक्षी-१७
४ ०८५	नरावलि	त भ न भ ग	१७, निरावलि-१७
४ ०८६	प्रभीरुका	ज भ न न ग	१७
४,०८७	कनकिता	भ भ न न ग	१७
४ ०९६	त्वरितपति	न न न भ ग	१०, हरवनिता-१७, उपमिता-१७
४ ४६०	सुखकारिका	स ज ज भ ल	१७
५,८११	अट्टहासिनी	त भ र स ल	१७
	अङ्गरुचि	भ भ भ भ ल	१०
७ ८०७	पङ्क्तावलि	भ भ य न ल	१७
८,०००	धनानि	न न त न ल	१७

चतुर्दशाक्षर छन्द

प्रस्तार संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२०५	वनोर्मिला	त य स भ ग ग	१७
९९१	कालध्वानम	भ भ न य ग ग	१७, कालध्वान्तम्-१७
१ ०२१	पारावार	स न न य ग ग	१७
१,२९३	प्रपन्नपानीयम	त य त र ग ग	१७
१,२९६	धनिवगुर्बिन्दु	भ य त र ग ग	१७, गुर्बिन्दु-१७, पूर्वेन्दु-१७
१ ५३७	धीरध्वानम	भ भ भ स ग ग	१७
१ ७४४	ललितपताका	भ य स स ग ग	१७
२,०२२	सम्बोधा	भ स ज स ग ग	१७
२ ०९५	विन्ध्यारूढम्	भ र भ त ग ग	१७ वन्ध्यारूढम-१७
२ १२१	लक्ष्मी	भ र त त ग ग	५, १०, चन्द्रशाला-१६ बिम्बास्यम-१७
२,१२२	कुन्तवेष्टा	य र त त ग ग	१७
२ ३२३	अभ्रलक्ष्मी	र र त त ग ग	१७
२ ११२	शरभासरणि	स स त त ग ग	१७
२ ३१५	पुष्पनरटिका	भ स त त ग ग	१६, लक्ष्मी-१६
२१३७	नियतपारावार	भ त त त ग ग	१७

प्रस्तार संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
२,३३६.	कल्पकान्ता	र त त त ग ग	१७
२,३४४	परीवाह	न त त त ग ग	१७
	शरभललितम	न भ न त ग ग	१०, शरभा-११
२,६८७	वाटिकाविकाश	भ न य स ग ग	१७, वाटिकाविलास-१७, वाटिका-
२,७३१	प्रकशेया	र ज र ज ग ग	१७
२,७४०	मदावदाता	स भ र ज ग ग	१७
२,८०४	वशमूलम	स भ स ज ग ग	१७, सुनन्दा-१६
२,८०५	वेलाञ्चलम	त भ स ज ग ग	१७, वेलाञ्चलम-१७ वेलान्तरम १७
२,८०६	कुसुम्भिनी	ज भ स ज ग ग	१७
२,८०८	विलम्बनीया	न भ स ज ग ग	१७
२,८१६	अनल्पदामा	भ म स ज ग ग	१७
	नवी	म न त ज ग ग	१४
	कुमारी	न ज भ ज ग ग	१४
	कृतमालम	स ज य ज ग ग	१७
३,२८७	शारदचन्द्र	त य स भ ग ग	१७
३,३१३	परिणाही	म भ स भ ग ग	१७
३,४६६	रतिरेखा	त य भ भ ग ग	१७
३,४८४	मन्मथ	स स भ भ ग ग	१७
३,५११	जाह्नवी	भ भ भ भ ग ग	१७
३,५१५	वलना	र न भ भ ग ग	१०, लता-११, अमलता-१६
३,८६२	प्रतिभादर्शनम	स भ त न ग ग	१७
	राजरमणीय	ज स र न ग ग	१०, २०, रूपगोस्वामिकृत वस्तधारणाविस्तोत्र मे 'प्रफुल्ल कुसुमाली' है।
	वरसुन्दरी	भ ज स न ग ग	१४
	सुपवित्रम	त र न न ग ग	१४
४,००६	उपचित्रम	न न न न न ग	१० १६, अलिपदम-१७
	ज्योत्स्ना	म र म य स ग	५, १०, ज्योत्स्निका-५
४,६७२	करिमकरभुजा	न न म य ल ग	१०, कामला-१८
४,६८२	प्रपात	य य य य ल ग	१७
४,७०४	जलदरसिता	न स य य स ग	१७
४,८४४	पम्पा	स ज स य ल ग	१७, प्रथिता-१६
५,२६७	कल्पमीलिता	र र र र ल ग	१७
५,४१६	सुधाधरा	र ज त र ल ग	१७

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
५,४५६	कलाधर	र र ज र ल ग	१७
५,४६२	कुडङ्गिका	ज र ज र ल ग	१७
	सुकेसरम्	न र न र ल ग	१०, १४.
	सुदर्शना	स ज न र ल ग	१६.
५,६६२	विलासिनी	न भ भ र ल ग	१७
	सिंह	न भ र स ल ग	१०
	जया	म र र स ल ग	५, १०
५,८१३	अलकालिका	स भ र स ल ग	१७, अलिकालका–१७
५,८१५.	वर्द्धक	भ भ र स ल ग	१०, १६
५,८१६	गगनोदगता	र म र स ल ग	१७
५,८५२	खिनन्दिनी	स स स स ल ग	१७
६,१७२	भूरिशिखा	स भ भ स ल ग	१७.
६,३६४	क्रीडायतनम	स स स स ल ग	१७, क्रीडावसयम्–१७
६,५४१.	नासाभरणम्	त भ भ स ल ग	१७
६,५८३	कर्णिकार	भ म भ स ल ग	१७
७,०१२	विपाकवती	न भ ज ज ल ग	१७
७,०८६	काकिणिका	ज भ भ ज ल ग	१७.
७,०८७	कारविणी	भ ज भ ज ल ग	१७.
७,३१५.	कूर्चललितम	र र र भ ल ग	१७
७,५३२	कलहेतिका	स ज भ ल ग	१७
७,५३५	प्रञ्चलवती	भ ज ज भ ल ग	१७.
८,०२७	गगनगतिका	र स ज न ल ग	१७
,०८१	निर्मुक्तमाला	म र भ न ल ग	१७
६,३६३	कामशाला	र र र र ग ल	१७
६,६७५	उत्सर्ग	भ भ स स ग ल	१७
११,६२८	उपकारिका	स ज ज भ ग ल	१७
११,६३१	हेमसिंहिका	भ ज ज भ ग ल	१७
११,६३२	हेति	न ज ज भ ग ल	१७
१४,०४४.	मधुपालि	स स स स ल ल	१७
१६,०००,	वेशम्भारि	न न य न ल ल	१७

पञ्चदशाक्षर-छन्द

१३.	मञ्जाली	त य म भ म	१७.
१६	स्फोटक्रीडम्	न य म म म	१७

प्रस्तार-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
२२३	क्रीडितकटका	भ स स म म	१७.
४३३.	चार्वटकम्	म भ भ म म	१७
२२६६.	आनन्दम्	र न स त म	१७
	चन्द्रलेखा	र र त त म	१६
३,३१६.	बहुलाभ्रम्	स भ स भ म	१७
३,८८१	वाणीभूषा	म म त म म	१७
४,६८२	सिंहपुच्छम्	य य य य य	१७
५,५२५	कुमारलीला	म न र य य	१७.
५,५३२.	भोगिनी	न न र य य	१०
	केतनम्	भ य स स य	१०
	शिशु	त ज स स य	१०
	ऋषभ	स ज स स य	१०, १६
६,६११	दीपकम्	भ त न त य	१७
७१२०	परिमलम्	न य न ज य	१७
	मयूरललितम्	ज त न भ य	१६.
७६३६	हारकल्पा	न न स म य	१७
	चन्द्रोद्योत	न न म र र	१०
६,३६३	लास्यकारी	र र र र र	१७.
६,६६८.	मदनमालिका	न र न र र	१७
	मृदङ्ग	त भ ज ज र	१०.
११५७५	प्लवगम	भ भ त भ र	१७
११,६३१.	मयूवदना	भ ज ज भ र	१७
११,६३२	कलभाषिणी	न ज ज भ र	१० १६, अरविन्द-११, १६
११,७१२	गौ	न न भ भ र	१०
११,६६३.	सारिणी	र न र न र	१७
११,६६८	चमरीचरम्	न न र न र	१७
१२,४६६.	जलनिधिवेला	न य स म स	१७
१३,०५७	लीलाचन्द्रम्	म म त य स	१७
१३,५०२	धोरितम्	भ न र र स	१७
१४,०१५	शान्तसुरभि	भ न र स स	१७
१४,२६०	कर्णलता	स भ भ स स	१७
१५,६०१	विशाकलिता	म भ स भ स	१७
१५,७५७	शौर्यविरहिता	त य भ भ स	१७.
१६,०५३	शङ्खावली	त भ र न स	१७

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
२३,१३१	ऊर्हिनी	र स य ज ज	१७.
२३,२६४	मितगवित्र	म स स ज ज	१७.

षोडशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
१,०२४	माल्योपरथम्	म न न य म ग	१७.
४,०६६.	कल्पाहारो	न म न न म ग	१७.
	वेल्लिता	स स स म म ग	१०, २०.
५,५३६.	प्रतीपवल्ली	स स म र य ग	१७
७,१५६	आरभटी	भ भ न ज य ग	१७
६,२८०	वक्रावलोक	म न म र र ग	१७
	सुरतललिता	म म स स र ग	१०.
	चित्रम्	र ज र ज र ग	१०.
१० १६२	अभिधात्री	स स स ज र ग	१७.
११,१०८	अनिलोद्धा	स भ त य स ग	१७.
	कान्तम्	म य न म स ग	१६.
११ ३०६	भोगावलि	त म म य स ग	१७
१४,०४४.	वासुकी	स स स स स ग	१०, सोमकम्–११; कलधौतपदम्–१७
	ललितपदम्	म न भ ज स ग	१०, कमलदलम्–१६.
१५,१७६	वलिवदनम्	न य म भ स ग	१७
१५,५६५	सूतशिखा	स य स भ स ग	१७
१५,५८०.	परिसायतनम्	स स स भ स ग	१७, परिखायतन–१७
१५,६०१	मालावलयम्	म भ स भ स ग	१७
	हारमाला	भ भ भ भ स ग	१०, स्मरहारमाला–१६
१६,३६६	भीमावर्त्त	म भ न भ स ग	१७
१६,३८४	शिशुभरणम्	न न न भ स ग	१७.
	कोमललता	भ त स त त ग	१०, २०
२३,२६४.	तरुमारिका	न स स ज ज ग	१७
	मङ्गलमङ्गना	न भ ज ज ज ग	१०, १६
२५,५५२.	कमलपरम	न य न य भ ग	१७
२७,८२४	मणिकल्पलता	न ज र भ भ ग	६, १०, १४; त्रोटकम्–१७; चिन्तामणि–१६; इन्दुमुखी–१६
२८,६७२	कलहकरम्	न न न न म ग	१७
	प्रमुदिता	भ र न र न ग	१०.

प्रस्तार-सङ्ख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३०,५८४	नरशिखी	न भ ज स न न ग	१७
३१,२०७	सारवरोहा	भ त न त न न ग	१७
	वरयुवतिः	भ र य न न न ग	२, १०, १४
	ललना	र न न न न न ग	१०, २०, २२.
३२,७६८	चलधृति	न न न न न न ग	१०
३६,६६७.	वल्लालिका	त भ र भ भ य ल	१७
४३,६६७	कल्पधारि	र र र ज र ल	१७; धारि–१७.
५२,४१७	कुल्यावर्त्तम्	म म स भ त ल	१७; कुल्यावृत्त–१७

सप्तदशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-सङ्ख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
११,६६८	वीरविश्राम	न भ र न र ग ग	१७
१६,१८३	वल्गनम्	भ भ त न स ग ग	१७, वल्गुजम–१७
१६,१८६	कूराशनम्	त न त न स ग ग	१७, कूराशनम्–१७, कूरासनं–१७; कूरासन १७,
२०,३६८.	कामरूपम्	म र भ न त ग ग	१७.
२३,६००	अतिशायिनी	स स ज भ ज ग ग	२, १०, १४, १७, १६; यावदी–११, चित्रलेखा–१४
२३,६०४	शायिनी	भ स ज भ ज ग ग	१७
	वाणिनी	न ज भ ज ज ग ग	१० १८.
३२,३२०	सलेखा	न न भ न न ग ग	१७
३२,३८३.	तितिक्षा	भ न य न न ग ग	१७
३२,७६८	वसुधारा	न न न न न य ग	१०, १६
	रोहिणी	न स म भ य ल ग	१०.
३८,७५१.	बालविक्रीडितम्	भ स ज स य ल ग	१७
३८,७५८	कालसारोद्धत	ज त ज स य ल ग	१७
	कान्ता	य भ न र स ल ग	१४.
	हरि.	न न म र स ल ग	१४.
५२,४६५	विरुदरुतम्	म भ स भ त ल ग	१७
५२,६६३	कासारम्	म म त न त ल ग	१७.
५६,१६७	धवल	भ त ज ज ज ल ग	१७.
	विलासिनी	न ज भ ज भ ल ग	४.
६४,६१२.	विधुरविरहिता	स त य भ न ल ग	१७
६४,६२४.	शुकवनिता	स स भ भ न ल ग	१७; शिशुकवनिता–१७
६४,६४७.	बाह्यान्तरितम्	त न भ भ न ल ग	१७

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
६६,३६२.	कर्णस्फोटम्	न य त न म ग ल	१७
७४,८६६	प्रतीहारः	र र र र र ग ल	१७.
७५,७१४.	वान्तारम्	य म न स र ग ल	१७.
८१,१४०.	फल्गु	स म स भ स ग ल	१७
	ललितभृङ्ग	भ स भ ज न ग ल	रूपगोस्वामिकृत रासक्रीडास्तोत्र

अष्टादशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३१,४५०.	परामोद.	य त स ज न म	१७
३२,२३०.	विलुलितवनमाला	न न स न न म	१७.
	अनङ्गलेखा	न स म म य य	५, १०
	चन्द्रमाला	न न म म य य	५, १०
३७,४४०.	नीलशार्दूलम्	न न म य य य	१७; नीलशालूर–१७; नील-मालूरम्–१७
	मन्दारमाला	स त म य य य	१६
४४,०२५	सत्सेतु	भ न न ज र य	१७.
	पङ्कजवक्त्रा	न न स स स य	१०, पङ्कजमुखा–१६.
	भक्ति	भ भ भ भ न य	१०; विच्छित्ति –११.
	काञ्ची	म र भ य र र	१०; चाचालकाञ्ची–११, २०.
	केसरम्	म भ न य र र	५, १०, १४
७४,८६६	सिन्धुसौवीरम्	र र र र र र	१७
	निशा	न न र र र र	१०, तारका–११, मञ्जु-मालिका–१४
७७,५०४	पर्विणी	म न र म न र	१७
७७,८०६	क्रौडक्रौडम्	म भ न म र र	१७
	चुडुचुडुम्	स ज स ज त र	१०
८६,००८	मधुपदमञ्जरी	भ स भ ज ज र	१७
	हरिणीपदम्	स स म त भ र	५, १०
९३,०१७	हरिणप्लुतम्	म स ज ज भ र	१४, १७.
	कुरङ्गिका	म स न ज भ र	५, १०
	चलम्	भ भ न ज भ र	१०, १४, अचलम्–५.
९५,७०४	षट्पदेरितम्	न र न र न र	१७
९६,०९४	पार्थिवम्	ज भ ज स न र	१७
	गुच्छगभेद	म भ न ज न र	रूपगोस्वामिकृत-मुरिष्टमथस्तोत्र

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१,१२,३४८	परिपोषकम्	स स स स स स	१७
	क्रीडा	य म न स त स	१०; सुधा-१४; मुक्तामाला-१४, १७.
	सुरभि	स न ज न भ स	१०, १६.
	मणिमाला	भ भ भ म भ स	१०, १६
१,२६,३६१.	अश्वगति	भ भ भ भ भ स	१६
१,४६,७६७	अर्धान्तरालापि	त त त त त त	१७; अर्द्धान्तरालापि-१७
१,४६,७६८	पतङ्गपादः	ज त त त त त	१७
२,२४,६६५	हीरकहारधरम्	भ भ भ भ भ भ	१७.
२,४६,६६१.	चण्डी	त न त न त म	१७.

एकोनविंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२०,४६६.	झिल्लीलीला	न य म म ज म ग	१७
३१,२२५.	विधुनिधुवनम्	म न न त न भ ग	१७
४८,१८६.	माराभिसरणम्	त न म भ स य ग	१७
७४,८६६.	लोललोलम्बलीलम्	र र र र र र ग	१७
	विस्मिता	य म न स र र ग	१४
	मुग्धकम	य म न न र र ग	१०.
	माधवीलता	म र भ स स ज ग	१०, २०
	रतिलीला	ज स ज स ज स ग	१०, १६
	तरुणीवदनेन्दु	स स स स स स ग	६, १०.
१,३०,३४६.	किरणकीर्त्ति	त ज त भ न स ग	१७.
	चञ्चितम्	म त न स त त ग	१०, चन्द्रबिम्बम्-५; बिम्ब-१४, विचितम्-१४.
१,५५,४८१.	शिलीमुखोज्जृम्भित	म स ज न ज त ग	१७
१,७४,७६३	कलापदीपकम	र ज र ज र ज ग	१७.
१,७४,७८४	प्रपञ्चचामरम्	न म र ज र ज ग	१७; प्रपञ्चम्-१७
	पञ्चचामर	न न स ज र ज ग	१४
१,७८,१३६	कल्पलतापताकिनी	भ न न स स ज ग	१७
	मकरन्दिका	य म न स ज ज ग	५, १०, १४.
	मणिमञ्जरी	य भ न य ज ज ग	१४
	तरलम्	न भ र स ज ज ग	१०, १६
	ऊर्जितम्	र स स त ज ज ग	१०, शार्ङ्ग-१६.
१,६२,१६२	निर्गलितमेखला	न न र न भ ज ग	१७.
	वामुवेगा	म स ज स न ज ग	१०, २२.

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
४७,९३ ४९१	गङ्गोदकम	र र र र र र र र	१७
	मेघमाला	न न र र र र र र	३, १० २२
४८,४८,३०१.	उत्कटपट्टिका	स ज र ज न स र र	१७
	महामदनसायक	न भ ज भ ज भ ज र	१६.
	विभ्रमगति	म स ज स त त भ र	१०, २०
५६,६३ ६१२	डम्बरम्	न भ भ र म भ भ र	१७
८३,९८,५६७	वेल्लितवेल्लम्	भ भ भ म स न न स	१७
	द्रुतलघुपदगति	भ भ भ त न न न स	१०
	सम्भ्रान्ता	न य भ त न न न स	१०.
८३,८८,६०८	अतुलपुलकम	न न भ म न न न स	१७

पञ्चविंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
	मत्तेभ	म भ म म म त य म ग	१६.
२६,७६,६०३	शरभूरिणी	र स ज ज भ र स य ग	१७
४७,९३,४९१	क्षीणहंसङ्कुलीनम्	र र र र र र र र ग	१७
७२,०२,८१५.	मोपवनीयकम्	भ म न स भ स स स ग	१७
७५,७६,८०८	कुमुदमाला	म त स भ य न त स ग	१७
८२,८३,९०४	रसिकरसाला	म न स स भ त न स ग	१७
८३,९२,४८६	विरहविरहस्यम	म न म त य म न स ग	१७
८३,८१,३११	भास्करम	भ न ज य भ न न स ग	१७
९५,९२,४६७.	चित्तचिन्तामणि	र र र न ज त त त ग	१७
१,१३,८५,९७२	प्यायोधायोद्गलम	त य भ भ स स स ज ग	१७.
	हंसगति	न न न न स भ भ भ ग	१०, १६
१,४३ ८०,४७१	शिबिका	भ भ भ भ भ भ भ भ ग	१७
१,५४,४५,६९१.	भाविनीविलसितम्	र न र न र न र न ग	१७
१,६१,७५,१६८	विटोपवल्लितम	न न म म ज ज ज न ग	१७, विटोपित–१७.
	चपलम्	न ज ज य न न न न ग	१०
१,६७,७४,७१७	सभ्रभ्रमणम	त न म स न न न न ग	१७
	हंसपदा	त य भ भ न न न न ग	६ १०, २०
१ ६७,७७,२१६	अलका	न न न न न न न न ग	१७; अलिका–१७
१ ६१,७३ ६६२	मल्लपल्लीप्रकाशम्	य य य य य य य य ल	१७
२,३५,२५,०८४	सौदामनदाम	स स स स न ज य स ल	१७

प्रस्तार संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
	षड्विंशाक्षर-छन्द		
३३,६६,१६६	तनुविल्लविञ्चितम	म भ म न य न त य ग ग	१७
३६,६४,५७६.	विनयविलास.	न य न य न य न य ग ग	१७
६५,११,४६७	विश्वविश्वास	भ य य य र र ल त ग ग	१७
६५,३४,६६१	प्रशोकशोकहृय	म भ न भ न र त त य ग	१७
६५,८७,०६१	भाभासमानम्	य य य य त त त त ग ग	१७.
६५,८७,०६५	वीरविक्रान्तः	म न ज त त स स स न ग	१७
१,११,८४,८११.	विकुण्ठकण्ठ	र ज र ज र ज र ज ग ग	१७
१,१२,०२ ८१६	चारुमति	म न स म न ज र ज ग ग	१७
१,५७,६०,३२१.	भ्रमनशलाका	म न स म न य त न ग ग	१७
१,६७,६७,८७१	उज्झितकदनाम	भ न त ज ज न न न ग ग	१७
	मकरन्द	न य न य न न न न ग ग	१७.
	वनलतिका	न न न न न न न न ग ग	१६
१,६१,३२,६६२	कुहकुहरम	म भ म य न न म य ल ग	१७
१,६२,४८,२८५	सूरसूचक	म स ज त स स य य स ग	१७
१,६८,१५,६१०.	विपाणाश्रितम्	य न र भ ज त स य ल ग	१७.
२,२३,६६,४२७	पिनिद्रसिन्धुर	र र र र ज र ज र ल ग	१७
२,२३,८०,१७७	दाकुन्तकुन्तल	म र र न म र ज र स ग	१७
२,८१,४२,४२७	कावलीवलकोकिल	र स य ज भ र स ज ल ग	१७
	सुधावलता	न ज भ ज ज ज भ ज ल ग	१०, १६.
२,६३,३०,६४३	शृङ्खलवलयित	भ न भ भ भ भ न ज ल ग	१७
३,२१,७५ ७१२.	विरामवाटिका	न ज र स भ ज र न ल ग	१७
३,३५,६२,८२१	कर्णाटकम्	त भ ज भ ज भ न न ल ग	१७.
	आपीड	भ न भ स म भ न भ ल ग	१०,
	वेगवती	न भ न स भ भ भ न भ ग	१०
३,८३,४७,६६८.	कुम्भकम	न न र र र र र र ग स	१७
४,७५,२१,८८४	वज्रधर	स स स स स स स स ल स	१७

प्रकीर्णक-छन्द

२७	मालावृत्त	म त त त न न य य य	५, ६, मालाचित्र-१०
२७.	विकसितकुसुमम्	म भ न न न भ न न स	१६, मालावृत्तम्-१६.
२७	मालावृत्तम्	भ म त न भ म भ भ म	१६.

वर्णसंख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२७.	त्रिपदललितम्	न न न न भ न भ न स	१६.
२८.	त्रिभङ्गी	न स भ न त ज त स य	१६.
२९.	प्रमोदमहोदयः	म त य त न न न र स ल ग	१०.
२९.	कला	न न न न न न न न न ल ग	१६.
२९.	मणिकिरण	न न भ भ ज न न न न ल ग	१६;
३०.	नृत्तललितम्	भ ज स न भ ज स न भ य	१०; वृत्तललितम्-१६.
३१.	लहरिका	न न न न न न न न न न ग	१६.
३१.	विशालं	३१ वर्ण	१६.
३१.	सञ्जविशालं	३१ वर्ण	१६.
३२.	उपविशालं	३२ वर्ण	१६.
३२.	सञ्जोपविशालं	३२ वर्ण	१६.
३३.	चक्र	भ न न भ न न भ न न भ य	१६.
३४.	चित्रलय	भ न न भ न न भ न न भ न ग	१६.
३४.	अतिच्छन्दः	म म त न न न न म स ज ज ग	२०; मेघदण्डक–२२
३८.	ललितलता	न-१२, ल ग	१०, १६.
३८.	पिपीलिकादण्डकः	म म त न न न न न न न र स ल ग	२२.
४२.	पणवदण्डकः	म म त न न न न न न न भ ज भ र	२२.
४६.	करभदण्डक.	म म त न न न न न न न न न स ज ज ग	२२.
५०.	ललितदण्डकः	म म त न न न न न न न न न न न र स ल ग	२२.
	धारी	४६ मात्रा	१६.
	उपधारी	४२ मात्रा	१६.

दण्डक-छन्दः

३३.	अर्णवः	[न न र–९]	५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९; अर्ण–२२.
३६.	व्यालः	[न न र–१०]	५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९; प्लवः–२२.
३९.	जीमूतः	[न न र–११]	५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९; व्यालः–२२.
४२.	लीलाकरः	[न न र–१२]	५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९; जीमूत–२२.

वर्ण-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
४५	उद्दाम	[न न र-१३]	५ ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८ १६, लीलाकर -२२
४८.	शङ्ख	[न न र-१४]	५, ६ १०, १३, १५, १६, १७, १८ १६; उद्दाम -२२
५१.	विश्वयाट्	[न न र-१५]	१७, समुद्र -६, १०; अर्क - १६, आराम - १४, माला-५, सिंह -२२
५४.	कालदण्ड	[न न र-१६]	१७, संग्राम -१४, १७; भुजग -६, १०, चन्द्रेश -१६, माला -५, समुद्र -२२
५७	पौण्ड्रक	[न न र-१७]	१७, सुराम -१४, भोगीन्द्र -१६, माला -५, भुजङ्ग -२२
६०.	उद्दारपाद	[न न र-१८]	१७, वैकुण्ठ -१४, पीयूष -१६, माला -५, प्रचितक -२२.
६३.	सोत्कण्ठ	[न न. र-१६]	१४, १७, वाराह -१६, माला -५ प्रचितक -२२
६६.	सार	[न न र-२०]	१४ १७, वात -१६, माला-५. ,,
६६	कासार	[न न र-२१]	१४, १७, माला-५, महाघणवृष्टि -१६, ,,
७२	विस्तार	[न न र-२२]	१४ १७ माला-५, महाघणवृष्टि -१६, ,,
७५	संहार	[न न र-२३]	१४, १७, ,, ,, ,,
७८	नीहार	[न न र-२४]	१४ १७, ,, ,, ,,
८१	मन्दार	[न न र-२५]	१४, १७, ,, ,, ,,
८४	केदार	[न न र-२६]	१४, १७, ,, ,, ,,
८७	आसार	[न न र-२७]	१४ १७ ,, ,, ,,
६०	सत्कार	[न न र-२८]	१४ १७, ,, ,, ,,
६३	संस्कार	[न न र-२६]	१४, १७, ,, ,, ,,
६६	विमर्श	[न न र-३०]	१७, मार्तण्ड -१४, माला-५ ,, ,,
६६	दीपमाली	[न न र-३१]	१७, गोविन्द-१४, ,, ,, ,,
१०२	सानन्द	[न न र-३२]	४, १४, ,, ,, ,,
१०५	सन्दोह	[न न र-३३]	१४, ,, ,, ,,
१०८	मन्द	[न न र-३४]	१४, ,, ,, ,,
२८	पन्नग	[न न र ८]	१०, ६
३१	हम्भोलि	[न न र-६]	१०, १६,
३४	हेलावली	[न न र-१०]	१०, १६,
३७	मालती	[न न र-११]	१०, १६,

वर्ण-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
४०.	केलि	[न ग र-१२]	१०, १६;
४३.	ककेल्लि.	[न ग र-१३]	१०, १६,
४६	लीलाविलासः	[न.ग र-१४]	१०, १६,
२८.	शाकायतनम्	[म-६, ग]	१७.
२६	भुजगविलासः	[म-६, ग ग]	५, १०, १६.
२८.	लावण्यलीला-प्लुतम्	[न. य-८, ल]	१७.
२८	आलानिकम्	[न न र य-६, ल]	१७.
२६.	स्मारमाला-कुल	[स, य-८, ल ग]	१७
३१.	आर्द्रस्तबक	[न य न य न य न य न य ल]	१७.
४८.	विदग्धसुभगो	[त न त न त न भ न त न त न त न भ न]	१७.
५७	विशेषस्तबकम्	[न य न य न य न य भ स भ स भ स भ स भ स]	१७
२६.	चण्डपाल	[ल ५, र-८]	५, चण्डकील-१६; चण्डकाल-१०.
३५	,,	[ल ५, र-१०]	५.
३२.	सिंहविक्रान्त	[ल ५, य-६]	५, १०, १४, १७.
३०.	मेघमाला	[न न म म, य-६]	५, १६ [न म यथेष्ट मगण] १६, [न म यथेच्छ मगण१०]
३६.	चण्डवेग	[न न. य-१०]	५, १०, १६.
३२	सिंहक्रीडः	[य-१०, ग ग]	५, १७
३०.	कामबाण	[त-१०]	५, १०; वाम-१६, [यथेच्छ त, ग २; स, ग २; ज, ग २; य, ग २।] १६.
२६	सिंहविक्रान्त	[स-५, य-८]	१६.
३६.	उद्दालकः	[म-१२]	१६
४८	सिंहविक्रीड	[य-१६]	१०, १६; सिंहविक्रान्त-१४.
३६.	वितानम्	[भ-१२]	१६.
३६.	वतुंस	[म-१२]	१६.

वर्ण-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३६.	प्रचल:	[न–१२]	१६.
२८.	वर्णक:	[न न. भ–७, ग.]	४.
३५.	समुद्र:	[न न. र ज र ज र ज र ज र ल.ग]	४.
	उत्कलिका	[न न, पञ्चमात्रिकगण यथेष्ट]	१०.
३०.	बाललीलातुर:	[१० गण ऐच्छिक]	१७.
३२.	मनोहरणकविरा	[१० गण ऐच्छिक, स–२]	१७.
८६	कुसुमितकाय:	[म भ स न त य ज त र भ स स भ स भ स भ स भ त य स भ स य स भ न न ग ग]	१७.
	मकरालय:	[न ग र, सप्ताक्षरगण यथेच्छ	१६.
	सिंह.	[ल ३, यथेच्छ गण]	१६.
	शार्दूल:	[ल. ४, यथेच्छ गण]	१६.
	षण्ड	[ल. ५, यथेच्छ गण]	१६.
	वात	[ल. ७, यथेच्छ गण]	१६.
९९९.	महादण्डक.	[भ म, र–३३३]	समयसुन्दरकृत विज्ञप्तिपत्री

अर्द्धसमवृत्त

वर्ण-संख्या°	वृत्तनाम	विषमचरणों का लक्षण*	समचरणों का लक्षण*	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
(३, ८)	कामिनी	[र]	[ज र ल ग]	१०.
(३, १२)	दासी	[र]	[ज र ज र]	१०.
(३, १६)	नितम्बिनी	[र]	[ज र ज र जग]	१०
(३, २०)	वारुणी	[र]	[ज र ज र ज र ल ग]	१०
(३, २४)	वतसिनी	[र]	[ज र ज र ज र ज र]	१०.

टि– ° वर्णसंख्या के कोष्ठक में प्रथम पहला अंक प्रथम और तृतीय चरणों का और दूसरा अंक द्वितीय और चतुर्थ चरण के वर्णों का योतक है।

* विषम चरण अर्थात् प्रथम और तृतीय चरण का लक्षण।

* सम चरण अर्थात् द्वितीय और चतुर्थ चरण का लक्षण।

वर्ण संख्या	वृत्तनाम	विषमचरणों का लक्षण	समचरणों का लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-संकेतांक
(५, ११)	हला	[स ल ग]	[स स स ल ग]	१०
(५, २४)	मृगाङ्कमुखी	[स ल ग]	[स स स स स स स स]	१०
(८, ३)	वानरी	[ज र ल ग]	[र]	१०
(८, ८)	प्रवर्तकम्	[र ज ग ग]	[ज र ल ग]	१६
(६ १०)	वैसारी	[त ज र]	[म स ज ग]	१७
(१०, १०)	अतैलम्	[ज त त ग]	[त त त ग]	१७ अतिलम्–१७
(१०, १३)	शुकावली	[त ज र ग]	[म न ज र ग]	१७.
(१०, १२)	समुद्रकान्ता	[त ज र ग]	[म स त य]	१७.
(१०, १४)	विलासवापी	[त ज र ग]	[स भ र ज ग ग]	१७
(१०, १०)	विश्वप्रभा	[त त त ग]	[ज त त ग]	१७
(१०, १२)	सम्पातशीला	[त म र ग]	[स न म य]	१७
(१०, १०)	घटिका	[त स ज ग]	[स स ज ग]	१७
(१०, १३)	जारिणी	[न त त ग]	[र र न त ग]	१७
(१०, ६)	वासवनन्दिता	[म स ज ग]	[त ज र]	१७,
(१०, ११)	करघा	[म स ज ग]	[न न र ल ग]	१७.
(१०, ११)	सुधा	[म स ज ग]	[स भ र ल ग]	१७
(१०, १०)	प्रभासिता	[म स ज ग]	[म स ज ग]	१७
(१०, १२)	मकरावली	[म स स ग]	[स भ भ स]	१०
(१०, १०)	आलोलघटिका	[स स ज ग]	[त स ज ग]	१७.
(१०, १२)	अरुन्तुद	[स स ज ग]	[न ज ज र]	१७.
(१०, १०)	प्रभासिता	[स स ज ग]	[म स ज ग]	१७.
(१०, १२)	नवनीलता	[स स ज ग]	[स भ ज र]	१७, अवनीलता–१७ *भवलीलता–१७*
(११, ११)	विपरीताख्यानिकी	[ज त ज ग ग]	[त त ज ग ग]	२, ५, १० १३, १७, १८, १६, २२
(११, ११)	आख्यानिकी	[त त ज ग ग]	[ज त ज ग ग]	२, ५, १० १३, १७ १६, आख्यानिका–१८ २०, २२
(११, १२)	किम्प्रटक	[त ज ज ल ग]	[स स स स]	१७
(११, ११)	समयवती	[त म त ल ग]	[स म न ल ग]	१७
(११, १२)	शिशिरशिखा	[न न र ल ग]	[न ज ज र]	१७
(११, १०)	वैमाली	[न न र ल ग]	[म स ज ग]	१७.
(११, ११)	पाटलिका	[न य न ग ग]	[भ भ भ ग ग]	१७
(११, १२)	साचीकृतवदना	[न य भ ग ग]	[त न भ स]	१७

वर्ण-संख्या	वृत्तनाम	विषमचरणों का लक्षण	समचरणों का लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ संकेतांक
(११, ११)	औपगवम्	[न र र ग ग]	[भ र र ल ग]	१७
(११, १२)	उपाद्यम्	[न स ज ग ग]	[भ भ र य]	१७.
(११, ११)	करभोद्धता	[भ त र ल ग]	[स न र ल ग]	१७
(११, १३)	विलसितलीला	[भ भ त स ग]	[न ज भ स ग]	१०, १६.
(११, १२)	द्रुतमध्या	[भ भ भ ग ग]	[न ज ज य]	२, ६, १०, १३, १७ १८, १६ २०, २२; धृतमध्या-५.
(११, ११)	कोरकिता	[भ भ भ ग ग]	[न य न ग ग]	१७.
(११, १२)	कमलाकरा	[भ भ भ ग ग]	[भ भ ज य]	१७
(११, १०)	वर्णवती	[भ भ भ ग ग]	[स स स ग]	१७
(११, ११)	मदविह्वला	[भ भ भ ग ग]	[स स स ल ग]	१७
(११, १०)	केतु	[भ र न ग ग]	[स ज स ग]	१७.
(११, ११)	औपगवीनम्	[भ र र ल ग]	[न र र ग ग]	१७
(११, १३)	भद्रास्यम्	[भ भ न स ग]	[स स न भ ग]	१७
(११, १०)	पुष्पविराट्	[म स ज ग ग]	[त ज र ग]	१७
(११ १२)	मधुराढ्या	[म स ज ग ग]	[भ न र य]	१७
(११, ११)	वर्णिनी	[र न भ ग ग]	[र न र ल ग]	१७
(११ १२)	किलकिता	[र न र ल ग]	[न न ज र]	१७
(११, ११)	सारिका	[र न र ल ग]	[र न भ ग ग]	१७
(११, १०)	ललिता	[र स स ल ग]	[स ज ज ग]	१४.
(११ ११)	शालभञ्जिका	[भ न र ल ग]	[भ त र ल ग]	१७
(११, १२)	विमानिनि	[स भ र ल ग]	[भ भ ज र]	१७.
(११ १०)	मधुपा	[स भ र ल ग]	[भ स ज ग]	१७
(११ १०)	सुन्दरी	[स भ र ल ग]	[स स ज ग]	१७, गुरमालिका-१७, वियोगिनी-१७
(११, ११)	समश्रुती	[स भ भ ल ग]	[त भ त ल ग]	१७,
(११, १२)	मालभारिणी	[स स ज ग ग]	[स भ र य]	१०, २०, नितम्बिनी-११, उपोदगता-१७ वसन्तमालिका-१७. परिधृता-१७, सुबोधिता-१६, प्रिया-११
(११, १२)	हरिप्लुता	[स स स ल ग]	[न भ भ र]	१७.
(१२, १२)	शशिनिधि	[भ त ज र]	[त त ज र]	११; गुणनिनी-११
(१२ १२)	विपरीतमाला	[ज भ स य]	[स भ स य]	११
(१२, ३)	शिखण्डि	[ज र ज र]	[र.]	१०

वर्ण-संख्या	वृत्तनाम	विषमचरणों का लक्षण	समचरणों का लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-संकेतांक
(१२, १३)	पद्मावती	[त भ ज य]	[स ज स स ग]	१७.
(१२, १२)	सरसीकम्	[त भ ज य]	[स भ ज य]	१७
(१२, १२)	पद्मनिधिः	[त त ज र]	[ज त ज र]	१६; नन्दिनी–१६
(१२, ११)	अवाचीकृतवदना	[त न भ स]	[न य भ ग ग]	१७.
(१२, १२)	भामा	[त भ स य]	[ज भ स य]	१६
(१२, १२)	सिंहप्लुतम्	[त भ स य]	[ज भ स य]	१६; (श्रुति-स्मृति-उपजाति)
(१२, ११)	ईहा	[न ज ज य]	[भ भ भ ग ग]	१७.
(१२, ११)	अपरवक्त्रम्	[न ज ज र]	[न न र ल ग]	१७; मृदुमालती–१७.
(१२, १०)	अनूपकम्	[न ज ज र]	[स स ज ग]	१७.
(१२, १३)	मञ्जुसौरभम्	[न ज ज र]	[स ज य ज ग]	१४
(१२, ७)	क्षान्ति.	[न न म य]	[म म ग]	१६; चूडा–१६.
(१२, १२)	कौमुदी	[न न भ भ]	[म म र र]	१४.
(१२, ११)	सुराढ्या	[न न र य]	[म स ज ग ग]	१७.
(१२, १५)	हारावती	[न न र य]	[स भ म ज र]	१७
(१२, ११)	किलकिती	[न भ ज र]	[र न र ल ग]	१७.
(१२, ११)	अकुसुमचरम्	[भ न ज य]	[म भ भ ग ग]	१७.
(१२, ११)	आमलकी	[भ भ भ भ]	[भ भ भ ग ग]	१६; चुक्षा–१६.
(१२, ११)	उपाढ्यम्	[भ भ र य]	[न स ज ग ग]	१७.
(१२, १२)	जलपोहा	[भ भ र य]	[स भ र ज]	१७.
(१२, ११)	विमानिनी	[भ न ज र]	[स भ र ल ग]	१७
(१२, १६)	अहीनताली	[म न ज र]	[स भ स ज र ग]	१७.
(१२, १३)	वियद्वाणी	[म स ज म]	[स भ र य ग]	१७.
(१२, १०)	कान्ता	[म स स य]	[त ज र ग]	१७.
(१२, १३)	मृगीयवानी	[र ज र ज]	[ज र ज र ग]	१४, १८.
(१२, १३)	चमूरुभीरुः	[र न ज र]	[स न ज र ग]	१७.
(१२, १०)	पातशीला	[स न म य]	[त भ र ग]	१७.
(१२, १२)	उपसरसीकम्	[स भ ज य]	[त भ ज य]	१७
(१२, १०)	करीरीता	[स भ ज र]	[स स ज ग]	१७.
(१२, ११)	लुप्ता	[स भ भ र]	[स स स ल ग]	१७.
(१२, १२)	अर्भकपंक्ति	[स भ र ज]	[भ भ र य]	१७.
(१२, १३)	अप्रमायिनी	[स भ र य]	[न ज ज र ग]	१७
(१२, ११)	प्रमालिका	[स भ र य]	[स स ज ग ग]	१७; उपोद्गता–१७ सौरभसचितम्–१७.

वर्ण-संख्या	वृत्तनाम	विषमचरणों का लक्षण	समचरणों का लक्षण	सन्दर्भ ग्रंथ-संकेतांक
(१२, ११)	नटक	[स स स स]	[त ज ज ल ग]	१७
(१३, १२)	प्रकीर्णकम्	[ज भ स ज ग]	[त भ स ज ग]	१६; (रुचि-रुचिर-उपजाति)
(१३, १३)	निर्मधुवारि	[त भ र स ल]	[स ज स ज ग]	१७.
(१३, १४)	लास्यलीलालय	[त य र र ग]	[भ स त त ग ग]	१७.
(१३, १२)	अङ्घ्रिसाया	[न ज ज र ग]	[न न र य]	१७
(१३, १२)	प्रमापिनी	[न ज ज र ग]	[स भ र य]	१७
(१३, १४)	प्रालेपनम्	[न त त त ग]	[न भ य य ल ग]	१७
(१३, १६)	परप्रोषिता	[न म त स ग]	[न न स त त ग]	१७
(१३, १३)	विमुखी	[भ न भ स ल]	[न न स स ग]	१७.
(१३, १५)	प्रमोदपरिणीता	[न न र ज ग]	[न ज ज भ य]	१७
(१३, १३)	सुरहिता	[न न स स ग]	[स न न न ग]	१७
(१३, १३)	रुचिमुखी	[न न स स ग]	[न न भ स ल]	१७
(१३, १३)	शिशुमुखी	[न भ ज ज ग]	[न भ स ज ग]	१७.
(१३, १३)	अनिरथा	[न भ स ज ग]	[न भ ज ज ग]	१७
(१३ १४)	प्रतिविनीता	[न य ज र ग]	[स भ र न ग ग]	१७
(१३, १३)	अल्पफलम्	[भ न ज ज ग]	[भ न य न ल]	१७
(१३ १३)	अर्धफलम्	[भ न य न ल]	[भ न ज ज ग]	१७
(१३ १३)	अनङ्गपदम्	[भ भ भ भ ग]	[स स स स ग]	१७
(१३, १३)	धीरावर्त्त	[म त य स ग]	[म भ स म ग]	१७.
(१३, १३)	धीरावर्त्त.	[म भ स म ग]	[म त य स ग]	१७.
(१३ १०)	किंशुकावली	[म न ज र ग]	[त ज र ग]	१७
(१३, १३)	अलिपदम्	[र र न त ग]	[न त त त ग]	१७
(१३, १३)	मधुवारि	[स ज स ज ग]	[त भ र स स]	१७
(१३, १३)	कलनावती	[स ज स ज ग]	[स ज स स ग]	१७.
(१३, १२)	पद्मावती	[स ज स स ग]	[त भ ज य]	१७
(१३, १३)	कलना	[स ज स स ग]	[स ज स ज ग]	१७
(१३, १२)	समूह:	[स न ज र ग]	[र न ज र]	१७.
(१३ १२)	विपद्वाणी	[स म र य ग]	[भ स ज म]	१७.
(१३, १४)	मन्दाक्रान्ता	[स स ज र ग]	[म स ज र ग ग]	१७
(१३, ११)	कामाक्षी	[स स न म ग]	[भ भ म ल ग]	१७
(१३, १३)	भुजङ्गमृता	[स स स स ग]	[भ भ भ भ ग]	१७.
(१४, १५)	अपरोपवनिता	[न भ भ र ल ग]	[स स ज भ य]	१७.
(१४, १२)	अनालेपनम्	[न भ य य ल ग]	[म त त त ग]	१७.

षष्ठ परिशिष्ट

गाथा एवं दोहा भेदों के उदाहरण[a]

गाथा-भेदों के उदाहरण

१. लक्ष्मीः

यत्रार्यायां वर्णास्त्रिंशत्संख्या लघुत्रयं तत्र ।

दीर्घास्ताराततुल्याश्चेत्स्युः प्रोक्ता तदा लक्ष्मीः ॥१॥

२. ऋद्धिः

यत्रार्यायां वर्णा एकत्रिंशन्मिता यदा पञ्च ।

लघवः षड्विंशत्या दीर्घा ऋद्धिः समा नाम्ना ॥२॥

३. बुद्धिः

यत्रार्यायां वर्णा दन्तैस्तुल्या भवन्ति चेद् दीर्घाः ।

तत्त्वैस्सप्तलघूनां नाम्ना बुद्धिस्तदा भवति ॥३॥

४. लज्जा

यत्रार्यायां वर्णा देवैस्तुल्या जिनोन्मिता गुरवः ।

नवलघवश्चेत्तत्र प्रोक्ता नाम्ना तदा लज्जा ॥४॥

५. विद्या

वर्णा वेदाग्निमिता गुरवो रामाब्धिभिर्मिता यत्र ।

रुद्रमिता लघवश्चेन्नाम्ना विद्या तदा ग्रार्या ॥५॥

६. क्षमा

बाणाग्निमिता वर्णा प्राकृतितुल्यास्तु यत्र गुरवस्स्युः ।

ह्रस्वा विश्वनियमिता प्रोक्ता नाम्ना क्षमा सार्या ॥६॥

७. देही

षट्त्रिंशन्मितवर्णाः प्रकृतिमिताः सम्भवन्ति चेद् दीर्घाः ।

बाणेन्दुमिता लघवः कथिता सार्या तदा देही ॥७॥

---

[a] वृत्तमौक्तिक में गाथा और दोहा छन्द के प्रस्तार-भेद से नाम एवं संक्षेप में लक्षण प्राप्त हैं किन्तु इन भेदों के उदाहरण प्राप्त नहीं हैं अतः वाग्वल्लभ-ग्रन्थ से इनके लक्षणयुक्त उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

वर्ण-संख्या	वृत्तनाम	विषमचरणों का लक्षण	समचरणों का लक्षण	संदर्भ-ग्रंथ-संकेतांक
(१४, १३)	लास्यलीला	[म स त त ग ग]	[त य र र ग]	१७.
(१४, १३)	सम्मदाक्रान्ता	[म स ज र ग ग]	[स स ज र ग]	१७.
(१४, १८)	मार्दङ्गी	[स न स न ग ग]	[म न ज न ज य]	१७, मातङ्गी-१७.
(१४, १०)	प्रकोशक्रुष्टा	[स भ र ज ग ग]	[त ज र ग]	१७.
(१४, १३)	प्रतिप्रतिविनीता	[स भ र ज ग ग]	[न य ज र ग]	१७.
(१५, १४)	उत्तरी	[म भ न न स]	[न भ भ न ल ग]	१६.
(१५, १५)	देवगीति	[र ज र ज र]	[ज र ज र य]	२२.
(१५, १३)	प्रमोदपदम्	[न ज ज भ य]	[न न र ज ग]	१७.
(१५, १६)	प्रासवप्रासिता	[न भ ज र य]	[स भ र ज स ग]	१७.
(१५, १२)	बृहच्छरायती	[स भ न ज र]	[न न र य]	१७.
(१५, १४)	प्रवरोधवनिता	[स स ज भ य]	[न भ भ र ल ग]	१७.
(१६, ३)	सारसी	[ज र ज र ज य]	[र]	१०.
(१६, १६)	वासिनी	[त ज भ ज ज ग]	न ज भ ज ज ग]	१७.
(१६, १६)	वासववासिनी	[न ज भ ज ज ग]	[त ज भ ज ज ग]	१७
(१६, १३)	प्रपरप्रीणिता	[न न स त त ग]	[म न त त ग]	१७.
(१६, १५)	प्रनासववासिता	[स भ र ज स ग]	[न भ ज र य]	१७.
(१६, १२)	हीनताली	[स भ त ज र ग]	[म न ज र]	१७.
(१७, १८)	मानिनी	[भ र न ज म ल ग]	[न ज भ स न स]	१०.
(१७, १८)	मानिनी	[भ र न भ र स ग]	[न ज भ स न स]	१६.
(१८, १४)	मार्दंगी	[म न ज न म य]	[स न स म ग ग]	१६.
(२०, ३)	अपरा	[ज र ज र ज र ल ग]	[र]	१०.
(२४, ३)	हंसी	[ज र ज र ज र ज र]	[र]	१०.
(२६, २१)	शिखा	[न न न न न न न न न स ग]	[न न न न न न न न न ग]	२, ५, १०, १३, १८, १६, २०, २२.
(३१, २६)	खञ्जा	[न न न न न न न न न न ग]	[न न न न न न न न स य]	२, ५, १०, १३, १८, १६, २२.

१८. गाहिनी

नवयुगपरिमितवर्णा यदि दश गुरवो भवन्ति नियत चेत् ।
नगगुणपरिमितलघवस्तदनु भवति गाहिनी किल सा ॥१८॥

१९. विश्वा

वसुयुगपरिमितवर्णा यदि नव गुरवो भवन्ति लघवश्चेत् ।
इह नवहुतभुगभिमिताः प्रभवति फणिपतिभणितविश्वा ॥१९॥

२०. वासिता

नवयुगपरिमितवर्णा यदि वसुगुरवः शशियुगमितलघवः ।
फणिगणपतिपरिभणिता भवति तदनु वासिता किल सा ॥२०॥

२१. शोभा

इह यदि मुनिमितगुरवो हुतभुग्जलनिधिमितास्तथा लघवः ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति सनियममियमिति शोभा ॥२१॥

२२. हरिणी

यदि रसपरिमितगुरवः शरयुगपरिमितलघव इह तदनु चेत् ।
फणिपतिपरिभणिततनुः प्रभवति नियत तदा हरिणी ॥२२॥

२३. चक्री

नगयुगमितलघुगण इह शरमितगुरवो भवन्ति यदि नियतम् ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति ननु सनियममिह चक्री ॥२३॥

२४. सरसी

जलनिधिपरिमितगुरवो यदि नवजलधिपरिमितलघव इह चेत् ।
भुजगाधिप इति कथयति भवति नियतविहिततनु सरसी ॥२४॥

२५. कुररी

स्युरथ गुणमितगुरव इह यदि शशधरशरपरिमितलघव इति च ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति ससद्‌यतिरियं कुररी ॥२५॥

२६. सिंही

द्विकगुरुगुणशरपरिमितलघुविरचिततनुरिह यदि च भवति किल ।
अहिगणपतिरिति कथयति नियतजनितविरतिरथ सिंही ॥२६॥

२७ हंसी, हंसपदवी च

शशिमितगुरुशरशरमितलघुविरचिततनुरियमिह यदि विलसति ।
फणिगणपतिभणितविरतिहंसपदविरथ नियतकृतयति ॥२७॥

———

८. गौरी

सप्ताग्निमिता वर्णा नखमितगुरवो धनोन्मिता लघवः ।
यत्र स्युः किल सार्या तर्हि भवेन्नामतो गौरी ॥८॥

९. धात्री, रात्री च

वसुगुणतुल्या वर्णा गुरवो लघवो यदातिधृतितुल्याः ।
फणिपप्रोक्ता सार्या भवति तदा नामतो धात्री ॥९॥

१०. चूर्णा

नवगुणपरिमितवर्णा धृतिमितदीर्घा भवन्ति चेद्ध्रस्वाः ।
प्रकृतिमिता यदि सार्या प्रोक्ता नाम्ना तदा चूर्णा ॥१०॥

११ छाया

द्विगुणितनखमितवर्णा घनमितदीर्घा भवन्ति चेद्ध्रस्वाः ।
विकृतिमिता यदि सार्या कथिता नाम्ना तदा छाया ॥११॥

१२. कान्तिः

शशियुगपरिमितवर्णा अष्टिप्रमिता भवन्ति चेद्गुरवः ।
शरकृतिपरिमितलघवो नाम्ना सार्या भवेत् कान्तिः ॥१२॥

१३. महामाया

यमयुगपरिमितवर्णास्तिथिमितगुरवश्च भोन्मिता लघव. ।
सार्या भवति तदानी फणिना कथिता महामाया ॥१३॥

१४. कीर्तिः

गुणयुगपरिमितवर्णा मनुमितगुरवो नवाश्विमितलघव. ।
स्युर्यदि यत्र च सार्या फणिना कथिता तदा कीर्त्तिः ॥१४॥

१५. सिद्धा

श्रुतियुगपरिमितवर्णा अतिरवितुल्या भवन्ति चेद्गुरवः ।
शशधरगुणमितलघवः प्रभवति सा नामतस्सिद्धा ॥१५॥

१६. मानिनी, मनोरमा च

शरयुगपरिमितवर्णा रविमितगुरवश्च देवमितलघवः ।
यदि फणिगणपतिभणिता सार्या खलु मानिनी ज्ञेया ॥१६॥

१७. रामा

रसयुगपरिमितवर्णाः शिवमितगुरवो भवन्ति यदि नियतम् ।
शरगुणपरिमितलघवो यत्र भवति सोदिता रामा ॥१७॥

१८. गाहिनी

नवयुगपरिमितवर्णा यदि दश गुरवो भवन्ति नियतं चेत् ।
भगगुणपरिमितलघवस्तदनु भवति गाहिनी किल सा ॥१८॥

१९. विदवा

वसुयुगपरिमितवर्णा यदि नव गुरवो भवन्ति लघवश्चेत् ।
इह नवहुतभुगमिमिताः प्रभवति फणिपतिभणितविदवा ॥१९॥

२०. वासिता

नवयुगपरिमितवर्णा यदि वसुगुरवः शशियुगमितलघवः ।
फणिगणपतिपरिभणिता भवति तदनु वासिता किल सा ॥२०॥

२१. शोभा

इह यदि मुनिमितगुरवो हुतभुग्जलनिधिमितास्तथा लघवः ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति सनियममियमिति शोभा ॥२१॥

२२. हरिणी

यदि रसपरिमितगुरवः शरयुगपरिमितलघव इह तदनु चेत् ।
फणिपतिपरिभणिततनुः प्रभवति नियतं तदा हरिणी ॥२२॥

२३. चक्री

नगयुगमितलघुगण इह शरमितगुरवो भवन्ति यदि नियतम् ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति ननु सनियममिह चक्री ॥२३॥

२४. सरसी

जलनिधिपरिमितगुरवो यदि नवजलधिपरिमितलघव इह चेत् ।
भुजगाधिप इति कथयति भवति नियतविहिततनु सरसी ॥२४॥

२५. कुररी

त्र्युरग गुणमितगुरव इह यदि शशधरशरपरिमितलघव इति च ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति लसद्यतिरियं कुररी ॥२५॥

२६. सिंही

द्विकगुरुगुणशरपरिमितलघुविरचिततनुरिह यदि च भवति किल ।
अहिगणपतिरिति कथयति नियतजनितविरतिरय सिंही ॥२६॥

२७. हंसी, हंसपदवी च

शशिमितगुरुशरशरमितलघुविरचिततनुरियमिह यदि विलसति ।
फणिगणपतिभणितविरतिहंसपदविरथ नियतङ्गतयति ॥२७॥

दोहा-भेदों के उदाहरण

१. भ्रमरः

यत्र स्युर्दीर्घास्त्रयोविंशत्या तुल्याश्च ।
द्वौ ह्रस्वौ स्यातां यदा पूर्वःस्यान्नाम्ना च ॥१॥

२. भ्रामरः

द्वाविंशत्या सम्मिता दीर्घा ह्रस्वा यत्र ।
चत्वारः स्युर्भ्रामरो नाम्नाऽसौ स्यादत्र ॥२॥

३. सरभः

चेत्स्युर्भूदस्रोन्मिता दीर्घा ह्रस्वा यर्हि ।
षण्णागेशेनोदितो नाम्ना सरभस्तर्हि ॥३॥

४. श्येनः

दीर्घा विंशत्या मिता अष्टौ लघवो यत्र ।
पिङ्गलनागप्रोदितः श्येनः स्यादित्यत्र ॥४॥

५. मण्डूकः

दीर्घा अतिधृत्युन्मिता ह्रस्वाः स्युर्दश यर्हि ।
ब्रूतेऽनन्तो नामतो मण्डूकं किल तर्हि ॥५॥

६. मर्कटः

दीर्घाः स्युर्धृतिसम्मिता ह्रस्वा द्वादश यत्र ।
पिङ्गलनागेनोदितो मर्कटनामा तत्र ॥६॥

७. करभः

दीर्घाः स्युर्घनसम्मिता इन्द्रमिता लघवश्च ।
ब्रूते शेषो यदि तदा नाम्नाऽसौ करभश्च ॥७॥

८. नरः

षोडश गुरवः सन्ति चेल्लघवो यत्र किलापि ।
पिङ्गलनागेनाऽसकौ नाम्ना नर आलापि ॥८॥

९. मरालः

अष्टादश लघवो यदा गुरवः पञ्चदशैव ।
मरालनामेत्यहिपतिः शेषो वक्ति तदैव ॥९॥

१०. मदकल:

मनुमितगुरवो विंशतिर्लघवः सन्ति यदा च।
मदकलनामाऽसौ भवेदित्थ शेष उवाच ॥१०॥

११. पयोधर:

नाम पयोधर इति भवेदतिरविगुरवस्सन्ति।
न्यस्ता आकृतिसम्मिता लघवो यत्र भवन्ति ॥११॥

१२. चल:

लघवश्च चतुर्विंशतिर्गुरवो द्वादश यत्र।
स्युः फणिगणपतिरिति वदति चलनामाऽसावत्र ॥१२॥

१३. वानर:

एकादश गुरवो यदा रसयममितलघवश्च।
नाम्ना वानर इह तदा फणिनायकभणितश्च ॥१३॥

१४. त्रिकल:

वसुयममितलघवो यदा दश गुरवश्च भवन्ति।
तदा विशिष्य त्रिकल इति नाम बुधा निगदन्ति ॥१४॥

१५. कच्छप:

लघवो द्विगुणिततिथिमिता गुरवो नव यदि सन्ति।
नाम्ना कच्छप इति भवति सुधियो नियतमुशन्ति ॥१५॥

१६. मत्स्य:

रदपरिमितलघवो यदा वसुमितगुरवस्सन्ति।
भवति मत्स्य इह खलु तदा विबुधा इति कथयन्ति ॥१६॥

१७. शार्दूल:

श्रुतिगणपरिमितलघव इह नगमितगुरवो यत्र।
फणिगणपतिपरिभणित इति शार्दूलः स्यात्तत्र ॥१७॥

१८ अहिवर:

रसगुणपरिमितलघव इह रसमितगुरवो यर्हि।
अहिवर इति खलु नामतः फणिपतिभणितस्तर्हि ॥१८॥

१९. व्याघ्र:

वसुगुणपरिमितलघव इह शरमितगुरवश्चापि।
व्याघ्रक इति भवति सनियममहिगणपतिनाऽऽपि ॥१९॥

२० विडाल

गगनजलधिमितलघव इह जलनिधिमितगुरवश्च ।
प्रभवति यदि फणिपतिभणित इति नाम विडालश्च ॥२०॥

२१ श्वा

यदि यमयुगमितलघव इह गुणपरिमितगुरुकाणि ।
श्वा फणिपतिगुरुमतिभिरिति भवति सनियममभाणि ॥२१॥

२२ उदुम्बर, उन्दुरश्च

द्विगुरुजलधियुगलघुभिरिह नियमिततनुरनुभवति ।
फणिपतिरिति तत उन्दुरु सुनियतकृतयति भवति ॥२२॥

२३ सर्प

शशिगुरुरसयुगमितलघुभिरथ कृततनुरिह लसति ।
फणिगणपतिरधिकृतविरति सर्प इति समभिलपति ॥२३॥

२४ शशधरम्

वसुजलनिधिपरिमितलघुभिरभिनियमिततनु भवति ।
शशधरमिदमिति नियतयति फणिगणपतिरनुभवति ॥२४॥



सप्तम परिशिष्ट

ग्रन्थोद्धृत ग्रन्थ-तालिका



अष्टम परिशिष्ट

छन्दःशास्त्र के ग्रन्थ और उनकी टीकायें



	नाम	कर्त्ता एव टीकाकार	उल्लेख*
१	अभिनववृत्तरत्नाकर	भास्कर	सी. सी,
२	,, टिप्पण	,, श्रीनिवास	,,
३	एकावली	फतेहशाह वर्मन् ?	मिथिला कैटलॉग
४	कर्णतोष	मुद्गल	अनूप; सी सी. मे इसका नाम 'कर्णसन्तोष' है।
५	कर्णानन्द	कृष्णदास	हि. एस,
६	कविदर्पण		प्रकाशित
७	कविशिक्षा	जयमंगलाचार्य	हि एस,
८	काव्यजीवन	प्रीतिकर अवस्थी	हि. एस, सी. सी,
९	काव्यलक्ष्मीप्रकाश	शिवराम S/o कृष्णराम	सी. सी.
१०	काव्यावलोकन [कन्नडभाषीय]	नागवर्म	कन्नडप्रान्तीय ताडपत्रीय ग्रन्थसूची
११	कीर्तिच्छन्दोमाला	रामानारायण S/o विष्णुदास	युनिवर्सीटी लायब्रेरी बम्बई कैटलॉग
१२	,, टीका	,, ,,	,,
१३	क्षेपक विज्जाहुला		जैन-ग्रन्थावली

---

* संकेत—सी सी. = कैटलॉगस कैटलॉगरम्; मिथिला कैटलॉग = ए डिस्क्रिप्टिव कैटलॉग ऑफ मेन्युस्क्रिप्ट्स् इन मिथिला; अनूप = कैटलॉग ऑफ दी अनूप संस्कृत लायब्रेरी बीकानेर; हि.एस = ए हिस्ट्री ऑफ क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर, एम. कृष्णमाचारी; युनिवर्सीटी लायब्रेरी बम्बई कैटलॉग = ए डिस्क्रिप्टिव कैटलॉग ऑफ दी संस्कृत एण्ड प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स् इन दी लायब्रेरी ऑफ दी युनिवर्सीटी ऑफ बॉम्बे; रायल एशियाटिक सोसायटी बम्बई कैटलॉग = एन डिस्क्रिप्टिव कैटलॉग ऑफ संस्कृत एण्ड प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स् इन दी लायब्रेरी ऑफ दी बॉम्बे ब्रांच ऑफ दी रायल एशियाटिक सोसायटी; बड़ोदा कैटलॉग = एन अल्फाबेटिकल लिस्ट ऑफ मेन्युस्क्रिप्ट्स् इन दी ओरियन्टल इन्स्टीट्यूट बरोदा; रा.प्रा.प्र. जोधपुर = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर; रा.प्रा.प्र. चित्तौड़ = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, शाखा कार्यालय चित्तौड़; रा.प्रा.प्र. बीकानेर = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, शाखा कार्यालय बीकानेर; रा.प्रा.प्र. जयपुर = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, शाखा कार्यालय जयपुर।

	नाम	कर्ता एव टीकाकार	उल्लेख
१४	गाथारत्नकोष		जैन-ग्रन्थावली
१५	गाथारत्नाकर		,,
१६	गाथालक्षण	नन्दिताड्य	प्रकाशित
१७	,,	रत्नचन्द्र ?	रॉयल एशियाटिक सोसायटी बम्बई केटलॉग
१८	छन्द कन्दली		उल्लेख: कविदर्पण
१९	छन्द कल्पतरु	राघव झा	मिथिला केटलॉग, हि. एस
२०	छन्द कल्पलता	मथुरानाथ	हि एस
२१	छन्द कोष	रत्नशेखरसूरि	प्रकाशित
२२	,, टीका	,, चन्द्रकीर्ति	सी सी
२३	छन्द कौमुदी	नारायणशास्त्री खिस्ते	प्रकाशित
२४	छन्द कौस्तुभ	दामोदर	बड़ोदा केटलॉग
२५	,,	राधादामोदर	सी सी, हि एस
२६	,, टीका	,, विद्याभूषण	सी सी
२७	,, ,,	,, कृष्णराम	,
२८	छन्दस्तत्त्वसूत्रम्	धर्मनन्दन वाचक	रा प्रा प्र जोधपुर
२९	छन्द पयोनिधि		प्रकाशित
३०	छन्द पीयूष	जगन्नाथS/oराम	रा प्रा प्र जोधपुर, सी सी
३१	छन्द प्रकाश	दीपचिन्तामणि	बड़ोदा केटलॉग, हि एस,
३२	,, टीका	,, सोमनाथ	सी सी
३३	छन्द प्रशस्ति	श्रीहर्ष	सी सी [उल्लेख-नैषध १७/२१९]
३४	छन्द प्रस्तारसरणि	कृष्णदेव	बड़ोदा केटलॉग
३५	छन्दःशास्त्र	जयदेव	प्रकाशित
३६	,,	, हर्षट	सी सी
३७	छन्द शिक्षा	परमेश्वरानन्द शास्त्री	प्रकाशित
३८	छन्द शेखर	जयशेखर	जैन ग्रन्थावली
३९	,,	राजशेखर	प्रकाशित
४०	छन्दश्चन्द्रिका		प्रकाशित
४१	छन्दश्चिह्नम्		,,
४२	छन्दश्चिह्नप्रकाशनम्	आत्मस्वरूप उदासीनP/o गंगाराम उदासीन	,,
४३	छन्दश्चूडामणि	शम्भु	उल्लेख वृत्तरत्नाकर-नारायणभट्टी टीका
४४	छन्दश्छटामण्डन	कृष्णराम [जयपुर]	हि एस,

	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
४५	छन्द श्लोक		सी सी.
४६	छन्द सार	चिन्तामणि	युनिवर्सीटी लायब्रेरी बम्बई केटलॉग
४७	„	जगन्नाथ पाण्डेय	प्रकाशित
४८	छन्द सारसंग्रह	चन्द्रमोहन घोष	„
४९	छन्द सारावली		„
५०	छन्द सिद्धान्तभास्कर	केशवजीनन्द S/o सूरजी	मिथिला केटलॉग
५१	छन्द सुधाकर	कृष्णराम	हि. एस
५२	छन्द सुधाविलहरी	जानीमहापात्र S/o जयदेव याज्ञिक	अनूप, हि.एस.
५३	छन्द सुन्दर	नरहरि	सी सी.
५४	छन्द संख्या	?	„
५५	छन्द संग्रह		„ [उल्लेख-ग्रन्थसार]
५६	„ [वृत्तबोध.]		प्रकाशित
५७	छन्दोरूपक		जैनग्रन्थावली
५८	छन्दोऽङ्कुर	गंगासहाय	प्रकाशित
५९	छन्दोऽवतंस	लालचन्द्रोपाध्याय	रा प्रा प्र. चित्तौड़
६०	छन्दोग्रन्थ		सी सी
६१	छन्दोगोविन्द*	गंगादास	सी सी., [उल्लेख-वृत्तरत्नाकरादर्श और वृत्तमौक्तिक]
६२	छन्दोदर्पण	गोविन्द	सी सी.
६३	छन्दोदीपिका	कुमारमणि s/o हरिवल्लभ	„
६४	„ टीका	„ कृष्णराम	„
६५	छन्दोनिघण्टु		अनूप,
६६	„ (पिंगलसारि-काद्योद्दिष्टलक्षणम्)	हरिद्विज	रा प्रा प्र. बीकानेर
६७	छन्दोनुशासन	जयकीर्ति	प्रकाशित
६८	„	जिनेश्वर	हि एस.
६९	„	वाग्भट	सी सी [उल्लेख अलङ्कारतिलक]
७०	„	हेमचन्द्र	प्रकाशित
७१	„ टीका	„	„

* मालूम छन्दोगोविन्द और छन्दोमञ्जरी दोनों एक ही ग्रन्थ हैं।

	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
७२	छन्दोऽम्बुधि		सी सी
७३	छन्दोमञ्जरी	गङ्गादास s/o गोपालदास वैद्य	प्रकाशित
७४	,, टीका	,, कृष्णराम	सी सी.
७५	,, ,,	,, कृष्णवल्लभ	हि एस
७६	,, ,,	,, गोवर्धनदास	हि एस, सी सी
७७	,, ,, [छन्दोमञ्जरीजीवन]	,, चन्द्रशेखर भारती	,, ,,
७८	छन्दोमञ्जरी टीका	,, जगन्नाथ सेन s/o जटाधर कविराज	हि एस, सी सी
७९	,, ,,	,, जीवानन्द	प्रकाशित
८०	,, ,,	,, दाताराम	हि.एस, सी सी
८१	,, ,,	,, रामचन्द्र	प्रकाशित
८२	,, ,,	,, वंशीधर	हि एस, सी सी
८३	,, ,,	,, हरिदत्तशास्त्री दाक्षरथसपाठकवंच	प्रकाशित
८४	छन्दोमञ्जरी	गोपाल*	संस्कृत कॉलेज बनारस रिपोर्ट सन १९०९-१७
८५	,,	गोपालदास*	हि एस
८६	,,	गोपालचन्द्र*	सी सी.
८७	छन्दोमन्दाकिनी	गुरुप्रसाद शास्त्री	प्रकाशित
८८	छन्दोमहाभाष्य	दामोदरभट्ट s/o रघुनाथ	बड़ोदा कैटलॉग
८९	छन्दोमातङ्ग		सी सी [उल्लेख-वृत्तरत्नाकरादर्श]
९०	छन्दोमार्तण्ड	मणिलाल	बड़ोदा कैटलॉग
९१	छंदोमाला	शार्ङ्गधर	हि एस.
९२	छंदोमुक्तावली	प्यारेलाल	सी सी
९३	,,	शम्भुराम s/o सीताराम	हि.एस सी सी
९४	छन्दोरत्न	पद्मनाभभट्ट	सी सी
९५	छंदोरत्नहस्तायुध	?	सी सी

* छन्दोमञ्जरी के कर्त्ता गोपालदास वैद्य के पुत्र गङ्गादास हैं। अतः संभव है प्रतिलिपिकारों के भ्रम से गोपाल, गोपालदास, गोपालचन्द्र नाम से भिन्न २ प्रणेता का भ्रम हो गया हो।

	नाम	कर्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
९६	छंदोरत्नाकर		सी सी.,हि.एस. [उल्लेख-संगीतनारायण और लक्ष्मीनाथभट्टकृत-पिंगलप्रदीप]
९७	छंदोरत्नावली	अमरचन्द्र कवि	जैन • ग्रंथावली [उल्लेख-मेघविजयकृत-वृत्तमौक्तिक दुर्गमबोध]
९८	छंदोरहस्य	धनसागर p/o गुणवल्लभ उपाध्याय	रा प्रा प्र. जोधपुर
९९	छंदोलक्षण		सी सी.
१००	छंदोलघुविवेक		,,
१०१	छंदोऽलङ्करण	जगद्धर	सी.सी.
१०२	छंदोविचय		बड़ोदा केटलॉग, सी सी.
१०३	छंदोविचार	सुखदेव	,,
१०४	छंदोविचिति	पतञ्जलि	सी सी.
१०५	,,	दण्डी	,, [उल्लेख-काव्यादर्श १।१२]
१०६	,, भाष्य	? यादवप्रकाश	,,
१०७	,, टीका	? शंकरभट्ट	हि.एस.
१०८	छंदोविन्मण्डन	स्वामी चन्दनदास	प्रकाशित
१०९	छंदोविलास	श्रीकण्ठ	सी सी.
११०	छंदोविवेक		,,
१११	छंदोवृत्तरत्न		,,
११२	छन्दोवृत्ति	श्रीनिवास	,,
११३	छन्दोव्याख्या		अनूप
११४	छन्दश्शतक	हर्षकीर्ति	राजस्थान के जैन शास्त्र-भण्डार, जयपुर भा. ४
११५	छन्दोऽष्टादशक	रूपगोस्वामी	सी. सी. [उल्लेख-वैष्णव-तोषिणी]
११६	छन्दोहृदयप्रकाश		सी सी.
११७	जगद्विजयछन्दः		प्रकाशित
११८	जगन्मोहनवृत्तशतक	वासुदेवब्रह्मपण्डित	हि एस.
११९	जनाश्रयी	जनाश्रय	,,
१२०	पिङ्गलछन्द शास्त्रसंग्रह		मधुसुदन पुस्तकालय, लाहोर सूचीपत्र
१२१	पिङ्गलछन्द सूत्र	पिङ्गल	प्रकाशित

	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार		उल्लेख
१२२	,, टीका [मिताक्षरा]	,, जगन्नाथमिश्र		रा प्रा प्र., जोधपुर
१२३	,, टीका	,, दामोदर		हि एस.
१२४	,, टीका	,, पद्मप्रभसूरि		सी सी
१२५	,, ,,	पिंगल,	पशु कवि ?	सी सी
१२६	,, ,,	,,	भास्कराचार्य	,,
१२७	,, ,,	,,	मथुरानाथ शुक्ल	,,
१२८	,, ,,	,,	मनोहरकृष्ण	,,
१२९	,, ,, [भाष्यराज]	,,	यादवप्रकाश	हि एस
१३०	,, ,,	,,	वामनाचार्य	सी सी.
१३१	,, ,,	,,	वेदांगराज	,,
१३२	,, ,,	,,	श्रीहर्ष शर्मा S/o मकरध्वज	हि. एस
१३३	,, ,, [मृतसञ्जीवनी]	,,	हलायुध	प्रकाशित
१३४	पिंगलसारोद्धार			जैन-ग्रंथावली
१३५	प्रस्तारचिंतामणि	चिंतामणि दैवज्ञ		मधुसूदन पुस्तकालय, लाहौर

	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
१४७	„ „	„ पशुपति	सी. सी
१४८	„ „ [पिंगलछंदोविवृति]	„ यादवेन्द्र [दत्तायधान भट्टाचार्य उपनाम]	बड़ोदा केटलॉग
१४९	„ „ [पिंगलसारविकाशिनी]	„ रविकर S/o [श्रीपति, हरिहर उप नाम]	प्रकाशित
१५०	„ „ [पिंगलतत्त्वप्रकाशिका]	„ राजेन्द्रदशावधान	सी. सी
१५१	„ „	„ लक्ष्मीनाथ भट्ट	प्रकाशित
१५२	[पिंगलप्रदीप]		
	„ „ [विद्वन्मनोरमा]	„ विद्यानन्दमिश्र	मिथिला केटलॉग
१५३	„ „ [पिंगल प्रकाश]	„ विश्वनाथ S/o विद्यानिवास	हि. एस. सी सी. मिथिला केटलॉग,
१५४	„ „ [पिंगलप्रकाश]	„ वंशीधरSo/कृष्ण	सी. सी.
१५५	„ „	„ श्रीपति	मिथिला केटलॉग
१५६	„ „	„ वाणीनाथ	हि. एस सी सी.
१५७	प्राकृत पिंगलसार	हरिप्रसाद	अनूप, सी. सी.
१५८	„ टीका	„	„ „
१५९	बन्धकौमुदी	गोपीनाथ	अनूप,
१६०	रत्नमञ्जूषा		प्रकाशित
१६१	„ भाष्य		„
१६२	वाग्वल्लभ	दुःखभञ्जन	„
१६३	„ टीका [वरवर्णिनी]	„ देवीप्रसाद	„
१६४	वाणीभूषण	दामोदर	„
१६५	वृत्तकल्पद्रुम	जयगोविन्द	हि. एस
१६६	वृत्तकारिका	नारायण पुरोहित	„
१६७	वृत्तकौतुक	विश्वनाथ	„ सी सी.
१६८	वृत्तकौमुदी	जगद्गुरु	„ „
१६९	„	रामचरण	„ „
१७०	वृत्तकौस्तुभ-टीका	शिवरामS/oकृष्णराम	सी सी.

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
१७१	वृत्तचन्द्रोदय	भास्कराध्वरिन्	हि. एस, सी, सी,
१७२	वृत्तचन्द्रिका	रामदयालु	,, ,, मधुसूदन०
१७३	वृत्तचिन्तामणि	गोपीनाथ दाधीच	रा. प्रा. प्र. लक्ष्मीनाथ-संग्रह जयपुर
१७४	वृत्तचिन्तारत्न	शान्तराज पण्डित	हि. एस,
१७५	वृत्तजातिसमुच्चय	विरहांक	प्रकाशित
१७६	,, टीका	,, गोपाल	,,
१७७	वृत्ततरङ्गिणी	कृष्ण	हि. एस,
१७८	वृत्तदर्पण	गंगाधर	सी सी.
१७९	,,	जानकीनन्द कवीन्द्र S/o रामानन्द	मिथिला केटलॉग
१८०	,,	भीष्ममिश्र	,, हि. एस, सी सी,
१८१	,,	मणिमिश्र	सी सी,
१८२	,,	मथुरानाथ	सी सी
१८३	,,	वेंकटाचार्य	सी सी,
१८४	,,	सीताराम	हि. एस,
१८५	वृत्तदीपिका	कृष्ण	,, सी. सी,
१८६	,,	वेंकटेश	,,
१८७	वृत्तद्युमणि	यशवंत S/o गंगाधर	बड़ोदा के हि एस, सी सी
१८८	,,	गंगाधर	हि एस,
१८९	वृत्तप्रत्यय	शंकरदयालु	,, सी. सी,
१९०	वृत्तप्रत्ययकौमुदी		सी सी
१९१	वृत्तप्रदीप	जनार्दन	,, हि एस,
१९२	,,	बद्रीनाथ	हि एस,
१९३	वृत्तमणिकोष	श्रीनिवास	प्रकाशित
१९४	वृत्तमणिमाला	गणपतिशास्त्री	हि. एस
१९५	वृत्तमणिमालिका	श्रीनिवास	हि एस,
१९६	वृत्तमहोदधि		बड़ोदा केटलॉग
१९७	वृत्तमाणिक्यमाला	सुषेण	सी. सी
१९८	वृत्तमाला	वल्लभाजि	,, हि एस,
१९९	,,	विरूपाक्षयज्वन्	हि एस,
२००	वृत्तमुक्तावली	कृष्ण भट्ट	प्रकाशित
२०१	,,	कृष्णराम	हि एस, सी सी
२०२	,,	गंगादास	,, ,,

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
२०३	वृत्तमुक्तावली	दुर्गादत्त	मिथिला केटलॉग
२०४	"	मल्लारि	अनूप, रा प्रा प्र जोधपुर
२०५	,, टीका [तरल]	"	" बड़ोदा केटलॉग
२०६	,,	शंकर शर्मा	सी सी, केटलॉग ऑफ संस्कृत मेन्युस्क्रिप्ट्स् इन अवध भा० २१, सन् १८६०
२०७	"	हरिव्यास मिश्र	हि एस, सी सी,.
२०८	वृत्तमुक्तसारावली	भृंगराचार्य	हि एस
२०९	वृत्तमौक्तिक	चन्द्रशेखर भट्ट	अनूप सी सी, हि. एस
२१०	, टीका [दुष्करोद्धार]	,, लक्ष्मीनाथ भट्ट	अनूप
२११	,, टीका [दुर्गमबोध]	,, मेघविजय	विनयसागर संग्रह, कोटा
२१२	वृत्तरत्नाकर	केदार भट्ट	प्रकाशित
२१३	, टीका 'नौका'	अयोध्याप्रसाद	हि एस सी सी,
२१४	,	,, आत्माराम	हि एस, सी. सी,
	,, ,,	,, आसल	रा प्रा प्र, जोधपुर
२१६	, ,, [कविचिन्तामणि]	,, करुणाकरदास S/o कुलपालिका	बड़ोदा केटलॉग
२१७	,, ,,	,, कृष्णराम	सी सी
२१८	,, ,,	, कृष्णवर्मन	हि एस,
२१९	,, ,,	,, कृष्णसार	हि एस,
२२०	,, ,,	,, क्षेमहंस	रा प्रा प्र. जोधपुर, सी सी,
२२१	, ,,	,, गोविन्द भट्ट	हि एस सी सी
२२२	,, ,, [वृत्तपुष्पप्रकाशन]	,, चिन्तामणि	सी सी
२२३	,, ,, [सुधा]	,, चिन्तामणि पण्डित	हि एस, सी सी
२२४	,, ,,	,, चूडामणि दीक्षित	,, ,,
२२५	, ,, [वृत्तरत्नाकरवार्तिक]	,, जगन्नाथ S/o राम	सी सी
२२६	,, ,, [भावार्थदीपिका]	,, जनार्दन विबुध	हि एस, सी सी, बड़ोदा केटलॉग

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
२५०	वृत्तरत्नाकर टीका [प्रबंदीपिका]	केदारभट्ट, सदाशिव S/o विश्वनाथ	अनूप
२५१	" " [वृत्तरत्नावली]	" सारस्वत सदाशिव मुनि	हि. एस. सी. सी,
२५२	" " [सुकविहृदयानन्दिनी]	" सुल्हण S/o भास्कर	" ", अनूप
२५३	" "	" सोमपण्डित	" "
२५४	" " [मुग्धबोधकरी]	" सोमचन्द्रगणि	" ", अनूप रा. प्रा. प्र. जोधपुर
२५५	" " [वृत्तरत्नाकरसेतु]	" हरिभास्कर S/o आपाजी भट्ट	", अनूप
२५६	वृत्तरत्नाकर, अवचूरि	" ?	अनूप,
२५७	" बालावबोध	" मेरुसुन्दर	रा. प्रा. प्र. जोधपुर
२५८	वृत्तरत्नार्णव	नरसिंह भागवत P/o रामचन्द्र योगीन्द्र	हि एस,
२५९	वृत्तरत्नावली	कालिदास	"
२६०	"	कृष्णराम	"
२६१	"	चिरजीव भट्टाचार्य	अनूप, मिथिला और बड़ोदा केटलॉग
२६२	"	यशवंतसिंह	हि. एस, सी सी, रा. प्रा. प्र. जोधपुर
२६३	"	दुर्गादत्त	" "
२६४	"	नारायण	" "
२६५	"	मणिराम S/o वसंत	सी. सी,
२६६	" टीका [चन्द्रिका]	" कालिकाप्रसाद	"
२६७	" "	मिश्र सानन्द	हि एस, सी. सी.
२६८	" "	रविकर	" "
२६९	"	रामनूडामणि	" " [उल्लेख-काव्यदर्पण]
२७०	"	रामदेव चिरंजीव	" "
२७१	"	रामस्वामी शास्त्री	"
२७२	"	वेंकटेश S/o सरस्वती	प्रकाशित
२७३	वृत्तरामायण	कवि P/o रामानुजाचार्य	सी सी,

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
२९९	श्रुतबोध-टीका	कालिदास, नयविमल	हिमांशुविजयजी ना लेखो
३००	,, ,,	नाराजी S/o हरजी	सी सी,
३०१	,, ,,	,, नेतसिंह	रा. प्रा. प्र. जोधपुर
३०२	,, ,, [सुबोधिनी]	,, मनोहर शर्मा	हि. एस, सी. सी. रा. प्रा. प्र. जोधपुर
३०३	,, ,, [ज्योत्स्ना]	,, माधव S/o गोविंद	,,
३०४	,, ,,	,, मेघचन्द्र	हि. एस. [सी. सी. में कर्ता का नाम नहीं है और P10 के स्थान पर मेघचन्द्र का नाम है]
३०५	,,	,, लक्ष्मीनारायण	हि. एस, सी. सी.
३०६	,, ,,	,, वज्ररत्न भट्टाचार्य	प्रकाशित
३०७	,, ,,	,, वररुचि: ?	सी. सी.
३०८	,, ,, [श्रुतबोधप्रबोधिनी]	,, वासुदेव	हि. एस, सी. सी.
३०९	,, ,,	,, सुखदेव	,, ,,
३१०	,, ,, [बालबोधिनी]	,, हंसराज	,,
३११	,, ,,	,, हर्षकीर्ति	,, ,,
३१२	, [आनंदवर्धिनी]	,,	प्रकाशित
३१३	समवृत्तसारः	नीलकण्ठाचार्य	हि. एस, सी. सी.
३१४	सुवृत्ततिलकम्	क्षेमेन्द्र	प्रकाशित
३१५	संगीतराज-पाठ्यरत्नकोष	महाराणा कुंभा	तृतीय उल्लास
३१६	संगीत सह पिंगल		जैन ग्रन्थावली
३१७	स्वयम्भू छन्द	स्वयंभू	प्रकाशित

पुराणादि ग्रंथ

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
३१८	अग्निपुराण		अध्याय ३२८-३३५
३१९	गरुडपुराण पूर्वखण्ड		,, २०७-२१२
३२०	नारदपुराण पूर्वखण्ड		,, ५७ वां
३२१	विष्णुधर्मोत्तर तृतीयखण्ड		,, ३ रा
३२२	बृहत्संहिता	वराहमिहिर	,, १४वां
३२३	नाट्यशास्त्र	भरताचार्य	अध्याय १४-१५

सहायक-ग्रन्थ

१	अग्निपुराण	
२.	अथर्ववेदीय बृहत्सर्वानुक्रमणी	
३.	अनर्घराघवनाटक	मुरारि
४.	अरिष्टवधस्तोत्र	रूपगोस्वामी
५	अष्टांगहृदय	वाग्भट
६.	उपनिदान सूत्र	गार्ग्य
७.	ऋग्यजुष् परिशिष्ट	
८	ऋग्वेद के मन्त्रद्रष्टा ऋषि	बद्रीप्रसाद पचोली
९	ऋग्वेद में गीतत्त्व	"
१०.	ए हिस्ट्री ऑफ क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर	एम. कृष्णमाचारी
११	ए हिस्ट्री ऑफ संस्कृत लिटरेचर	आर्थर ए. मैकडॉनल
१२.	ए हिस्ट्री ऑफ संस्कृत लिटरेचर	कीथ
१३.	ऐतरेय आरण्यक	
१४.	कविकल्पलता	देवेश्वर
१५	कविदर्पण	सं० एच. डी. वेलणकर
१६	काकरोली का इतिहास	पो० कण्ठमणि शास्त्री
१७	काठक संहिता	
१८.	कामसूत्रम्	वात्स्यायन
१९.	काव्यादर्श	दण्डी
२०	किरातार्जुनीय काव्य	भारवि
२१.	कुमारसम्भव काव्य	कालिदास
२२	कौषीतकि महाब्राह्मण	
२३.	गाथालक्षण	सं० एच डी वेलणकर
२४	गीतगोविन्द	जयदेव
२५	गोपाललीलामहाकाव्य	सं० बेचनराम शर्मा
२६.	गोवर्धनोद्धरण स्तोत्र	रूपगोस्वामी
२७.	गोविन्दविरुदावली	"
२८.	गौरीदशकस्तोत्र	शंकराचार्य
२९.	छन्द कोश	सं० एच. डी. वेलणकर
३०.	छन्द सूत्र-हलायुध टीका सहित	पिंगल, हलायुध
३१.	छन्द सूत्र-टिप्पणी	अनन्तराम शर्मा
३२.	छन्द सूत्रभाष्य	यादवप्रकाश

३३. छन्दोनुशासन — जयकीर्त्ति, सं० एच. डी. वेल्हणकर

३४. छन्दोनुशासन स्वोपज्ञटीकोपेत — हेमचन्द्राचार्य

३५. छन्दोमञ्जरी टीकासहित — गंगादास

३६. छन्दोमञ्जरी जीवन — चन्द्रशेखर भारती

३७. छान्दोग्योपनिषद्

३८. जयदामन् — एच. डी. वेल्हणकर

३९. जयदेवच्छन्द — सं० ,,

४०. जनाश्रयीछन्दोविचिति — जनाश्रय

४१. जैन ग्रन्थावली

४२. जैमिनीय ब्राह्मण

४३. ताण्ड्यमहाब्राह्मण

४४. तैत्तिरीय ब्राह्मण

४५. दिग्विजय महाकाव्य — महो० मेघविजय

४६. देवानन्द-महाकाव्य — ,,

४७. नन्दाहरणस्तोत्र — रूपगोस्वामी

४८. नन्दोत्सवादिचरितस्तोत्र टीका — ,,

४९. नाट्यशास्त्र — भरताचार्य

५०. नारदपुराण

५१. निरुक्त-दुर्गवृत्तिसहित — यास्क, दुर्गसिंह

५२. पाठ्यरत्नकोष — महाराणा कुम्भा

५३. पाणिनीयशिक्षा — पाणिनि

५४. पिंगलप्रदीप — लक्ष्मीनाथ भट्ट

५५. प्राकृतपिंगलोद्योत — चन्द्रशेखरभट्ट

५६. प्राकृतपैंगलम् — डा० भोलाशंकर व्यास

५७. प्राचीन भारत में गणतांत्रिक व्यवस्था — बद्रीप्रसाद पंचोली

५८. बृहत्संहिता — वराहमिहिर

५९. भट्टिकाव्य — भट्टि

६०. भागवतपुराण १० मस्कन्ध

६१. भारतेन्दु ग्रन्थावली भा० ३ — सं० ब्रजरत्नदास

६२. महाभारत शान्तिपर्व

६३. मात्रिक-छन्दों का विकास — डा. शिवनन्दनप्रसाद

६४. मालतीमाधव — भवभूति

६५. मुकुन्दमुक्तावलीस्तोत्र — रूपगोस्वामी

६६. मैत्रायणीसंहिता

६७. युक्तिप्रबोध — महो० मेघविजय

६८. रघुवंश — कालिदास

६९.	रणक्रीडास्तोत्र	रूपगोस्वामी
७०.	रसिकरञ्जनम्	रामचन्द्र भट्ट
७१.	रासक्रीडास्तोत्र	रूपगोस्वामी
७२.	रोमावलीशतक	रामचन्द्र भट्ट
७३.	वत्सचारणादिस्तोत्र	रूपगोस्वामी
७४.	वर्षाशरद्विहारचरितस्तोत्र	,,
७५.	वल्लभवंशवृक्ष	स० पो० कण्ठमणि शास्त्री
७६.	वस्त्रहरणस्तोत्र	रूपगोस्वामी
७७.	वाग्वल्लभ	दु:खभञ्जन कवि
७८.	वाजसनेयी संहिता	
७९.	वाणीभूषण	दामोदर
८०	वार्त्ता साहित्य एक बृहत् अध्ययन	डॉ० हरिहरनाथ टंडन
८१.	विजयदेवमाहात्म्य	श्रीवल्लभोपाध्याय
८२.	विज्ञप्तिपत्री	समयसुन्दरोपाध्याय
८३.	विज्ञप्तिलेख-संग्रह प्रथम भाग	स० मुनि जिनविजय
८४	वृत्तजातिसमुच्चय	स० हरिदामोदर वेल्हणकर
८५	वृत्तमुक्तावली	देवर्षि कृष्णभट्ट
८६.	वृत्तरत्नाकर नारायणीटीकायुत	केदारभट्ट, नारायणभट्ट
८७	वेदविद्या	डॉ वासुदेवशरण अग्रवाल
८८	वैदिक छन्दोमीमांसा	युधिष्ठिर मीमांसक
८९.	वैदिक दर्शन	डॉ० फतहसिंह
९०.	वैदिक-साहित्य	रामगोविन्द त्रिवेदी
९१.	शतपथ ब्राह्मण	
९२.	शिशुपालवध	माघकवि
९३.	श्रुतबोध	कालिदास
९४.	शृङ्गारकल्लोल	रायभट्ट
९५	सुदर्शनादिमोचनस्तोत्र	रूपगोस्वामी
९६	सुवृत्ततिलक	क्षेमेन्द्र
९७	सौन्दर्यलहरी	शंकराचार्य
९८	स्वयम्भूछन्द	स० हरि दामोदर वेल्हणकर
९९	सप्तसन्धानमहाकाव्य	महो० मेघविजय
१००.	सभाप्या रत्नमञ्जूषा	स० हरि दामोदर वेल्हणकर
१०१.	संस्कृत साहित्य का इतिहास	कीथ
१०२	,,	वाचस्पति गैरोला
१०३.	सरस्वतीकण्ठाभरण-टीका	लक्ष्मीनाथ भट्ट
१०४	हंसदूतम्	रूपगोस्वामी
१०५	हरिमीडे-स्तोत्र	शंकराचार्य
१०६.	हिमांशुविजयजी नां लेखो	

सूची-पत्र

1	A descriptive Catalogue of Sanskrit and Prakrita Manuscripts in the Library of the Bombay Branch of the Royal Asiatic Society	H D Velankar
2	*An alphabetical list of manuscripts in* the Oriental Institute, Baroda.	Raghavan Nambiyar Shiromani
3	A descriptive catalogue of manuscripts in Mithila	Kashi Prasad Jayaswal
4	A descriptive Catalogue of the Sanskrit and Prakrit Manuscripts the Library of the University of Bombay	H D Velankar
5.	कन्नड प्रान्तीय ताडपत्रीय ग्रन्थ सूची	के भुजबली शास्त्री
6	Catalogue of Anupa Samskrita Library, Bikaner	Dr C Kunhan Raja
7	Catalogue of Samskrita manuscripts in Avadha Part-15, 1882 Part-21, 1890	.. .. ..
8.	Catalogus Catalogum	T. Aufrecht
9	मधुसूदन पुस्तकालय, लाहौर, का सूचीपत्र	
10.	राजस्थान के जैन शास्त्रभंडार	डॉ कस्तूरचंद कासलीवाल
11.	राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर का सूचीपत्र	
12	राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान शाखा कार्यालय, चित्तौड़, यति बालचन्द्रजी संग्रह का सूचीपत्र	
13	राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान शाखा-कार्यालय, जयपुर, लक्ष्मीनाथ दाधीच संग्रह का सूचीपत्र	
14.	राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान शाखा-कार्यालय, बीकानेर का सूचीपत्र	
15	संस्कृत कॉलेज बनारस, रिपोर्ट सन् १९०९–१९१७	

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला में प्रकाशित

(क) संस्कृत-प्राकृत-ग्रन्थ

१. प्रमाणमञ्जरी, (ग्रन्थाङ्क ४), तार्किक चूडामणि सर्वदेवाचार्य कृत; अद्वयारण्य, बलभद्र, वामनभट्ट कृत टीकात्रयोपेत; सम्पादक – मीमांसान्यायकेसरी पं० पट्टाभिराम शास्त्री, विद्यासागर (७+१०६), १९५३ ई० । मू. ६.००

२. यन्त्रराज-रचना, (ग्रन्थाङ्क ५), महाराजा सवाई जयसिंह कारित; सम्पादक – स्व० पं० केदारनाथ ज्योतिर्विद् (८+२८), १९५३ ई० । मू. १.७५

३. महर्षिकुलवैभवम् भाग १, (ग्रन्थाङ्क ६), स्व० पं० मधुसूदन ओझा प्रणीत, म.म. पं० गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी द्वारा सम्पादित एवं हिन्दी व्याख्या सहित (५६+२६१), १९५६ ई० । मू. १०.७५

४. महर्षिकुलवैभवम् (मूलमात्र), (ग्रन्थाङ्क ५६), स्व० पं० मधुसूदन ओझा प्रणीत, संपादक – पं० प्रद्युम्न ओझा (१६+१३३+१०), १९६१ ई० । मू. ४.००

५. तर्कसंग्रह, (ग्र० ६), अन्नंभट्ट कृत टीकाकार – क्षमाकल्याण गणि; संपादक – डा० जितेंद्र जेटली, (१७+७४), १९५६ ई० । मू. ३.००

६. कारकसम्बन्धोद्योत, (ग्र० १८), पं० रभसनन्दी कृत, कातन्त्रव्याकरणपरक रचना; संपादक – डा० हरिप्रसाद शास्त्री (२२+३४), १९५६ ई० । मू. १.७५

७ वृत्तिदीपिका, (ग्र० ७), मौनिकृष्णभट्ट कृत; संपादक – स्व० पं० पुरुषोत्तम शर्मा चतुर्वेदी, साहित्याचार्य (६+४४+१२), १९५६ ई० । मू. २.००

८. कृष्णगीति, (ग्र० १६), कवि सोमनाथ विरचित, राधाकृष्ण सम्बन्धी प्रेमकाव्य; संपादिका – डॉ० कु० प्रियबाला शाह (२७+३२), १९५६ ई० । मू. १.७५

९. शब्दरत्नप्रदीप, (ग्र० १९), अज्ञातकर्तृक, बह्वर्थक-शब्दकोश; संपादक डॉ० हरिप्रसाद शास्त्री (१२+४४), १९५६ ई० । मू. २.००

१०. नृत्तसंग्रह, (ग्र० १७), अज्ञातकर्तृक; संपादिका – डॉ० कु० प्रियबाला शाह (६+४५), १९५६ ई० । मू. १.७५

११. शृङ्गारहारावली, (ग्र० १५), श्री हर्षकवि विरचित संस्कृत-गीतकाव्य; संपादिका – डॉ० कु० प्रियबाला शाह (१०+८२) १९५६ ई० । मू २.७५

१२. राजविनोद महाकाव्य, (ग्र० ८), महाकवि उदयराज प्रणीत, अहमदाबाद के सुलतान महमूद बेगड़ा का चरित्र-वर्णन; संपादक – श्री गोपालनारायण बहुरा (२८+४४) १९५६ ई० । मू. २.२५

१३ चक्रपाणिविजय महाकाव्य, (ग्र० २०), भट्ट लक्ष्मीधर विरचित; उषा-परिणय सबधी अद्यावधि अज्ञात काव्य; संपादक – के. का. शास्त्री (७+११२), १९५६ ई० । मू. ३.५०

१४ नृत्यरत्नकोश (प्रथम भाग), (ग्र० २५), महाराणा कुम्भकर्ण कृत, सगीतराजरत्नकोषान्तर्गत; सपादक – प्रो० रसिकलाल छो० परीख एव डॉ० कु० प्रियबाला शाह (७+१४४), १९५७ ई० । मू. ३ ७५

१५ उक्तिरत्नाकर, (ग्र० १२), साधुसुन्दर गणि विरचित, सस्कृत एव देशी शब्दकोष; सपादक – मुनि जिनविजय पुरातत्त्वाचार्य (१०+११८), १९५७ । मू. ४.७५

१६. दुर्गापुष्पाञ्जलि, (ग्र० २२), म. म. प० दुर्गाप्रसाद द्विवेदी प्रणीत; सपादक प० श्री गङ्गाधर द्विवेदी (३९+१४७), १९५६ ई० । मू. ४.२५

१७ कर्णकुतूहल एव कृष्णलीलामृत, (ग्र० २६), महाकवि भोलानाथ, जयपुर नरेश सवाई प्रतापसिंह समाश्रित विरचित, सपादक – श्री गोपालनारायण बहुरा (२५+३०), १९५७ ई० । मू. १.५०

१८ ईश्वरविलास महाकाव्यम्, (ग्र० २९), कविकलानिधि श्रीकृष्णभट्ट विरचित, जयपुर निर्माता सवाई जयसिंह द्वारा अनुष्ठित अश्वमेध यज्ञ का प्रत्यक्ष वर्णन एवं जयपुर राज्येतिहास सम्बन्धी अनेक सस्मरण सवलित महाकाव्य, सपादक – कविशिरोमणि भट्ट श्री मथुरानाथ शास्त्री (७६+२९३), १९५८ ई० । मू. ११.५०

१९ रसदीर्घिका, (ग्र० ४१), कवि विद्याराम प्रणीत, सस्कृत रसालङ्कारपरक सरल एव लघु कृति, सपादक – श्री गोपालनारायण बहुरा (१२+८०) १९५९ ई० । मू २ ००

२० पद्यमुक्तावली, (ग्र० ३०), कविकलानिधि श्रीकृष्णभट्ट विरचित, अनेक साहित्यिक एव ऐतिहासिक पद्य सग्रह; सपादक – कविशिरोमणि भट्ट श्री मथुरानाथ शास्त्री (२०+१४६), १९५९ ई० । मू ४ ००

२१ काव्यप्रकाश भाग १, (ग्र० ४६), मूल ग्रन्थकार मम्मटाचार्य के समकालीन भट्ट सोमेश्वर कृत 'काव्यादर्श सकेत सहित, जैसलमेर के जैन ग्रन्थ-भडारों से प्राप्त प्राचीन प्रति के आधार पर सपादित; संपादक – श्री रसिकलाल छो० परीख (४+३५२), १९५९ ई० । मू १२.००

२२ काव्यप्रकाश भाग २, (ग्र० ४७), सपादक – श्री रसिकलाल छो० परीख (२२+११०+९४), १९५९ ई० । मू ८.२५

२३ वस्तुरत्नकोश, (ग्र० ४५), अज्ञातकर्तृक, सस्कृत का सामान्यज्ञान-कोश; सपादक – डॉ० कु० प्रियबाला शाह (१+९४), १९५९ ई०। मू. ४.००

२४ दशकण्ठवधम्, (ग्र० २३), म. म पं० दुर्गाप्रसाद द्विवेदी कृत, रामचरित्रात्मक सस्कृत-चम्पू, सपादक – श्री गङ्गाधर द्विवेदी (४+१५६), १९६० ई० । मू ४ ००

२५ श्री भुवनेश्वरीमहास्तोत्रम् (ग्र० ५४), पृथ्वीधराचार्य विरचित, कवि पद्मनाभ प्रणीत भाष्यान्वित, पूजा-पञ्चाङ्गादि संवलित, संपादक – श्री गोपालनारायण बहुरा (१+१९१), १९६० ई० । मू. ३ ७५

(ख) राजस्थानी हिन्दी ग्रन्थ

१. कान्हडदे प्रबन्ध, (प्र. ११) : महाकवि पद्मनाभ विरचित, सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी के द्वारा जालोर दुर्ग के प्रसिद्ध घेरे आदि का वर्णन; सम्पादक - प्रो. के. बी. व्यास (३३+२७५) १९५३ ई.। मू. १२.२५

२. क्यामखां रासा, (प्र. १३) : कवि जान कृत, फतेहपुर के नवाब अलफखान तथा राजपूताने के क्यामखानी मुस्लिम राजपूतों के उद्गम और इतिहास का रोचक वर्णन; सम्पादक - डॉ. दशरथ शर्मा और अगरचन्द भवरलाल नाहटा (५०+१२८) १९५३ई. मू. ४.७५

३. लावा रासा, (प्र. १४) अपर नाम कूर्मवंशयशप्रकाश, गोपालदान कविया कृत, नरूका (कछवाहा) राजपूतों और पिंडारी पठानों के बीच हुए पाँच युद्धों का समकालीन ओजस्वी वर्णन, सम्पादक - श्री महताबचन्द खारेड, (१६+८६) १९५३ ई.। मू. ३.७५

४. बाँकीदास री ख्यात, (प्र.२१) बाँकीदास कृत, राजस्थान के प्राचीन ऐतिहासिक विवरणों का प्रमुख ग्रन्थ; सम्पादक - श्री नरोत्तमदास स्वामी (६+२१८) १९५६ ई.। मू. ५.५०

५. राजस्थानी साहित्य संग्रह भाग १, (प्र. २७) राजस्थानी भाषा में रचित प्रतिनिधि गद्य कथा संग्रह; सम्पादक - श्री नरोत्तमदास स्वामी (१४+५२) १९५७ ई.। मू. २.२५

६. राजस्थानी साहित्य संग्रह भाग २, (प्र. ५२) तीन ऐतिहासिक वार्ताएं; खगड़ावत, प्रतापसिंह म्होकमसिंह और वीरमदे सोनगिरा; सम्पादक - पुरुषोत्तमलाल मेनारिया; (२४+१०८) १९६० ई.। मू. २.७५

७. कवीन्द्र कल्पलता, (प्र. ३४) : मुगल बादशाह शाहजहाँ के समकालीन कवीन्द्राचार्य सरस्वती कृत ; सम्पादिका - रानी लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत (७+५५+५) १९५८ ई. मू. २.००

८. जुगलविलास, (प्र. ३२) कृष्णगढ़ के महाराजा पृथ्वीसिंहजी अपरनाम कवि पीथल कृत ; सम्पादिका - रानी लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत, (५+५०) १९६० ई.। मू. १.७५

९. भगतमाळ, (४३) चारण ब्रह्मदास दादूपंथी कृत; सम्पादक - श्री उदयराज उज्ज्वल (८+६४) १९५९ ई.। मू. १.७५

१०. राजस्थान पुरातत्त्व मन्दिर के हस्तलिखित ग्रन्थों की सूची भाग १, (प्र. ४२) ई. स. १९५६ तक संगृहीत ४००० ग्रंथों का वर्गीकृत सूचीपत्र ; सम्पादक - मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य, (२+३०२+२०) १९५९ ई.। मू. ७.५०

११. राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान के हस्तलिखित ग्रन्थों की सूची, भाग २, (प्र. ५१), ७८५५ तक के ग्रन्थों का सूची-पत्र ; सम्पादक - श्री गोपालनारायण बहुरा, एम.ए., (२+३११) १९६० ई.। मू. १२.००

१२ राजस्थानी हस्तलिखित ग्रन्थ सूची भाग १, (ग्र ४४) मार्च १९५८ तक के ग्रथों का विवरण , सम्पादक - मुनि जिनविजय, पुरातत्वाचार्य, (३०२+१६), १९६० ई , मू ४५०

१३ राजस्थान हस्तलिखित ग्रन्थ सूची भाग २, (ग्र ५८) १९५८ ५९ के संगृहीत ग्रथो का विवरण , सम्पादक – पुरुषोत्तमलाल मेनारिया (२+६१) १९६१ ई । मू २७५

१४ स्व पुरोहित हरिनारायणजी विद्याभूषण ग्रथ सग्रह, (ग्र ५५), सम्पादक - श्री गोपालनारायण बहुरा और श्री लक्ष्मीनारायण गोस्वामी (८+१६३+३८) १९६१ ई । मू ६२५

१५ मुहता नैणसी री ख्यात भाग १, (ग्र ४८), मुंहता नैणसी कृत साधारणत राजस्थान देशीय एव मुख्यत (मारवाड) राज्य का प्रथम प्रामाणिक व ऐतिहासिक ग्रथ, सम्पादक प्रा श्री बदरीप्रसाद साकरिया (११+३९५), १९६० ई । मू ८५०

१६ मु० नै० री ख्यात भाग २, (ग्र ४९), प्रा श्री बदरीप्रसाद साकरिया (११+३४३) १९६२ ई । मू ९५०

१७ मु० नै० री ख्यात भाग ३, (२+२६४) १९६४ ई। ,, ,, मू ८००

१८ सूरजप्रकाश भाग १, (ग्र ५६) चारण करणीदान कविया कृत, सामान्य रूप से मारवाड का ऐतिहासिक विवरण और विशेषत जोधपुर के महाराजा अभयसिंहजी व सरबुलन्दखान के बीच हुए अहमदाबाद के युद्ध का समकालीन वर्णन , सम्पादक - श्री सीताराम लाळस (२०+३१०+३७), १९६१ ई । मू ८००

१९ सूरजप्रकास भाग २, (ग्र ५७), सम्पादक - श्री सीताराम लाळस (९+३६३+६१) १९६२ ई । मू ९५०

२० , भाग ३, (ग्र ५८) , , , (९७+२७५+८४), १९६३ ई । मू ९७५

२१ नेहतरग, (ग्र ६३) बूदी नरेश राव बुधसिंह हाडा कृत, काव्य शास्त्रीय ग्रथ, सम्पादक - श्री रामप्रसाद दाधीच, (३२+१२०) १९६१ ई । मू ४००

२२ मत्स्य प्रदेश की हिन्दी साहित्य को देन, (ग्र ६६) लेखक डॉ मोतीलाल गुप्त, पूर्वी राजस्थान में हस्तलिखित ग्रथों की खोज विषयक शोध प्रबन्ध (९+२९६), १९६० ई । मू ७००

२३ राजस्थान में सस्कृत साहित्य की खोज (ग्र ३१) अनु० श्री ब्रह्मदत्त त्रिवेदी, प्रोफसर एस आर भाण्डारकर द्वारा हस्तलिखित सस्कृत ग्रथो की खोज मे मध्यप्रदेश व राजस्थान मे (१९०४ ६) मे की गई खोज की रिपोर्ट का हिन्दी अनुवाद (२+७७+१९), १९६३ ई । मू ३००

२४ समदर्शी आचार्य हरिभद्र (ग्र ६८) लेखक–पं० सुखलालजी, हिन्दी अनुवादक–शान्तिलाल म जैन, राजस्थान के गणमान्य साहित्यकार एव विचारक आचार्य हरिभद्र का जीवन-चरित्र और दर्शन, (८+१२२), १९६३ ई० । मू ३००